

श्री भगवत्-पुष्पदन्त-भूतबलि-प्रणीतः

७२३१

षट्खंडागमः

श्रीवीरसेनाचार्य-विरचित-धवला-टीका-समन्वितः ।

तस्य

प्रथम-खंडे जीवस्थाने

हिन्दीभाषानुवाद-सद्यष्टि-प्रस्तावनानेकपरिशिष्टैः सम्पादिता

सत्प्ररूपणा २



सम्पादकः

अमरावतीस्थ-किंग-एडवर्ड-कालेज-संस्कृत-व्यापकः एम्. ए., एल् एल्. बी., इत्युपाधिधारी
हीरालालो जैनः

सहसम्पादकौ

पं. फूलचन्द्रः सिद्धान्तशास्त्री

* पं. हीरालालः सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थः

सशोधने सहायकौ

व्या वा, सा. सू, पं. देवकीनन्दनः *
सिद्धान्तशास्त्री

डा. नेमिनाथ-तनय-आदिनाथः
उपाध्यायः, एम्. ए., डी. लिट्.

प्रकाशकः

श्रीमन्त सेठ शिताबराय लक्ष्मीचन्द्र

जैन-साहित्योद्धारक-फड-कार्यालयः

अमरावती (बरार)

वि. सं. १९९७]

वीर-निर्वाण-संवत् २४६६

[ई. सं. १९४०

मूल्यं रूप्यक-दशकम्

प्रकाशक:

श्रीमन्त सेठ शितावराय लक्ष्मीचन्द्र,
जैन-साहित्योद्धारक-फड-कार्यालय
अमरावती (वरार)



मुद्रक—

टी. एम्. पाटील,
मॅनेजर
सरस्वती प्रिंटिंग प्रेस, अमरावती (वरार)

THE
ṢATKHAṆḌĀGAMA

OF

PUṢPADANTA AND BHŪTABALĪ

WITH

THE COMMENTARY DHAVALĀ OF VIRASENA

VOL II

SATPRARŪPAṆĀ

Edited

with introduction, translation, notes, and indexes

BY

HIRALAL JAIN, M A, LL B

C P Educational Service King Edward College, Amrāoti

ASSISTED BY

Pandit Phoolchandra
Siddhānta Shāstrī

✱

Pandit Hiralal Siddhānta Shāstrī,
Nyāyatīrtha

With the cooperation of

Pandit Devakinandana
Siddhānta Shāstrī

✱

Dr A N Upadhye,
M A, D Litt

Published by

Shrīmanta Seth Shitabrai Laxmichandra,

Jaina Sāhitya Uddhāraka Fund Kaivālaya

AMRĀOTI (Berar)

1940

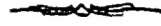
Price rupees ten only

Published by—
Shrimant Seth Shitabrai Laxmichandra,
Jama Sāhitya Uddhāraka Fund Karyālaya,
AMRAOTI (Berar)



Printed by—
T M Patil, Manager,
Saraswati Printing Press,
AMRAOTI (Berar)

विषय सूची



विषय	पृष्ठ नं.	विषय	पृष्ठ नं.
प्राक् कथन	१-३	५ बारहवें श्रुतांग दृष्टिवादका	
प्रस्तावना		परिचय	४१-६८
ग्रन्थकी प्रस्तावना (अंग्रेजीमें)	I-VI	१ परिकर्म	४३
१ ताड़पत्रीय प्रतिके लेखनकालका निर्णय	१-१४	२ सूत्र	४६
१ सत्प्ररूपणाके अन्तकी प्रशस्ति	१	३ पूर्वगत	४८
२ धवलाके अन्तकी प्रशस्ति	७	४ प्रथमानुयोग	५६
२ सत्प्ररूपणा विभाग	१४	५ चूलिका	५९
३ वर्गणाखंड विचार	१५-३३	महाकम्मपयडिपाहुड	६०
१ वेयणकसिण पाहुड और वेदनाखंड	१६	कसायपाहुड	६७
२ वर्गणा नामपर खंडसंज्ञा	१७	६ ग्रन्थका विषय	६८
३ वेदनाखंडके आदिका मंगलाचरण	१९	७ रचना और भाषाशैली	७०
४ वेदनाखंड समाप्तिकी पुष्पिका	२१	विषय-सूची	
५ इन्द्रनन्दिकी प्रामाण्यता	२२	१ सत्प्ररूपणा-आलापसूची	७२
६ मूडविद्रीसे प्रतिलिपि करने की प्रामाणिकता	२३	२ आलापगत विशेष-विषयसूची	८२
७ वेदनाखंडके आदि अवतरणोंका ठीक अर्थ	२५	शुद्धिपत्र	८४
१ वेदना और वर्गणाखंडोंकी सीमाओंका निर्णय	३०	सत्प्ररूपणा २	
२ वर्गणा निर्णय	३१	मूल, अनुवाद और संदृष्टियां	४११-८५५
४ णमोकार मंत्रके आदिकर्ता	३३-४१	परिशिष्ट	
१ धवलाकारका मत	३३	१ पारिभाषिक शब्दसूची	१
२ श्वेताम्बर मान्यता विचार	३५	२ अवतरण गाथासूची	६
		३ प्रतियोंके पाठभेद	७
		४ प्रतियोंमें छूटे हुए	१३
		५ विशेष टिप्पण	१५

प्राक् कथन

श्रीधवलसिद्धान्त प्रथम विभागके प्रकाशित होनेसे हमे जो आशा थी, उसकी सोलहो आने पूर्ति हुई। हमे यह प्रकट करते हुए अत्यन्त हर्ष और सतोष है कि मूडबिंद्री मठको भेंट की हुई शास्त्राकार और पुस्तकाकार प्रतियोंके वहा पहुंचनेपर उन्हें विमानमे विराजमान करके जुद्धस निकाला गया, श्रुतपूजन किया गया और सभा की गई, जिसमें वहाके प्रमुख सज्जनों और विद्वानोंद्वारा हमारी सशोधन, सम्पादन और प्रकाशन व्यवस्थाकी बहुत प्रशंसा की गई और यह मत प्रगट किया गया कि आगे इस सम्पादन कार्यमें वहाकी मूल प्रतिसे मिलानकी सुविधा दी जाना चाहिये, नहीं तो ज्ञानावरणीय कर्मका बध होगा। यह सभा मूडबिंद्री मठके भट्टारकजी श्री चारुकीर्ति पंडिताचार्यवर्यके ही सभापतित्वमें हुई थी।

उक्त समारम्भके पश्चात् स्वयं भट्टारकजीने अपना अभिप्राय हमें सूचित किया और प्रति मिलानकी व्यवस्थादिके लिये हमें वहा आनेके लिये आमन्त्रित किया। इसी बीच गोम्भटस्वामीके महामस्तकामिषेकका सुअवसर आ उपस्थित हुआ। यद्यपि छुड़िया न होनेके कारण हम उक्त महोत्सवमे सम्मिलित होनेके लिये नहीं जा सके, किंतु हमारे कार्यमें अभिरुचि रखने और सहायता पहुंचानेवाले अनेक श्रीमान् और धीमान् वहा पहुंचे और उनमेंसे कुछने मूडबिंद्री जाकर ग्रथराज महाधवलजी भी प्रतिलिपि कराकर प्रकाशित करानेके लिये भट्टारकजी व पंचोंकी अनुमति प्राप्त कर ली। सम्योचित उदारता और सद्भावनाके लिये मूडबिंद्री मठका अधिकारी वर्ग अभिनन्दनीय है और उस दिशामें प्रयत्न करनेवाले सज्जन भी धन्यवादके पात्र हैं। अब हम उस सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार कर रहे हैं, और यदि सब सुविधाएं मिल सकीं, जिनके लिये हम प्रयत्नशील हैं, तो हम शीघ्र ही मूडबिंद्रीकी समस्त धवलादि श्रुतोंकी प्रतियोंकी (फोटोस्टाट मशीन या माइक्रो फिल्मिंग मशीन द्वारा) प्रतिलिपिया कराकर ग्रथराजका चिरस्थायी उद्धार करनेमें सफलीभूत हो सकेंगे। इस महान् कार्यके लिये समस्त धर्मिष्ठ और साहित्यप्रेमी सज्जनोंकी सहानुभूति और क्रियात्मक सहायताकी आवश्यकता है, जिसके लिये हम समाजभर का आह्वान करते हैं

प्रथम विभागका प्रकाशनोत्सव ४ नवम्बर सन् १९३९ को किया गया था। तबसे आज ठीक आठ मास हुए हैं। इतने अल्पकालमे द्वितीय विभागका सशोधन सम्पादन होकर मुद्रण भी पूरा हो रहा है, यद्यपि कार्यमें कठिनाइया अनेक उपस्थित होती रहती हैं। इस सफलतामें समाजकी सद्भावना और दैवी प्रेरणा बहुत कुछ कार्यकारी दिखाई देती है। यदि समय अनुकूल रहा तो आगे प्रायः वर्षमें दो भागोंका प्रकाशन करानेका प्रयत्न किया जायगा।

इस विभागके सम्पादनमें भी पूर्वोक्त सहयोग पूर्ववत् ही चलता रहा है, अर्थात्

पं. फूलचन्द्रजी शास्त्री और पं. हीरालालजी शास्त्री स्थायी रूपसे सम्पादन कार्यमें हमारे साथ सट्टम रहे, तथा प. देवकीनन्दनजी शास्त्री और डा. आदिनाथजी उपाध्यायसे हमें सशोषणमें यथावसर वांछित साहाय्य मिलता रहा । धवलाकी जो प्रशस्तिया इस विभागके साथ प्रकाशित हो रही हैं, उनका सहारनपुरकी प्रतिसे अक्षरशः मिलान वीरसेवामंदिरके अधिष्ठाता प. जुगलकिशोरजी ने करके भेजनेकी कृपा की । उन्हीं प्रशस्तियोंके कनाडी पाठोंके सशोषणका अत्यन्त कठिन कार्य डा. उपाध्येके सहयोगी, राजाराम कालेज, कोल्हापुरमें कनाडीके प्रोफेसर श्रीयुत कुन्दनगारजी द्वारा किया गया है । वीरसेवामंदिरके पं. परमानन्दजी शास्त्रीने प्रस्तुत विभागमें आई हुई अवतरण-गाथाओंके प्राकृत पंचसंग्रहमें होने न होने की हमें सूचना दी । वीनाके प. वशीररजी व्याकरणाचार्यने पृ. ४४१-४४३ पर आये हुए व्याकरण संबंधी कठिन प्रकरणपर अपनी सम्मति विस्तारसे हमें लिख भेजनेकी कृपा की । पं. महेन्द्रकुमारजी न्यायाचार्यने इस भागके प्रथम फार्मका प्रूफ देखकर मुद्रण-संबंधी अनेक सूचनाएं देनेकी कृपा की । इस सब सहायताके लिये हम इन विद्वानोंके बहुत ही अनुगृहीत हैं । और भी अनेक विद्वानोंने अपनी बहुमूल्य सम्मतिया हमें या तो व्यक्तिगत पत्र द्वारा या समालोचनाके रूपमें पत्रोंमें प्रकाशित कराकर देनेकी कृपा की । उन सबसे भी हमने लाभ उठानेका प्रयत्न किया है । अतएव वे सब हमारे धन्यवादके पात्र हैं । उन सम्मतियों आदि परसे जो संशोधन या सूचनाएं प्रथम खंडके विषयमें हमें आवश्यक प्रतीत हुई, उनका भी समावेश इस विभागके शुद्धिपत्रमें किया जाता है । पाठक उससे प्रथम खंडमें उचित सुधार कर लें ।

हमारे अनेक प्रेमी पाठकोंने कुछ सूचनाएं ऐसी भी भेजी थी जिनका, खेद है, हम पालन करनेमें असमर्थ रहे । इनमें एक सूचना तो प्राकृत अंशोंका या उनके कठिन स्थलोंका संस्कृत रूपान्तर देते जानेके सम्बंधमें थी । इसको स्वीकार न कर सकने का कारण हम प्रथम जिल्दके प्राक्कथनमें ही दे चुके हैं और हमारा वह मत अब भी कायम है । दूसरी सूचना हमारे वयोवृद्ध पाठकोंकी ओर से यह थी कि भाषान्तरका टाइप छोटा पड़ता है, उसे और भी बड़ा कर दिया जाय तो उन्हें पढ़नेमें सुविधा होगी । हम बहुत चाहते थे कि अपने वृद्ध पाठकोंकी इस मूर्तिमान् कठिनाई को दूर करें । किन्तु पाठक देखेंगे कि मूलके टाइपसे अनुवादका टाइप बहुत कुछ छोटा होते हुए भी उसमें मूलसे कहीं अधिक स्थान लगता है । अब हम यदि उसे और भी बड़े टाइपमें लें तो हमारी निश्चित की हुई खंड-व्यवस्था और व्हाल्यूममें बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न होती है । अतएव विवश होकर हमें अपनी पूर्व पद्धति ही कायम रखना पड़ी । आशा है हमारे वृद्ध पाठक प्रकाशन संबंधी इस कठिनाईको समझकर हमें क्षमा करेंगे ।

इस विभागके सशोधनमें भी हमे अमरावती जैनमन्दिरकी प्रतिके अतिरिक्त आराके सिद्धान्त भवन तथा कारजाके महावीरब्रह्मचर्याश्रमकी प्रतियोंका लाभ मिलता रहा तथा सहारनपुरकी प्रतिके जो कुछ पाठभेद पहलेसे नोट थे उनसे लाभ उठाया गया है। अतएव इन सब प्रतियोंके अधिकारियोंके हम अनुगृहीत हैं।

श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी और जैन साहित्योद्धारक फडकी ट्रस्ट कमेटीके अन्य सब सदस्योंका इस कार्यको प्रगतिशील बनाये रखनेमें पूरा उत्साह है, और इस कारण हमे व्यवस्थामे किसी विघेप कठिनाईका अनुभव नहीं हुआ, बल्कि आगे सफलताकी पूरी आशा है।

यूरोपीय महासमरके कारण इस खडके लिये यथेष्ट कागज आदिका प्रवध करनेमें बड़ी कठिनाई उपस्थित हुई, जिसको हल करनेमे हमारे निरन्तर सहायक पंडित नाथूरामजी प्रेमीका हमपर बहुत उपकार है।

सत्साहित्यकी कदर करनेवाले मर्मज्ञ पाठकोंने प्रथम जिल्दका जो स्वागत किया है और उसके लिये हमारी ओर जो प्रशंसाके भाव व्यक्त किये हैं, उसके लिये हम उनकी गुणग्राहकताके कृतज्ञ हैं। पर हम यह फिर भी व्यक्त कर देते हैं कि इस महान् कठिन कार्यमें यदि हमें सचमुच कुछ सफलता मिल रही है तो उसका श्रेय हमें नहीं, किन्तु समाजकी उसी सद्भावना और समयकी प्रेरणाको है जो उचित कालमें उचित कार्य किसी न किसीसे करा लेती है। इस सम्बंधमें हमारी तो, महाकवि कालिदासके शब्दोंमें, यही धारणा है कि—

सिध्यन्ति कर्मसु महत्स्वपि यन्निर्गुण्य सम्भावनागुणमवेहि तमीश्वराणाम् ।

कि वाऽभविष्यद्गुरुस्तमसा विभेत्ता त चेत्सहस्रक्रिणो धुरि नाकरिष्यत् ॥

किंग एडवर्ड कालेज,
अमरावती
१५।७।४०

हीरालाल जैन

प्रस्तावना

INTRODUCTION

1. Age of the palm-leaf manuscript of Dhavala at Mudbidri.

In the introduction to Vol. I we had conjectured that the palm-leaf manuscript of Dhavala deposited at Mudbidri was at least five or six hundred years old. We are now in a position to throw some more light on the subject of the manuscript tradition. At the end of *Satpitarupanā* after the colophon we find some text which, when reconstructed, yields three verses in Kanaresē in praise of Padmanandi, Kulabhushana and Kulacandra respectively. The relation between these three notabilities has not been mentioned here, but there is no doubt that they are identical with the teachers of the same names mentioned in the Sravasa Belgoli inscription No. 40 (64) as successively related to each other in a spiritual genealogical order. There is similarity in the adjectives used for them at both the places. The inscription also tells us that the teachers belonged to the brilliant line of Desigana, a branch of the Nandigana of Mulasimgha which had owned, amongst others, Kundakunda, Umāsvāti, Samantabhadra, Puṇyapāda and Akalamka. One of the pupils of Padmanandi was Prabhācandra who is said to have been the author of a celebrated work on Logic. He, thus, appears to be identical with the author of *Prameyakamala-mātandā* and *Nyāya-kumuda-candrodaya*. This inscription is not dated, but the line extends upto the third generation beyond Kulacandra, and there we find Devakīrti Muni who, according to inscription No. 39 (63), attained heaven in 1163 A. D. The immediate successor of Kulacandra Muni was Māghanandi whose lay disciple Nimbadeva Sāmanta has also found mention in the Sukaabara Basti inscription of Kolhapur as a feudatory of the Śilāhāra king Gandarādityadeva for whom there are mentions from 1108 to 1136 A. D. Taking all these factors into consideration we may safely conclude that the persons mentioned in the *Satpitarupanā* Prasasti flourished probably during the eleventh century A. D. The Kanaresē verses being obviously the interpolations of the scribe who may have been the pupil of the last teacher, we might infer that a copy of the Dhavala was made about this period.

The Prasasti found at the end of the Dhavala Ms. throws still more light on the subject. The text of this long Prasasti is partly in Kanaresē and partly in Sanskrit, and the Kanaresē portion is very corrupt. But the fact that emerges from it prominently is that the Ms. of Dhavala was presented to the famous teacher Subhacandra Siddhāntadeva of the Banṇiyakere temple on the occasion of the completion of her *Sūtapancamī* vow by Demiyakka who was the aunt of Bhujabalaganga Permadideva of Mandali Nadu. Subhacandradeva is said to have belonged to the Desigana. His line begins from Kundakunda, and the other names of teachers mentioned are Griddhapiccha, Balākapiccha, Guṇanandi, Devendra, Vasunandi, Ravicandra, Dāmanandi, Vīranandi, Śrīdharadeva, Malidhārīdeva, Candrakīrti, Divākaranandi and, lastly, Subhacandradeva. On scrutinizing these facts in the light of epigraphic references that

are available to us, we find that the Subhacandradeva to whom the Ms of Dhavala was given is identical with that Subhacandradeva whose death is commemorated in Sravana Belgola inscription No 45 (117) of 1123 A D, because the spiritual genealogy of Subhacandra as given at the two places agrees entirely. We even find three verses that are common between our Prasasti and the inscription, the numbers of these verses in the inscription being 12, 13 and 21. The Banariyakere temple with which Subhacandradeva, the recipient of the Ms, has been associated, was built, according to Shimoga inscription No 97 (Ep Circa Vol VII) in 1113 A D. In this inscription Bhujabalaganga Permadideva, also mentioned in our Prasasti, makes a grant to the temple, and at the close of the record Subhacandradeva of Desigana is praised. Thus, the temple of Banariyakere with which Subhacandradeva was associated was built in 1113 A D., while he died in 1123 A D. The Ms of Dhavala was, therefore, presented to Subhacandradeva by Demiyakka between 1113 and 1123 A D.

We also get some light about the donor of the Ms from epigraphic records. Sravana Belgola Inscription No 49(129) is in commemoration of a lady variously named as Demati, Demavati, Devamati and Demiyakka, who is said to have been a pupil of Subhacandradeva of Desigana and to have died by the Jaina form of renunciation on the 11th day of the dark fortnight in Saka 1042 (A D 1120). In the inscription the lady is highly eulogised for her four forms of charity which included gifts of shastras or holy books. These mentions leave no doubt in our mind that this lady is the same as the donor of the Dhavala Ms. The date of the gift is, therefore, brought within closer limits: i.e. between 1113 and 1120 A D.

The upshot of the above discussion is that we are confronted with three facts about Dhavalā Ms. namely—

1. A copy of the Dhavalā was made probably about three generations prior to the death of Devakirti Muni in 1163 A D i.e. about 1100 A D.

2. A Ms of Dhavalā was presented to Subhacandradeva by lady Demiyakka sometime between 1113 and 1120 A D.

3. A palm-leaf Ms of Dhavalā making mention of the above fact and indicating fact No 1 exists at Mudbidri.

The probability in my mind is that it was the present palm leaf Ms at Mudbidri which was copied by a pupil of Kulacandra and presented by Demiyakka to Subhacandradeva. But the possibility of the object of Demiyakka's gift being a later copy of the first Ms and the present Ms being a still more subsequent copy of the second, mechanically reproducing the eulogistic verses and the Prasastis of the former ones, cannot be entirely precluded until the present palm-leaf Ms. at Mudbidri is thoroughly examined from all points of view internally as well as externally.

2. Is Vargana Khanda included in the available Mss. of Dhavala ?

The six main divisions of the present work, on account of which it acquired the title of Sathkhandāgama, were Jivātthana, Khuddabandha, Bandhasamitta-vācya,

Vedana, Vaggana and Mahabandha. We had already stated in the previous volume that of these six Khandas, the last i. e. the Mahabandha exists in a separate manuscript and is not included in the Mss. of Dhavalā which contain all the remaining five Khandas. To this an objection was raised from one quarter that the available Mss. of Dhavalā contain not even five, but only the first four Khandas, Vaggana Khanda being also missing from them. This view was based upon a misinterpretation of one text and a wrong reading of another text found at the beginning of the Vedanā Khanda, and then support was sought for the view by a series of wrong co-relations and a number of allegations against the old reporters like Indranandi and the recent copyist from Mudbidri Mss. These have been critically examined by me from every possible point of view on the basis of all available material, with the result that my previous statements have been fully confirmed. The last word on this subject, as well as on others of a similar nature, however, could only be said when the Mudbidri Mss. have also been thoroughly examined and the whole work has been critically edited.

3. Authorship of the Namokara Mantra

Panca namokara Mantra is the most sacred formula of Jaina religion. It forms part of the daily prayers of all the Jainas whether Digambara or Svetāmbara. It has been regarded almost as an eternal revelation and the question of its authorship was never raised. It is this very formula that forms the benedictory text at the beginning of Jivatthana and the author of Dhavalā throws important light upon its authorship. He divides sacred writings into two kinds according as their benedictory text forms their integral part or not. Now, different benedictory texts are found at the beginning of the Jivatthana Khanda and that of the Vedana Khanda. But the author of the Dhavalā places the first Khanda in one category and the other in the second category on the clearly stated ground that at the second place the benedictory text was not an integral part of the writings because it was not the original composition of the author who had merely borrowed it from elsewhere. But he regards the Namokara formula as integrally connected with the Jivatthana. This shows that in the opinion of the author of Dhavalā the Namokara formula was the original composition of Puspādanta the author of the Satpraiṇāpanā which was the first part of Jivatthāna.

I tried to pursue the inquiry further and found that in the Svetāmbara Āgama, Ajja Vaira is credited with having interpolated the formula in one of the Mūlasūtras. A survey of the Svetāmbara Piṭṭhavalis and equivalent mentions in the Digambara texts revealed a number of points of contact and of difference between them in the names and dates of various notabilities like Ajja Vaira, Ajja Mankhu or Mangu and Nāgīhatthi, associated with this sacred formula and with the study and preservation of portions of the lost canon. But a clarification of these and ultimate conclusions on the points raised must await further investigation and study.

4. A comparative review of the contents of Ditthivada

The twelfth Jaina Śrutāṅga Ditthivada, according to the traditions of both the Digambaras and the Svetambaras, was irretrievably lost. But a brief résumé of its

contents is found in the literature of both the sects. The Digambara work *Satikhaṇḍāgama* of Puṣpadanta and *Bhūtabali* as well as *Kaṣīya-pāhudi* of Guṇadharaśāstra are claimed to be directly based upon it. It would, therefore, be interesting to take a bird's eye view of the contents of this most important Jain *Sūtrāṅga*, leading up to the portions that have been preserved.

The *Ditthivāda* was divided into five parts, *Paṇikamma*, *Sutta*, *Paḍhamāṇoga*, *Puvagaya* and *Cūhā*. The Svetāmbaras place *Puvagaya* first and *Anuoga*, with its subdivisions *Mulapadhamānuoga*, and *Gandīnuoga*, instead of *Paḍhamāṇoga*, next in the above order. The two schools differ entirely in the matter of the subsections of the first part, *Paṇikamma*. The Digambaras name five *Pannattis* under it, namely, *Canda*, *Sura*, *Jambudīva*, *Divasāyana* and *Viyāha*, while the Svetāmbaras count under it seven *Seniās*, namely, *Siddha*, *Manussa*, *Putthi*, *Ogāḍha*, *Uvasampijjina*, *Vippajjhina* and *Cuācūra*, each of which is again divided into fourteen or eleven sections like *Māṅgāpayāma*, *Egattapiyāma*, *Atthapiyāma*, *Pāḍhoṇāsapayāma*, *Keubhuṇa*, *Rāsibuddha*, *Egigunam*, *Dugunam*, *Tigunam*, *Keubhuṇa*, *Paḍiggaho*, *Samsārapaḍiggaho*, *Nandāvattam* and *Siddhāvattam*. The nature of the subject-matter of these is shrouded in mystery. The Digambara subdivisions, on the other hand, are quite intelligible and their contents are also clearly stated. There is, however, one thing remarkable about the Svetāmbara subdivision that the first six divisions of *Paṇikamma* are said to be in accordance with the Jain view which recognised four *Nayas*, while the seventh was an addition of the *Ajīvikas* who recognised three *Rasis* or *Nayas*. It appears from this that the *Ajīvika* view-point was also accommodated in the Jain *Āgama* and that at one time the Jains recognised only four instead of seven *Nayas*.

The second division of *Ditthivāda* was *Sutta* which, according to the Digambaras, dealt, firstly, with the philosophy of the soul according to their own ideas, and, secondly, with the philosophical theories of others, such as *Teṭṭasiya*, *Niyativāda*, *Saddavāda* and the like. They also speak of eighty-eight divisions of *Sutta* of which, they say, the names have been forgotten. The Svetāmbaras mention twenty-two subdivisions of *Sutta* and point out that they may be studied according to four *Nayas*, namely, *Chinnacheda*, *Achinnacheda*, *Trika* and *Catuska*, of which the first and the fourth *Nayas* are followed by the Jains, while the second and the third are adopted by the *Ajīvikas*. In this way, *Sutta* is shown to possess eighty-eight subdivisions. Here again, the mention of the *Ajīvika* view-point and its accommodation are remarkable.

Paḍhamāṇoga division of *Ditthivāda*, according to the Digambaras, deals with *Paurāṇic* accounts. As mentioned before, the Svetāmbaras give the name of this division as *Anuoga* and subdivide it as *Mulapadhamānuoga* dealing with the lives of the *Tirthamkaras*, and *Gandīnuoga* dealing with the lives of *Kulakaras* and other distinguished persons in separate sections (*Gandikās*). Amongst these the account of the *Citrāntara Gandikā* is very astonishing and staggering.

Puvagaya was the most important division of *Ditthivāda* because its fourteen subdivisions, known as *Puvās*, contained, in fact, all the essential wisdom of the

Tithamkaras There is no substantial difference in the name or in the nature of the contents of the fourteen Puvvas in the Digambara and the Svetāmbara accounts of them, except that the eleventh Puvva is called Kallāni by one and Ananhum by the other, while there is also some difference in the extent (number of padas) of the twelfth Puvva, Pānāvāya. Both schools agree that some studied the entire Sūtra while others stopped at the tenth Puvva. This view, in a way, shows the significance of placing Anuoga or Padhamānuoga before Puvvagaya, for, otherwise, those that stopped at the tenth Puvva could have no knowledge of Anuoga.

The fifth and the last division of Dittivāda is Culā, which, according to the Digambara school, dealt with the sciences pertaining to Jala, Sthala, Maya, Rupa and Akasa. The other school has no account of the Culikas to give except that they were appendixes of the first four Puvvas and that their number was, in all, thirtyfour. But if they were appended to the Puvvas, it remains unexplained why a separate division for them was thought necessary.

The Puvvas are said to have been divided into Vatttus and each Vatttu was subdivided into twenty Pahudas, their total number, according to the Digambara school, being 195 and 3900 respectively. The Kammapayadi-Pahuda, of which the subject-matter has been preserved with all its twentyfour Adhikaras, in the Satkhanda-gama, was one of the 280 Pahudas included in the second Puvva Aggemiyam. Similarly, the Kasāya-Pahuda of Gunadhara-cirya is based upon one of the Pahudas included in the fifth Puvva Nānapavāda. Nothing corresponding to these portions in age and subject-matter is yet found in the Svetāmbara literature.

5. Subject-matter, language and style.

This volume is entirely devoted to the specification of the various soul qualities under different stages of spiritual advancement and under various conditions of life and existence, which have already been dealt with, in a general way, in the first volume. It is entirely the work of the commentator Virasena who takes his stand upon the foregone Sūtras, but the idea of the twenty categories that form the basis of his treatment here is borrowed from elsewhere. He starts by quoting an old verse which names the twenty categories. The earliest work where we find the treatment of the subject under the same twenty categories is the Tiloya-paṇṇatti. It is, however, still a matter for investigation as to who started the idea of the twenty categories first.

We have tabulated the numerical specifications on each page in order to show the subject at a glance and facilitate reference, and the number of tables is in all 546. The various divisions and subdivisions leading to this high number would become clear by a glance at the table of contents.

The language is throughout Prakrit except for a few Sanskrit passages in the beginning, and by the very nature of the subject-matter which consists mostly of enumeration, the style is very indifferent to grammatical forms. In the enumerations

of the soul-qualities words have frequently been used without inflections. In fact, abbreviated forms with dots are also met with all over in the Mss. But since the Mss used by us were not uniform on the point, we preferred to give the fuller forms, and have also taken the liberty to complete the enumerations where omissions in the Mss were obvious. But we have not attempted to make the words inflected for fear of changing the entire character of the author's style which is so natural in its own way under the circumstances.

The number of older verses found quoted in this volume is thirteen, all in Prakrit. One of them (No 228, on page 768) is said to have been taken from ' Pindia ' a work which is otherwise unknown.

As before, I have, in this brief survey, avoided details which the interested reader would find in the Hindi translation

१ ताड़पत्रीय प्रतिके लेखनकालका निर्णय

सत्प्ररूपणाके अन्तकी प्रशस्ति

धवल सिद्धान्तकी प्राप्त हस्तलिखित प्रतियोंमें सत्प्ररूपणा विवरणके अन्तमें निम्न कनाड़ी पाठ पाया जाता है—

सततशातभावनद पावनभोगनियोग वाकातेय चित्तवृत्तियलविं नललंदन गरूप तद्विदं गजं
परिपोगेज सोन्नतपद्मणदिसिद्धांतमुनीन्द्रचन्द्रनुदय बुधकैरवपडमंडनं मतणमेणोसुदगुणगणक भेदवृद्धि
अनन्तनोन्त^१ वाकातेय चित्तवल्लीय पदार्थिण^२ दर्पबुधालि^३ हत्सरोजांतररागरजितदिनं कुलभूषण^४ दिव्यसैद्धान्त-
मुनीन्द्रबुद्धलयशोजगमतीर्थमल्लरु^५ सततकालकायमतिसच्चरित दिनदि दिनके चीर्यं तउतिर्दुदय वियम-
ईमैमेयो लांतवविट्मोहदाह तवे कंतु मुन्तुगिदे सच्चरित कुलचन्द्रदेवसैद्धान्तमुनीन्द्ररुजितयशोज्वलजगमतीर्थ-
मल्लरु^६

मैंने यह कनाड़ी पाठ अपने सहयोगी मित्र डाक्टर ए. एन्. उपाध्याय प्रोफेसर राजाराम कालेज कोल्हापुर, जिनकी मातृभाषा भी कनाड़ी है, के पास संशोधनार्थ भेजा था। उन्होंने यह कार्य अपने कालेजके कनाड़ी भाषाके प्रोफेसर श्री. के. जी. कुंदनगार महोदयके द्वारा करा कर मेरे पास भेजनेकी कृपा की। इसप्रकार जो संशोधित कनाड़ी पाठ और उसका अनुवाद मुझे प्राप्त हुआ, वह निम्न प्रकार है। पाठक देखेंगे कि उक्त पाठ परसे निम्न कनाड़ी पद्य सुसंशोधित-कर निकालनेमें संशोधकोंने कितना अधिक परिश्रम किया है।

१

सततशातभावनेय पावनभोगनियोग (वाणि) वा-
कातेय चित्तवृत्तियोलवि नल (वि गड मोहनां) गरू-
पं तलेद गड प्रचुरपकजशोभितपद्मणादिसि-
द्धान्तमुनीन्द्रचन्द्रनुदयं बुधकैरवषडमंडनम् ॥ १ ॥

२

मन्त्रणमोक्षसद्गुणगणाधिप्य वृद्धिगे चद्रनंते वा-
कातेय चित्तवल्लीपदपकजसद्बुधालिहत्सरो-
जांतररागरजितमनं कुलभूषणादिव्यसेव्यसै-
द्धान्तमुनीन्द्ररुजितयशोज्वलजगमतीर्थकल्परु ॥ २ ॥

१ प्राप्त प्रतियोंमें इस प्रशस्तिमें अनेक पाठभेद पाये जाते हैं। यही पर सहारनपुरकी-प्रतिके अनुसार-
पाठ रखा गया है जिसका मिलान हमें बीरसेवा मंदिरके अधिष्ठाता प. जुगलकिशोरजी मुख्तारके द्वारा प्राप्त हो-
सका। केवल हमारी अ. प्रतियोंमें जो अधिक पाठ पाये जाते हैं वे टिप्पणमें दिये गये हैं। २ अनन्तज्जनोन्त-
३ पदपिणनदर्प। ४ प्रहत्। ५ दिव्यसेव्य। ६ तीर्थदमल्लयस्थे। ७ मल्लरुदरु।

of the soul-qualitius words have frequently been used without inflections. In fact, abbreviated forms with dots are also met with all over in the Mss. But since the Mss. used by us were not uniform on the point, we preferred to give the fuller forms, and have also taken the liberty to complete the enumerations where omissions in the Mss. were obvious. But we have not attempted to make the words inflected for fear of changing the entire character of the author's style which is so natural in its own way under the circumstances.

The number of older verses found quoted in this volume is thirteen, all in Prakrit. One of them (No 228, on page 788) is said to have been taken from 'Pindia' a work which is otherwise unknown.

As before, I have, in this brief survey, avoided details which the interested reader would find in the Hindi translation.

शिष्य कुलभूषण और उनके शिष्य कुलचन्द्रका भी उल्लेख पाया जाता है। वह उल्लेख इसप्रकार है—

अविद्धकर्णादिपद्मनन्दि सैद्धान्तिकाख्योऽजनि यस्य लोके ।

कौमारदेवव्रतिताप्रसिद्धिर्जायात्तु सो ज्ञाननिधि सधीरः ॥

तच्छिष्य कुलभूषणाख्ययतिपश्चारित्रवारांनिधि-

सिद्धान्ताम्बुधिपारगो नतविनेयस्तत्सधर्मो महान् ।

शब्दाम्भोरुहभास्कर प्रथिततर्कग्रन्थकारः प्रभा-

चन्द्राख्यो मुनिराजपडितवर श्रीकुण्डकुन्दान्वय ॥

तस्य श्रीकुलभूषणाख्यसुमुनेश्शिष्यो विनेयस्तुत-

स्सद्वृत्त कुलचन्द्रदेवमुनिपसिद्धान्तविद्यानिधि ।

यहा पद्मनन्दि, कुलभूषण और कुलचन्द्रके बीच गुरु शिष्य-परम्पराका स्पष्ट उल्लेख है। पद्मनन्दिको सैद्धान्तिक ज्ञाननिधि और सधीर कहा है। कुलभूषणको चारित्रवारांनिधि और सिद्धान्ताम्बुधिपारग, तथा कुलचन्द्रको विनेय, सद्वृत्त और सिद्धान्तविद्यानिधि कहा है। इस परम्परा और इन विशेषणोंसे उनके ध्वला-प्रतिके अन्तर्गत प्रशस्तिमें उल्लिखित मुनियोंसे अभिन्न होनेमें कोई सन्देह नहीं रहता। शिलालेखद्वारा पद्मनन्दिक गुणोंमें इतना और विशेष जाना जाता है कि वे अविद्धकर्ण थे अर्थात् कर्णच्छेदन संस्कार होनेसे पूर्व ही बहुत बालपनमें वे दीक्षित होगये थे और इसलिए कौमारदेवव्रती भी कहलाते थे। तथा यह भी जाना जाता है कि उनके एक और शिष्य प्रभाचन्द्र थे, जो शब्दाम्भोरुहभास्कर और प्रथित तर्कग्रन्थकार थे।

इसी शिलालेखसे इन मुनियोंके सध व गण तथा आगे पीछेकी कुल और गुरु-परम्पराका भी ज्ञान हो जाता है। लेखमें गौतमादि, भद्रबाहु और उनके शिष्य चन्द्रगुप्तके पश्चात् उसी अन्वयमें हुए पद्मनन्दि, कुन्दकुन्द, उमास्वाति गृहपिच्छ, उनके शिष्य बलाकपिच्छ, उसी आचार्य परम्परामें समन्तभद्र, फिर देवनन्दि जिनेन्द्रबुद्धि पूज्यपाद और फिर अकलकके उल्लेखके पश्चात् कहा गया है कि उक्त मुनीन्द्र सन्ततिके उत्पन्न करनेवाले मूलसधमें फिर नन्दिगण और उसमें देशीगण नामका प्रभेद हो गया। इस गणमें गोल्वाचार्य नामके प्रसिद्ध मुनि हुए। ये गोल्वादेशके अधिपति थे। किन्तु, किसी कारण वश संसारसे भयभीत होकर उन्होंने दीक्षा धारण करली थी। उनके शिष्य श्रीमत् त्रैकाल्ययोगी हुए और उनके शिष्य हुए उपर्युक्त अविद्धकर्ण पद्मनन्दि सैद्धान्तिक कौमारदेव, जो इसप्रकार मूलसध नन्दिगणान्तर्गत देशीगणके सिद्ध होते हैं।

लेखमें पद्मनन्दि, कुलभूषण और कुलचन्द्रसे आगेकी परम्पराका वर्णन इसप्रकार दिया गया है:—

कुलचन्द्रदेवके शिष्य माधनन्दि मुनि हुए, जिन्होंने कोल्हापुर (कोल्हापुर) में तीर्थ स्थापित किया। वे भी राजान्तार्णवपारगामी और चारित्रचक्रेश्वर थे, तथा उनके श्रावक शिष्य थे

३

सततकालकायमतिसच्चरित दिनदि दिनके नी-
 र्यं तलेददु मिह नियमगळनातुविवेकबोधे-
 हं तवे कतु मन्मुगिदे सच्चरित कुलचन्द्रदेवसै-
 द्धांतमुनीन्द्ररुजितयशोज्ज्वलजगमतीर्थरुद्रवम् ॥ ३ ॥

इसका हिन्दीमें सारानुवाद हम इसप्रकार करते हैं—

१

श्रीपद्मनन्दि सिद्धान्तमुनीन्द्ररूपी चन्द्रमाका उदय विद्वद्गणरूपी कुमुदिनी समूहका मंडन था । वे प्रफुल्ल कमलके समान सुशोभित थे, तथा उनके मनमें निरंतर शान्त भावना और पावन सुख-भोगमें निमग्न सरस्वती देवीका निवास होनेसे वे सहज ही सुंदर शरीरके अधिकारी हो गये थे ।

२

वे दिव्य और सेव्य कुलभूषण सिद्धान्तमुनीन्द्र अपने ऊर्जित यशसे उज्ज्वल होनेके कारण जगम तीर्थके समान थे । मन्त्रण, मोक्ष और सद्गुणोंके समुद्रको बढ़ानेमें वे चन्द्रके समान थे, तथा सरस्वती देवीके चित्तरूपी बल्लीके पदपकज (के निवास) से गर्वयुक्त विद्वत्समुदायके हृदयकमलके अंतर रागसे उनका मन रजायमान था ।

३

ऊर्जित यशसे उज्ज्वल कुलचन्द्र सिद्धान्तमुनीन्द्रका उद्भव जगमतीर्थके समान था । निरन्तर कालमें काय और मनसे सच्चारित्रवान्, दिनोदिन शक्तिमान् और नियमवान् होते हुए उन्होंने विवेकबुद्धिद्वारा ज्ञान-दोहन करके कामदेवको दूर रखा । यह सच्चारित्र ही कामदेवके क्रोधसे बचनेका एकमात्र मार्ग है ।

इसप्रकार इन तीन कनाडी पद्योंकी प्रशस्तिमें क्रमशः पद्मनन्दि सिद्धान्तमुनीन्द्र, कुलभूषण सिद्धान्तमुनीन्द्र और कुलचन्द्र सिद्धान्तमुनीन्द्रकी विद्वत्ता, बुद्धि और चारित्रकी प्रशंसा की गई है । पर उनसे उनके परस्पर सम्बन्ध, समय व धवलग्रथ या उसकी प्रतिसे किसी प्रकारके सम्बन्धका कोई ज्ञान नहीं होता । अतएव इन बातोंकी जानकारीके लिए अन्यत्र खोज करना आवश्यक प्रतीत हुआ ।

श्रवणवेल्लुके अनेक शिलालेखोंमें पद्मनन्दि मुनिके उल्लेख आये हैं । पर सब जगह एक ही पद्मनन्दिसे तात्पर्य नहीं है । उन लेखोंसे ज्ञात होता है कि भिन्न भिन्न कालमें पद्मनन्दि नाम व उपाधिधारी अनेक मुनि आचार्य हुए हैं । किन्तु लेख नं. ४० (६४) में हमारे प्रस्तुत पद्मनन्दिसे अभिप्राय रखनेवाला उल्लेख ज्ञात होता है, क्योंकि, उसमें पद्मनन्दि सिद्धान्तिकके

शिष्य कुलभूषण और उनके शिष्य कुलचन्द्रका भी उल्लेख पाया जाता है। वह उल्लेख इसप्रकार है—

अविद्धकर्णाटिकपद्मनन्दी सैद्धान्तिकाख्योऽजनि यस्य लोके ।

कौमारदेवव्रतिताप्रसिद्धिर्जायातु सो ज्ञाननिधि सधीरः ॥

तच्छिष्य कुलभूषणाख्ययतिपश्चारित्रवारानिधि-

सिद्धान्ताम्बुधिपारगो नतविनेयस्तत्सधर्मो महान् ।

शब्दाम्भोरुहभास्कर प्रथिततर्कग्रन्थकारः प्रभा-

चन्द्राख्यो मुनिराजपडितवर श्रीकुण्डकुन्दान्वय ॥

तस्य श्रीकुलभूषणाख्यसुमुनेश्शिष्यो विनेयस्तुत-

स्तद्वृत्त कुलचन्द्रदेवमुनिपसिद्धान्तविद्यानिधि ।

यहा पद्मनन्दि, कुलभूषण और कुलचन्द्रके बीच गुरु शिष्य-परम्पराका स्पष्ट उल्लेख है। पद्मनन्दिको सैद्धान्तिक ज्ञाननिधि और सधीर कहा है। कुलभूषणको चारित्रवारानिधि और सिद्धान्ताम्बुधिपारग, तथा कुलचन्द्रको विनेय, सद्वृत्त और सिद्धान्तविद्यानिधि कहा है। इस परम्परा और इन विशेषणोंसे उनके ध्वला-प्रतिके अन्तर्गत प्रशस्तिमें उल्लिखित मुनियोंसे अभिन्न होनेमें कोई सन्देह नहीं रहता। शिलालेखद्वारा पद्मनन्दिक गुणोंमें इतना और विशेष जाना जाता है कि वे अविद्धकर्ण थे अर्थात् कर्णच्छेदन संस्कार होनेसे पूर्व ही बहुत बाल्यमें वे दीक्षित होगये थे और इसलिए कौमारदेवव्रती भी कहलाते थे। तथा यह भी जाना जाता है कि उनके एक और शिष्य प्रभाचन्द्र थे, जो शब्दाम्भोरुहभास्कर और प्रथित तर्कग्रन्थकार थे।

इसी शिलालेखसे इन मुनियोंके सघ व गण तथा आगे पीछेकी कुछ और गुरु-परम्पराका भी ज्ञान हो जाता है। लेखमें गौतमादि, भद्रबाहु और उनके शिष्य चन्द्रगुप्तके पश्चात् उसी अन्वयमें हुए पद्मनन्दि, कुन्दकुन्द, उमास्वाति गृद्धपिच्छ, उनके शिष्य बलाकपिच्छ, उसी आचार्य परम्परामें समन्तभद्र, फिर देवनन्दि जिनेन्द्रबुद्धि पूज्यपाद और फिर अकलंकके उल्लेखके पश्चात् कहा गया है कि उक्त मुनीन्द्र सन्ततिके उत्पन्न करनेवाले मूलसधर्मों फिर नन्दिगण और उसमें देशीगण नामका प्रभेद हो गया। इस गणमें गोस्वाचार्य नामके प्रसिद्ध मुनि हुए। ये गोस्वदेशके अधिपति थे। किन्तु, किसी कारण वश संसारसे भयभीत होकर उन्होंने दीक्षा धारण करली थी। उनके शिष्य श्रीमत् त्रैकाल्ययोगी हुए और उनके शिष्य हुए उपर्युक्त अविद्धकर्ण पद्मनन्दि सैद्धान्तिक कौमारदेव, जो इसप्रकार मूलसंघ नन्दिगणान्तर्गत देशीगणके सिद्ध होते हैं।

लेखमें पद्मनन्दि, कुलभूषण और कुलचन्द्रसे आगेकी परम्पराका वर्णन इसप्रकार दिया गया है:—

कुलचन्द्रदेवके शिष्य माघनन्दि मुनि हुए, जिन्होंने कोल्हापुर (कोल्हापुर) में तीर्थ स्थापित किया। वे भी राद्धान्तार्णवपारगामी और चारित्रचक्रदेव थे, तथा उनके श्रावक शिष्य थे

स्वामिन्त केदार नाकरस, सामन्त निम्बदेव और सामन्त कामदेव । माघनन्दिके शिष्य हुए—
 गंडविमुक्तदेव, जिनके एक छात्र सेनापति भरत थे, व दूसरे शिष्य भानुकीर्ति और देवकीर्ति ।
 गंडविमुक्तदेवके सधर्म भूतकीर्ति त्रैविद्यमुनि थे, जिन्होंने विद्वानोंको भी चमत्कृत करनेवाले
 अनुलोम—प्रतिलोम काव्य राघव-पांडवीयकी रचना करके निर्मल कीर्ति प्राप्त की थी
 और देवेन्द्र जैसे विपक्षवादियोंको परास्त किया था । श्रुतकीर्तिकी प्रशंसाके ये दोनो पद्य
 'कनाडी काव्य-पम्परामांयणमें भी पाये जाते हैं । विपक्ष सैद्धान्तिकसे संभव है उन्हीं देवेन्द्रसे
 तात्पर्य हो, जिनके विषयमें श्वेताम्बर ग्रन्थ प्रभावकचरितमें कहा गया है कि उन्होंने वि० सं०
 ११८१ में दि० आचार्य कुमुदचन्द्रको वाद में परास्त किया था । इन्हींके अग्रज (सधर्म)
 थे कनकनन्दि और देवचन्द्र । कनकनन्दिने बौद्ध, चार्वाक और मीमांसको को परास्त किया
 था, और देवचन्द्र भट्टारकोंके अग्रणी तथा वेताल शोर्टिंग आदि भूत पिशाचोंको बशीभूत
 करनेवाले बड़े मंत्रवादी थे । उनके अन्य सधर्म थे माघनन्दि त्रैविद्यदेव, देवकीर्ति पंडितदेवके
 शिष्य शुभचन्द्र त्रैविद्यदेव, गंडविमुक्त वादिचतुर्मुख रामचन्द्र त्रैविद्यदेव और वादिवज्राकुश
 अकलंक त्रैविद्यदेव । गंडविमुक्तदेवके अन्य श्रावक शिष्य थे माणिक्य भंडारी मरियाने दंडनायक,
 महाप्रधान सर्वाधिकारी ज्येष्ठ दंडनायक भरतिमय्य हेगडे वूचिमय्यंगलु और जगदेकदानी
 हेगडे कोरय्य ।

इन उल्लेखोंसे हमें पद्मनन्दि कुलभूषणके संघ व गणके अतिरिक्त उनकी पूर्वापर सु-
 विख्यात, विचक्षण और प्रभावशाली गुरुपरम्पराका अच्छा ज्ञान हो जाता है । तथा, जो और भी
 विशेष बात ज्ञात होती है, वह यह कि, हमारे पद्मनन्दिके एक और शिष्य तथा कुलभूषण
 सिद्धान्तमुनिके सधर्म जो प्रभाचन्द्र 'शब्दाम्बोरुहभास्कर' और प्रथित-तर्कग्रन्थकार' पदोंसे
 विभूषित किये गए हैं, वे संभवतः अन्य नहीं, हमारे सुप्रसिद्ध तर्कग्रन्थ प्रमेयकमलमार्तण्ड और
 न्यायकुमुदचन्द्रके-कर्त्ता प्रभाचन्द्राचार्य ही हों ।

यह गुरु परम्परा इस प्रकार पाई जाती है:—

गौतमादि
 (उनकी सन्तानमें)
 भद्रबाहु
 |
 चन्द्रगुप्त
 (उनके अन्वयमें)
 पद्मनन्दि कुन्दकुन्द
 (उनके अन्वयमें)

सत्प्ररूपणाके अन्तकी प्रशस्ति

उमास्वाति गृद्धपिच्छ

वलाकपिच्छ

(उनकी परम्परामे)

समन्तभद्र

(उनके पश्चात्)

देवनन्दि, जिनेन्द्रबुद्धि पूज्यपाद

(उनके पश्चात्)

अकलंक

(उनके पश्चात् मूलसध, नन्दिगणके देशीगणमें)

गोलाचार्य

त्रैकात्य योगी

पद्मनन्दि कौमारदेव

कुलभूषण

प्रभाचन्द्र

कुलचन्द्र

माधनन्दिमुनि (कोल्लापुरीय)

गंडविमुक्तदेव,

श्रुतकीर्ति

कनकनन्दि

देवचद्र,

माधनन्दि

त्रैविद्यदेव,

देवकीर्ति

प. दे. के शिष्य

भानुकीर्ति

देवकीर्ति

शुभचद्र

त्रै. दे.,

रामचद्र

त्रै. देव.

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि उक्त पद्मनन्दि आदि आचार्य किस कालमें उत्पन्न हुए ! जिस उपर्युक्त शिलालेखमें उनका उल्लेख आया है, उसमें भी समयका उल्लेख कुछ नहीं पाया जाता । किन्तु वहां उस लेखका यह प्रयोजन अवश्य बतलाया गया है कि महामंडजाचार्य देवकीर्ति पंडितदेवने कोल्लापुरकी रूपनारायण वसदिके अधीन केलंगेरेय प्रतापपुरका पुनरुद्धार कराया था, तथा, जिननाथपुरमें एक दानशाला स्थापित की थी । उन्होंने अपने गुरुकी परोक्ष विनयके लिए महाप्रधान सर्वाधिकारी हिरिय भंडारी अभिनव-गंग-दंडनायक श्री हुल्लराजने उनकी निषद्या निर्माण कराई । तथा गुरुके अन्य शिष्य लक्ष्मनन्दि, माधव और त्रिभुवनदेवने महादान व पूजामिषेक करके प्रतिष्ठा की । हुल्लराज अपरनाम हुल्लप वाजिवंशके यक्षराज और

लोकाभिकाके पुत्र तथा यदुवंशी राजा नारसिंहके मंत्री कहे गए हैं। इन यादव व होयसलवंशीय राजा नारसिंह तथा उनके मंत्री हुल्लराज या हुल्लपका उल्लेख अन्य अनेक शिलालेखोंमें भी पाया जाता है, जिनसे उनकी जैनधर्म में श्रद्धाका अच्छा परिचय मिलता है। (देखो जैन शिलालेख संग्रह, भू पृ ९४ आदि)। पर उक्त विषय पर प्रकाश डालनेवाला शिलालेख न० ३९ है जिसमें देवकीर्तिकी प्रशस्तिके अतिरिक्त उनके स्वर्गवासका समय शक १०८५ सुमानु सवत्सर आषाढ शुक्ल ९ बुधवार सूर्योदयकाल बतलाया गया है, और कहा गया है कि उनके शिष्य लखनंदि, माधवचन्द्र और त्रिभुवनमल्लने गुरुभक्तिसे उनकी निषद्याकी प्रतिष्ठा कराई।

देवकीर्ति पद्मनन्दिसे पांच पीढ़ी, कुलभूषणसे चार और कुलचन्द्रसे तीन पीढ़ी पश्चात् हुए हैं। अतः इन आचार्योंको उक्त समयसे १००-१२५ वर्ष अर्थात् शक ९५० के लगभग हुए मानना अनुचित न होगा। न्यायकुमुदचन्द्रकी प्रस्तावनाके विद्वान् लेखकने अत्यन्त परिश्रमपूर्वक उस ग्रन्थके कर्ता प्रभाचन्द्रके समयकी सीमा ईस्वी सन ९५० और १०२३ अर्थात् शक ८७२ और ९४५ के बीच निर्धारित की है। और, जैसा ऊपर कहा जा चुका है, ये प्रभाचन्द्र वे ही प्रतीत होते हैं जो लेख नं० ४० में पद्मनन्दिके शिष्य और कुलभूषणके सधर्म कहे गए हैं। इससे भी उपर्युक्त कालनिर्णयकी पुष्टि होती है। उक्त आचार्योंके कालनिर्णयमें सहायक एक और प्रमाण मिलता है। कुलचन्द्रमुनि के उत्तराधिकारी माधनन्दि कोल्हापुरीय कहे गये हैं। उनके एक गृहस्थ शिष्य निम्बदेव सामन्त का उल्लेख मिलता है जो शिलाहार नरेश गडरादित्यदेवके एक सामन्त थे^१। शिलाहार गडरादित्यदेवके उल्लेख शक सं १०३० से १०५८ तक के लेखोंमें पाये जाते हैं। इससे भी पूर्वोक्त कालनिर्णयकी पुष्टि होती है।

पद्मनन्दि आदि आचार्योंकी प्रशस्तिके सम्बन्धमें अब केवल एक ही प्रश्न रह जाता है, और वह यह कि उसका धवलाकी प्रतिमें दिये जानेका अभिप्राय क्या है? इसमें तो सदेह नहीं कि वे पद्य मृदविद्दीकी ताडपत्रीय प्रतिमें हैं और उन्हींपरसे प्रचलित प्रतिलिपियोंमें आये हैं। पर वे धवलाके मूल अक्षर या धवलाकारके लिखे हुए तो हो ही नहीं सकते। अतः यही अनुमान होता है कि वे उस ताडपत्रवाली प्रतिके लिखे जानेके समय या उससे भी पूर्वकी जिस प्रति परसे वह लिखी गई होगी उसके लिखनेके समय प्रक्षिप्त किये गये होंगे। संभवतः कुलभूषण या कुलचन्द्र सिद्धान्तमुनिकी देख-रेखमें ही वह प्रतिलिपि की गई होगी। यदि विद्यमान ताडपत्र की प्रति लिखनेके समय ही वे पद्य डाले गये हों, तो कहना पड़ेगा कि वह प्रति शककी दशवीं

१. जैन शिलालेखसंग्रह, लेख नं. ४०

२. Sukrabara Basti Inscription of Kolhapur, in Graham's Statistical Report on Kolhapur.

न्यायकुमुदचन्द्र, भूमिका पृ ११४ आदि.

शताब्दिके मध्य भागके लगभग लिखी गई है। इन्हीं प्रतियोंमेंसे कहीं एक और कहीं दोके प्रशस्त्यात्मक पद्य धवलाकी प्रतिमें और भी बीच बीचमें पाये जाते हैं जिनका परिचय व संप्रह आगे यथावसर देनेका प्रयत्न किया जायगा।

धवलाके अन्तकी प्रशस्ति

भूद्विद्रीकी ताड़पत्रीय प्रतिके प्रसंगमें हमारी दृष्टि स्वभावतः धवलाकी प्राप्त प्रतियोंके अन्तमें पायी जानेवाली प्रशस्ति पर जाती है। धवलाके अन्तमें धवलाकार वीरसेनाचार्यसे सम्बंध रखनेवाली वे नौ गाथाएं पाई जाती हैं जिनको हम प्रथम भागमें प्रकाशित कर चुके हैं। उन गाथाओंके पश्चात् निम्न लम्बी प्रशस्ति पाई जाती है, जिसके कनाडी अश पूर्वोक्त प्रो. कुदनगार व प्रो. उपाध्याय द्वारा बड़े परिश्रमसे सशोधित किये गये हैं।

१

शब्दब्रह्मेति शान्देयगणधरमुनिरित्येव राद्धान्तविद्भिः,
साक्षात्सर्वज्ञ एवेत्यभिहितमतिभि सूक्ष्मवस्तुप्रणीतः।
यो दृष्टो विश्वविद्यानिधिरिति जगति प्राप्तभट्टारकाख्यः,
स श्रीमान् वीरसेनो जयति परमत्त्वान्तमित्तन्त्रकार ॥ १ ॥

२

श्रीचारित्रसमृद्धिमिक्कविजयश्रीकर्मविच्छित्तिपूर्वकं ज्ञानावरणीयमूलनिर्नाशन भूचक्रं बेसकेय्ये
सदभंमुनिवृन्दाधीश्वरकुन्दकुन्दाचार्यर्षतर्धे [गर्भतेयिने (?)] नाचार्यरोळवर्यं जितमदविनिर्गतमलर्चतुर-
गुलचारणद्धिनिरतर्गणधर [रैरैकैत्तिगे (?)] गुणगणधरर् यतिपतिगणधररेनिसिद्ध कुन्दकुन्दाचार्यर्। अवरन्वय-
दोळ सिद्धान्तविद्व्याकरणवेदिगळ पट्टर्षप्रवणद्धिसिद्धिसजुत्तपरिस्तुत्तरप्प गृष्टपिच्छाचार्यर्धैर्यपरनैगर्दगर्भीर्य-
गुणोदधिगळुचित्तशमदमयमताःपर्यरेने गृष्टपिच्छाचार्यर् शिष्यब्रंलारुपिच्छाचार्यगुणनन्दिपडितनिजगुणनन्दि-
पडितजनगळ मेच्चिसि मैगुणद पेसरसेये विद्वद्गणतिलकसकलमुनीन्द्रशिष्यपदार्थदोळधशास्त्रदोळु जिनागम-
दोळु तत्रदोळु महाचरितपुराणसततिगळोळ परमागमदोळु पेरसंम दोरे सरि पाटिपासटि समानमेनळु कृत-
विद्यारैरुत्तिरे बुचओटिसदभंवीतळदोळु । गुणनन्दिपडितशिष्यार्विहितविदर्गे सुनुवराशिष्यरोळु
तपश्चरणसिद्धान्तपारायणरेणिकेगोळकर्पदिवर्तपोविच्छिन्नानगर्भी महिमेयिनेसदेवाधियंतंतुदारस्वैच्छादिनकर-
किरणमे वेळगे देवेन्द्रसिद्धान्तर् ॥ अन्तुनेगर्तैवेत्तवर शिष्यकदम्बरुदोळु समस्तसिद्धान्तमहापयोनिधियेनिसि
तडबरेग तपोबलाक्रान्तमनोजरागि मद्वर्जितरागि पोगर्तैवेत्तराशात नेगर्द कीर्त्ति वसुनन्दिमुनीन्द्ररुदात्तवृत्ति-
विचुदधिगे कलाधर' पुट्टिदनेन्तवर्गे शिष्यरादर् गुणदोळेदडे रविचंद्रसिद्धांतदेवर्नवर जगद्धिशेपकचरितर् ।
अतु दयावनीधरकृतोदयनादशशाकनिंदे शावैरि' गित्तु धरातलम मत्ते दुर्गयध्वान्तविद्यातमागिरे तदुच्चवर्ग
सले पूर्णचन्द्रसिद्धान्तमुनीन्द्र निगदितान्तप्रतिशासनम् जैनशासनम् ॥

इन्दु शरदद बेल् दिंगल् पुदिदु दु देसेदेसेथोळेनिप जसदोळप ताळिठ दामनन्टिसिद्धान्तदेवर-
वरग्रशिष्यरधिगतत्वर ।

शान्ततेवेत्तचित्त जनोळाद विरोधमिदेत्त ? निस्पृहर् ।
स्वांततेवेत्तकांक्षे परमार्थदोळिनु नेग लते वेत्तिदा ॥
नीतन [रिन्मरा (?)] रेने [जन्य ?] जिनेन्द्रवीरनान्दिसि-
द्धान्तमुनीन्द्रें सुचरितक्रमदोळ विपरीत वृत्तरो ॥
बोधितभग्यरचित-वर्धमान श्रीधरदेवरेंवर वर्गग्रतनूभवरादरा ।
श्रीधरगादिशिष्यरवरोळनेगळ्दर मलधारिदेवरु श्रीधरदेवरु ॥
नतनेन्द्रकिरीटतदाचित्क्रमर अनुवशनागि वर्षनेनगबुरुहोदरनोदे पृथिन ।
बिनोळे बसके वदने भव जलजासननेत्रमीनके ॥
तन मनकं करीन्द्रमदोद्धत नप्प चित्तज- ।
नमनेनल [डोरलन्मने ?] नेमिचन्द्रमलधारिदेव [रतेरेयेन ?] ॥

श्रुतधर [वलित्तिने ?] मेय्यनोमेंयु तुरिसुबुदिल्ल निदेवरेमगुलनिकुशुदिल्ल वागिल किस्तेरे
युबुदिल्ल गुर्वदिल्ल (महेन्द्रनु) नेरे [ओण ?] वणिसल् गुणगणावळिय मलधारिदेवर ॥

आमलधारिदेवमुनिमुख्यर शिष्यरोळग्रगण्यरुर्विमहित [कर्षपायगुर्व ?] जितकपायक्रोध^१ लोभमान-
मायामदवर्जितनेंगर्दरिन्दुमरीचिगळ्दर (दिं ?) यश श्री नेमिचन्द्रकीर्तिमुनिनाथरुदात्तचरित्रवृत्तिथि ॥
मलधारिदेवरिद । बेळगिदुदु जिनेन्द्रशासन मुन्न निमेलमागि मत्तमीगळ् । बेळगिदुदु चन्द्रकीर्तिभट्टारकरिं ॥

बेळगुव कीर्तिचन्द्रिके मृदूक्तिसुधारसपूर्णमूर्तयो
ळबेळेदमल पोदर्द सितळांछनमागिरे चन्द्रनदमं ॥
तळेदु जन मनगोळे दिगंतर विकसितो—
ज्वलशुभचन्द्रकीर्तिमुनिनाथरिदे^२ विबुधाभिवधरो ॥

(पयितु ?) प्रसरकिरणारातीयचन्द्रकीर्तिमुनेद्राशातवर्त्तितकीर्त्तिगळ् मुनिवृन्दवदितरादरा-
शातचित्तर शिष्यरादिवाकरणदिसिद्धान्तदेवरिदे जिनागमवार्धिपारगरादरो । इदाबुदरिदेदिल्लिकेय्दु
सिद्धान्तवारिधिय तळदेवदरेंदोडानेनुलिसुवेनेनळ् दिवाकरणदिसिद्धान्तदेवराखिलागममत्तरमार्गमत्तिम-
सुधांनुप्रचुरपूरनिकर व्याख्यानघोष मरुच्चलितोत्तुगतरगघोपमेने मिकौदार्थदि दोपनिर्मलधर्माभूतदिन-
लकरिसि गभीरस्वम ताळि भूवल्लयके पवित्ररागि नेगळ्दरा सिद्धान्तरत्नाकर ॥ अवरग्रशिष्यर

मेरेदुमदोम्भे लौकिकद्वार्त्तयनाडद केतबागिल ।
तेरेयद भानुवस्तमितभागिरेपोगद मेय्यनोम्मेयु ॥
तुरिसदकुक्कुटासनके सोलद गडविमुक्तवृत्तिथ ।
मेरेयदधोरदुश्चरत्तपश्चरित मळधारिदेवर ॥ अवरग्रशिष्यर

१

श्रीदः श्रीगणवाधिवर्धनकरश्चन्द्रावदातोवण स्थेयान् श्रीमलधारिदेवयमिन पुत्र पवित्रो भुवि ।

१ अ प्रातिमें यहाँ ' तत्तदेवप्रकर ' ऐसा पाठ है ।

२ स. प्रातिमें ' गुर्वजितकपायक्रोध ' इतना पाठ नहीं है ।

सद्धर्मैकशिखामणिर्जिनपतेर्भग्यैकचिन्तामणि स श्रीमान् शुभचन्द्रदेवमुनिपः सिद्धान्तविष्मनिधिः ॥१॥

२

शब्दाधिष्ठितभूतले परिलसत्सार्कल्लसस्तभके (?)
साहित्यस्यधिकाश्मभितिरुचिते (?) ज्योतिर्मये मढले ।
सदृत्नत्रयमूलरत्नकलशे स्याद्वादहर्म्यं मुदा,
यो (?) देवेन्द्रसुरार्चितैर्दिविपदैस्सद्भिर्विरेजुस्तु (?) तत् ॥ २ ॥

३

देवेन्द्रसिद्धान्तमुनीन्द्रपादपङ्केजभृङ्गः शुभचन्द्रदेवः ।
यदीयनामापि विनेयचेतोजातं तमो हर्तुमलं समर्थः ॥ ३ ॥

४

परमजिनेश्वरविरचितवरसिद्धान्ताम्बुराशिपारगरेदी ।
धरे बणिगसुरं गुणगणधरर शुभचन्द्रदेवसिद्धान्तिकरं ॥ ४ ॥

५

श्रीमज्जिनेन्द्रपदपद्मपरागतुङ्ग, श्रीजैनशासनसमुद्गतवार्धिचन्द्रः ।
सिद्धान्तशास्त्रविहितार्कितदिव्यवाणी धर्मप्रबोधप्रमुकुरः शुभचन्द्रसूरिः ॥ ५ ॥

६

चित्तोद्भूतमदेभकन्ददलनप्रोत्कण्ठकण्ठीरवो भव्याम्भोजकुलप्रबोधनकृते विद्वज्जनानन्दकृत् ।
स्थेयात्कुन्दहिमेन्दुनिर्मल्यशोवल्लीसमालम्बन. स्तम्भ. श्रीशुभचन्द्रदेवमुनिप. सिद्धान्तरत्नाकरः ॥ ६ ॥

७

कुवलयकुलबन्धुध्वस्तमीहातमिस्ते विकसितमुनितस्वे सज्जनानन्दवृत्ते ।
विदितविमलनानासत्कलान्विद्धमूर्तिः शुभमतिशुभचन्द्रो राजवद्राजतेऽयम् ॥ ७ ॥

८

दिग्दन्तिदन्तान्तरवर्षिकीर्षि. रत्नत्रयालङ्कृतचारुमूर्तिः ।
जीयाक्षिरं श्रीशुभचन्द्रदेवो भव्याब्जिनीराजितराजहंसः ॥ ८ ॥

९

श्रीमान् भूपालमौलिस्फुरितमणिगणज्योतिरुद्योतिताग्निः,
भव्याम्भोजातजातप्रमदकरनिधिस्यक्तमायामयादिः ।
इदयस्कन्दर्पदर्पप्रवालितगिलितस्तूर्णितश्चार्थशस्यः,
जीयाज्जोनाब्जभास्वानुपमविनयो नोत्सिद्धान्तदेव. (?) ॥ ९ ॥

१०

जीयादसावनुपमं शुभचन्द्रदेवो भावोद्भवोद्भवविनाशनमूलमन्त्रः ।
निस्तन्द्रसान्द्रविबुधस्तुतिभूरिपात्रं त्रैलोक्यगेहमणिदीपसमानकीर्तिः ॥१०॥

११

मूर्तिश्शमस्य नियमस्य विनूतपात्र क्षेत्र श्रुतस्य यशसोऽनवजन्मभूमिः ।
भूविभुतश्रितवतासुरभोजकल्पानस्पायुधाजिबसताङ्गुशुभचन्द्रदेवः ॥११॥

इन्दु शरद्वद बेल् दिगळ् पुदिदुदु देसेदेसेयोळेनिप जसदोळप ताळिठ दामनन्दिशिद्धान्तदेवर-
वरअशिष्यरधिगततत्त्वर ।

शान्ततेवेत्तचित्त जनोळाद विरोधमिदेत्त ? निस्पृहर् ।
स्वांततेवेत्तकांक्षे परमार्थदोळिनु नेग लत्ते वेत्तिदा ॥
नीतन [रिन्मरा (?)] रेने [जन्य ?] जिनेन्द्रवीरनन्दिशि-
द्धान्तमुनीन्द्ररें सुचरितक्रमदोळ् विपरीत वृत्तरो ॥
बोधितभय्यरचित-वर्धमान श्रीधरदेवरेंबर वर्गप्रतनूभवरादरा ।
श्रीधरगर्दाशिष्यरवरोळनेगळ्दर् मलधारिदेवरु श्रीधरदेवर ॥
नतनरेन्द्रकिरीटतदार्चितक्रमर् अनुवशनागि बर्पनेनगबुरुहोदरनोदे पृथिन ।
बिनोळे वसके वदने भव जलजासननेत्रमीनके ॥
तन मनकं ' करीन्द्रमदोद्धत नपर चित्तज- ।
न्मनेनल [वोरलन्मने ?] नेमिचन्द्रमलधारिदेव [रतेरेयेन ?] ॥

श्रुतधर [वलित्तिने ?] मेय्यनोमैयु तुरिसुबुदिल्ल निद्वेवेरमगुलनिकुगुदिल्ल वागिल किस्तेरे
युबुदिल्ल गुर्वदिल्ल (महेन्द्रनु) नेरे [ओण ?] बणिसल् गुणगणावळिय मलधारिदेवर ॥

आमलधारिदेवमुनिमुख्यर शिष्यरोळग्रगण्यरुर्विमहित [कर्पायगुर्व ?] जितरुपायक्रोध^१ ले,भमान-
मायामदवजितनेंगर्देरिन्दुमरीचिगळ्दर् (दि ?) यश श्री नेमिचन्द्रकीर्त्तिमुनिनाथरुद्रात्तचरित्रवृत्तिर्यि ॥
मलधारिदेवरिद । बेळगिदुदु जिनेन्द्रशासन मुञ्ज निर्मलमागि मत्तमीगळ् । बेळगिदुपुदु चन्द्रकीर्त्तिभट्टारकरि ॥

बेळगुव कीर्त्तिचट्टिके भृदूक्तिसुधारसपूर्णमूर्तयो
ळूवेळेदमल पोददं सितलाछनमागिरे चन्द्रनदम ॥
तळेदु जन मनरोळे दिगतर विकसितो—
ज्वलशुभचन्द्रकीर्त्तिमुनिनाथरिदे' विबुधाभिवद्यरो ॥

(पयितु ?) प्रसरकिरणारातीयचन्द्रकीर्त्तिमुनेद्राशातवर्त्तितकीर्त्तिगळ् मुनिवृन्दवन्दितरादरा-
शातचित्तर शिष्यराटर्दिवाकरणदिसिद्धान्तदेवरिदे' जिनागमवार्धिपारगरादरो । इदाबुदरिदे'दिकिकेय्यु
सिद्धान्तवारिधिय तळदेवदंदे'दोढाने'गुलिसुवेनेनळ् दिवाकरणदिसिद्धतदेवराखिलागममकरमार्गमंतिम-
सुधाबुप्रभुरपूरनिकर व्याख्यानधोप मरुच्चलितोत्तुगतरगवोपमेने मिक्कौदार्यदि दोपनिर्मलधर्माश्रुतदिन-
लकरिसि गभीरस्वम ताळि भूवलधेके पवित्ररागि नेगळ्दरा सिद्धान्तरत्नाकरर् ॥ अवरअशिष्यर्

मरेदुमदोम्भे लौकिकदवातेंयनाडद केतवागिल ।
तेरेयद आनुवस्तमितभागिरेपोगद मेय्यनोम्मेयु ॥
तुरिसटकुक्कुटासनके सोलद गडविमुक्तवृत्तिथ ।
मरेयदघोरदुश्चरत्तपश्चरित मळधारिदेवर ॥ अवरअशिष्यर्

१

श्रीदः श्रीगणवाधिवर्धनकरश्चन्द्रावदातोत्पण स्थेयान् श्रीमलधारिदेवयमिन पुत्र पवित्रो भुवि ।

१ अ प्रतिमें यहाँ ' तचदेवप्रकर ' ऐसा पाठ है ।

२ स. प्रतिमें ' गुर्वजितकपायक्रोध ' इतना पाठ नहीं है ।

सद्धर्मैकशिखामणिजिनपतेर्भन्वैकचिन्तामणि स श्रीमान् शुभचन्द्रदेवमुनिपः सिद्धान्तविद्यानिधिः ॥१॥

२

शब्दाधिष्ठितभूतले परिलसत्साकौल्लसस्तभके (?)
साहित्यस्यधिकाश्मभितिरुचिरे (?) ज्योतिर्मये मढले ।
सद्गुरत्नत्रयमूलरत्नकलशे स्याद्वादहर्म्यं मुदा,
ओ (?) देवेन्द्रसुरार्चितेर्दिविपदैस्सद्भिर्विरेजस्तु (?) तत् ॥ २ ॥

३

देवेन्द्रसिद्धान्तमुनीन्द्रपादपकेजभृगः शुभचन्द्रदेवः ।
धदीयनामापि विनेयचेतोजातं तमो हर्तुमलं समर्थः ॥ ३ ॥

४

परमजिनेश्वरविरचितवरसिद्धान्ताम्बुराशिपारगरेदी ।
धरे ऋणिषुगुं गुणगणधरर शुभचन्द्रदेवसिद्धान्तिकरं ॥ ४ ॥

५

श्रीमज्जिनेन्द्रपदपद्मपरागतुङ्गः श्रीजैनशासनसमुद्भूतवार्धिचन्द्रः ।
सिद्धान्तशास्त्रविहिताङ्कितदिव्यवाणी धर्मप्रबोधमुक्कुरः शुभचन्द्रसूरिः ॥ ५ ॥

६

चिचोद्भूतमदेभकन्ददलनम्रोत्कण्ठकण्ठीरवो भव्याम्भोजकुलप्रबोधनकृते विद्वज्जनानन्दकुत् ।
स्थेयात्कुन्दहिमेन्दुनिर्मलयशोवल्लीसमालम्बनः, स्तम्भः श्रीशुभचन्द्रदेवमुनिपः सिद्धान्तरत्नाकरः ॥ ६ ॥

७

कुवलयकुलबन्धुध्वस्तमीहातमिस्त्रे विकसितमुनितत्त्वे सज्जनानन्दद्यूते ।
विदितविमलनानासत्कलान्विबद्धमूर्तिः शुभमतिशुभचन्द्रो राजवद्राजतेऽयम् ॥ ७ ॥

८

दिग्दंतिदन्तान्तरवर्षिकीर्षिः रत्नत्रयालंकृतचारुमूर्तिः ।
जीयाश्विरं श्रीशुभचन्द्रदेवो भव्याब्जिनीराजितराजहसः ॥ ८ ॥

९

श्रीमान् भूपालमौलिरुक्कुरितमणिगणज्योतिरुद्योतिताङ्घ्रिः,
भव्याम्भोजातजातप्रमदकरनिधिस्यक्तमायामयादिः ।
इन्द्ररत्नदुर्धर्पप्रचलितगिलितस्तूर्णितश्चर्यशस्यः,
जीयाजैनाब्जभास्वानुपमविनयो नोत्सिद्धान्तदेवः (?) ॥ ९ ॥

१०

जीयादसावनुपमं शुभचन्द्रदेवो भावोद्भवोद्भवविनाशनमूलमन्त्र ।
निस्तन्द्रसान्द्रविबुधस्तुतिभूरिपात्रं त्रैलोक्यगेहमणिदीपसमानकीर्तिः ॥१०॥

११

सर्वेदशमस्य नियमस्य विनूतपात्रं क्षेत्र श्रुतस्य यशसोऽनवजन्मभूमिः ।
भूवि श्रुतश्रितवत्तासुरभोजकल्पानरुपायुधास्त्रिवसताम्बुभचन्द्रदेवः ॥११॥

स्वस्ति श्रीसमस्तगुणगणालङ्कृतसत्यशौचाचारचारुचरित्रनयविनयशीलसपञ्चेयु विबुधप्रसन्नेयु
आहाराभयभैषज्यशास्त्रदानविनोदेयु गुणगणारुहादेयु जिनस्तवनसमयसमुच्चलितदिग्धगन्धबन्धुरगंधो-
दकपवित्रगात्रेयु गोत्रपवित्रेयु सम्यक्त्वचूडामणिषु मण्डलिनादश्रीभुजबलगंगपेर्माडिदेवरेतेयरमप्प रविदेवि
(?) यक् श्रुतपचमिय नोंतुजवणेयानाडचन्नियेरेयेतुगचैत्यालयदाचार्यरु भुवनविख्यातरुमेनिसिदत्तम्म
गुरुगल्लु श्रीशुभचन्द्रसिद्धा तदेवगं श्रुतपूजेय माडि बरेयिसि कोट धवलेय पुस्तक मगलमहा ॥

श्रीकुपण (कोपण) प्रसिद्धपुरमापुरदेवळे वशवार्धि शोभाकरमूर्जित निखिलसाक्षरिकास्यविलासदर्पण ।
नाकजनाथवद्यजिनपादपयोखह भृङ्गनेन्दु भूलोकमेदं वर्णिषुदु जिन्नमन मनुनीतिमार्गन ।

जिनपदपद्माराधकमनुपमविनयांबुराशिदानविनोद मनुनीतिमार्गनसतीजनदूर लौकिकार्थदानिगजिन्नम् ।
वारिनिधियोल्लेगेमुत्तम् नैरिदुव कौंडु फोरेदु वरुण सुददि भारतियकोरळोल्लिक्किदहारमननुकरिसलेसेवरेवो जिन्नम् ॥

यह प्रशस्ति बहुत अशुद्ध और सभवत खलन-प्रचुर है। इसमें गद्य और पद्य तथा संस्कृत और कनाडी दोनों पाये जाते हैं। विना मूडबिद्रीकी प्रतिके मिळान किये सर्वथा शुद्ध पाठ तैयार करना असंभवसा प्रतीत होता है। लिपिकारोंने कहीं कहीं कनाडीको विना समझे संस्कृतरूप देनेका भी प्रयत्न किया जान पड़ता है जिससे बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न होगई है। उदाहरणार्थ—कर्ता एक वचनका रूप कुन्दकुन्दाचार्यर् तृतीयामें परिवर्तित कुन्दकुन्दाचार्यैर् पाया जाता है। ऐसे स्थलोंको विद्वान् सशोधकोंने खूब संभाला है। पर कई खलनोंकी पूर्ति फिर भी नहीं की जा सकी, कनाडी पद्य भी बहुत अष्ट और गद्यके रूपमें परिवर्तित हो गये हैं जिनका अर्थ भी समझना कठिन हो गया है। तथापि उससे निम्न बातें स्पष्टतः समझमें आती है—

१. धवलाकी प्रति बन्नियेकेर चैत्यालयके सुप्रसिद्ध आचार्य शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवको समर्पित की गई थी।

२. शुभचन्द्रदेव देशीगणके थे और उनकी गुरुपरंपरामें उनसे पूर्व कुन्दकुन्द, गृद्धपिच्छा वलाकपिच्छ, गुणनन्दि, देवेन्द्र, वसुनन्दि, रविचन्द्र, दामनन्दि, वीरनन्दि, श्रीधरदेव, मलधारिदेव, (नेमि) चन्द्रकीर्ति और दिवाकरनन्दि आचार्य हुए।

३. पुस्तक-समर्पण कार्य मंडलिनाडुके भुजबलगंगपेर्माडिदेवकी काकी देमियक्कने श्रुत-पंचमी व्रतके उद्यापनके समय किया था।

शुभचन्द्रदेवकी उक्त गुरुपरंपरा परसे उनका पता लगाना सुलभ हो गया। उक्त परम्परा, एक दो नामोंके कुछ भेदके साथ प्राय वही है, जो श्रवणबल्लुलक शिलालेख नं. ४३ (११७) में पाई जाती है। यही नहीं, किन्तु धवलाकी प्रशस्तिके तीन पद्य ज्योंके त्यों उक्त शिलालेखमें भी पाये जाते हैं (पद्य न. १२, १३ और २१)। लेखमें शुभचन्द्रदेवके स्वर्गवासका समय निम्न प्रकार दिया गया है—

वाणाम्भोधिनभद्रशशाङ्गुलिते जाते शक्राष्टे ततो
वर्षे शोभकृताह्वये व्युपनते मासे पुन श्रावणे ।
पक्षे कृष्णविपक्षवर्तिनि मिते वारे दशम्या तिर्यां
स्वर्यात. शुभचन्द्रदेवगणभृत् सिद्धातवारांनिधिः ॥

अर्थात् शुभचन्द्रदेवका स्वर्गवास शक संवत् १०४५ श्रावण शुक्ल १० दिन सितवार (शुक्रवार) को हुआ । उनकी निपद्या पोथसल-नरेण विष्णुवर्धनके मंत्री गगराजने निर्माण कराई थी ।

शिमोगसे मिले हुए एक दूसरे शिलालेखमें वन्नियेके चैत्यालयके निर्माणका समय शक सं० १०३५ दिया हुआ है और उसमें मन्दिरके लिये भुजवल्लगंगपेर्माडिदेवद्वारा दिये गये दानका भी उल्लेख है । अन्तमें देशीगणके शुभचन्द्रदेवकी प्रशंसा भी की गई है । (एपी-प्राफिका कर्नाटिका, जिल्द ८, लेख न० ९७)

खोज करनेसे धवला प्रतिका दान करनेवाली श्राविका देमियक्क ता पता भी श्रावणवेल्लुलके शिलालेखोंसे चल जाता है । लेख न० ४६ में शुभचन्द्र मुनिकी जयकारके पश्चात् नागले माताकी सन्तति दडनायकित्ति लक्कले, देमति और वूचिराजका उल्लेख है और वूचिराजकी प्रशंसाके पश्चात् कहा गया है कि वे शक १०३७ वैशाख सुदि १० आदित्यवारको सर्व परिग्रह त्याग पूर्वक स्वर्गवासी हुए और उन्हींकी स्मृतिमें सेनापति गगने पाषाण स्तम्भ आरोपित कराया । लेखके अन्तमें 'मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवके शिष्य वूचणकी निपद्या' ऐसा कहा गया है । इस लेखमें जो वूचणकी अष्टमिनी देमतिका उल्लेख आया है, उसका सविस्तर वर्णन लेख नं० ४९ (१२९) में पाया जाता है जो उनके संन्यासमरणकी प्रशस्ति है । यहाँ उनके नाम—देमति, देमवती, देवमती तथा दोवार देमियक्क दिये गये हैं और उन्हें मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवकी शिष्या तथा श्रेष्ठिराज चामुण्डकी पत्नी कहा है । उनकी धर्मशुद्धिकी प्रशंसा तो लेखमें खूब-ही की गई है । उन्हें शासन देवताका आकार कहा है, तथा उनके आहार, अभय, औषध और शास्त्रदानकी स्तुति की गई है । उस लेखके कुछ पद्य इस प्रकार हैं—

१

आहार त्रिजगज्जनान विभय भीताय दिव्योपध,
व्याधिध्यापदुपेतडीनमुखिने श्रेष्ठि च शास्त्रागमम् ।
एवं देवमत्तिस्सदेव ददती प्रप्रक्षये स्वायुषा—
महैदेवमति विधाय विधिना दिव्यो बध् प्रोढभूत् ॥ ४ ॥

२

आसीत्परक्षोभकरप्रतापाशेपावनीपालकृतादरस्य ।
चामुण्डनाम्नो वणिज प्रिया स्त्री मुह्या सती या भुवि देमतीति ॥ ५ ॥

स्वस्ति श्रीसमस्तगुणगणालंकृतसत्यशौचाचारचारुचरित्रनयविनयशीलसपन्नेयु विद्युधप्रसन्नेयु
आहाराभयभैषज्यशास्त्रदानविनोदेयु गुणगणाह्लादेयु जिनस्तवनसमयसमुच्चलितदिव्यगन्धबन्धुरगंधो-
दकपवित्रगात्रेयु गोत्रपवित्रेयु सम्यक्त्वचूडामणियु मण्डलिनादश्रीभुजबलगगपेर्माडिदेवरत्नेयस्मरूप रविदेवि
(१) यक्ष श्रुतपचमियं नोंतुजवणेयानाडवन्नियकेरेयुतुगचैत्यालयदाचार्यरु भुवनविख्यातरुमेनिसिदतम्म
गुरुगल्ल श्रीशुभचन्द्रसिद्धान्तदेवगं श्रुतपूजेय माडि बरेयिसि कोट्ट धवलेय पुस्तकं मगलमहा ॥

श्रीकुपण (कोपण) प्रसिद्धपुरमापुरदोळगे वशवार्धि शोभाकरमूर्जित निखिलसाक्षरिकास्थविलासदर्पण ।
नाकजनाथवंधजिनपादपयोरुहभृङ्गनेन्दु भूलोकमेद वर्णिपुट्टु जिन्नमन मनुनीतिमार्गन ।

जिनपदपद्माराधकमनुपमविनयांबुराशिदानविनोद मनुनीतिमार्गनसत्तीजनदूरं लौकिकार्थदानिगजिन्नम् ।
वारिनिधियोळगेमुत्तम् नेरिदुवं कोंडु कोरेदु वरुण सुददि आरतियकोरळोळिकिदहारमननुकरिसलेसेवरेचो जिन्नम् ॥

यह प्रशस्ति बहुत अशुद्ध और समवत* स्वलन-प्रचुर है। इसमें गद्य और पद्य तथा संस्कृत और कनाडी दोनों पाये जाते हैं। विना मूडबिंद्रीकी प्रतिके मिळान किये सर्वथा शुद्ध पाठ तैयार करना असंभवसा प्रतीत होता है। लिपिकारोंने कहीं कहीं कनाडीको विना समझे संस्कृतरूप देनेका भी प्रयत्न किया जान पड़ता है जिससे बड़ी गडबड़ी उत्पन्न होगई है। उदाहरणार्थ—कर्त्ता एक वचनका रूप कुन्दकुन्दाचार्यर् तृतीयामें परिवर्तित कुन्दकुन्दाचार्यर् पाया जाता है। ऐसे स्थलोंको विद्वान् सशोधकोंने खूब संमाला है। पर कई स्वलनोंकी पूर्ति फिर भी नहीं की जा सकी, कनाडी पद्य भी बहुत भ्रष्ट और गद्यके रूपमें परिवर्तित हो गये हैं जिनका अर्थ भी समझना कठिन हो गया है। तथापि उससे निम्न बातें स्पष्टतः समझमें आती है—

१. धवलाकी प्रति बन्नियकेरे चैत्यालयके सुप्रसिद्ध आचार्य शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवको समर्पित की गई थी।

२. शुभचन्द्रदेव देशीगणके थे और उनकी गुरुपरपरामें उनसे पूर्व कुन्दकुन्द, गृद्धपिच्छा बलाकपिच्छ, गुणनन्दि, देवेन्द्र, वसुनन्दि, रविचन्द्र, दामनन्दि, वीरनन्दि, श्रीधरदेव, मलधारिदेव, (नेमि) चन्द्रकीर्ति और दिवाकरनन्दि आचार्य हुए।

३. पुस्तक-समर्पण कार्य मंडलिनाडुके भुजबलगगपेर्माडिदेवकी काकी देमियक्कने श्रुत-पचमी व्रतके उद्यापनके समय किया था।

शुभचन्द्रदेवकी उक्त गुरुपरपरा परसे उनका पता लगाना सुलभ हो गया। उक्त परम्परा, एक दो नामोंके कुछ भेदके साथ प्राय वही है, जो श्रवणबल्लुलक शिलालेख नं ४३ (११७) में पाई जाती है। यही नहीं, किन्तु धवलाकी प्रशस्तिके तीन पद्य ज्योंके त्यों उक्त शिलालेखमें भी पाये जाते हैं (पद्य न. १२, १३ और २१)। लेखमें शुभचन्द्रदेवके स्वर्गवासका समय निम्न प्रकार दिया गया है—

वाणाम्भोधिनभद्रशशाङ्कतुलिते जाते शक्राब्दे ततो
 वर्षे शोभकृताह्वये न्युपनते मासे पुन श्रावणे ।
 पक्षे कृष्णविपक्षवसिंनि स्थिते चारे दशम्या तिथ्या
 स्मर्यात. शुभचन्द्रदेवगणभृन् सिद्धातवारांनिधि ॥

अर्थात् शुभचन्द्रदेवका स्वर्गवास शक संवत् १०४५ श्रावण शुक्ल १० दिन सितवार (शुक्रवार) को हुआ। उनकी निपट्या पोयसल-नरेश विष्णुवर्धनके मंत्री गंगराजने निर्माण कराई थी।

शिमोगसे मिले हुए एक दूसरे शिलालेखमे वनियकेरे चैत्यालयके निर्माणका समय शक सं० १०३५ दिया हुआ है और उसमे मन्दिरके लिये भुजबललगगपेमांडिदेवद्वारा दिये गये दानका भी उल्लेख है। अन्तमे देशीगणके शुभचन्द्रदेवकी प्रशंसा भी की गई है। (एपी-ग्राफिया कर्नाटिका, जिल्द ८, लेख न० ९७)

खोज करनेसे धवला प्रतिका दान करनेवाली श्राविका देमियक्का पता भी श्रावणवेल्लुके शिलालेखोंसे चल जाता है। लेख न० ४६ मे शुभचन्द्र मुनिकी जयकारके पश्चात् नागले माताकी सन्तति दडनायकिचि लक्कले, देमति और वूचिराजका उल्लेख है और वूचिराजकी प्रशंसाके पश्चात् कहा गया है कि वे शक १०३७ वैशाख सुदि १० आदित्यवारको सर्व परिग्रह त्याग पूर्वक स्वर्गवासी हुए और उन्हींकी स्मृतिमें सेनापति गगने पाषाण स्तम्भ आरोपित कराया। लेखके अन्तमें 'मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवके शिष्य वूचणकी निपट्या' ऐसा कहा गया है। इस लेखमे जो वूचणकी ज्येष्ठ भगिनी देमतिका उल्लेख आया है, उसका सविस्तर वर्णन लेख नं० ४९ (१२९) में पाया जाता है जो उनके संन्यासमरणकी प्रशस्ति है। यहा उनके नाम—देमति, देमवती, देवमती तथा दोन्नार देमियक्का दिये गये हैं और उन्हें मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छके शुभचन्द्र सिद्धान्तदेवकी शिष्या तथा श्रेष्ठिराज चामुण्डकी पत्नी कहा है। उनकी धर्मबुद्धिकी प्रशंसा तो लेखमें खूब-ही की गई है। उन्हें शासन देवताका आकार कहा है, तथा उनके आहार, अभय, औषध और शास्त्रदानकी स्तुति की गई है। उस लेखके कुछ पद्य इस प्रकार हैं:—

१

आहार त्रिजगज्जनाम विभय भीताय दिव्यौषध,
 व्याधिव्यापदुपेतदीनगुणिने श्रेष्ठि च शास्त्रागमम् ।
 एवं देवमतिस्सदेव वदती प्रप्रक्षये स्वायुषा—
 महर्हदेवमति विधाय विधिना दिव्या वधू प्रोढभूत् ॥ ४ ॥

२

आसीत्परक्षोभकरप्रतापाक्षोपावनीपालकृतादरस्य ।
 चामुण्डनाम्नो बणिज प्रिया स्त्री मुख्या सती या बुवि देमतीति ॥ ५ ॥

३

भूलोकचैत्यालयचैत्यपूजाव्यापारकृत्यादरतोऽवतीर्णा ।

स्वर्गात्सुरस्त्रीति विलोक्यमाना पुण्येन लावण्यगुणेन यात्र ॥ ६ ॥

४

आहारशास्त्राभयभेषजानां दायिन्यलं वर्णचतुष्टयाय ।

पश्चात्समाधिक्रियया मृदन्ते स्वस्थानवत्स्व. प्रविवेश योद्धैः ॥ ७ ॥

५

सद्धर्मशत्रुं कलिकालराजं जित्वा व्यवस्थापितधर्मधृत्या ।

तस्या जयस्तम्भनिभ शिलाया स्तम्भं व्यवस्थापयति स्म लक्ष्मीः ॥ ८ ॥

लेखके अन्तमें उनके सन्यासविधिसे देहत्यागका उल्लेख इसप्रकार है—

श्री मूलसंघद देशीगणद पुस्तकगच्छद शुभचन्द्रसिद्धान्तदेवर् गुडि सक वर्ष १०४२ नेय विकारि संवत्सरद फाल्गुण ब. ११ बृहवार दन्दु सन्यासन विधियि देमियक्क मुडिपिदल्ल ।

अर्थात् मूलसंघ, देशीगण, पुस्तकगच्छके शुभचन्द्रदेवकी शिष्या देमियक्कने शक १०४२ विकारिसंवत्सर फाल्गुन ब. ११ वृहस्पतिवारको सन्यासविधिसे शरीरत्याग किया ।

उक्त परिचय परसे सभब तो यही जान पडता है कि धवलाकी प्रतिका दान करने-वाली धर्मिष्ठा साध्वी देमियक्क ये ही होंगी, जिन्होंने शक १०४२ मे समाधिमरण किया । तथा उनके भतीजे मुजबलि* गंगेपर्माब्दिदेव जिनका धवलाकी प्रशस्तिमें उल्लेख है उनके आता बूचिराजके ही सुपुत्र हो तो आश्चर्य नहीं । उस व्रतोद्यापनके समय बूचिराजका स्वर्गवास हो चुका होगा, इससे उनके पुत्रका उल्लेख किया गया है । यदि यह अनुमान ठीक हो तो धवलाकी प्रति जो सभवतः मूडबिद्रीकी वर्तमान ताडपत्रीय प्रति ही हो और जो शक ९५० के लगभग लिखाई गई थी, बूचिराजके स्वर्गवासके पश्चात् और देमियक्कके स्वर्गवासके पूर्व अर्थात् शक १०३७ और १०४२ के बीच शुभचन्द्रदेवके सुपुर्द की गई, ऐसा निष्कर्ष निकलता है । पर यह भी सभब है कि श्रीमती देमियक्कने पुरानी प्रतिकी नवीन लिपि कराकर शुभचन्द्रको प्रदान की और उसमें पूर्व प्रतिके बीच-बीचके पद्य भी लेखकने कापी कर लिये हों ।

प्रशस्तिके अन्तिम भागमें तीन कनार्डीके पद्य हैं जिनमेंसे प्रथम पद्य 'श्री कुपण' आदिमें कोपण नामके प्रसिद्ध पुरकी कीर्ति और शेष दो पद्यों में जिन्न नामके किसी श्रावकके यशका वर्णन किया गया है । कोपण प्राचीन कालमें जैनियोंका एक बड़ा तीर्थस्थान रहा है ।

* भुजबलवीर होयसल नरेशोंकी उपाधि पाई जाती है । देखो शिलालेख न० १३८, १४३, ४९१, ४९४, ४९७.

चामुंडराय पुराणके 'असिधारा व्रतदिदे' आदि एक पद्यसे अवगत होता है कि तत्कालीन जैनी कोपणमें सल्लेखना पूर्वक देहत्याग करना विशेष पुण्यप्रद मानते थे। श्रवणबेलगोलके अनेक लेखोंमें इस पुण्य भूमिका उल्लेख पाया जाता है। लेख नं० ४७ (१२७) शक संवत् १०३७ का है। इसके एक पद्यमें कहा गया है कि सेनापति गंगने असंख्य जीर्ण जैनमंदिरोंका उद्धार कराकर तथा उत्तम पात्रोंको उदार दान देकर गंगवाडिदेश को 'कोपण' तीर्थ बना दिया। यथा—

मत्तिन मातवन्तिरलि जीर्ण जिनाश्रयकोटिय क्रम
बेत्तिरे मुत्तिनन्तिरनित्गंगलोल नेरे माडिसुत्तम—
त्युत्तमपात्रदानदोदव मेरेबुत्तिरे गङ्गवाडित्तो—
म्बत्तर सात्तिरे कोपणमाडुदु गङ्गणवण्डनाथति ॥ ३९ ॥

इससे कोपण तीर्थकी भारी महिमाका परिचय मिलता है।

लगभग शक सं० १०८७ के लेख नं० १३७ (३४५) में हुल्ल सेनापतिद्वारा कोपण महातीर्थमें जैन मुनिसंघके निश्चिन्त अक्षय दानके लिये बहुत सुवर्ण न्ययसे खरीदकर एक क्षेत्रकी वृत्ति लगाई जानेका उल्लेख है। यथा—

प्रियदिन्द हुल्लसेनापति कोपणमहातीर्थदोळधात्रियुवा—
द्वियमुल्लन्न चतुर्विंशति—जिन—मुनि सघके निश्चिन्तमाग
क्षय दान सल्लव पाङ्गि बहु—कनक—मना—क्षेत्र—जिर्गणु सद्दु—
त्तिथिन्तीलोरु मेळम्पोगळे विडिसिद पुण्यपुजैकधाम ॥ २७ ॥

इससे ज्ञात होता है कि यहा मुनि आचार्योंका अच्छा जुटाव रहा करता था और संभवतः कोई जैन शिक्षालय भी रहा होगा।

लगभग १०५७ के लेख नं० १४४ (३८४) के एक पद्यमें सेनापति एच द्वारा कोपण व अन्य तीर्थस्थानोंमें जिनमंदिर बनवाये जाने का उल्लेख है। यथा—

माडिसिद जितेन्द्रभवनङ्गलना कोपणादि तीर्थदल्लु
रुद्धिथिनेरुदो—वेत्तेसेव बेल्गोलदल्लु बहुचित्रभित्तिर्यं।
नोडिदर मनङ्गोळि पुवेम्बिनमेच—चमूपनत्थि कै—
गूडे धरित्रिकोण्डु कोनेदाडे जसम्मलिदाडे लीलेत्थि ॥ १३ ॥

निजाम हैद्राबाद स्टेटके रायचूर जिलेमें एक कोप्पल नामका ग्राम है, यहीं प्राचीन कोपण सिद्ध होता है। वर्तमानमें वहा एक दुर्ग तथा चहार दीवाली है जो चालुक्य कालीन कलाके द्योतक समझे जाते हैं। इनके निर्माणमें प्राचीन जैन मंदिरोंके चित्रित पाषाण आदिका उपयोग दिखाई दे रहा है। एक जगह दीवालमें कोई बीस शिलाछेखोंके टुकड़े चुने हुए पाये

३

भूलोकचैत्यालयचैत्यपूजाव्यापारकृत्यादरतोऽवतीर्णा ।

स्वर्गात्सुरस्त्रीति विलोक्यमाना पुण्येन लावण्यगुणेन यात्र ॥ ६ ॥

४

आहारशास्त्राभयभेषजानां दायिन्यलं वर्णचतुष्टयाय ।

पश्चात्समाधिक्रियया मृदन्ते स्वस्थानवत्स्व. प्रविवेश योद्धेः ॥ ७ ॥

५

सद्धर्मेशत्रु कलिकालराज जित्वा व्यवस्थापितधर्मवृत्त्या ।

तस्या जयस्तम्भनिभ शिलाया स्तम्भं व्यवस्थापयति स्म लक्ष्मीः ॥ ८ ॥

लेखके अन्तमें उनके संन्यासविधिसे देहत्यागका उल्लेख इसप्रकार है—

श्री मूलसषद देशीगणद पुस्तकगच्छद शुभचन्द्रसिद्धान्तदेवर् गुड्डि सक वर्ष १०४२ नेय विकारि संवत्सरद फाल्गुण ब. ११ बृहबार दन्दु सन्यासन विधियि देमियक्क मुडिपिदलु ।

अर्थात् मूलसंघ, देशीगण, पुस्तकगच्छके शुभचन्द्रदेवकी शिष्या देमियक्कने शक १०४२ विकारिसवत्सर फाल्गुन ब ११ वृहस्पतिवारको सन्यासविधिसे शरीरत्याग किया ।

उक्त परिचय परसे संभव तो यही जान पड़ता है कि धवलाकी प्रतिका दान करने-वाली धर्मिष्ठा साध्वी देमियक्क ये ही होंगीं, जिन्होंने शक १०४२ मे समाधिमरण किया । तथा उनके भतीजे भुजबलि× गगपेर्माडिदेव जिनका धवलाकी प्रशस्तिमें उल्लेख है उनके भ्राता बूचिराजके ही सुपुत्र हों तो आश्चर्य नहीं । उस व्रतोद्यापनके समय बूचिराजका स्वर्गवास हो चुका होगा, इससे उनके पुत्रका उल्लेख किया गया है । यदि यह अनुमान ठीक हो तो धवलाकी प्रति जो संभवतः मूडविद्रीकी वर्तमान ताडपत्रीय प्रति ही हो और जो शक ९५० के लगभग लिखाई गई थी, बूचिराजके स्वर्गवासके पश्चात् और देमियक्कके स्वर्गवासके पूर्व अर्थात् शक १०३७ और १०४२ के बीच शुभचन्द्रदेवके सुपुर्द की गई, ऐसा निष्कर्ष निकलता है । पर यह भी संभव है कि श्रीमती देमियक्कने पुरानी प्रतिकी नवीन लिपि कराकर शुभचन्द्रको प्रदान की और उसमें पूर्व प्रतिके बीच-बीचके पद्य भी लेखकने कापी कर लिये हों ।

प्रशस्तिके अन्तिम भागमें तीन कनार्डाके पद्य हैं जिनमेंसे प्रथम पद्य 'श्री कुपण' आदिमें कोपण नामके प्रसिद्ध पुरकी कीर्ति और शेष दो पद्यों में जिन्न नामके किसी श्रावकके यशका वर्णन किया गया है । कोपण प्राचीन कालमें जैनियोंका एक बड़ा तीर्थस्थान रहा है ।

× भुजबलवार होस्पल नरेशोंकी उपाधि पाई जाती है । देखो शिलालेख न० १३८, १४३, ४९१, ४९४, ४९७.

चामुंडराय पुराणके 'असिधारा व्रतदिदे' आदि एक पद्यसे अवगत होता है कि तत्कालीन जैनी कोपणमें सल्लेखना पूर्वक देहत्याग करना विशेष पुण्यप्रद मानते थे। श्रवणवेलगोलके अनेक लेखोंमें इस पुण्य भूमिका उल्लेख पाया जाता है। लेख नं० ४७ (१२७) शक संवत् १०३७ का है। इसके एक पद्यमें कहा गया है कि सेनापति गगने असंख्य जीर्ण जैनमंदिरोंका उद्धार कराकर तथा उत्तम पात्रोंको उदार दान देकर गंगवाडिदेश को 'कोपण' तीर्थ बना दिया। यथा—

मत्तिन मातवन्तिरलि जीर्ण जिनाश्रयकोटिय क्रमं
वेत्तिरे मुञ्जिनन्तिरनित्तुर्गलोल नेरे माडिसुत्तम—
त्युत्तमपात्रदानदोदवं मेरेखुत्तिरे गङ्गवाडितो—
म्बरारु सासिर कोपणमादुदु गङ्गणवण्डनाधनि ॥ ३९ ॥

इससे कोपण तीर्थकी भारी महिमाका परिचय मिलता है।

लगभग शक सं० १०८७ के लेख नं. १३७ (३४५) में हुल्ल सेनापतिद्वारा कोपण महातीर्थमें जैन मुनिसंघके निश्चिन्त अक्षय दानके लिये बहुत सुवर्ण व्ययसे खरीदकर एक क्षेत्रकी वृत्ति लगाई जानेका उल्लेख है। यथा—

प्रियदिन्द हुल्लसेनापति कोपणमहातीर्थदोलधात्रियुवा—
खियमुल्लन्न चतुर्विंशति—जिन—मुनि सघधे निश्चिन्तमाग
क्षय दान सल्लव पाङ्गि बहु—कनक—मना—क्षेत्र—जिर्गणु सद्बु—
त्तिचिन्तिनीलोक मेळम्पोगले विडिसिद पुण्यपुजैकधाम ॥ २७ ॥

इससे ज्ञात होता है कि यहाँ मुनि आचार्योंका अच्छा जुटाव रहा करता था और संभवतः कोई जैन शिक्षालय भी रहा होगा।

लगभग १०५७ के लेख नं. १४४ (३८४) के एक पद्यमें सेनापति एच द्वारा कोपण व अन्य तीर्थस्थानोंमें जिनमंदिर बनवाये जाने का उल्लेख है। यथा —

माडिसिद जिनेन्द्रभवनङ्गलना कोपणादि तीर्थदल्लु
रुडियिनेहदो—वेत्तेसेव बेलगोलदल्लु बहुचित्रभित्तिं ।
नोडिदर मनङ्गोकि पुवेम्बिनमेच—चमूपनत्थि कै—
गूडे धरित्रिकोण्डु कोनेदाडे जसम्मलिदाडे लीलेथि ॥ १३ ॥

निजाम हैद्राबाद स्टेटके रायचूर जिलेमें एक कोप्पल नामका ग्राम है, यही प्राचीन कोपण सिद्ध होता है। वर्तमानमें वहाँ एक दुर्ग तथा चहार दीवाली है जो चालुक्य कालीन कलाके द्योतक समझे जाते हैं। इनके निर्माणमें प्राचीन जैन मंदिरोंके चित्रित पाषाण आदिका उपयोग दिखाई दे रहा है। एक जगह दीवालमें कोई बीस शिलालेखोंके टुकड़े चुने हुए पाये

जाते हैं। इस स्थानपर व उसके आसपास कोई दस बीस कोसकी इर्दगिर्दमे अशोकके कालसे लगाकर इस तरफके अनेक लेख व अन्य प्राचीन स्मारक पाये जाते हैं।

कोपणके समीप ही पाल्कीगुण्डु नामक पहाड़ी पर, अशोकके शिलालेखके पास वराग-चरितके कर्ता जटासिंहनन्दि के चरणचिन्ह भी, पुरानी कन्नडमें लेखसहित, अंकित है। (वराग-चरित, भूमिका पृ. १७ आदि)

इसप्रकार यह स्थान बड़ा प्राचीन, इतिहास प्रसिद्ध और जैनधर्म के लिये बहुत महत्वपूर्ण रहा है * ।

२. सत्प्ररूपणा विभाग

षट्खंडागमकी पूर्व प्रकाशित प्रथम पुस्तक तथा अब प्रकाशित होनेवाली द्वितीय पुस्तकको हमने 'सत्प्ररूपणा' के नामसे प्रकट किया है। प्रथम जिल्दके प्रकाशित होनेपर शका उठाई गई है कि उस ग्रंथको सत्प्ररूपणा न कहकर 'जीवस्थान-प्रथम अंश' ऐसा लिखना चाहिये था। इसके उन्होंने दो कारण बतलाये हैं। एक तो यह कि इस विभागके भीतर जो मंगलाचरण है वह केवल सत्प्ररूपणाका नहीं है बल्कि समस्त जीवस्थान खडका है और दूसरे यह कि इसके आदिमें जो विषय-विवरण पाया जाता है वह सत्प्ररूपणाके बाहरका है, सत्प्ररूपणाका अंग नहीं ×। इन दोनों आपत्तियोंपर विचार करके भी हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि हमने जो इस विभागको 'जीवस्थानका प्रथम अंश' न कहकर 'सत्प्ररूपणा' कहा है वही ठीक है। इसके कारण निम्न प्रकार हैं—

१. यह बात ठीक है कि आदिका मंगलाचरण केवल सत्प्ररूपणाका ही नहीं, किन्तु समस्त जीवस्थानका है। पर, अवान्तर विभागोंकी दृष्टिसे सत्प्ररूपणाके भीतर उसे लेनेसे भी वह समस्त जीवस्थानका बना रहता है। सब ग्रंथोंमें मंगलाचरणकी यही व्यवस्था पायी जाती है कि वह ग्रंथके आदिमें किया जाता है और जो भी खड, स्कंध, सर्ग, अध्याय व विषयविभाग आदिमें हो उसीके अन्तर्गत किये जाने पर भी वह समस्त ग्रंथका समझा जाता है। समस्त ग्रंथपर उसका अधिकार प्रकट करनेके लिये उसका एक स्वतंत्र विभाग नहीं बनाया जाता। अतएव जीवस्थान ही क्यों, जहातक ग्रन्थमें सूत्रकारकृत दूसरा मंगलाचरण न पाया जावे वहातक उसी मंगलाचरणका अधिकार समझना चाहिये, चाहे विषयकी दृष्टिसे ग्रंथमें कितने ही विभाग क्यों न पड़ गये हों। स्वयं धवलाकारने आगे वेदनाखड व कृति अनुयोगद्वाराके आदिमें आये हुए मंगलाचरणको शेष दोनों खडों व तेवीस अधिकारोंका भी मंगलाचरण कहा है। यथा—

* देपो जेनसि मा. ५, २ पृ ११०

× जनेकान्त, पृ २, फिण ३, पृ. २०१

उपरि उच्चमाणेषु तिसु खडेषु कस्सेद मगल ? तिण्ण खडाणं । × × × कध वेयणाए आदीए उच्च मगल सेस-दो-खडाण होदि ? ण, कदीए आदिभिह उत्तस्स पुट्टस्स मगलस्स सेस-तेवीस-अणि योगहारेसु पउत्ति-दसणादो ।

ऐसी अवस्थामें णमोकार मंत्ररूप मंगलाचरणके सत्प्ररूपणाके आदिमें होते हुए भी उसके समस्त जीवस्थानके मंगलाचरण समझे जानेमें कोई आपत्ति तो नहीं होना चाहिये ।

२. यथार्थतः तो वह मंगलाचरण सत्प्ररूपणाका ही है । आचार्य पुष्पदन्तने उस मंगलाचरणको आदि लेकर सत्प्ररूपणा मात्रके ही सूत्रोंकी तो रचना की है । यदि हम इसे भूतबलिक आचार्यकी आगेकी रचनासे पृथक् कर लें तो पुष्पदन्तकी रचना उस मंगलसूत्र सहित सत्प्ररूपणा ही तो कहलायगी । जीवस्थानका प्रथम अंश यही सत्प्ररूपणा ही तो है ।

३. यदि इस अंशको सत्प्ररूपणा न कह कर जीवस्थानका प्रथम अंश कहते तो पाठक उससे क्या समझते ? इस नामसे उसके विषय पर क्या प्रकाश पड़ता ? वह एक अज्ञात कुलशील और निरूपयोगी शीर्षक सिद्ध होता ।

४. हमने जो ग्रंथका विषय-विभाग किया है वह मूलग्रन्थ पुष्पदन्त और भूतबलिकृत षट्खंडागमकी अपेक्षासे है, और उसमें सत्प्ररूपणासे पूर्व किसी और विषयविभागके लिये स्थान नहीं है । मंगलाचरणके पश्चात् छह सात सूत्रोंमें सत्प्ररूपणाका यथोचित स्थान और कार्य बतलानेके लिये चौदह जीवसमासों और आठ अनुयोगद्वारोंका उल्लेखमात्र करके सत्प्ररूपणाका विवेचन प्रारम्भ कर दिया गया है । धवलाटीकाके कर्ताने उन सूत्रोंकी व्याख्याके प्रसंगसे जीवस्थानकी उत्थानिकाका कुछ विस्तारसे वर्णन कर डाला तो इससे क्या उस विभागको सत्प्ररूपणासे अलग निर्दिष्ट करनेके लिये एक नये शीर्षककी आवश्यकता उत्पन्न होगई ? ऐसा हमें जान नहीं पड़ता । षट्खंडागमके भीतर जो सूत्रकारद्वारा निर्दिष्ट विषय विभाग हैं उन्हींके अनुसार विभाग रखना हमने उचित समझा है । धवलाकारने भी आदिसे लगाकर १७७ सूत्रोंकी क्रमसंख्या लगातार रखी है और उनकी एक ही सिलसिलेसे टीका की है जिसे उन्होंने ' संतमुत्तविवरण ' कहा है जैसा कि प्रस्तुत भागके प्रारम्भिक वाक्यसे स्पष्ट है । यथा —

‘ सपहि सत्त-सुत्त-विवरण-समत्ताणत्तरं तेहिं परुवण भणिस्सामो ’ ।

३. वर्गणा - विचार

षट्खंडागमके छह खंडोंका परिचय प्रथम जिल्दकी भूमिकामें कराया जा चुका है । वहां यह बतलाया गया है कि उन छह खंडोंमें से प्रथम पांच अर्थात् जीवहाण, खुदाबंध, बंधसा-मित्तविचय, वेदणा और वगणा उपलब्ध धवलाकी प्रतियोंमें निबद्ध हैं तथा शेष छठवां अर्थात् महाबध स्वतंत्र पुस्तकारूढ़ है, जिसकी प्रतिलिपि अभीतक मूडविद्वी मठके बाहर उपलब्ध नहीं

हैं। इनमेंसे चार खंडोंके सम्बन्धमें तो कोई मतभेद नहीं है, किन्तु वेदना और वर्णना खंडकी सीमाओंके सम्बन्धमें एक शंका उत्पन्न की गई है जो यह है कि “ धवलग्रंथ वेदना खंडके साथ ही समाप्त हो जाता है—वर्णनाखंड उसके साथमें लगा हुआ नहीं है ”। इस मतकी पुष्टिमें जो युक्तियां दी गई हैं वे संक्षेपतः निम्न प्रकार हैं—

१. जिस कम्मपयडिपाहुडके चौबीस अधिकारोंका पुप्पदन्त-भूतबलिने उद्धार किया है उसका दूसरा नाम ‘ वेयणकासिणपाहुड ’ भी है जिससे उन २४ अधिकारोंका ‘ वेदनाखंड ’ के ही अन्तर्गत होना सिद्ध होता है।

२. चौबीस अनुयोगद्वारोंमें वर्णना नामका कोई अनुयोगद्वार भी नहीं है। एक अवान्तर अनुयोगद्वारके भी अवान्तर भेदान्तर्गत संक्षिप्त वर्णना प्ररूपणाको ‘ वर्णनाखंड ’ कैसे कहा जा सकता है ?

३. वेदनाखंडके आदिके मंगलसूत्रोंकी टीकामें वीरसेनाचार्यने उन सूत्रोंको ऊपर कहे हुए वेदना, बंधसामित्तविचय और खुदाबधका मंगलाचरण बतलाया है और यह स्पष्ट सूचना की है कि वर्णनाखंडके आदिमें तथा महाबंधखंडके आदिमें पृथक् मंगलाचरण किया गया है उपलब्ध धवलके शेष भागमें सूत्रकारकृत कोई दूसरा मंगलाचरण नहीं देखा जाता, इससे वह वर्णनाखंडकी कल्पना गलत है।

४. धवलामें जो ‘ वेयणाखंड समत्ता ’ पद पाया जाता है वह अशुद्ध है। उसमें पड़ा हुआ ‘ खंड ’ शब्द असंगत है जिसके प्रक्षिप्त होनेमें कोई सन्देह मात्तम नहीं होता।

५. इन्द्रचन्द्रि व विबुधश्रीधर जैसे ग्रंथकारोंने जो कुछ लिखा है वह प्रायः किंवदन्तियों अथवा सुने सुनाये आधारपर लिखा जान पड़ता है। उनके सामने मूलग्रंथ नहीं थे, अतएव उनकी साक्षीको कोई महत्व नहीं दिया जा सकता।

६. यदि वर्णनाखंड धवलके अन्तर्गत था तो यह भी हो सकता है कि लिपिकारने शीघ्रतावश उसकी कापी न की हो और अधूरी प्रतिपर पुरस्कार न मिल सकने की आशंकासे उसने प्रयत्नी अन्तिम प्रशस्तिको जोड़कर ग्रंथको पूरा प्रकट कर दिया हो। X

अब हम इन युक्तियोंपर क्रमशः विचार कर ठीक निष्कर्ष पर पहुँचनेका प्रयत्न करेंगे।

१. वेयणकासिणपाहुड और वेदनाखंड एक नहीं हैं।

यह बात सत्य है कि कम्मपयडिपाहुडका दूसरा नाम वेयणकासिणपाहुड भी है और यह गुण नाम भी है, क्योंकि वेदना कर्मोंके उदयको कहते हैं और उसका निरवशेषरूपसे जो वर्णन

करता है उसका नाम वेयणकसिणपाहुड (वेदनकृत्स्नप्राभृत) है। किन्तु इससे यह आवश्यक नहीं हो जाता कि समस्त वेयणकसिणपाहुड वेदनाखंडके ही अन्तर्गत होना चाहिये, क्योंकि यदि ऐसा माना जावे तब तो कुछ खंडोंकी अवश्यकता ही नहीं रहेगी और समस्त षट्खंड वेदनाखंड के ही अन्तर्गत मानना पड़ेंगे चूंकि जीवद्वान् आदि सभी खंडोंमें इसी वेयणकसिणपाहुडके अंशों का ही तो संग्रह किया गया है जैसा कि प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिये गये मानचित्रों तथा सतपरूवणा पृ. ७४ आदिके उल्लेखोंसे स्पष्ट है। यह खंड—कल्पना कम्मपयडिपाहुड या वेयण-कसिणपाहुडके अवान्तर भेदोंकी अपेक्षासे की गई है किसी एक खंडको समूचे पाहुडका अधि-कारी नहीं बनाया गया। स्वयं ध्वलाकारने वेदनाखंडको महाकम्मपयडिपाहुड समझ लेनेके विरुद्ध पाठकोको सतर्क कर दिया है। वेदनाखंडके आदिमे मंगलके निबद्ध अनिवद्धका विवेक करते समय वे कहते हैं—

‘ण च वेयणाखंडं महाकम्मपयडिपाहुडं, अवयवस्स अवयवित्तिविरोहादो’

अर्थात् वेदनाखंड महाकर्मप्रकृतिप्राभृत नहीं है, क्योंकि अवयवको अवयवी मान लेनेमें विरोध उत्पन्न होता है। यदि महाकर्मप्रकृतिप्राभृतके चौबीसों अनुयोगद्वार वेदनाखंडके अन्तर्गत होते तो ध्वलाकार उन सबके संग्रहको उसका एक अवयव क्यों मानते? इससे बिल्कुल स्पष्ट है कि वेदनाखंडके अन्तर्गत उक्त चौबीसों अनुयोगद्वार नहीं हैं।

२. क्या वर्गणा नामका कोई पृथक् अनुयोगद्वार न होनेसे उसके नामपर खंड संज्ञा नहीं हो ती?

कम्मपयडिपाहुडके चौबीस अनुयोगद्वारोंमें वर्गणा नामका कोई अनुयोगद्वार नहीं है, यह बिल्कुल सत्य है, किन्तु किसी उपभेदके नामसे वर्गणाखंड नाम पड़ना कोई असाधारण घटना तो नहीं कही जा सकती। यथार्थतः अन्य खंडोंमें एक ‘वेदनाखंडको’ छोड़कर अन्य शेष सब खंडोंके नाम या तो विषयानुसार कल्पित हैं, जैसे जीवद्वान्, खुदाबंध, व महाबंध। या किसी अनुयोगद्वारके, उपभेदके नामानुसार हैं, जैसे बंधसामित्ताविचय। उसीप्रकार यदि वर्गणा नामक उपविभाग पदसे उसके महत्त्वके कारण एक विभागका नाम वर्गणाखंड रखा गया हो तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। चौबीस अधिकारोंमेंसे जिस अधिकार या उपभेदका प्रधा पाया गया उसीके नामसे तो खंड संज्ञा की गई है, जैसा कि ध्वलाकारने स्वयं प्रश्न उठाकर कहा है कि कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृतिका भी यहां प्ररूपण होनेपर भी उनकी खंडग्रंथ संज्ञा न करके केवल तीन ही खंड कहे जाते हैं क्योंकि शेषमें कोई प्रधानता नहीं है और यह उनके संक्षेप प्ररूपणसे जाना जाता है ×। इसी संक्षेप प्ररूपणका प्रमाण देकर वर्गणाको भी खंड ' से

× दखो सतपरूवणा, जिल्द १, भूमिका पृ. ६५ टिप्पणी.

स्युत करनेका प्रयत्न किया जाता है। पर संक्षेप और विस्तार आपेक्षिक शब्द हैं, अतएव वर्गणाका प्ररूपण धवला में संक्षेपसे किया गया है या विस्तारसे यह उसके विस्तारका अन्य अधिकारोंके विस्तारसे मिलान द्वारा ही जाना जा सकता है। अतएव उक्त अधिकारोंके प्ररूपण-विस्तार को देखिये। बंधसामित्तविचयखंड अमरावती प्रतिके पत्र ६६७ पर समाप्त हुआ है। उसके पश्चात् मंगलाचरण व श्रुतावतार आदि विवरण ७१३ पत्र तक चलकर कृतिका प्रारंभ होता है जिसका ७५६ तक ४३ पत्रोंमें, वेदनाका ७५६ से ११०६ तक ३५० पत्रोंमें, स्पर्शका ११०६ से १११४ तक ८ पत्रोंमें, कर्मका १११४ से ११५९ तक ४५ पत्रोंमें, प्रकृतिका ११५९ से १२०९ तक ५० पत्रोंमें और बधन के बध और बंधनीयका १२०९ से १३३२ तक १२३ पत्रोंमें प्ररूपण पाया जाता है। इन १२३ पत्रोंमेंसे बंधका प्ररूपण प्रथम १० पत्रोंमें ही समाप्त कर दिया गया है, यह कहकर कि—

‘एथ उद्देसे खुद्दाबधस्स एक्कारस्स-अणियोगहाराण परूवणा कायन्वा’।

इसके आगे कहा गया है कि—

‘सेण बधणिज्ज-परूवणे कीरमाणे वग्गण-परूवणा णिच्छण्ण कायन्वा, अण्णहा तेवीस्स-वध्याणासु इमा चेव वग्गणा वधपाओग्गा अण्णाओ वधपाओग्गाओ ण हंति ति अवग्गमाणुववत्तीदो। वग्गणाणमणु-मग्गणट्ठगाए तथ इमाणि अट्ठ अणियोगहाराणि णादन्वाणि भवति’ इत्यादि।

अर्थात् वधनीयके प्ररूपण करनेमें वर्गणा की प्ररूपणा निश्चयतः करना चाहिये, अन्यथा तेईस वर्गणाओंमें ये ही वर्गणाएं वधके योग्य हैं अन्य वर्गणाएं बंधके योग्य नहीं हैं, ऐसा ज्ञान नहीं हो सकता। उन वर्गणाओंकी मार्गणाके लिये ये आठ अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं। इत्यादि।

इस प्रकार पत्र १२१९ से वर्गणाका प्ररूपण प्रारंभ होकर पत्र १३३२ पर समाप्त होता है, जहां कहा गया है कि—

‘एव विस्ससोवचयपरूवणाए समत्ताए बाहिरियवग्गणा समत्ता होदि’।

इसप्रकार वर्गणाका विस्तार ११३ पत्रोंमें पाया जाता है, जो उपर्युक्त पांच अधि वेदनाको छोड़कर शेष सबसे कोई दुगुना व उससे भी अधिक पाया जाता है। पूरा खुद्द बंध ४७५ से ५७६ तक १०१ पत्रोंमें तथा बंधसामित्तविचयखंड ५७६ से ६६७ तक पत्रोंमें पाया जाता है। किन्तु एक अनुयोगद्वारके अवान्तरके भी अवान्तर इन दोनों बंधोंसे अधिक है। ऐसी अवस्थामें उसका प्ररूपण संक्षिप्त व और उससे उसे खूब संज्ञा प्राप्त करने योग्य प्रधानत्व प्राप्त होसका या नहीं,

३. वेदनाखंडके आदिका मंगलाचरण और कौन कौन खंडोंका है ?

वेदनाखंडके आदिमें मंगलसूत्र पाये जाते हैं। उनकी टीकामें धवलाकारने खंडविभाग व उनमें मंगलाचरणकी व्यवस्था संबंधी जो सूचना दी है उसको निम्न प्रकार उद्धृत किया जाता है—

‘ उर्वरि उच्चमाणेषु तिसु खंडेषु कस्सेदं मंगलं ? तिष्ठं खंडाणं । कुदो ? वरगण-महावंधाणमादीप मंगलकरणो । ण च मंगलेण विणा भूदबलिभट्टारओ गंधस्स पारमदि, तस्स अणाहरियत्तपसंगादोऽऽ कदि-पास-कम्म-पयडि-अणुयोगद्वाराणि वि एत्थ परुविदाणि, तेसि खंडगंधसण्णमकाऊण तिष्ठिण चैव खंडाणि त्ति किमट्ठ उच्चदे ? ण, तेसि पहाणत्ताभावादो । तं पि कुदो णव्वदे ? संखेवेण परुवणादो ’ ।

वर्गणाखंडको धवलान्तर्गत स्वीकार न करनेवाले विद्वान् इस अवतरणको देकर उसका यह अभिप्राय निकालते हैं कि—“ वीरसेनाचार्यने उक्त मंगलसूत्रोंको ऊपर कहे हुए तीनों खंडों वेदना, बंधसामित्तविचओ और खुदाबंधो—का मंगलाचरण बतलाते हुए यह स्पष्ट सूचना की है कि वर्गणा-खंडके आदिमें तथा महाबधखंडके आदिमें पृथक् मंगलाचरण किया गया है, मंगलाचरणके विना भूतबलि आचार्य ग्रंथका प्रारंभ ही नहीं करते हैं। साथ ही यह भी बतलाया है कि जिन कदि, पास, कम्म, पयडि (बंधण) अणुयोगद्वारोंका भी यहां (एत्थ)—इस वेदनाखंडमें प्ररूपण किया गया है उन्हें खंडग्रंथ संज्ञा न देनेका कारण उनके प्रधानताका अभाव है, जो कि उनके संक्षेप कथनसे जाना जाता है। उक्त पास आदि अनुयोगद्वारोंमेंसे किसीके भी शुरुमें मंगलाचरण नहीं है और इन अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा वेदनाखंडमें की गई है, तथा इनमेंसे किसीको खंडग्रंथकी संज्ञा नहीं दी गई यह बात ऊपरके शंका समाधानसे स्पष्ट है। ”

अब इस कथनपर विचार कीजिये। ‘ उर्वरि उच्चमाणेषु तिसु खंडेषु ’ का अर्थ किया गया है ‘ ऊपर कहे हुए तीन खंड, अर्थात् वेदना, बंधसामित्त और खुदाबंध ’ । हमें यहांपर यह याद रखना चाहिये कि खुदाबंध और बंधसामित्त खंड दूसरे और तीसरे हैं जिनका प्ररूपण हो चुका है, और अभी वेदनाखंडके केवल मंगलाचरणका ही विषय चल रहा है, खंडका विषय आगे कहा जायगा। ‘ उर्वरि उच्चमाण ’ की संस्कृत छाया, जहातक मैं समझता हूं ‘ उपरि उर्ध्वमाने ’ ही हो सकती है, जिसका अर्थ ‘ ऊपर कहे हुए ’ कदापि नहीं हो सकता। ‘ उर्ध्वमाने ’ का तात्पर्य केवल प्रस्तुत या आगे कहे जानेवालेसे ही हो सकता है। फिर भी यदि ‘ ऊपर कहे हुए ’ ही मानलें तो उससे ऊपरके दो और आगेके एक का समुच्चय कैसे हो सकता है ? ऊपर कहे हुए तीन खंड तो जीवहाण आदि तीन हैं, बाकी तीन आगे कहे जानेवाले हैं। इसप्रकार उपर्युक्त वाक्यका जो अर्थ लगाया गया है वह बिल्कुल ही असंगत है।

अब आगेका शंका-समाधान देखिये। प्रश्न है—यहां कैसे जाना कि यह मंगल ‘ उर्वरि

श्रुत करनेका प्रयत्न किया जाता है। पर संक्षेप और विस्तार आपेक्षिक शब्द हैं, अतएव वर्गणाका प्ररूपण ध्येयार्थों संक्षेपसे किया गया है या विस्तारसे यह उसके विस्तारका अन्य अधिकारोंके विस्तारसे मिथ्या द्वारा ही जाना जा सकता है। अतएव उक्त अधिकारोंके ण-विस्तार को देखिये। बंधसामित्तविचयखंड अमरावती प्रतिके पत्र ६६७ पर समाप्त हुआ है। उसके पश्चात् मंगलाचरण व श्रुतावतार आदि विवरण ७१३ पत्र तक चलकर कृतिका प्रारंभ होता है जिसका ७५६ तक ४३ पत्रोंमें, वेदनाका ७५६ से ११०६ तक ३५० पत्रोंमें, स्पर्शका ११०६ से १११४ तक ८ पत्रोंमें, कर्मका १११४ से ११५९ तक ४५ पत्रोंमें, प्रकृतिका ११५९ से १२०९ तक ५० पत्रोंमें और बधन के बंध और बंधनीयका १२०९ से १३३२ तक १२३ पत्रोंमें प्ररूपण पाया जाता है। इन १२३ पत्रोंमेंसे बंधका प्ररूपण प्रथम १० पत्रोंमें ही समाप्त करदिया गया है, यह कहकर कि—

‘ एवम् उद्देशे खुदाबधस्स पङ्कारस-अणियोगहारणं परूवणा कायच्चा ’ ।

इसके आगे कहा गया है कि—

‘ येण बधणिज्ज-परूवणे कीरमाणे वग्गण-परूवणा णिच्छएण कायच्चा, अण्णह्म तेवीस-वग्गणासु इमा चेव वग्गणा बधपाओग्गा अण्णाओ बधपाओग्गाओ ण होति त्ति अवगमाणुववत्तीदो । वग्गणाणमण्ण-मग्गणट्ठाए तत्थ इमाणि अट्ठ अणियोगहारणि णादच्चाणि भवन्ति ’ इत्यादि ।

अर्थात् बंधनीयके प्ररूपण करनेमें वर्गणा की प्ररूपणा निश्चयतः करना चाहिये, अन्यथा तेईस वर्गणाओंमें ये ही वर्गणाएं बंधके योग्य हैं अन्य वर्गणाएं बंधके योग्य नहीं हैं, ऐसा ज्ञान नहीं हो सकता। उन वर्गणाओंकी मार्गणाके लिये ये आठ अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं। इत्यादि।

इस प्रकार पत्र १२१९ से वर्गणाका प्ररूपण प्रारंभ होकर पत्र १३३२ पर समाप्त होता है, जहाँ कहा गया है कि—

‘ एव विस्ससोवचयपरूवणाण समत्ताए चाहिरियवग्गणा समत्ता होदि ’ ।

इसप्रकार वर्गणाका विस्तार ११३ पत्रोंमें पाया जाता है, जो उपर्युक्त पांच अधिकारोंमेंसे वेदनाको छोड़कर शेष सबसे कोई दुगुना व उससे भी अधिक पाया जाता है। पूरा खुदाबंधखंड ४७५ से ५७६ तक १०१ पत्रोंमें तथा बंधसामित्तविचयखंड ५७६ से ६६७ तक ९१ पत्रोंमें पाया जाता है। किन्तु एक अनुयोगद्वारके अवान्तरके भी अवान्तर भेद वर्गणाका विस्तार इन दोनों खंडोंसे अधिक है। ऐसी अवस्थामें उसका प्ररूपण संक्षिप्त कहना चाहिये या विस्तृत और उससे उसे खंड संज्ञा प्राप्त करने योग्य प्रधानत्व प्राप्त होसका या नहीं, यह पाठक विचार करें।

३. वेदनाखंडके आदिका मंगलाचरण और कौन कौन खंडोंका है ?

वेदनाखंडके आदिमें मंगलसूत्र पाये जाते हैं। उनकी टीकामें धवलाकारने खंडविभाग व उनमें मंगलाचरणकी व्यवस्था संबधी जो सूचना दी है उसको निम्न प्रकार उद्धृत किया जाता है—

‘ उवरि उच्चमाणेसु तिसु खंडेसु कस्सेदं मंगलं ? तिणं खंडाणं । कुदो ? वग्गणा-महावंधाणमादीए मंगलकरणादो । ण च मंगलेण विणा भूदबलिभट्टारओ गंधस्स पारभदि, तस्स अणाहरियत्तपसंगादोX कदि-पास-कम्म-पयडि-अणियोगद्वाराणि वि एत्थ परुविदाणि, तेसि खंडगंधसण्णमकाऊण तिणिण चैव खंडाणि सि किमट्ठ उच्चदे ? ण, तेसि पहाणत्ताभावादो । तं पि कुदो णव्वदे ? संखेवेण परुवणादो ’ ।

वर्गणाखंडको धवलान्तर्गत स्वीकार न करनेवाले विद्वान् इस अवतरणको देकर उसका यह अभिप्राय निकालते हैं कि—“ वीरसेनाचार्यने उक्त मंगलसूत्रोंको ऊपर कहे हुए तीनों खंडों वेदना, बंधसामित्तविचओ और खुदाबंधो—का मंगलाचरण बतलाते हुए यह स्पष्ट सूचना की है कि वर्गणा-खंडके आदिमें तथा महाबंधखंडके आदिमें पृथक् मंगलाचरण किया गया है, मंगलाचरणके बिना भूतबलि आचार्य ग्रंथका प्रारंभ ही नहीं करते हैं। साथ ही यह भी बतलाया है कि जिन कदि, पास, कम्म, पयडि (बंधण) अणुयोगद्वारोंका भी यहां (एत्थ)—इस वेदनाखंडमें प्ररूपण किया गया है उन्हें खंडग्रंथ संज्ञा न देनेका कारण उनके प्रधानताका अभाव है, जो कि उनके संक्षेप कथनसे जाना जाता है। उक्त पास आदि अनुयोगद्वारोंमेंसे किसीके भी शुरुमें मंगलाचरण नहीं है और इन अनुयोगद्वारोंकी प्ररूपणा वेदनाखंडमें की गई है, तथा इनमेंसे किसीको खंडग्रंथकी संज्ञा नहीं दी गई यह बात ऊपरके शंका समाधानसे स्पष्ट है । ”

अब इस कथनपर विचार कीजिये । ‘ उवरि उच्चमाणेसु तिसु खंडेसु ’ का अर्थ किया गया है ‘ ऊपर कहे हुए तीन खंड, अर्थात् वेदना, बंधसामित्त और खुदाबंध ’ । हमें यहांपर यह याद रखना चाहिये कि खुदाबंध और बंधसामित्त खंड दूसरे और तीसरे हैं जिनको प्ररूपण हो चुका है, और अभी वेदनाखंडके केवल मंगलाचरणका ही विषय चल रहा है, खंडका विषय आगे कहा जायगा । ‘ उवरि उच्चमाण ’ की संस्कृत छांया, जहांतक मैं समझता हूं ‘ उपरि उच्चमाण ’ ही हो सकती है, जिसका अर्थ ‘ ऊपर कहे हुए ’ कदापि नहीं हो सकता । ‘ उच्चमाण ’ का तात्पर्य केवल प्रस्तुत या आगे कहे जानेवालेसे ही हो सकता है । फिर भी यदि ‘ ऊपर कहे हुए ’ ही मानलें तो उससे ऊपरके दो और आगेके एक को समुच्चय कैसे हो सकता है ? ऊपर कहे हुए तीन खंड तो जीवद्वान आदि तीन हैं, बाकी तीन आगे कहे जानेवाले हैं । इसप्रकार उपर्युक्त वाक्यका जो अर्थ लगाया गया है वह बिल्कुल ही असंगत है ।

अब आगेका शंका-समाधान देखिये । प्रश्न है- यह कैसे जानो कि यह मंगल-‘ उवरि

प्युत करनेका प्रयत्न किया जाता है। पर संक्षेप और विस्तार आपेक्षिक शब्द हैं, एवं वर्णणाका प्ररूपण धयलमें संक्षेपसे किया गया है या विस्तारसे यह उसके विस्तारका अन्य अधिकारोंके विस्तारसे मिथ्या द्वारा ही जाना जा सकता है। अतएव उक्त अधिकारोंके ण-विस्तार को देखिये। वंशसामित्तविचयखंड अमरावती प्रतिके पत्र ६६७ पर समाप्त हुआ है। उसके पश्चात् मगलाचरण व श्रुतावतार आदि विवरण ७१३ पत्र तक चलकर कृतिका प्रारंभ होता है जिसका ७५६ तक ४३ पत्रोंमें, वेदनाका ७५६ से ११०६ तक ३५० पत्रोंमें, स्पर्शका ११०६ से १११४ तक ८ पत्रोंमें, कर्मका १११४ से ११५९ तक ४५ पत्रोंमें, प्रकृतिका ११५९ से १२०९ तक ५० पत्रोंमें और बधन के बंध और बंधनीयका १२०९ से १३३२ तक १२३ पत्रोंमें प्ररूपण पाया जाता है। इन १२३ पत्रोंमेंसे बंधका प्ररूपण प्रथम १० पत्रोंमें ही समाप्त करदिया गया है, यह कहकर कि—

‘ एत्थ उद्देसे खुदाबधस्स पृक्कारस-अणियोगहाराणं परूवणा कायब्बा ’ ।

इसके आगे कहा गया है कि—

‘ सेण बधणिज्ज-परूवणे कीरमाणे वग्गण-परूवणा णिच्छएण कायब्बा, अण्णह्म तेवीस्स-वग्गणासु इमा चेव वग्गणा यधपाओग्गा अण्णाओ बधपाओग्गाओ ण होंति त्ति अवगमाणुववत्तीदो । णमणु-मग्गणट्ठदाए तत्थ इमाणि अट्ठ अणियोगहाराणि णादब्बाणि भवंति ’ इत्यादि ।

अर्थात् बंधनीयके प्ररूपण करनेमें वर्णणा की प्ररूपणा निश्चयतः करना चाहिये, अन्यथा तेईस वर्णणाओंमें ये ही वर्णणाएं बंधके योग्य हैं अन्य वर्णणाएं बंधके योग्य नहीं हैं, ऐसा ज्ञान नहीं हो सकता। उन वर्णणाओंकी मार्गणाके लिये ये आठ अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं। इत्यादि ।

इस प्रकार पत्र १२१९ से वर्णणाका प्ररूपण प्रारंभ होकर पत्र १३३२ पर समाप्त होता है, जहां कहा गया है कि—

‘ एव विस्ससोवचयपरूवणाए समत्ताए चाहिरियवग्गणा समत्ता होदि ’ ।

इसप्रकार वर्णणाका विस्तार ११३ पत्रोंमें पाया जाता है, जो उपर्युक्त पांच अधिकारोंमेंसे वेदनाको छोड़कर शेष सबसे कोई दुगुना व उससे भी अधिक पाया जाता है। पूरा खुदाबंधखंड ४७५ से ५७६ तक १०१ पत्रोंमें तथा बंधसामित्तविचयखंड ५७६ से ६६७ तक ९१ पत्रोंमें पाया जाता है। किन्तु एक अनुयोगद्वारके अवान्तरके भी अवान्तर भेद वर्णणाका विस्तार इन दोनों खंडोंसे अधिक है। ऐसी अवस्थामें उसका प्ररूपण संक्षिप्त कहना चाहिये या विस्तृत और उससे उसे गढ़ संज्ञा प्राप्त करने योग्य प्रधानत्व प्राप्त होसना या नहीं, यह पाठक विचार करें।

करना तथा कृति आदि चौबीसों अनुयोगद्वारोंको वेदनाखंडान्तर्गत बतलाना बड़ा वेतुका, ये आधार और सारे प्रसंगको गडबडीमें डालनेवाला है। यह सब कल्पना किन भूलोंका परिणाम है और उक्त अवतरणोंका सच्चा रहस्य क्या है यह आगे चलकर बतलाया जायगा ! उससे पूर्व शेष तीन युक्तियोंपर और विचार करलेना ठीक होगा।

४. वेदनाखंड समाप्ति की पुष्पिका

धवलामें जहां वेदनाका प्ररूपण समाप्त हुआ है वहां यह वाक्य पाया जाता है—

एव वेयण-अप्रावहुगाणिओगद्वारे समत्ते वेयणाखंड समत्ता ।

इसके आगे कुछ नमस्कार वाक्योंके पश्चात् पुन लिखा मिलता है 'वेदनाखंड समाप्तम्'। ये नमस्कार वाक्य और उनकी पुष्पिका तो स्पष्टतः मूलग्रंथके अंग नहीं हैं, वे लिपिकार द्वारा जोड़े गये जान पड़ते हैं। प्रश्न है प्रथम पुष्पिकाका जो मूल ग्रंथका आवश्यक अंग है। पर उसमें भी 'वेयणाखंड समत्ता' वाक्य व्याकरण की दृष्टिसे अशुद्ध है। वहां या तो 'वेयणाखंडो समत्तो' या 'वेयणाखंड समत्त' वाक्य होना चाहिये था। समालोचकका यह भी अनुमान गलत नहीं कहा जा सकता कि इस वाक्यमें खंड शब्द संभवतः प्रक्षिप्त है, उस शब्दको निकाल देनेसे 'वेयणा समत्ता' वाक्य भी ठीक बैठ जाता है। हो सकता है वह लिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त हुआ हो। पर विचारणीय बात यह है कि वह कब और किस लिये प्रक्षिप्त किया गया होगा। इस प्रश्नको आधुनिक लिपिकारकृत तो समालोचक भी नहीं कहते। यदि वह प्रक्षिप्त है तो उसी लिपिकारकृत हो सकता है जिसने मूडबित्रीकी ताडपत्रीय प्रति लिखी। हम अन्यत्र बतला चुके हैं कि वह प्रति संभवतः शककी ९ वीं १० वीं शताब्दीकी, अर्थात् आजसे कोई हजार आठसौ वर्ष पुरानी है। उस प्रक्षिप्त वाक्यसे उस समयके कमसे कम एक व्यक्तिका यह मत तो मिलता ही है कि वह वहां वेदनाखंडकी समाप्ति समझता था। उससे यह भी ज्ञात हो जाता है कि उस लेखककी जानकारीमें वहाँसे दूसरा खंड अर्थात् वर्णाखंड प्रारंभ हो जाता था, नहीं तो वह वहां वेदनाखंडके समाप्त होनेकी विश्वासपूर्वक दो दो बार सूचना देने की धृष्टता न करता। यदि वहां खंडसमाप्ति होनेका इसके पास कोई आधार न होता तो उसे जबर्दस्ती वहां खंड शब्द डालनेकी प्रवृत्ति ही क्यों होती ? समालोचक लिपिकारकी प्रक्षेपक-प्रवृत्ति को दिखलाते हुए कहते हैं कि अनेक अन्य स्थलोंपर भी नानाप्रकारके वाक्य प्रक्षिप्त पाये जाते हैं। यह बात सच है, पर जो उदाहरण उन्होंने बतलाया है वहां, और जहांतक मैं अन्य स्थल ऐसे देख पाया हूं वहां सर्वत्र यही पाया जाता है कि लेखकने अधिकारोंकी संधि आदि पाकर अपने गुरु या देवता का नमस्कार या उनकी प्रशस्ति संबंधी वाक्य या पथ इधर उधर डाले हैं। यह पुराने लेखकोंकी शैली सी रही है। पर ऐसा स्थल

उच्चमाण' तीनों खंडोंका है^१ इसका उत्तर दिया जाता है 'क्योंकि वर्गणा और महाबध के आदिमें मंगल किया गया है'। यदि यहा जिन खंडोंमें मंगल किया गया है उनको अलग निर्दिष्ट कर देना आचार्यका अभिप्राय था तो उनमें जीवद्वानका भी नाम क्यों नहीं लिया, क्योंकि तभी तो तीन खंड शेष रहते, केवल वर्गणा और महाबंधको अलग कर देनेसे तो चार खंड शेष रह गये। फिर आगे कहा गया है कि मंगल किये बिना भूतबलि भट्टारक ग्रंथ प्रारंभ ही नहीं करते, क्योंकि उससे अनाचार्यत्वका प्रसंग आ जाता है। पर उक्त व्यवस्थाके अनुसार तो यहा एक नहीं, दो दो खंड मंगलके बिना, केवल प्रारंभ ही नहीं, समाप्त भी किये जा चुके, जिनके मंगलाचरणका प्रबंध अब किया जा रहा है, जहा स्वयं टीकाकार कह रहे हैं कि मंगलाचरण आदिम ही किया जाता है, नहीं तो अनाचार्यत्वका दोष आ जाता है। इससे तो धवलाकारका मत स्पष्ट है कि प्रस्तुत ग्रंथरचनामें आदि मंगलका अनिवार्य रूपसे पालन किया गया है। हमने आदिमंगलके अतिरिक्त मध्यमंगल और अन्तमंगलका भी विधान पटा है। किन्तु इन प्रकारोंमेंसे किसी भी प्रकार द्वारा वेदनाखंडके आदिका मंगल खुदाबधका भी मंगल सिद्ध नहीं किया जा सकता। इसप्रकार यह शका समाधान विषयको समझानेकी अपेक्षा अधिक उलझनमें ही डालने वाला है।

आगेके शंका समाधानकी और भी दुर्दशा की गई है। प्रश्न है कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृति अनुयोगद्वार भी यहां प्ररूपित हैं, उनकी खंडसंज्ञा न करके केवल तीन ही खंड क्यों कहे जाते हैं^२ यहा स्वभावतः यह प्रश्न उपस्थित होता है कि यहा कौनसे तीन खंडोंका अभिप्राय है^३ यदि यहा भी उन्हीं खुदाबध, बधसामित्त और वेदनाका अभिप्राय है तो यह बतलानेकी आवश्यकता है कि प्रस्तुतमें उनकी क्या अपेक्षा है। यदि चौबीस अनुयोगद्वारोंमेंसे उत्पत्तिकी यहा अपेक्षा है तो जीवस्थान, वर्गणा और महाबध भी तो वहाँसे उत्पन्न हुए हैं, फिर उन्हें किस विचारसे अलग किया गया ? और यदि वेदना, वर्गणा और महाबधसे ही यहा अभिप्राय है तो एक तो उक्त क्रममें भग पड़ता है और दूसरे वर्गणाखंडके भी इन्हीं अनुयोगद्वारोंमें अन्तर्भावका प्रसंग आता है। जिन अनुयोगद्वारोंकी ओरसे खंड संज्ञा प्राप्त न होनेकी शिकायत उठायी गई है उनमें वेदनाका नाम नहीं है। इससे जाना जाता है कि इसी वेदना अनुयोगद्वार परसे वेदनाखंड संज्ञा प्राप्त हुई है। पर यदि 'एत्थ' का तात्पर्य "इस वेदनाखंडमें" ऐसा लिया जाता है तब तो यह भी मानना पड़ेगा कि वे तीनों खंड जिनका उल्लेख किया गया है, वेदनाखंडके अन्तर्गत हैं। पयडिके आगे बन्धन और क्यो अपनी तरफसे जोड़ा गया जबकि वह मूलमें नहीं है, यह भी कुछ समझमें नहीं आता। इसप्रकार यह प्रश्न भी बड़ी गड़बड़ी उत्पन्न करनेवाला सिद्ध होता है।

अतः वेदनाखंडके आदिमें आये हुए मंगलाचरणको खुदाबध और बधसामित्तका भी सिद्ध

करना तथा कृति आदि चौबीसों अनुयोगद्वारोंको वेदनाखंडान्तर्गत बतलाना बड़ा बेतुका, वे आधार और सारे प्रसंगको गडबडोंमें डालनेवाला है। यह सब कल्पना किन भूलोंका परिणाम है और उक्त अवतरणोंका सच्चा रहस्य क्या है यह आगे चलकर बतलाया जायगा ! उससे पूर्व शेष तीन युक्तियोंपर और विचार करलेना ठीक होगा।

४. वेदनाखंड समाप्ति की पुष्पिका

धवलामे जहा वेदनाका प्ररूपण समाप्त हुआ है वहां यह वाक्य पाया जाता है—

एव वेयण-अपराबहुगाणिभोगद्वारे समत्ते वेयणाखंड समत्ता ।

इसके आगे कुछ नमस्कार वाक्योंके पश्चात् पुनः लिखा मिलता है 'वेदनाखंड समाप्तम्'। ये नमस्कार वाक्य और उनकी पुष्पिका तो स्पष्टतः मूलग्रन्थके अंग नहीं हैं, वे लिपिकार द्वारा जोड़े गये जान पड़ते हैं। प्रश्न है प्रथम पुष्पिकाका जो मूल ग्रन्थका आवश्यक अंग है। पर उसमें भी 'वेयणाखंड समत्ता' वाक्य व्याकरण की दृष्टिसे अशुद्ध है। वहा या तो 'वेयणाखंडो समत्तो' या 'वेयणाखंड समत्त' वाक्य होना चाहिये था। समालोचकका यह भी अनुमान गलत नहीं कहा जा सकता कि इस वाक्यमें खंड शब्द संभवतः प्रक्षिप्त है, उस शब्दको निकाल देनेसे 'वेयणा समत्ता' वाक्य भी ठीक बैठ जाता है। हो सकता है वह लिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त हुआ हो। पर विचारणीय बात यह है कि वह कब और किस लिये प्रक्षिप्त किया गया होगा। इस प्रश्नको आधुनिक लिपिकारकृत तो समालोचक भी नहीं कहते। यदि वह प्रक्षिप्त है तो उसी लिपिकारकृत हो सकता है जिसने मूळविद्वीकी ताडपत्राय प्रति लिखी। हम अन्यत्र बतला चुके हैं कि वह प्रति संभवतः शककी ९ वीं १० वीं शताब्दीकी, अर्थात् आजसे कोई हजार आठसौ वर्ष पुरानी है। उस प्रक्षिप्त वाक्यसे उस समयके कमसे कम एक व्यक्तिका यह मत तो मिलता ही है कि वह वहा वेदनाखंडकी समाप्ति समझता था। उससे यह भी ज्ञात हो जाता है कि उस लेखककी जानकारीमें वहीसे दूसराखंड अर्थात् वर्गणाखंड प्रारम्भ हो जाता था, नहीं तो वह वहा वेदनाखंडके समाप्त होनेकी विश्वासपूर्वक दो दो बार सूचना देने की धृष्टता न करता। यदि वहा खंडसमाप्ति होनेका इसके पास कोई आधार न होता तो उसे जबर्दस्ती वहा खंड शब्द डालनेकी प्रवृत्ति ही क्यों होती ? समालोचक लिपिकारकी प्रक्षेपक-प्रवृत्ति को दिखलाते हुए कहते हैं कि अनेक अन्य स्थलोंपर भी नानाप्रकारके वाक्य प्रक्षिप्त पाये जाते हैं। यह बात सच है, पर जो उदाहरण उन्होंने बतलाया है वहां, और जहातक मैं अन्य स्थल ऐसे देख पाया हूं वहा सर्वत्र यही पाया जाता है कि लेखकने अधिकारोंकी संधि आदि पाकर अपने गुरु या देवता का नमस्कार या उनकी प्रशस्ति संबंधी वाक्य या पद्य इधर उधर डाले हैं। यह पुराने लेखकोंकी शैली सी रही है। पर ऐसा

एक भी दे नहीं आता जहाँ पर लेखकने अधिकार संबंधी सूचना गलत सतत अपनी ओरसे जोड़ या घटा दी हो। अतएव चाहे वह खंड शब्द मौलिक हो और चाहे किसी लिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त, उससे वेदना खंडके वहाँ समाप्त होने की एक पुरानी मान्यता तो प्रमाणित होती है।

५ इन्द्रनन्दिकी प्रामाणिकता

इन्द्रनन्दि और विबुध श्रीधरने अपने अपने श्रुतावतार कथानकोंमें षट्खंडागमकी रचना व धवलादि टीकाओंके निर्माणका विवरण दिया है। विबुध श्रीधरका कथानक तो बहुत कुछ काल्पनिक है, पर उसमें भी धवलान्तर्गत पांच या छह खंडोंवाली वार्तामें कुछ अविश्वसनीयता नहीं दिखती। इन्द्रनन्दिने प्रकृत विषयसे संबंध रखनेवाली जो वार्ता दी है उसको हम प्रथम जिल्दकी भूमिकामें पृ. ३० पर लिख चुके हैं। उसका संक्षेप यह है कि वीरसेनने उपरितन निबन्धनादि अठारह अधिकार लिखे और उन्हें ही सत्कर्मनाम छठवाँ खंड संक्षेपरूप बनाकर छह खंडोंकी बहत्तर हजार ग्रंथप्रमाण, प्राकृत सस्कृत भाषा मिश्रित धवलाटीका बनाई। उनके शब्दोंका धवलाकारके उन शब्दोंसे मिलान कीजिये जो इसी सबधके उनके द्वारा कहे गये हैं। निबन्धनादि विभागको यहा भी 'उवरिम ग्रंथ' कहा है और अठारह अनुयोगद्वारोंको संक्षेपमें प्ररूपण करनेकी प्रतिज्ञा की गई है। धरसेन गुरुद्वारा श्रुतोद्धारका जो विवरण इन्द्रनन्दिने दिया है वह प्रायः ज्यों का त्यों धवलाकार के वृत्तान्त से मिलता है। यह बात सच है कि इन्द्रनन्दि द्वारा कही गयीं कुछ बातें 1-न्तर्गत वार्तासे किंचित् भेद रखती हैं। किन्तु उनपरसे इन्द्रनन्दिको सर्वथा अप्रामाणिक नहीं ठहराया जा सकता, विशेषतः खडविभाग जैसे स्थूल विषयपर। यद्यपि इन्द्रनन्दिका समय निर्णीत नहीं है, पर उनके संबधमें प. नाथूरामजी प्रेमीका मत है कि ये वे ही इन्द्रनन्दि हैं जिनका उल्लेख आचार्य नेमिचन्द्रने गोम्मटसार कर्मकाण्डकी ३९६ वीं गाथामें गुरुरूपसे किया है जिससे वे विक्रमकी ११ हवीं शताब्दिके आचार्य ठहरते हैं *। इसमें कोई आश्चर्य भी नहीं है। वीरसेन व धवलाकी रचनाका इतिहास उन्होंने ऐसा दिया है जैसे मानो वे उससे अच्छी तरह निकटतासे सुपरिचित हों। उनके गुरु एलाचार्य कहां रहते थे, वीरसेनने उनके पास सिद्धान्त पढकर कहा कहां जाकर, किस मंदिरमें बैठकर, कौनसा ग्रंथ साम्हने रखकर अपनी टीका लिखी यह सब इन्द्रनन्दिने अच्छी तरह बतलाया है जिसमें कोई बनावट व कृत्रिमता दृष्टिगोचर नहीं होती, बल्कि बहुत ही प्रामाणिक इतिहास जचता है। उन्होंने कदाचित् धवला जयधवलाका सूक्ष्मावलोकन भले ही न किया हो और शायद नोट्स ले रखनेका भी उस समय रिवाज न हो, पर उनकी सूचनाओंपरसे यह बात सिद्ध नहीं होती कि धवल

जयधवल ग्रंथ उनके साम्हने मौजूद ही नहीं थे। उन्होंने ऐसी कोई बात नहीं लिखी जिसकी इन ग्रंथोंकी वार्तासे इतनी विषमता हो जो पढ़कर पीछे स्मृतिके सहारे लिखनेवाले द्वारा न की जा सकती हो। इसके अतिरिक्त उनका ग्रंथ अभीतक प्राचीन प्रतियोंपरसे सुसंपादित भी नहीं हुआ है। किसी एकाध प्रतिपरसे कभी छाप दिया गया था, उसीकी कापी हमारे साम्हने प्रस्तुत है। उन्होंने जो वार्ता किंवदन्तियों व सुने सुनाये आधारपरसे लिखी हो वह भी उन्होंने बहुत सुव्यवस्थित करके, भरसक जांच पड़तालके पश्चात्, लिखी है और इसीतरह वे बहुतसी ऐसी वार्ता-पर प्रकाश डाल सके जो धवलादिमें भी व्यवस्थित नहीं पायी जाती, जैसे धवलासे पूर्वकी टीकायें व टीकाकार आदि। वे कैसे प्रामाणिक और निर्भीक तथा अपनी कमजोरियों को स्वीकार करलेनेवाले निष्पक्ष ऐतिहासिक थे यह उनके उस वाक्य परसे सहज ही जाना जा सकता है जहां उन्होंने साफ साफ कह दिया है कि गुणधर और धरसेन गुरुओंकी पूर्वापर आचार्य परम्परा हम नहीं जानते क्योंकि न तो हमें वह बात बतलानेवाला कोई आगम मिला और न कोई मुनिजन ×। कितनी स्पष्टवादिता, साहित्यिक सचाई और नैतिकबल इस अज्ञानकी स्वीकारतामें भरी हुई है? क्या इन वाक्योंको लिखनेवालेकी प्रामाणिकतामें सहज ही अविश्वास किया जा सकता है?

६. मूडविद्रीसे प्रतिलिपि करनेवाले लेखककी प्रामाणिकता

जिस परिस्थितिमें और जिस प्रकारसे धवला और जयधवलाकी प्रतियां मूडविद्रीसे बाहर निकली है उसका हम प्रथम जिल्दकी भूमिकामें विवरण दे आये हैं। उस परसे उपलब्ध प्रतियोंकी प्रामाणिकतामें नाना प्रकारके सन्देह करना स्वाभाविक है। अतएव जो धवलाके भीतर वर्गणाखंडका होना नहीं मानते उन्हें यह भी कहनेको मिल जाता है कि यदि मूल धवलामें वर्गणाखंड रहा भी हो तो उक्त लिपिकारने उसे अपना परिश्रम बचानेके लिये जानबूझकर छोड़ दिया होगा और अन्तिम प्रशस्ति आदि जोड़कर अपने ग्रंथको पूरा प्रकट कर दिया होगा ताकि उसके पुरस्कारादिमें फरक न पड़े। इस कल्पनाकी सचाई झुठलाई का पूरा निर्णय तो तभी हो सकता है जब यह ग्रंथ ताड़पत्रीय प्रतिसे मिलाया जा सके। पर उसके अभावमें भी हम इसकी संभावनाकी जांच दो प्रकारसे कर सकते हैं। एक तो उस लेखकके कार्यकी परीक्षा द्वारा और दूसरे विद्यमान धवलाकी रचना की परीक्षा द्वारा। धवलाके संशोधन संपादन संबंधी कार्यमें हमें इस बातका बहुत कुछ परिचय मिला है कि उक्त लेखकने अपना कार्य कहांतक ईमानदारीसे किया है। हमें जो प्रतियां उपलब्ध हुई हैं वे मूडविद्रीसे आई हुई कनाड़ी प्रतिलिपिकी नागरी प्रतिकी कापी की भी कापिया हैं। वे बहुत कुछ रखलन-प्रचुर और अनेक प्रकारसे दोष पूर्ण हैं।

पर तो भी तीन प्रतियोंके मिलानसे ही पूरा और ठीक पाठ बैठा लेना संभव हो जाता है। इससे ज्ञात होता है कि जो खड्ग इन आगेकी प्रतियोंमें पाये जाते हैं वे उस कनाड़ी प्रतिलिपिमें नहीं हैं। यद्यपि कुछ स्थल इन सब प्रतियोंके मिलानसे भी पूर्ण या निस्सन्देह निर्णीत नहीं हो पाते और इसलिये संभव है वे खड्ग उसी प्रथम प्रतिलिपिकार द्वारा हुए हों, पर इस ग्रंथकी लिपि, भाषा और विषय सबकी कठिनाइयोंको देखते हुए हमें आश्चर्य इस बातका नहीं है कि वे खड्ग हैं, किन्तु आश्चर्य इस बातका है कि वे बहुत ही थोड़े और मामूली हैं, जो किसी भी लेखकके द्वारा अपनी गतिभर सावधानी रखनेपर भी, हो सकते हैं। जो लेखक एक खड्गके खंडको छोड़कर प्रशस्ति आदि मिलाकर ग्रंथको पूरा प्रकट करनेका दुःसाहस कर सकता है, उसके द्वारा ग्रेप लिखाई भी ईमानदारीके साथ किये जानेकी आशा नहीं की जा सकती। पर उक्त लेखकका अभी तक हम जो परिचय धवलापर परिश्रम करके प्राप्त कर सके हैं, उसपरसे हम दृढ़ताके साथ कह सकते हैं कि उसने अपना कार्य भरसक ईमानदारी और परिश्रमसे किया है। उसपरसे उसके द्वारा एक खड्गको छोड़कर ग्रंथको पूरा प्रकट कर देने जैसे छल-कपट किये जानेकी शका करनेको हमारा जी बिल्कुल नहीं चाहता।

पर यदि ऐसा छल कपट हुआ है तो धवलाकी जाच द्वारा उसका पता लगाना भी कठिन नहीं होना चाहिये। धवलाकी कुल टीकाका प्रमाण इन्द्रनन्दिने बहत्तर हजार और ब्रह्महेमने सत्तर हजार बतलाया है। हमारे सन्मुख धवलाकी तीन प्रतिया मौजूद हैं, जिनकी श्लोक सख्याकी हमने पूरी कठोरतासे जाच की। अमरावतीकी प्रतिमें १४६५ पत्र अर्थात् २९३० पृष्ठ हैं और प्रत्येक पृष्ठपर १२ पक्तियां लिखी गई हैं। प्रत्येक पक्तिमें ६२ से ६८ तक अक्षर पाये जाते हैं जिससे औसत ६५ अक्षरोंकी ली जा सकती है। तदनुसार कुल ग्रंथमें $२९३० \times १२ \times ६५ = २२८५४००$ अक्षर पाये जाते हैं जिनकी श्लोकसख्या ३२ का भाग देकर ७१,४१५ आई। इसे सामान्य लेखमें चाहे आप सत्तर हजार कहिये, चाहे बहत्तर हजार। कारजा व आराकी प्रतियोंकी भी उक्त प्रकारसे जाच द्वारा प्रायः यही निष्कर्ष निकलता है। इससे तो अनुमान होता है कि प्रतियोंमेंसे एक खंडका खड्ग गायब होना असंभवसा है, क्योंकि उस खड्गका प्रमाण और सब खड्गोंको देखते हुए कमसे कम पांच सात हजार तो अवश्य रहा होगा। यह कर्मा प्रस्तुत प्रतियोंमें दिखाई दिये बिना नहीं रह सकती थी।

विषयके तारतम्यकी दृष्टिसे भी धवला अपने प्रस्तुत रूपमें अपूर्ण कहीं नजर नहीं आती। प्रथम तीन खड्ग तो पूरे हैं ही। चौथे वेदना खड्गके आदिसे कृति आदि अनुगते जाते हैं। इनमें प्रथम छह कृति, वेदना, फास, कम्म, पयडि और बधन स्वयं द्वारा प्ररूपित हैं। इनके अन्तमें धवलाकारने कहा है—

‘भूदशलिभट्टारण जेणद सुच देसामासियभावेण लिहिद तेणेदेण सुचिद
योगहारण किंचि सयेयेण परूयण वस्सामो (धवला अ पत्र १३३२)

इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि आचार्य भूतबलिकी रचना यहीं तक है । किन्तु उक्त प्रतिज्ञा वाक्यके अनुसार शेष निबन्धनादि अठारह अधिकारोंका वर्णन धवलाकारने स्वयं किया है और अपनी इस रचनाको उन्होंने चूलिका कहा है—

एतौ उवरिमगथो चूलिया णाम ।

इन्हीं अठारह अनुयोगद्वारोंकी वीरसेनद्वारा रचनाका विशद इतिहास इन्द्रनन्दिने अपने श्रुतावतारमे दिया है * । इसी चूलिका विभागको उन्होंने छठवा खंड भी कहा है । इसप्रकार चौबीसों अनुयोगद्वारोंके कथनके साथ ग्रंथ अपने स्वाभाविक रूपसे समाप्त होता है । अब यदि इन्हीं अनुयोगद्वारोंके भीतर वर्गणाखंड नहीं माना जाता तो उसके लिये कौनसा विषय व अधिकार शेष रहा और वह कहासे छूट गया होगा ? लेखकद्वारा उसके छोड़ दिये जानेकी आशंकाको तो इस रचनामे बिल्कुल ही गुजाइश नहीं रही ।

वेदनाखंडके आदि अवतरणोंका ठीक अर्थ

वेदनाखंडके आदि मंगलाचरणकी व्यवस्था संबंधी सूचनाका जो अर्थ लगाया जाता है और उससे जो गडबडी उत्पन्न होती है उसका हम ऊपर परिचय करा चुके हैं । अब हमे यह देखना आवश्यक है कि उक्त भूलोका क्या कारण है और उन अवतरणोंका ठीक अर्थ क्या है । 'उवरि उच्चमाणेसु तिसु खडेसु' का अर्थ 'ऊपर कहे हुए तीन खंड' तो हो ही नहीं सकता । पर ऐसा अर्थ किये जानेके दो कारण मालूम होते हैं । प्रथम तो 'उवरि' से सामान्य ऊपर अर्थात् पूर्वोक्त का अर्थ ले लिया गया है और दूसरे उसकी आवश्यकता भी यो प्रतीत हुई क्योंकि आगे वर्गणा और महाबन्धमें अलग मंगल करनेका उल्लेख पाया जाता है । पर खोज और विचारसे देखा जाता है कि 'उवरि' शब्दका धवलाकारने पूर्वोक्तके अर्थमें कहीं उपयोग नहीं किया । उन्होंने उस शब्दका प्रयोग सर्वत्र 'आगे' के अर्थमें किया है और पूर्वोक्तके लिये 'पुव्व' या पुव्वुत्त का । उदाहरणार्थ, सतपरूवणा, पृष्ठ १३० पर उन्होंने कहा है—

सपहि पुव्वं उच्च-पयाडिसमुक्कित्तणा

एदण्ह पचण्हमुवरि सपहि पुव्वुत्त-जहण्हट्ठिदि

च पक्खित्ते चूलियाए णव अहियारा भवति ।

अर्थात् पूर्वोक्त प्रकृति समुत्कीर्तनादि पाचोंके ऊपर अभी कहे गये जघन्यस्थिति आदि जोड़ देनेपर चूलिकाके नौ अधिकार हो जाते हैं । यहा ऊपर कहे जा चुकेके लिये 'पुव्वं उच्च' व 'पुव्वुत्त' शब्द प्रयुक्त हुए हैं और 'उवरि' से आगेका तात्पर्य है ।

पृ ७३ पर 'उवरि' से बने हुए उवरीदो (उपरितः) अव्ययका प्रयोग देखिये । आचार्य कहते हैं—

पर तो भी तीन प्रतियोंके मिलानसे ही पूरा और ठीक पाठ बैठा लेना संभव हो जाता है। इससे ज्ञात होता है कि जो स्खलन इन आगेकी प्रतियोंमें पाये जाते हैं वे उस कनाड़ी प्रतिलिपिमें नहीं हैं। यद्यपि कुछ स्थल इन सब प्रतियोंके मिलानसे भी पूर्ण या निस्सन्देह निर्णित नहीं हो पाते और इसलिये संभव है वे स्खलन उसी प्रथम प्रतिलिपिकार द्वारा हुए हों, पर इस ग्रंथकी लिपि, भाषा और विषय संबंधी कठिनाइयोंको देखते हुए हमें आश्चर्य इस बातका नहीं है कि वे स्खलन हैं, किन्तु आश्चर्य इस बातका है कि वे बहुत ही थोड़े और मामूली हैं, जो किसी भी लेखकके द्वारा अपनी शक्तिभर सावधानी रखनेपर भी, हो सकते हैं। जो लेखक एक खडके खडको छोड़कर प्रशस्ति आदि मिलाकर ग्रंथको पूरा प्रकट करनेका दुःसाहस कर सकता है, उसके द्वारा शेष लिखाई भी ईमानदारीके साथ किये जानेकी आशा नहीं की जा सकती। पर उक्त लेखकका अभी तक हम जो परिचय धवलापर परिश्रम करके प्राप्त कर सके हैं, उसपरसे हम दृढताके साथ कह सकते हैं कि उसने अपना कार्य भरसक ईमानदारी और परिश्रमसे किया है। उसपरसे उसके द्वारा एक खडको छोड़कर ग्रंथको पूरा प्रकट कर देने जैसे छल-कपट किये जानेकी शका करनेको हमारा जी बिल्कुल नहीं चाहता।

पर यदि ऐसा छल कपट हुआ है तो धवलाकी जाच द्वारा उसका पता लगाना भी कठिन नहीं होना चाहिये। धवलाकी कुल टीकाका प्रमाण इन्द्रनन्दिने बहत्तर हजार और ब्रह्महमने सत्तर हजार बतलाया है। हमारे सन्मुख धवलाकी तीन प्रतिया मौजूद हैं, जिनकी श्लोक सख्याकी हमने पूरी कठोरतासे जाच की। अमरावतीकी प्रतिमें १४६५ पत्र अर्थात् २९३० पृष्ठ हैं और प्रत्येक पृष्ठपर १२ पक्तियां लिखी गई हैं। प्रत्येक पक्तिमें ६२ से ६८ तक अक्षर पाये जाते हैं जिससे औसत ६५ अक्षरोंकी ली जा सकती है। तदनुसार कुल ग्रंथमें २९३० × १२ × ६५ = २२८५४०० अक्षर पाये जाते हैं जिनकी श्लोकसख्या ३२ का भाग देकर ७१,४१५ आई। इसे सामान्य लेखमें चाहे आप सत्तर हजार कहिये, चाहे बहत्तर हजार। कारजा व आराकी प्रतियोंकी भी उक्त प्रकारसे जाच द्वारा प्रायः यही निष्कर्ष निकलता है। इससे तो अनुमान होता है कि प्रतियोंमेंसे एक खडका खड गायब होना असंभवसा है, क्योंकि उस खडका प्रमाण और सब खडोंको देखते हुए कमसे कम पांच सात हजार तो अवश्य रहा होगा। यह कर्मा प्रस्तुत प्रतियोंमें दिखाई दिये बिना नहीं रह सकती थी।

विषयके तारतम्यकी दृष्टिसे भी धवला अपने प्रस्तुत रूपमें अपूर्ण कहीं नजर नहीं आती। प्रथम तीन खंड तो घूरे हैं ही। चौथे वेदना खडके आदिसे कृति आदि अनुयोगद्वारा प्रारम्भ हो जाते हैं। इनमें प्रथम छह कृति, वेदना, फास, कम्म, पयडि और वधन स्वयं भगवान् भूतबलि-द्वारा प्ररूपित हैं। इनके अन्तमें धवलाकारने कहा है—

‘भूदयलिभटारण्ण जेणद सुत्तं देवामासियभावणं लिहिद वेणेद्वेण सुचिद-सेस-अट्टारस्-अणि-
योगारणं किंचि सखेयेण पस्सयण वस्सामो (धवला अ पत्र १३३२)

इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि आचार्य भूतबलिकी रचना यहीं तक है । किन्तु उक्त प्रतिज्ञा वाक्यके अनुसार शेष निबन्धनादि अठारह अधिकारोंका वर्णन ध्वलाकारने स्वयं किया है और अपनी इस रचनाको उन्होंने चूलिका कहा है—

पुत्तो उवरिमगंयो चूलिया णाम ।

इन्हीं अठारह अनुयोगद्वारोंकी वीरसेनद्वारा रचनाका विशद इतिहास इन्द्रनन्दिने अपने श्रुतावतारमे दिया है * । इसी चूलिका विभागको उन्होंने छठवा खंड भी कहा है । इसप्रकार चौबीसो अनुयोगद्वारोंके कथनके साथ ग्रंथ अपने स्वाभाविक रूपसे समाप्त होता है । अब यदि इन्हीं अनुयोगद्वारोंके भीतर वर्गणाखंड नहीं माना जाता तो उसके लिये कौनसा विषय व अधिकार शेष रहा और वह कहासे छूट गया होगा ? लेखकद्वारा उसके छोड़ दिये जानेकी आशंकाको तो इस रचनामे बिल्कुल ही गुजाइश नहीं रही ।

वेदनाखंडके आदि अवतरणोंका ठीक अर्थ

वेदनाखंडके आदि मंगलाचरणकी व्यवस्था संबंधी सूचनाका जो अर्थ लगाया जाता है और उससे जो गड़बड़ी उत्पन्न होती है उसका हम ऊपर परिचय करा चुके हैं । अब हमे यह देखना आवश्यक है कि उक्त भूलोंका क्या कारण है और उन अवतरणोंका ठीक अर्थ क्या है । 'उवरि उच्चमाणेसु तिसु खडेसु' का अर्थ 'ऊपर कहे हुए तीन खंड' तो हो ही नहीं सकता । पर ऐसा अर्थ किये जानेके दो कारण मालूम होते हैं । प्रथम तो 'उवरि' से सामान्य ऊपर अर्थात् पूर्वोक्त का अर्थ ले लिया गया है और दूसरे उसकी आवश्यकता भी यो प्रतीत हुई क्योंकि आगे वर्गणा और महाबंधमे अलग मंगल करनेका उल्लेख पाया जाता है । पर खोज और विचारसे देखा जाता है कि 'उवरि' शब्दका ध्वलाकारने पूर्वोक्तके अर्थमें कहीं उपयोग नहीं किया । उन्होंने उस शब्दका प्रयोग सर्वत्र 'आगे' के अर्थमें किया है और पूर्वोक्तके लिये 'पुव्व' या पुव्वुत्त का । उदाहरणार्थ, सतपरुवणा, पृष्ठ १३० पर उन्होंने कहा है—

सपहि पुव्वं उत्त-पयाडिसमुक्किताणा ।

पदण्ह पंचण्हसुवरि संपहि पुव्वुत्त-जहण्णट्ठिदि

च पक्खित्ते चूलियाए णव अट्ठियारा भवति ।

अर्थात् पूर्वोक्त प्रकृति समुत्कीर्तनादि पाचोंके ऊपर अभी कहे गये जघन्यस्थिति आदि जोड़ देनेपर चूलिकाके नौ अधिकार हो जाते हैं । यहा ऊपर कहे जा चुकेके लिये 'पुव्वं उत्त' व 'पुव्वुत्त' शब्द प्रयुक्त हुए हैं और 'उवरि' से आगेका तात्पर्य है ।

पृ ७३ पर 'उवरि' से बने हुए उवरीदो (उपरित्.) अव्ययका प्रयोग देखिये । आचार्य कहते हैं—

पुष्पाणुपुष्वी पञ्चाणुपुष्वी जत्थत्तत्थाणुपुष्वी चेदि ति विहा आणुपुष्वी । ज मूलादो परिवाडीए उच्चदे सा पुष्पाणुपुष्वी । तिस्से उदाहरण 'उसहमजिय च वदे' । इच्चेवमादि । ज उवरीदो हेद्दा परिवाडीए उच्चदि सा पञ्चाणुपुष्वी । तिस्से उदाहरण—इस करोमि य पणमं जिणवरवसहस्स वड्डमाणस्स । सेसाण च जिणाण सिवसुहक्खा विलोमेण ॥

यहा यह बतलाया है कि जहां पूर्वसे पश्चात्की ओर क्रमसे गणना की जाती है उसे पूर्वानु-पूर्वी कहते हैं, जैसे 'ऋषभ और अजितनाथको नमस्कार' । पर जहा नीचे या पश्चात्से ऊपर या पूर्वकी ओर अर्थात् विलोमक्रमसे गणना की जाती है वह पश्चादानुपूर्वी कहलाती है जैसे मै वर्द्धमान जिनेशको प्रणाम करता हूं और शेष (पार्श्वनाथ, नेमिनाथ आदि) तीर्थकरोंको भी । यहा 'उवरीदो' से तात्पर्य 'आगे' से है और पीछे की ओरके लिये हेद्दा [अधः] शब्दका प्रयोग किया गया है ।

धवलामें आगे बंधन अनुयोगद्वारकी समाप्तिके पश्चात् कहा गया है 'एत्तो उवरिमगथो चूलिया णाम' । अर्थात् यहासे ऊपरके ग्रथका नाम चूलिका है । यहा भी 'उवरिम' से तात्पर्य आगे आनेवाले ग्रथविभागसे है न कि पूर्वोक्त विभागसे ।

और भी धवलामें सैकड़ों जगह 'उवरि' शब्दका प्रयोग हमारी दृष्टिमें इसप्रकार आया है "उवरि भणमाणचुण्णिमुत्तादो," 'उवरिममुत्त भणदि' आदि । इनमें प्रत्येक स्थलपर निर्दिष्ट सूत्र आगे दिया गया पाया जाता है । उवरिका पूर्वोक्तके अर्थमें प्रयोग हमारी दृष्टिमें नहीं आया

इन उदाहरणोंसे स्पष्ट है कि उवरिका अर्थ आगे आनेवाले खंडोंसे ही हो सकता है, पूर्वोक्तसे नहीं । और फिर प्रकृतमें तो 'उच्चमाण' पद इस अर्थको अच्छी तरह स्पष्ट कर देता है क्योंकि उसका अभिप्राय केवल प्रस्तुत और आगे आनेवाले खंडोंसे ही हो सकता है । पर यदि आगे कहे जानेवाले तीन खंडोंका यह मंगल है तो इस बातका वर्गणा और महाबंधके आदिमें मंगलाचरणकी सूचनासे कैसे सामञ्जस्य बैठ सकता है ? यही एक बिकट स्थल है जिसने उपर्युक्त सारी गड़बड़ी विशेषरूपसे उत्पन्न की है । समस्त प्रकरणपर सब दृष्टियोंसे विचार करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि ववलाकी उपलब्ध प्रतियोंमें वहा पाठ की अशुद्धि है । मेरे विचारसे 'वगणामहावधानमादीर मंगल-करणादो' की जगह 'वगणामहावधानमादीए मंगलाकरणादो' पाठ होना चाहिये । दीर्घ 'आ' के स्थानपर ऋस्व 'अ' की मात्रा की अशुद्धिया तथा अन्य स्वरोंमें भी ऋस्व दीर्घके व्यत्यय इन प्रतियोंमें भरे पड़े हैं । हमें अपने सशोधनमें इसप्रकारके सुधार सैकड़ों जगह करना पड़े हैं । यथार्थतः प्राचीन कन्नड़ लिपिमें ऋस्व और दीर्घ स्वरोंमें बहुधा विवेक नहीं किया जाता था × । हमारे अनुमान किये हुए सुधारके साथ पढ़नेसे पूर्वोक्त

समस्त प्रकरण व शंका-समाधानक्रम ठीक बैठ जाता है। उससे उक्त दो अवतरणोंके बीचमें आये हुए उन शंका समाधानोंका अर्थ भी सुलझ जाता है जिनका पूर्वकथित अर्थसे त्रिलकुल ही सामञ्जस्य नहीं बैठता बल्कि विरोध उत्पन्न होता है। वह पूरा प्रकरण इस प्रकार है—

उपरि उच्चमाणेसु तिसु खडेसु कस्सेव मंगल ? तिण्ण खंडाण । कुदो ? वग्गणा—महावंधाणमादीण् मंगलाकरणादो । ण च मगलेण विणा भूतबलिभट्टारओ गयस्म पारभदि, तस्स अणाहरियत्तपसंगादो । कथ वेयणाए आदीए उच्च मंगल सेस दो-खंडाणं होदि ? ण, कदीए आदिमिह उत्तस्म एउस्सेव मंगलस्स सेसतेवीस अणियोगद्दारेसु पउत्तिदसणादो । महाकम्मपयडिपाहुडत्तणेण चउवीसपहमणियोगद्वाराण भेदाभावादो एगत्तं, तदो एगस्स एयं मंगल तत्थ ण विरुद्धदे । ण च एदोसि तिण्ह खंडाणमेयत्तमेगखडत्तपसंगादो ति, ण एस्स दोसो, महाकम्मपयडिपाहुडत्तणेण एदोसि पि एगत्तदसणादो । कदि-पास-त्तम्म पयडि—अणियोगद्वाराणि वि एत्थ परुविदाणि, तेसि खडग्गयम्पणमकाऊण तिण्णि चेव खंडाणि ति त्तिमट्ट उच्चदे ? ण, तेनि पहाणत्ताभावादो । तं पि कुदो णउदो ? सखेवेण परुवणादो ।

इसका अनुवाद इस प्रकार होगा—

शंका—आगे कहे जाने वाले तीन खंडो (वेदना वर्गणा और महाबंध) में से किस खंड का यह मंगलाचरण है ?

समाधान—तीनों खंडोका ।

शंका—कैसे जाना ?

समाधान—वर्गणाखंड और महाबंध खंडके आदिमें मंगल न किये जानेसे । मंगल-किये बिना तो भूतबलि भट्टारक ग्रंथका प्रारंभ ही नहीं करते क्योंकि इससे अनाचार्यत्वका प्रसंग आ जाता है ।

शंका—वेदनाके आदिमें कहा गया मंगल शेष दो खंडोका भी कैसे हो जाता है ?

समाधान—क्योंकि कृतिके आदिमें किये गये इस मंगलकी शेष तेवीस अनुयोगद्वारोंमें भी प्रवृत्ति देखी जाती है ।

शंका—महाकर्मप्रकृतिपाहुडत्वकी अपेक्षासे चौबीसो अनुयोगद्वारोंमें भेद न होनेसे उनमें एकत्व है, इसलिये एकका यह मंगल शेष तेवीसोंमें विरोधको प्राप्त नहीं होता । परंतु इन तीनों खंडोंमें तो एकत्व है नहीं, क्योंकि तीनोंमें एकत्व मान लेनेपर तीनोंके एक खंडत्वका प्रसंग आजाता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि—महाकर्मप्रकृतिपाहुडत्वकी अपेक्षासे इनमें भी एकत्व देखा जाता है ।

शंका—कृति, स्पर्श, कर्म और प्रकृति अनुयोगद्वार भी यहा (ग्रंथके इस भागमें) प्ररूपित किये गये हैं, उनकी भी खंड ग्रंथ सज्ञा न करके तीन ही खंड क्यो कहे जाते हैं ?

समाधान—क्योंकि इनमें प्रधानताका अभाव है।

शंका—यह कैसे जाना ?

समाधान—उनका संक्षेपमे प्ररूपण किया गया है इससे जाना।

इस परसे यह बात स्पष्ट समझमे आजाती है कि उक्त मंगलाचरणका सम्बन्ध बंध-सामित और खुदाबध खंडोसे बैठाना बिलकुल निर्मूल, अस्वाभाविक, अनावश्यक और ध्वलाकार के मतसे सर्वथा विरुद्ध है। हम यह भी जान जाते हैं कि वर्गणाखंड और महाबधके आदिमे कोई मंगलाचरण नहीं है, इसी मंगलाचरणका अधिकार उनपर चालू रहेगा। और हमें यह भी सूचना मिल जाती है कि उक्त मंगलके अविकारान्तर्गत तीनो खंड अर्थात् वेदना, वर्गणा और महाबंध प्रस्तुत अनुयोगद्वारोंसे बाहर नहीं है। वे किन अनुयागद्वारोंके भीतर गर्भित हैं यह भी संकेत ध्वलाकार यहां स्पष्ट दे रहे है। खंड सज्ञा प्राप्त न होने की शिकायत किन अनुयोग-द्वारोंकी ओरसे उठाई गई ? कदि, पास, कम्म और पयडि अनुयोगद्वारोंकी ओरसे। वेदणा-अनुयोगद्वारका यहां उल्लेख नहीं है क्योंकि उसे खंड सज्ञा प्राप्त है। ध्वलाकारने बधन अनुयोगद्वारका उल्लेख यहां जान वृक्षकर छोड़ा है क्योंकि बधनके ही एक अवान्तर भेद वर्गणासे वर्गणाखंड सज्ञा प्राप्त हुई है और उसके एक दूसरे उपभेद बधविधानपर महाबंधकी एक भव्य इमारत खड़ी है। जीवद्वान, खुदाबध और बंधसामिताविचय भी इसके ही भेद प्रभेदोंके सुफल हैं। इसलिये उन सबसे भाग्यवान पांच पांच यशस्वी सतानके जनयिता बधनको खंड सज्ञा प्राप्त न होने की कोई शिकायत नहीं थी। शेष अठारह अनुयोगद्वारोंका उल्लेख न करनेका कारण यह है कि भूतबलि भट्टारकने उनका प्ररूपण ही नहीं किया। भूतबलिकी रचना तो बधन अनुयोगद्वारके साथ ही, महाबंध पूर्ण होने पर, समाप्त हो जाती है जैसा हम ऊपर बतला चुके हैं।

इसी अवतरणसे ऊपर ध्वलाकारने जो कुछ कहा है उससे प्रकृत विषयपर और भी बहुत विशद प्रकाश पड़ता है। वह प्रकरण इसप्रकार है—

तत्थेदं किं निरुद्धमाहो अणिउद्धमिदि ? ण ताव निबुद्धमगलमिदं महाकम्मपयडिपाहुडस्स कदि-यादि-चउत्तीमअणियोगाउयस्स आदीणं गोदमसामिणा परनिदस्स भूतबलिभट्टारणं वेयणाखंडस्स आदीणं मगलद्वं वत्तो आणंदणं ठविदम्म निरुद्धत्तविरोहादो। ण च वेयणाउउ महाकम्मपयडिपाहुड अवयवस्स अउयवित्तविरोहादो। ण च भूदउली गोदमो विगलसुदधारयस्स धरसेणाइरियसीसस्स भूदबलिस्स सयल-सुद्धधारयउत्तमागंउत्तमिगोउत्तमत्तविरोहादो। ण चाण्णो पयारो निबुद्धमगलत्तस्स हेदुभूदो आथि। तम्हा अणिउद्धमगलमिदं। अधवा हेदु निरुद्धमगलं। कय वेयणाउउउउउउउयस्स महाकम्मपयडिपाहुडत्तं ? ण, कदिपा (ति) चउत्तीमअणियोगाउरिहोत्तो तयत्तेण पुधभूदमहाकम्मपयडिपाहुडाभावादो। एउेसिमणियोगाद्वाराणं कम्मपयडिपाहुउं सत्तं पाहुउ-उउत्त पमज्जं ? ण एउ दोमो, कयचि उउउउउउउउउउ। कय वेयणाउ

महापरिमाणेण उवसंहारस्स इमस्स वेयणाखंडस्स वेयणा-भावो ? ण, अवयवेदितो प्यंतेण पुधभूदस्स अवयवस्स अणुवलंभादो । ण च वेयणाए बहुत्तमणिट्टमिच्छिज्जमाणत्तादो । कध भूदवलिस्स गोदमत्त ? किं तस्स गोदमत्तेण ? कधमण्णहा मगलस्स निबद्धत्त ? ण, भूदवलिस्स खड-गथ पडि कत्तारत्ताभावादो । ण च अण्णेण कय-गंधा-हियाराण एगदेसस्स पुण्विहा (पुण्विल) सद्ध-संदब्भस्स पखवओ कत्तारो होदि, अट्ठप्पसंगादो । अधवा भूदवली गोदमो चैव एगाहिप्पायत्तादो । तत्रो सिद्धं निबद्धमंगलत्त पि । उवरि उच्चमाणेसु तिसु खडेसु । इत्यादि ।

१ शंका— इनमें से, अर्थात् निबद्ध और अनिबद्ध मंगलोंमेंसे, यह मंगल निबद्ध है या अनिबद्ध ?

समाधान—यह निबद्ध मंगल नहीं है, क्योंकि कृति आदि चौबीस अवयवोंवाले महाकर्मप्रकृतिपाहुडके आदिमें गौतमस्वामीद्वारा इसका प्ररूपण किया गया है । भूतबलि स्वामीने उसे वहाँसे लाकर वेदनाखंडके आदिमें मंगलके निमित्त रख दिया है । इसलिये उसमें निबद्धत्वका विरोध है । वेदनाखंड कुछ महाकर्मप्रकृतिपाहुड तो है नहीं, क्योंकि अवयवको ही अवयवी माननेमें विरोध आता है । और भूतबलि गौतमस्वामी हो नहीं सकते, क्योंकि विकल श्रुतके धारक और धरसेनाचार्यके शिष्य ऐसे भूतबलिमें सकलश्रुतके धारक और वर्धमान-स्वामीके शिष्य ऐसे गौतमपनेका विरोध है । और कोई प्रकार निबद्ध मंगलपनेका हेतु होता नहीं है, इसलिये यह मंगल अनिबद्ध मंगल है । अथवा, यह निबद्ध मंगल भी हो सकता है ।

२ शंका—वेदनाखंड आदि खंडोंमें समाविष्ट (ग्रथ) को महाकर्मप्रकृतिपाहुडपना कैसे प्राप्त हो सकता है ?

समाधान—क्योंकि कृति आदि चौबीस अनुयोगद्वारों से सर्वथा पृथक्भूत महाकर्मप्रकृतिपाहुडकी कोई सत्ता नहीं है ।

३ शंका—इन अनुयोगद्वारोंमें कर्मप्रकृतिपाहुडत्व मान लेनेसे तो बहुतसे पाहुड माननेका प्रसंग आ जाता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि यह बात कथञ्चित् अर्थात् एक दृष्टिसे अभीष्ट है ।

४ शंका—महापरिमाणवाली वेदनाके उपसंहाररूप इस वेदनाखंडको वेदना अनुयोगद्वार कैसे माना जाय ?

समाधान—ऐसा नहीं है, क्योंकि अवयवोंसे एकान्ततः पृथक्भूत अवयवी तो पाया नहीं जाता । और इससे यदि एकसे अधिक वेदना माननेका प्रसंग आता है तो वेदनाके बहुत्वसे कोई अनिष्ट भी नहीं, क्योंकि वह बात इष्ट ही है ।

५ शंका—भूतबलिको गौतम कैसे मान लिया जाय ?

समाधान—भूतबलिको गौतम माननेका प्रयोजन ही क्या है ?

६ शंका— यदि भूतबलिको गौतम न माना जाय तो मगलको निबद्धपना कैसे प्राप्त हो सकता है ?

समाधान— क्योंकि भूतबलिके खडग्रथके प्रति कर्तापनेका अभाव है। कुछ दूसरे के द्वारा रचे गये ग्रथाधिकारोंमेंसे एक देशका पूर्व प्रकारसे ही शब्दार्थ और संदर्भका प्ररूपण करनेवाला ग्रथकर्ता नहीं हो सकता क्योंकि इससे तो अतिप्रसंग दोष अर्थात् एक ग्रथके अनेक कर्ता होनेका प्रसंग आ जायगा। अथवा, दोनोंका एक ही अभिप्राय होनेसे भूतबलि गौतम ही है। इसप्रकार यहां निबद्ध मगलत्व भी सिद्ध हो जाता है।

यहापर प्रथम शंका समाधानमें यह स्पष्ट कर दिया गया है कि वेदनाखंडके अन्तर्गत पूरा
वेदना और वर्गणा- महाकम्मपयडिपाहुडका विषय नहीं है—वह उस पाहुडका एक अवयव
खंडोंकी मात्र है, अर्थात् उसमें उक्त पाहुडके चौबीसो अनुयोगद्वारोका अन्तर्भाव
सीमाओंका निर्णय नहीं किया जा सकता। महाकर्मप्रकृतिपाहुड अवयवी है और वेदनाखंड
 उसका एक अवयव।

दूसरे शंका समाधानसे यह सूचना मिलती है कि कृति आदि चौबीस अनुयोगद्वारोंमें अकेला वेदनाखंड नहीं फैला है, वेदना आदि खंड हैं अर्थात् वर्गणा और महावधका भी अन्तर्भाव वहीं है। तीसरे शंका समाधानमें कर्मप्रकृतिपाहुड के कृति आदि अवयवोंमें भी एक दृष्टिसे पाहुडपना स्थापित करके चौथेमें स्पष्ट निर्देश किया गया है कि वेदनाखंडमें गौतमस्वामीकृत बड़े विस्तारवाले वेदना अधिकारका ही उपसंहार अर्थात् संक्षेप है। यह वेदना बबलाकी अ. प्रतिमें पृ. ७५६ पर प्रारम्भ होती है जहां कहा गया है—

कम्मवृत्तणियवेयण-उवहि-समुत्तिण्णए जिणे णमिडं ।

वेयणमद्दाहियारं विविहहियारं परुवेवो ॥

और वह उक्त प्रतिके ११०६ वे पत्रपर समाप्त होती है जहां लिखा मिलता है—

‘एव वेयण-अप्पावहुगाणिओगहारे समत्ते वेयणाखड समत्ता ।

इसप्रकार इस पुष्पिकावाक्यमें अशुद्धि होते हुए भी बड़ा वेदनाखंडकी समाप्तिमें कोई शंका नहीं रह जाती।

पाचवें और छठवें शंका समाधानमें भूतबलि और गौतममें ग्रथकर्ता व अभिप्रायकी अपेक्षा एकत्व स्थापित किया गया है जो सहज ही समझमें आजाता है। इसप्रकार उक्त मगल निबद्ध भी सिद्ध करके बतवा दिया गया है।

इसप्रकार उक्त शंका समाधानसे वेदनाखंडकी दोनो सीमायें निश्चित हो जाती हैं। कृति तो वेदनाखंडके अन्तर्गत है ही क्योंकि उक्त शंका समाधानकी सूचनाके अतिरिक्त मगला-चरणके साथ ही वेदनाखंडका प्रारंभ माना ही गया है।

वेदनाखंडके विस्तारका एक और प्रमाण उपलब्ध है। टीकाकारने उसका परिमाण सोलह हजार पद बतलाया है। यथा, 'खंडगथ पडुच्च वेयणाए सोलसपदसहस्साणि'। यह पद-संख्या भूतबलिकृत सूत्र-ग्रंथकी अपेक्षासे ही होना चाहिये। अतएव जन्तक यह न ज्ञात हो जावे कि पदसे यहा धवलाकारका क्या तात्पर्य है तथा वेदनादि खंडोंके सूत्र अलग करके उन पर वह माप न लगाया जावे तबतक इस सूचनाका हम अपनी जांचमें विशेष उपयोग नहीं कर सकते। तो भी चूंकि टीकाकारने एक अन्य खंडकी भी इसप्रकार पद संख्या दी है और उस खंडकी सीमादिके विषयमें कोई विवाद नहीं है इसलिये हमें उनकी तुलनासे कुछ आपेक्षिक ज्ञान अवश्य हो जायगा। धवलाकारने जीवद्वाण खंडकी पद संख्या अठारह हजार बतलाई है—'पदं पडुच्च अट्ठारहपदसहस्सं' (संत प. पृ. ६०). इससे यह ज्ञात हुआ कि वेदनाखंडका परिमाण जीवद्वाणसे नवमांश कम है। जीवद्वाण के ४७५ पत्रोंका नवमांश लगभग ५३ होता है, अतः साधारणतया वेदनाखंडकी पत्र संख्या ४७५-५३=४२२ के लगभग होना चाहिये। ऊपर निर्धारित सीमाके अनुसार वेदनाकी पत्र संख्या प्रत्यक्षमें ६६७ से ११०६ तक अर्थात् ४३८ है जो आपेक्षिक अनुमानके बहुत नजदीक पड़ती है। समस्त चौबीस अनुयोगद्वारोंको वेदनाके भीतर मान लेनेसे तो जीवद्वाणकी अपेक्षा वेदनाखंड धवला के तिगुनेसे भी अधिक बड़ा हो जाता है।

जब वेदनाखंडका उपसंहार वेदानुयोगद्वारके साथ हो गया तब प्रश्न उठता है कि **वर्गणा निर्णय** उसके आगेके फास आदि अनुयोगद्वार किस खंडके अंग रहे? ऊपर वेदनादि तीन खंडोंके उल्लेखोंके विवेचन से यह स्पष्ट ही है कि वेदनाके पश्चात् वर्गणा और उसके पश्चात् महाबंधकी रचना है। महाबंधकी सीमा निश्चितरूपसे निर्दिष्ट है क्योंकि धवलामें स्पष्ट कर दिया गया है कि बन्धन अनुयोगद्वारके चौथे प्रमेद बन्धविधानके चार प्रकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशबंधका विधान भूतबलि भट्टाकरने महाबंधमें विस्तारसे लिखा है, इसलिये वह धवलाके भीतर नहीं लिखा गया। अतः यही तब वर्गणाखंडकी सीमा समझना चाहिये। वहासे आगेके निबन्धनादि अठारह अधिकार टीकाकी सूचनानुसार चूलिका रूप हैं। वे टीकाकार कृत हैं भूतबलिकी रचना नहीं हैं।

उक्त खंड विभागको सर्वथा प्रामाणिक सिद्ध करनेके लिये अब केवल उस प्रकारके किसी प्राचीन विश्वसनीय स्पष्ट उल्लेखमात्रकी अपेक्षा और रह जाती है। सौभाग्यसे ऐसा एक

उल्लेख भी हमें प्राप्त हो गया है। मूडविद्रीके प. लोकनाथजी शास्त्रीने वीरवाणीविलास जैन सिद्धांतमवनकी प्रथम वार्षिक रिपोर्ट (१९३५) में मूडविद्रीकी ताडपत्रीय प्रतिपरसे महाधवल (महाबंध) का कुछ परिचय अवतरणों सहित दिया है। इससे प्रथम बात तो यह जानी जाती है कि पंडितजीको उस प्रतिमें कोई मंगलाचरण देखनेको नहीं मिला। वे रिपोर्ट में लिखते हैं “ इसमें मंगलाचरण श्लोक, ग्रंथकी प्रशस्ति वगैरह कुछ भी नहीं है। ” प. लोकनाथजी की यह रिपोर्ट महत्वपूर्ण है क्योंकि पंडितजीने ग्रंथको केवल ऊपर नीचे ही नहीं देखा—उन्होंने कोई चार वर्षतक परिश्रम करके पूरे महाधवल ग्रंथकी नागरी प्रतिलिपि तैयार की है जैसा कि हम प्रथम जिल्दकी भूमिकामें बतला आये हैं। अतएव उस ग्रंथका एक एक शब्द उनकी दृष्टि और कलमसे गुजर चुका है। उनके मतसे पूर्वोक्त ‘मंगलकरणादो’ पदमे हमारे ‘मंगलाकरणादो’ रूप सुधार की पुष्टि होती है—

दूसरी बात जो महाधवलके अवतरणोंमें हमें मिलती है वह खडविभागसे संबध रखती है। महाधवलपर कोई पंचिका भी उस प्रतिमें ग्रथित है जैसा कि अवतरणकी प्रथम पंक्तिसे ज्ञात होता है—

‘ वौच्छामि सत्तकम्मे पंचियरूवेण विवरण सुमहत्थ ’

इसी पंचिकाकारने आगे चलकर कहा है—

‘ महाकम्मपयडिपाहुडस्स कदि-वेदणाओ(दि) चौब्बीसमणियोगद्वारेसु तत्थ कदि-वेदणा ति जाणि अणियोगद्वाराणि वेदणाखंडग्धि, पुणो पास (-कम्म पयडि-वधणाणि) चत्तारि अणियोगद्वारेसु तत्थ वध वधणिज्जाणमणियोगेहि सह वग्गणाखडग्धि, पुणो बंधविधानमणियोगो खुदावधम्मि सप्पवचेण परूविदाणि। पुणो तेहितो सैसट्ठारसणियोगद्वाराणि सत्तकम्मे सब्बाणि परूविदाणि। तो वि तत्सङ्गभीरत्तादो अत्थविसम-पदानमत्थे थोरुद्धयेण पच्चियसरूवेण भणित्तामो ’ x ।

इस अवतरणमे शब्दोंमें अशुद्धिया हैं। कोष्ठकके भीतरके सुधार या जोड़े हुए पाठ भेरे हैं। पर उसपरसे तथा इससे आगे जो कुछ कहा गया है उससे यह स्पष्ट जान पडा कि यहां निबधनादि अठारह अधिकारोंकी पजिका दी गई है। उन अठारह अधिकारोंका नाम ‘सत्तकम्म’ था, जिससे इन्द्रनन्दिके सत्कर्मसंबधी उल्लेखकी पूरी पुष्टि होती है। प्राप्त अवतरण परसे महाधवलकी प्रति व उसके विषय आदिके संबधमें अनेक ग्रन्थ उपस्थित होते हैं, और प्रतिकी परीक्षाकी बड़ी अभिलाषा उत्पन्न होती है, किन्तु उस सबका नियंत्रण करके प्रकृत विषय-पर आनेसे उक्त अवतरणमें प्रस्तुतोपयोगी यह बात स्पष्ट रूपसे मालूम हो जाती है, कि कृति

x यह अवतरण स प. जिल्द १ की भूमिका पृ ६८ पर दिया जा चुका है। ‘पर वहां थुलसे ‘पुणो ते-हितो’ आदि वाक्य टूट गया है। अतः प्रकृतोपयोगी उस अवतरणको यहां फिर पूरा दे दिया है।

और वेदना अनुयोगद्वारा वेदनाखंडके तथा फास, कम्म, पयडि और वधनके बंध और बंधनीय भेद वर्गणाखंडके भीतर है। इससे हमारे विषयका निर्विवादरूपसे निर्णय हो जाता है।

प्रथम जिल्दकी भूमिकामें ठीक इसीप्रकार खंडविभागका परिचय कराया जा चुका है उस परिचयकी ओर पाठकोका ध्यान पुनः आकर्षित किया जाता है।

४. णमोकार मंत्रके आदिकर्ता.

१

जो ख्याति और प्रचार हिन्दुओंमें गायत्री मन्त्रका है तथा बौद्धोंमें त्रिसरण मन्त्रका था, वही जैनियोंमें णमोकार मन्त्रका है। धार्मिक तथा सामाजिक सभी कृष्यों व विधानोंके आरम्भमें जैनी इस मन्त्रका उच्चारण करते हैं। यही उनका दैनिक जपमन्त्र है। इसकी प्रख्यातिका एक पथ निम्न प्रकार है, जो नित्य पूजनविधान में उच्चारण किया जाता है—

एसो पच-णमोथारो सब्बपापप्पणासणो । मंगलाण च सब्बेसिं पढम होइ मगल ॥

अर्थात् यह पंच नमस्कार मन्त्र सब पापों का नाश करने वाला है और सब मंगलोंमें प्रथम [श्रेष्ठ] मगल है।

इस मन्त्रका प्रचार जैनियोंके तीनों सम्प्रदायों—दिगम्बर, श्वेताम्बर और स्यानकवासियोंमें समानरूपसे पाया जाता है। तीनों सम्प्रदायोंके प्राचीनतम साहित्यमें भी इसका उल्लेख मिलता है। किंतु अभी तक यह निश्चय नहीं हुआ कि इस मन्त्रके आदिकर्ता कौन है। यथार्थतः यह प्रश्न ही अभी तक किसी ने नहीं उठाया और इस कारण इस मन्त्रको अनादि-निधन जैसा पद प्राप्त हो गया है।

किन्तु षट्खंडागम और उसकी टीका धवलाके अवलोकनसे इस णमोकार मन्त्रके कर्तृत्वके सम्बन्धमें कुछ प्रकाश पड़ता है, और इसीका यहाँ परिचय कराया जाता है।

षट्खंडागमका प्रथम खण्ड जीवङ्गाण है और इस खंडके प्रारम्भमें यही सुप्रसिद्ध मन्त्र पाया जाता है। टीकाकार वीरसेनाचार्यके अनुसार यही उक्त ग्रन्थका सूत्रकारकृत मंगलाचरण है। वे लिखते हैं कि—

मगल-णिमित्त-हेऊ-परिमाण णाम तह थ क्तारं । वागरिय छप्पि पच्छा वक्खाणउ सत्थमाइरियो ॥

इदि णायमाइरिय-परपरागय मणेणावहारिय पुब्बाइरियायाराणुसरणं तिरयणहेउ त्ति पुप्फदत्ताइ-रियो मगलादीण छण्ण सक्कारणाण पळ्ळणहु सुत्तमाह—

णमो अरिहताण, णमो सिद्धाण, णमो आइरियाण, णमो उवज्झायाण, णमो लोए सब्बसाह्वण ॥

(स० प० १, पृ० ७)

अर्थात् 'मगल, निमित्त, हेतु परिमाण, नाम और कर्ता. इन छहों का प्ररूपण करके

पश्चात् आचार्यको शास्त्रका व्याख्यान करना चाहिये । ' इस आचार्य परम्परागत न्याय को मनमें धारण करके पुष्पदन्ताचार्य मंगलादि छहोंके सकारण प्ररूपणके लिये सूत्र कहते हैं, ' णमो अरिहताणं ' आदि ।

इसके आगे धवलाकारने इसी मंगलसूत्रको ' तालपलंब ' सूत्रके समान देशामर्षक बतलाकर पूर्वोक्त मंगल, निमित्त आदि छहों का प्ररूपक सिद्ध किया है । तत्पश्चात् मंगल शब्दकी व्युत्पत्ति व अनेक दृष्टियोंसे भेद प्रभेद बतलाते हुए मंगलके दो भेद इसप्रकार किये हैं—

तच्च मंगल दुविह णिवद्धमणिवद्धमिदि । तत्थ णिवद्ध णाम जो सुत्तस्सादीए सुत्तकत्तारेण णिवद्ध-देवदा-णमोक्कारो त णिवद्ध-मंगल । जो सुत्तस्सादीए सुत्तकत्तारेण कयदेवदाणमोक्कारो तमणिवद्ध-मंगल । इदं पुण जीवट्ठाण णिवद्ध-मंगल, यत्तो ' इमेसि चोदसण्ह जीवसमाण ' इदि पदस्स सुत्तस्सादीए णिवद्ध- ' णमो अरिहताण ' इच्चादिदेवदा-णमोक्कारदसणाणे ।

(स० प० १, पृ० ४१)

अर्थात् मंगल दो प्रकारका है, निबद्ध और अनिबद्ध । सूत्रके आदिमें सूत्रकर्ता द्वारा जो देवता-नमस्कार निबद्ध किया जाय वह निबद्ध मंगल है और जो सूत्रके आदिमें सूत्रकर्ता द्वारा देवताको नमस्कार किया जाता है (किन्तु वह नमस्कार लिपिबद्ध नहीं किया जाता) वह अनिबद्ध-मंगल है । यह जीवट्ठाणं निबद्ध मंगल है, क्योंकि इसके ' इमेसि चोदसण्ह ' आदिसूत्रके पूर्व ' णमो अरिहताण ' इत्यादि देवतानमस्कार पाया जाता है ।

इससे यह सिद्ध हुआ कि जीवट्ठाणके आदिमें जो यह णमोकार मन्त्र पाया जाता है वह सूत्रकार पुष्पदन्त आचार्य द्वारा ही वहां रखा गया है और इससे उस शास्त्रको निबद्ध-मंगल सज्ञा प्राप्त हो जाती है । किन्तु इससे यह स्पष्ट ज्ञात नहीं होता कि यह मंगलसूत्र स्वयं पुष्प-दन्ताचार्यने रचकर यहां निबद्ध किया है, या कहीं अन्यत्र से लेकर यहां रख दिया है । पर अन्यत्र धवलाकार ने इसका भी निर्णय किया है ।

वेदनाखंडके आदिमें ' णमो जिणाण ' आदि मंगलसूत्र पाये जाते हैं, जिनकी टीका करते हुए धवलाकारने उनके निबद्ध अनिबद्ध स्वरूप का विवेचन किया है । वे लिखते हैं—

तत्थेदं कि णिवद्धसाहो अणिवद्धमिदि ? ण ताव णिवद्ध-मंगलमिदं, महाकम्मपयडिपाहुडस्स कदियादि-चउवीस-अणियोगावयवस्स आदीए गोदमसामिणा परुविदस्स भूदबलिभडारपण वेयणाखंडस्स आदीए मंगलट्ठ तवो आणेदूण ठविदस्स णिवद्ध-विरोहादो । ण च वेयणाखंड महाकम्मपयडिपाहुड अवयवस्स अवयवित्तिरोहादो । ण च भूदबली गोदमो, विगलसुदधारयस्स धरसेणाइरियसीसस्स भूदयलिस्स सयलसुदधारयवट्ठमाणतेवासि गोदमत्तविरोहादो । ण चाण्णो पयारो णिवद्धमंगलत्तस्स हेदुभूदो अत्थि ।

अर्थात् यह मंगल (णमो जिणाण, आदि) निबद्ध है या अनिबद्ध ? यह निबद्ध-मंगल तो नहीं है क्योंकि महाकर्मप्रकृतिपाहुडके कृति आदि चौबीस अनुयोगद्वारोंके आदिमें गौतमस्वामीने इस

मंगलका प्ररूपण किया है और भूतबलि भट्टारकने उसे बहासे उठाकर मंगलार्थ यहां वेदनाखंडके आदिमें रख दिया है, इससे इसके निबद्ध-मंगल होनेमें विरोध आता है। न तो वेदनाखंड महाकर्मप्रकृतिपाहुड है, क्योंकि अवयवको अवयवी माननेमें विरोध आता है। और न भूतबली ही गौतम है क्योंकि विकलश्रुतके धारक और धरसेनाचार्यके शिष्य भूतबलिको सकलश्रुतके धारक और वर्धमानस्वामीके शिष्य गौतम माननेमें विरोध उत्पन्न होता है। और कोई प्रकार निबद्ध मंगलत्वका हेतु हो नहीं सकता।

आगे टीकाकारने इस मंगलको निबद्धमंगल भी सिद्ध करने का प्रयत्न किया है, पर इसके लिये उन्हें प्रस्तुत ग्रन्थका महाकर्मप्रकृतिपाहुडसे तथा भूतबलिस्वामीका गौतमस्वामीसे बड़ी खींचातानी द्वारा एकत्व स्थापित करना पड़ा है। इससे धवलाकारका यह मत बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि दूसरेके बनाये हुए मंगलको अपने ग्रन्थमें जोड़ देनेसे वह शास्त्र निबद्ध-मंगल नहीं कहला सकता, निबद्ध-मंगलत्वकी प्राप्तिके लिये मंगल ग्रन्थकारकी ही मौलिक रचना होना चाहिये। अतएव जब कि धवलाकार जीवट्टाणको णमोकार मन्त्ररूप मंगलके होनेसे निबद्ध-मंगल मानते हैं तब वे स्पष्टतः उस मंगलसूत्रको सूत्रकार पुण्डदन्तकी ही मौलिक रचना स्वीकार करते हैं, वे यह नहीं मानते कि उस मंगलको उन्होंने अन्यत्र कहीं से लिया है। इससे धवलाकार आचार्य वीरसेनका यह मत सिद्ध हुआ कि इस सुप्रसिद्ध णमोकार मंत्रके आदिकर्ता प्रातः स्मरणीय आचार्य पुण्डदन्त ही हैं।

२

णमोकार मंत्रके संबन्धमें श्वेताम्बर सम्प्रदायकी क्या मान्यता है और उसका पूर्वोक्त मतसे कहाँ तक सामञ्जस्य या वैषम्य है, इस पर भी यहां कुछ विचार किया जाता है। श्वेताम्बर आगमके अन्तर्गत छह छेदसूत्रोंमेंसे द्वितीय सूत्र 'महानिशीथ' नामका है। इस सूत्रमें णमोकार मन्त्रके विषयमें निम्न वार्ता पायी जाती है—

एवं तु ज पंचमंगलमहासुयक्खंधस्स वक्खाणं त महया पबधेणं अणतगमपज्जेहिं सुत्तस्स य पियभूयाहिं णिज्जुत्ति-भास-सुबोहिं जहेव अणत-नाण-दसणधरेहिं तिथ्यरेहि वक्खाणिय तहेव समासओ वक्खाणिज्ज त आसि। अहसंथा कालपरिहाणिदोसेण ताओ णिज्जुत्ति-भास-सुबोओ बुच्चिन्नाओ। इओ य वच्चेण कालेण समएण महिद्धिपत्ते पयाणुसारी चइरसामी नाम दुवालसगसुअहरे समुपक्के। तेण य पंच-मंगल-महासुयक्खंधस्स उच्चारो मूलसुत्तस्स मज्जे लिहिओ। मूलसुत पुण सुत्तचाए गणहरेहिं अत्थत्ताए अरिहतेहिं भगवत्तेहि धम्मतिथ्यरेहिं विलोगमहिण्हि वीरजिणिदेहिं पन्नविच त्ति एस बुद्धसपयाओ।

(महानिशीथ सूत्र, अध्याय ५)

इसका अर्थ यह है कि इस पंचमंगल महाश्रुतस्कंधका व्याख्यान महान प्रबंधसे, अनन्त गम और पर्यायों सहित, सूत्रकी प्रियभूत निर्युक्ति, भाष्य और चूर्णियों द्वारा जैसा अनन्त ज्ञान-दर्शनके

धारक तीर्थकरोंने किया था उसीप्रकार संक्षेपमे व्याख्यान करने योग्य था । किन्तु आगे काल-परिहानिके दोषसे वे निर्युक्ति, भाष्य और चूर्णिया विच्छिन्न हो गई । फिर कुछ काल जानेपर यथासमय महाश्रुतिको प्राप्त पदानुसारी वइरसामी (वैरस्वामी या वज्रस्वामी) नामके द्वादशाग श्रुतके धारक उत्पन्न हुए । उन्होंने पचमगल महाश्रुतस्कधका उद्धार मूलसूत्रके मध्य लिखा । यह मूलसूत्र सूत्रत्वकी अपेक्षा गणधरो द्वारा तथा अर्थकी अपेक्षासे अरहत भगवान्, धर्मतीर्थकर त्रिलोकमहित वीरजिनेन्द्रके द्वारा प्रज्ञापित है, ऐसा वृद्धसम्प्रदाय है ।

यद्यपि महानिशीयसूत्रकी रचना श्वेताम्बर सम्प्रदायमें बहुत कुछ पीछेकी अनुमान की जाती है, तथापि उसके रचयिताने एक प्राचीन मान्यताका उल्लेख किया है जिसका अभिप्राय यह है कि इस पचमगलरूप श्रुतस्कधके अर्थकर्ता भगवान् महावीर हैं और सूत्ररूप प्रथकर्ता गौतमादि गणधर हैं । इसका तीर्थकर कथित जो व्याख्यान था वह कालदोषसे विच्छिन्न हो गया । तब द्वादशाग श्रुतधारी वइरस्वामीने इस श्रुतस्कधका उद्धार करके उसे मूल सूत्रके मध्यमें लिख दिया । श्वेताम्बर आगममें चार मूल सूत्र माने गये हैं—आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन और पिंडनिर्युक्ति । इनमें से कोई भी सूत्र वज्रसूरिके नामसे सम्बद्ध नहीं है । उनकी चूर्णिया भद्रबाहुकृत कही जाती हैं । उन मूल सूत्रोंमें प्रथम सूत्र आवश्यकके मध्यमें णमोकार मन्त्र पाया जाता है । अतएव उक्त मान्यताके अनुसार संभवतः यही वह मूलसूत्र है जिसमें वज्रसूरिने उक्त मन्त्रको प्रक्षिप्त किया ।

कल्पसूत्र स्थविरावलीमें ' वइर ' नामके दो आचार्योंका उल्लेख मिलता है जो एक दूसरेके गुरु-शिष्य थे । यथा—

थेरस्स ण अज्ज-सीहगिरिस्स जाइस्सरस्स कोसियगुत्तस्स अतेवासी थेरे अज्जवइरे गोयमसगुत्ते ।
थेरस्स ण अज्जवइरस्स गोयमसगुत्तस्स अतेवासी थेरे अज्जवइरसेणे उक्कोसियगुत्ते* ।

अर्थात् कौशिक गोत्रीय स्थविर आर्य सिंहगिरिके शिष्य स्थविर आर्य वइर गोतम गोत्रीय हुए, तथा स्थविर आर्य वइर गोतम गोत्रीयके शिष्य स्थविर आर्य वइरसेन उक्कोसिय गोत्रीय हुए ।

विक्रमसंवत् १६४६ मे सगृहीत तपागच्छ पट्टावलीमे वइरस्वामीका कुछ विशेष परिचय पाया जाता है । यथा—

तेरसमो वयरसामि गुरु ।

व्याख्या—तेरसमो त्ति श्रीसीहगिरिपट्टे त्रयोदश श्रीवज्रस्वामी यो वाट्पाठपि जातिस्मृतिभाग्, नमोगमनविधया सघरत्ताकृत्, दक्षिणस्या यौद्धराज्ये जिनेन्द्रपूजानिमित्त पुष्पाद्यानयनेन प्रवचनप्रभावनाकृत्,

देवाभिर्वन्दितो दशपूर्वविदामपश्चिमो वज्रशाखोत्पत्तिमूलम् । तथा स भगवान् पणवत्यधिकचतुःशत ४९६ वर्षान्ते जातः सन् अष्टौ ८ वर्षाणि गृहे, चतुश्चवारिंशत् ४४ वर्षाणि व्रते, पट्विंशत् ३६ वर्षाणि युगप्र० सर्वायुरष्टाशीति ८८ वर्षाणि परिपाट्य श्रीवीरात् चतुरशीत्यधिकपञ्चशत ५८४ वर्षान्ते स्वर्गभाक् । श्रीवज्र स्वामिनो दशपूर्वचतुर्थ-सहननसंस्थानानां व्युच्छेद ।

चतुष्कुलसमुत्पत्तिपितामहमह विभुम् ।

दशपूर्वविधि वन्दे वज्रस्वामिमुनीश्वरम् ॥ .

इस उल्लेखपरसे वइरस्वामीके सवधमें हमें जो बातें ज्ञात होती हैं वे ये हैं कि उनका जन्म वीरनिर्वाण से ४९६ वर्ष पश्चात् हुआ था और स्वर्गवास ५८४ वर्ष पश्चात् । उन्होंने दक्षिण दिशामें भी विहार किया था तथा वे दशपूर्वियोंमें अपश्चिम थे । वीरवशावलीमें भी उनके उत्तरदिशासे दक्षिणापथको विहार करनेका उल्लेख किया गया है,× और यह भी कहा गया है कि वहाके 'तुगिया' नामक नगरमें उन्होंने चातुर्मास व्यतीत किया था । वहासे उन्होंने अपने एक शिष्यको सोपारक पत्तन (गुजरात) में विहार करनेकी भी आज्ञा दी थी । इन उल्लेखोंपरसे उनके पुष्पदन्ताचार्यकी विहारभूमिसे सन्व्य होनेकी सूचना मिलती है ।

तपागच्छ पट्टावलीमें वइरस्वामीसे पूर्व आर्यमगुका उल्लेख आया है जिनका समय नि. स. ४६७ बतलाया गया है । यथा—

सप्तपद्यधिकचतुःशतवर्षे ४६७ आर्यमंगुः ।

आर्यमंगुका कुछ विशेष परिचय नन्दीसूत्र पट्टावलीमें इसप्रकार आया है । —

भगवं करग सरग पभावग णाण-दसण गुणाण ।

वदामि अज्जमंगुं सुयसागरपारग धीर ॥ २८ ॥

अर्थात् ज्ञान और दर्शन रूपी गुणोंके वाचक, कारक, धारक और प्रभावक, तथा श्रुतसागरके पारगामी धीर आर्यमंगुकी मैं वन्दना करता हूँ । इसके अनन्तर अज्जधम्म और भइगुत्तेके उल्लेखके पश्चात् अज्जवयरका उल्लेख है । इन उल्लेखोंपरसे जान पड़ता है कि ये आर्यमगु अन्य कोई नहीं, धवला जयधवलामें उल्लिखित आर्यमंगु ही है, जिनके विषयमें कहा गया है कि उन्होंने और उनके सहपाठी नागहत्थीने गुणधराचार्य द्वारा पचमपूर्व ज्ञानप्रवादसे उद्धार किये हुए कसायपाण्डुडका अध्ययन किया था और उसे जइवसह (यतिवृषभाचार्य) को सिखाया था । उक्त नन्दीसूत्र पट्टावलीमें अज्जवयरके अनन्तर अजरविहअ और अज्ज नन्दिलखमणके पश्चात् अज्ज नागहत्थी का भी उल्लेख इसप्रकार आया है —

* पट्टावली समुच्चय, पृ. ४७

× जैन साहित्य सशोधक १, २, परिशिष्ट, पृ. १४.

† पट्टावली समुच्चय, पृ. १३.

बहुव वायगवंसो जसवंसो अज-नागहत्थीणं ।

वागरण-करणभंगिय-कम्मपयडी-पहाणाणं ॥ ३० ॥

अर्थात् व्याकरण, करणभंगी व कर्मप्रकृतिमें प्रवान आर्य नागहस्तीका यशस्वी वाचक वंश वृद्धिशील होवे ।

इसमें सन्देहको स्थान नहीं कि ये ही वे नागहत्थी है जो धवलादि ग्रंथोंमें आर्यमुख के सहपाठी कहे गये हैं । उनके व्याकरणादिके अतिरिक्त 'कम्मपयडी' में प्रधानताका उल्लेख तो बड़ा ही मार्मिक है । श्वेताम्बर साहित्यमें कम्मपयडी नामका एक ग्रंथ शिवशर्मसूरि कृत पाया जाता है जिसका रचनाकाल अनिश्चित है । एक अनुमान उसके वि. स. ५०० के लगभगका लगाया जाता है । अतएव यह ग्रंथ तो नागहस्ती के अध्ययनका विषय हो नहीं सकता । फिर या तो यहां कम्मपयडीसे विषयसामान्य का तात्पर्य समझना चाहिये, अथवा, यदि किसी ग्रंथ-विशेष से ही उसका अभिप्राय हो तो वह उसी कम्मपयडी या महाकम्मपयडिपाहुड से हो सकता है जिसका उद्धार पुष्पदन्त और भूतबलि आचार्योंने षट्खंडागम रूपसे किया है ।

तपाम्बु पट्टावलीसे कोई सवा तीनसौ वर्ष पूर्व वि. सं. १३२७ के लगभग श्री धर्मघोष सूरि द्वारा संगृहीत 'सिरि-दुसमाकाल-समणसंघ-थयं' नामक पट्टावलीमें तो 'वइर' के पश्चात् ही नागहत्थिका उल्लेख किया गया है । यथा—

वीए तिवीस वइरं च नागहत्थि च रेवईमिंतं ।

सीह नागज्जुण भूइदिक्खिय कालय वदेX ॥ १३ ॥

ये वइर, वइर द्वितीय या कल्पसूत्र पट्टावलीके उक्कोसिय गोत्रीय वईरसेन है जिनका समय इसी पट्टावलीकी अवधूरीमें राजगणनासे तुलना करते हुए नि. सं. ६१७ के पश्चात् बतलाया गया है । यथा—

पुप्पमित्र (दुर्बलिका पुप्पमित्र) २० ॥ तथा राजा नाहडः ॥ १० ॥ (एव) ६०५ शाकसंवत्सर' ॥ अत्रान्तरे चोटिका निर्गता । इति ६१७ ॥ प्रथमोदयः । वयरसेण ३ नागहस्ति ६९ रेवतिमित्र ५९ बभदीवगसिंह ७८ नागार्जुन ७८

पणसयरी सयाह तिवि सय-समन्निआइं अइकमक ।

विक्कमकालाओ तओ बहुली (वलभी) भगो समुप्पन्नो ॥ १ ॥

इसके अनुसार वीरसंवत्के ६१७ वर्ष पश्चात् वयरसेनका काल तीन वर्ष और उनके अनन्तर नागहस्तिका काल ६९ वर्ष पाया जाता है ।

पूर्वोक्त उल्लेखोंका मथितार्थ इस प्रकार निकलता है—श्वेताम्बर पट्टावलियोंमें 'वइर' नामके दो आचार्योंका उल्लेख पाया जाता है जिनके नाममें कहीं कहीं 'अज वइर' और 'अज वइरसेन' ।

इसप्रकार भेद किया गया है। कल्पसूत्र स्थविरावलीमें एकको गौतम गोत्राय और दूसरेको उक्को-सिय गोत्रीय कहा है और उन्हें गुरु-शिष्य बतलाया है। किन्तु अन्य पीछेकी पट्टावलियोंमें उनके बीच कहीं कहीं एक दो नाम और जुड़े हुए पाये जाते हैं। प्रथम अज्जवइरके समयका उल्लेख उनके वीरनिर्वाणके ५८४ वर्षतक जीवित रहनेका मिलता है व अज्ज वइरसेनका उल्लेख वीर-निर्वाणसे ६१७ वर्ष पश्चात्का पाया जाता है। इन दोनों आचार्योंसे पूर्व अज्जमंगुका उल्लेख है, तथा उनके अनन्तर नागहत्थिका। अतः इन चारों आचार्योंका समय निम्न प्रकार पड़ता है—

वीर निर्वाण संघत्

अज्ज मग्गु	४६७
अज्ज वइर	४९६-५८४
अज्ज वइरसेन	६१७-६२०
अज्ज नागहत्थी	६२०-६८९

अज्ज वइर दक्षिणापथको गये, वे दशपूर्वोंके पाठी हुए और पदानुसारी थे तथा उन्होंने पंच णमोकार मन्त्र का उद्धार किया। नागहत्थी कम्मपयडिमें प्रधान हुए।

दिगम्बर साहित्योल्लेखोंके अनुसार आचार्य पुष्पदन्तने पहले पहले 'कम्मपयडी' का उद्धार कर सूत्ररचना प्रारंभ की और उसीके प्रारंभमें णमोकार मन्त्र रूपी मंगल निबद्ध किया, जो धवलाटीकाके कर्ता वीरसेनाचार्यके मतानुसार उनकी मौलिक रचना प्रतीत होती है। अज्जमंगु और नागहत्थि—दोनोंने गुणधराचार्य रचित कसायपाहुडको आचार्य परंपरासे प्राप्तकर यति-वृषभाचार्यको पढाया, और यतिवृषभाचार्यने उसपर चूर्णिसूत्र रचे, ऐसा उल्लेख धवलादि ग्रंथोंमें मिलता है। यतिवृषभकृत 'तिलोयपण्णसि' में 'वइरजस' नामके आचार्यका उल्लेख मिलता है जो प्रज्ञाश्रमणोंमें अन्तिम कहे गये हैं। यथा—

पण्हसमणेषु चरिमो वइरजसो णाम । ×

आश्चर्य नहीं जो ये अन्तिम प्रज्ञाश्रमण वइरजस (वज्रयश) श्वेताम्बर पट्टावलियोंके पदानुसारी वइर (वज्रस्वामी) ही हैं। पदानुसारिख और प्रज्ञाश्रमणत्व दोनों ऋद्धियोंके नाम है और ये दोनों ऋद्धिया एक ही बुद्धि ऋद्धिके उपभेद हैं*। धवलान्तर्गत वेदनाखडमें निबद्ध गौतम-स्वामीकृत मंगलाचरणमें इन दोनों ऋद्धियोंके धारक आचार्योंको नमस्कार किया गया है, यथा—

णमो पदासुसारीण ॥ ८ ॥ णमो पण्हसमणण ॥ १८ ॥

× संतपरुवणा १, भूमिका पृ. ३०, फुटनोट

* राजवातिक पृ १४३

इसप्रकार इन आचार्योंकी दिगम्बर मान्यताका क्रम निम्न प्रकार सूचित होता है—



वइरजसका नाम यतिवृषभसे पूर्व ठीक कहां आता है इसका निश्चय नहीं। आर्यमंखु और नागहत्थीके समकालीन होनेकी स्पष्ट सूचना पाई जाती है क्योंकि उन दोनोंने क्रमसे यतिवृषभको कसायपाहुड पढाया था। क्रमसे पढानेसे तथा आर्यमंखुका नाम सदैव पहले दिये जानेसे इतना ही अनुमान होता है कि दोनोंमे आर्यमंखु संभवतः जेठे थे। ये दोनों नाम श्वेताम्बर पट्टावलियोंमें कोई १३० वर्षके अन्तरसे दूर पड़ जाते हैं जिससे उनका समकालीनत्व नहीं बनता। किन्तु यह बात विचारणीय है कि श्वेताम्बर पट्टावलियोंमें ये दोनों नाम कहीं पाये जाते हैं और कहीं छोड़ दिये जाते हैं, तथा कहीं उनमेंसे एकका नाम मिलता है दूसरेका नहीं। उदाहरणार्थ, सबसे प्राचीन 'कल्पसूत्र स्थविरावली' तथा 'पट्टावली सारोद्धार' में ये दोनों नाम नहीं हैं, और 'गुरु पट्टावली' में आर्यमंखुका नाम है पर नागहत्थीका नहीं है^x। फिर आर्यमंखु और नागहत्थीने जिनका रचा हुआ कसायपाहुड आचार्य-परंपरासे प्राप्त किया था वे गुणधराचार्य दिगम्बर उल्लेखोंके अनुसार महाधीर स्वामीसे आचार्य-परंपराकी अट्ठाईस पीढ़ी पश्चात् निर्वाण संवत्की सातवीं शताब्दिमें हुए सूचित होते हैं जब कि श्वेताम्बर पट्टावलियोंमें उन दोनोंमें से एक पांचवीं और दूसरे सातवीं शताब्दिमें पड़ते हैं। इसप्रकार इन सब उल्लेखों परसे निम्न प्रश्न उपस्थित होते हैं—

१. क्या 'तिलोय-पण्णत्ति' में उल्लिखित 'वइरजस' और महानिशीथसूत्रके पदानुसारी 'वइरसामी' तथा श्वेतावर पट्टावलियोंके 'अज्ज वइर' एक ही हैं ?

२. 'वइरस्वामीने मूलसूत्रके मध्य पंचमगलश्रुतस्कंधका उद्धार लिख दिया' इस महानिशीथसूत्रकी सूचनाका तात्पर्य क्या है ? क्या उनकी दक्षिण यात्राका और उनके पंचमगलसूत्रकी प्राप्तिका कोई सम्बन्ध है ? क्या ध्वलाकारद्वारा सूचित णमोकार मंत्रके कर्तृत्वका इससे सामञ्जस्य बैठ सकता है ?

३. क्या ववलादिश्रुतमें उल्लिखित आर्यमंखु और नागहत्थी तथा श्वेताम्बर पट्टावलियोंके अज्जमगु और नागहत्थी एक ही हैं ? यदि एक ही हैं, तो एक जगह दोनोंकी समसामयिकता

^x देगो पट्टावली समुच्चय।

प्रकट होने और दूसरी जगह उनके बीच एकसाँ तीस वर्षका अन्तर पड़नेका क्या कारण हो सकता है ? पट्टावलियोमे भी कहीं उनके नाम देने और कहीं छोड़ दिये जानेका भी कारण क्या है ?

४. जिस कम्मपयडोमे नागहत्थीने प्रधानता प्राप्त की थी क्या वह पुष्पदन्त भूतबलि द्वारा उद्धारित कम्मपयडिपाड्ड हो सकता है !

५. दिग्म्बर और श्वेताम्बर पट्टावलियों आदिमें उक्त आचार्योंके कालनिर्देशमें वैषम्य पड़नेका कारण क्या है ?

इन प्रश्नोमेसे अनेकके उत्तर पूर्वोक्त विवेचनमे सूचित या ध्वनित पाये जावेगे, फिर भी उन सबका प्रामाणिकतासे उत्तर देना बिना और भी विशेष खोज और विचारके संभव नहीं है । इस कार्यके लिये जितने समयकी आवश्यकता है उसकी भी अभी गुजाइश नहीं है । अतः यहाँ इतना ही कहकर यह प्रसंग छोड़ा जाता है कि उक्त आचार्यों संबंधी दोनों परम्पराओंके उल्लेखोंका भारी रहस्य अवश्य है, जिसके उद्घाटनसे दोनों सम्प्रदायोंके प्राचीन इतिहास और उनके बीच साहित्यिक आदान प्रदानके विषय पर विशेष प्रकाश पड़नेकी आशा की जा सकती है ।

इस प्रकरणको समाप्त करनेसे पूर्व यहाँ यह भी प्रकट कर देना उचित प्रतीत होता है कि श्वेताम्बर आगमके अन्तर्गत भगवतीसूत्रमें जो पञ्च-नमोकार-मंगल पाया जाता है उसमे पंचम पद अर्थात् ' णमो लोए सव्वसाहूण ' के स्थानपर ' णमो बभीए लिवीए ' (ब्राह्मी लिपिको नमस्कार) ऐसा पद दिया गया है । उड़ीसाकी हाथीगुफामे जो कलिंग नरेश खारवेलका शिलालेख पाया जाता है और जिसका समय ईस्वी पूर्व अनुमान किया जाता है, उसमे आदि मंगल इसप्रकार पाया जाता है—

णमो अरहताण । णमो सब सिधाण ।

ये पाठभेद प्रासंगिक है या किसी परिपाटीको लिये हुए हैं, यह विषय विचारणीय है । श्वेताम्बर सम्प्रदायमें किसी किसीके मतसे णमोकार सूत्र अनार्ष है × ।

५ बारहवें श्रुताङ्ग दृष्टिवादका परिचय

हम सत्प्ररूपणा प्रथम जिल्दकी भूमिकामें कह आये हैं कि बारहवा श्रुताङ्ग दृष्टिवाद श्वेताम्बर मान्यताके अनुसार भी विच्छिन्न होगया, तथा दिग्म्बर मान्यतानुसार उसके कुछ अंशोंका

× ' ये तु वदन्ति नमस्कारपाठ एव नार्ष
पृ. १८३५.

' इत्यादि । देखो अभिधानराजेन्द्र—णमोकार,

उद्धार षट्खंडागम और कपायप्राभृतमें पाया जाता है। किन्तु शेष भागोंके प्रकरणों व विषय आदिका सक्षिप्त परिचय दोनों सम्प्रदायोंके साहित्यमें विखरा हुआ पाया जाता है। अतः लुप्त हुए श्रुतागके इस परिचयको हम दोनों सम्प्रदायोंके प्राचीन प्रमाणभूत ग्रंथोंके आधारपर यहाँ तुलनात्मकरूपमें प्रस्तुत करते हैं, जिससे पाठक इस महत्त्वपूर्ण विषयमें रुचि दिखला सके और दोनों सम्प्रदायोंकी मान्यताओंमें समानता और विषमता तथा दोनोंकी परस्पर परिपूरकताकी ओर ध्यान दे सकें। इस परिचयका मूलाधार श्वेताम्बर सम्प्रदायके नन्दीसूत्र और समवायागसूत्र हैं तथा दिगम्बर सम्प्रदायके धवल और जयधवल ग्रंथ।

धवलामे दृष्टिवादका स्वरूप इसप्रकार बतलाया है—

तस्य दृष्टिवादस्य स्वरूप निरूप्यते। कौत्सल-राणोविद्धि-कौशिक-हरिश्मश्रु-मान्दपित्र-रोमश-हारीत-मुण्ड-अश्वलायनादीना क्रियावाददृष्टीनामशीतिशतम्, मरीचि-कपिलोत्त-गार्ग्य-व्याघ्रभूति-वाद्दालि माठर-मौद्वलायनादीनामक्रियावाददृष्टीना चतुरशीतिः, शारदय-वदकल-कुशुमि-सात्यमुद्रि-नारायण-कण्व-माध्यदिन-मोद-पप्पलाद-वादरायण-स्वेष्टकृदैतिकायन-वसु-जैमिन्यादीनामज्ञानिरुद्धटीना सप्तपष्टि, वशिष्ठ-पाराशर-जतु-कर्ण-वाल्मीकि-रोमहर्षणी-सत्यदत्त-व्यासैलापुत्रौपमन्यवैन्द्रदत्तायस्यूणादीना वैनयिकदृष्टीना द्वात्रिंशत्। एषा दृष्टिगताना त्रयाणां त्रिपष्ट्युत्तराणां प्ररूपण निग्रहश्च दृष्टिवादे क्रियते। (स. प., पृ० १०७)

इसका अभिप्राय यह है कि दृष्टिवाद अंगमें १८० क्रियावाद, ८४ अक्रियावाद, ६७ अज्ञानिकवाद और ३२ वैनयिकवाद, इसप्रकार कुल ३६३ दृष्टियोंका प्ररूपण और उनका निग्रह अर्थात् खडन किया गया है। इन वादों और दृष्टियोंके कर्ताओंके जो नाम दिये गये हैं, उनमेंसे अनेक नाम वैदिक धर्मके भिन्न भिन्न साहित्यागोंसे सम्बद्ध पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ, हारीत, वशिष्ठ, पाराशर सुप्रसिद्ध स्मृतिकारोंके नाम हैं। व्यासकृत स्मृति भी प्रसिद्ध है और वे महाभारत के कर्ता कहे जाते हैं। वाल्मीकि कृत रामायण सुविख्यात है, पर धर्मशास्त्रसंबन्धी उनका बनाया ग्रंथ नहीं पाया जाता। अश्वलायन श्रौतसूत्र भी प्रसिद्ध है। गर्गका नाम एक ज्योतिषसंहितासे सम्बद्ध है। कण्व ऋषिका नाम भी वैदिकसाहित्यसे सम्बद्ध रखता है। माध्यदिन एक वैदिक शाखाका नाम है। वादरायण वेदान्तशास्त्रके और जैमिनि पूर्वमीमांसाके सुप्रसिद्ध संस्थापक हैं। किन्तु शेष अविकाश नाम बहुत कुछ अपरिचितसे है। इन नामोंके साथ उन उन दृष्टियोंका सबध किन्हीं ग्रंथोंपरसे चला है या उनकी चलाई कोई अलिखित विचारपरम्पराओंपरसे कहा गया है यह जानना कठिन है। पर तात्पर्य यह स्पष्ट है कि दृष्टिवादमें अनेक दार्शनिक मत मतान्तरोंका परिचय और विवेक कराया गया था। दृष्टिवादके जो भेद आगे बतलाये गये हैं उनमें सूत्र और पूर्वोंके भीतर ही इन वादोंके परिशीलनकी गुजाइश दिखाई देती है।

श्वेताम्बर मान्यता
दिट्टिवाद' के ५ भेद

१ परिकम्मा^१

२ सुत्त

३ पुब्बगय

४ अणुओग

५ चूलिया

दिगम्बर मान्यता

दिट्टिवाद' के ५ भेद

१ परिकम्मा^१

२ सुत्त

३ पट्माणिओग

४ पुब्बगय

५ चूलिया

दोनों संप्रदायोंमें दृष्टिवादके इन पांच भेदोंके नामोंमें कोई भेद नहीं है, केवल अणियोगकी जगह दिगम्बर नाम पट्माणियोग पया जाता है। इसका रहस्य आगे बताये हुए प्रभेदोंसे जाना जायगा। दूसरा कुछ अन्तर पुब्बगय और अणियोगके क्रममें है। श्वेताम्बर पुब्बगयको पहले और अणियोगको उसके पश्चात् गिनाते हैं, जब कि दिगम्बर पट्माणियोगको पहले और पुब्बगयको उसके अनन्तर रखते हैं। यह भेद या तो आकस्मिक हो, या दोनों संप्रदायोंके प्राचीन पटनक्रमके भेदका द्योतक हो। दिगम्बरीय क्रमकी सार्थकता आगे पूर्वोक्त विवेचनमें दिखायी जावेगी।

परिकर्मके ७ भेद

१ सिद्धसेणिआ

२ मणुस्ससेणिआ

३ पुट्ठसेणिआ

४ ओगाढसेणिआ

५ उवसपज्जणसेणिआ

६ विप्पजहणसेणिआ

७ चुआचुअसेणिआ

परिकर्मके ५ भेद

१ चदपण्णत्ती

२ सूरपण्णत्ती

३ जन्नूदीवपण्णत्ती

४ दीवसायरपण्णत्ती

५ वियहपण्णत्ती

१ अथ कोऽयं दृष्टिवाद ? णट्ठयो दर्शनानि, वदन वादः। दृष्टीनां वादो दृष्टिवाद। अथवा पतन पात, दृष्टीनां पातो यत्र स दृष्टिपात।

(नदीसूत्र टीका)

२ तत्र परिकर्म नाम योग्यतापादनम्। तद्धेतुं शास्त्रमपि परिकर्म। ××× तथा चोक्तं चूणो-परिकम्मे चि योग्यताकरण। जह गणियस्स सोलस परिकम्मा तग्गादिय-सुत्तत्थो सेस गणियस्स जोगो भवइ, एव गदियपरिकम्मसुत्तत्थो सेस-सुत्ताइ-दिट्ठिवायस्स जोगो भवइ चि।

(नदीसूत्र टीका)

१ दृष्टीनां त्रिषष्ट्युत्तरत्रिंशतसंख्यानां मिथ्यादर्शनानां वादोऽनुवाद, तद्विराकरण च यस्मिन्क्रियते तद् दृष्टिवाद नाम।

(गोम्मतसार टीका)

२ परित सर्वत कर्माणि गणितकरणसूत्राणि यस्मिन् तत् परिकर्म।

(गोम्मतसार टीका)

उद्धार पट्खंडागम और कपायप्राप्तमें पाया जाता है। किन्तु ओप भागोंके प्रकरणों व विषय आदिका सक्षिप्त परिचय दोनों सम्प्रदायोंके साहित्यमें विखरा हुआ पाया जाता है। अतः तृप्त हुए श्रुतागके इस परिचयको हम दोनों सम्प्रदायोंके प्राचीन प्रमाणभूत ग्रंथोंके आधारपर यहाँ तुलनात्मकरूपमें प्रस्तुत करते हैं, जिससे पाठक इस महत्त्वपूर्ण विषयमें रुचि दिखला सके और दोनों सम्प्रदायोंकी मान्यताओंमें समानता और विषमता तथा दोनोंकी परस्पर परिष्कारताकी ओर ध्यान दे सकें। इस परिचयका मूलाधार श्वेताम्बर सम्प्रदायके नन्दीसूत्र और समवायामूत्र है तथा दिगम्बर सम्प्रदायके ववल और जयववल ग्रंथ।

धवलामे दृष्टिवादका स्वरूप इसप्रकार बतलाया है—

तस्य दृष्टिवादस्य स्वरूप निरूप्यते । कोऽनल काणेगिद्धि-कोशिन-हरिश्मश्रु-माद्वपि-रोमश-हारीत-मुण्ड-अश्वलायनादीना क्रियावाददृष्टीनामशीतिशतम्, मरीचि-कपिलोल्ल-गार्ग्य-व्याघ्रभूति-वाद्गलि माठर-मौड्गलायनादीनामक्रियावाददृष्टीना चतुरशीतिः, शाकल्य-वटकल-कुशुमि-सात्यमुनि-नारायण-कण्व-माध्यदिन-मोड-पैप्पलाद-वादरायण-स्वेष्टकृद्वैतिकायन-बसु-जैमिन्यादीनामज्ञानिन्ददृष्टीना सप्तपष्टि, वशिष्ठ-पाराशर-जतु-कर्ण-वाल्मीकि-रोमहर्षणी-सत्यदत्त-व्यासैलापुत्रोपमन्यवेन्द्रदत्तायस्युणादीना वैयथिकदृष्टीना द्वात्रिंशत् । एषा दृष्टिगताना त्रयाणां त्रिपष्टुत्तराणां प्ररूपण निग्रहश्च दृष्टिवादे क्रियते । (स प., पृ० १०७)

इसका अभिप्राय यह है कि दृष्टिवाद अंगमें १८० क्रियावाद, ८४ अक्रियावाद, ६७ अज्ञानिकवाद और ३२ वैयथिकवाद, इसप्रकार कुल ३६३ दृष्टियोंका प्ररूपण और उनका निग्रह अर्थात् खडन किया गया है। इन वादों और दृष्टियोंके कर्ताओंके जो नाम दिये गये हैं, उनमेंसे अनेक नाम वैदिक धर्मके भिन्न भिन्न साहित्यागोसे सम्बद्ध पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ, हारीत, वशिष्ठ, पाराशर सुप्रसिद्ध स्मृतिकारोंके नाम हैं। व्यासकृत स्मृति भी प्रसिद्ध है और वे महाभारत के कर्ता कहे जाते हैं। वाल्मीकि कृत रामायण सुविख्यात है, पर धर्मशास्त्रसंबंधी उनका बनाया ग्रंथ नहीं पाया जाता। आश्वलायन श्रौतसूत्र भी प्रसिद्ध है। गर्गका नाम एक ज्योतिषसंहितासे सम्बद्ध है। कण्व ऋषिका नाम भी वैदिकसाहित्यसे सम्बद्ध रखता है। माध्यदिन एक वैदिक शाखाका नाम है। बादरायण वेदान्तशास्त्रके और जैमिनि पूर्वमीमांसाके सुप्रसिद्ध संस्थापक हैं। किन्तु शेष अधिकांश नाम बहुत कुछ अपरिचितसे हैं। इन नामोंके साथ उन उन दृष्टियोंका सबध किन्हीं ग्रंथोंपरसे चला है या उनकी चलाई कोई अलिखित विचारपरम्पराओंपरसे कहा गया है यह जानना कठिन है। पर तात्पर्य यह स्पष्ट है कि दृष्टिवादमें अनेक दार्शनिक मत मतान्तरोंका परिचय और विवेक कराया गया था। दृष्टिवादके जो भेद आगे बतलाये गये हैं उनमें सूत्र और पूर्वोंके भीतर ही इन वादोंके परिशीलनकी गुंजाइश दिखाई देती है।

श्वेताम्बर मान्यता
दिष्टिवाद' के ५ भेद
१ परिक्रम^१
२ सुत्त
३ पुष्पगय
४ अणुओग
५ चूलिया

दिगम्बर मान्यता
दिष्टिवाद' के ५ भेद
१ परिक्रम^१
२ सुत्त
३ पटमाणिओग
४ पुष्पगय
५ चूलिया

दोनों संप्रदायोंमें दृष्टिवादके इन पांच भेदोंके नामोंमें कोई भेद नहीं है, केवल अणियोगकी जगह दिगम्बर नाम पटमाणियोग पाया जाता है। इसका रहस्य आगे बताया हुआ प्रभेदोंसे जाना जायगा। दूसरा कुछ अन्तर पुष्पगय और अणियोगके क्रममें है। श्वेताम्बर पुष्पगयको पहले और अणियोगको उसके पश्चात् गिनाते हैं, जब कि दिगम्बर पटमाणियोगको पहले और पुष्पगयको उसके अनन्तर रखते हैं। यह भेद या तो आकस्मिक हो, या दोनों संप्रदायोंके प्राचीन पठनक्रमके भेदका द्योतक हो। दिगम्बरीय क्रमकी सार्वकता आगे पूर्वोक्त विवेचनमें दिखायी जावेगी।

परिक्रमके ७ भेद

- १ सिद्धसेणिआ
- २ मणुस्ससेणिआ
- ३ पुट्टसेणिआ
- ४ ओगाढसेणिआ
- ५ उवसपज्जणसेणिआ
- ६ विप्पजहणसेणिआ
- ७ चुआचुअसेणिआ

परिक्रमके ५ भेद

- १ चंदपण्णत्ती
- २ सूरपण्णत्ती
- ३ जव्वूदीवपण्णत्ती
- ४ दीवसायरपण्णत्ती
- ५ विय'हपण्णत्ती

१ अथ कोऽयं दृष्टिवादः ? दृष्टयो दर्शनानि, वक्ष्यन् वादः। दृष्टीनां वादो दृष्टिवादः। अथवा पठनपाठः, दृष्टीनां पाठो यत्र स दृष्टिपाठः।
(नदीपूज टीका)

२ तत्र परिक्रमं नाम योग्यतापादनम्। तद्धेतुं शास्त्रमपि परिक्रमं। ××× तथा चोक्तं चूर्णा-परिक्रमं चेति योग्यताकरणं। जह गणियस्स सोलस परिक्रमा तग्गहिय-सुत्तत्थो सेस गणियस्स जोगो भवद्, एव गहियपरिक्रमसुत्तत्थो सेस सुत्ताह-दिष्टिवायस्स जोगो भवद् चेति।
(नदीपूज टीका)

१ दृष्टीनां विषयपुत्तरविशतसंख्यानां मिथ्यादर्शनानां वादोऽनुवादः, तन्निराकरणं च यस्मिन्क्रियते तद् दृष्टिवादं नाम।

(गोस्वामिसार टीका)

२ परितः सर्वतः कर्माणि गणितकरणसूत्राणि यस्मिन् तत् परिक्रमं।

(गोस्वामिसार टीका)

उद्धार पटुखंडागम और कपायप्राप्तमें पाया जाता है। किन्तु अंग भागोंके प्रकरणों व विषय आदिका सक्षिप्त परिचय दोनों सम्प्रदायोंके साहित्यमें विखरा हुआ पाया जाता है। अतः लुप्त हुए श्रुतागमके इस परिचयको हम दोनों सम्प्रदायोंके प्राचीन प्रमाणभूत ग्रंथोंके आधारपर यहाँ तुलनात्मकरूपमें प्रस्तुत करते हैं, जिससे पाठक इस महत्त्वपूर्ण विषयमें रुचि दिखला सके और दोनों सम्प्रदायोंकी मान्यताओंमें समानता और विषमता तथा दोनोंकी परस्पर परिपूरकताकी ओर ध्यान दे सकें। इस परिचयका मूलवार श्वेताम्बर सम्प्रदायके नन्दीसूत्र और समवायागसूत्र हैं तथा दिगम्बर सम्प्रदायके धवल और जयववल ग्रंथ।

धवलमें दृष्टिवादका स्वरूप इसप्रकार बतलाया है—

तस्य दृष्टिवादस्य स्वरूप निरूप्यते। कौशल ऋणेनिद्धि-कोशिन-हरिश्मन्-माद्धपिन-रोमश-हारीत-मुण्ड-अश्वलायनार्जुना क्रियावाददृष्टीनामसात्तिशतम्, मरीचि-रूपिलोल-त-गार्ग्य-व्याघ्रभूति-वाटलि माडर-मौड्रलायनादीनामक्रियावाददृष्टीना चतुरशीतिः, शाकल्य-वत्कल-कुशुमि-सात्यमुनि-नारायण-ऋष-माध्यदिन-मोद-पैप्पलाद-वादरायण-स्वेष्टकृद्वैतिकायन-वसु-जैमिन्यादीनामज्ञानिकदृष्टीना सप्तपष्टि, वशिष्ठ-पाराशर-जतु-कर्ण-वाल्मीकि-रोमहर्षणी-सत्यदत्त-व्यासैलापुत्रांपमन्यवन्ददत्ताय-शृणादीना वैनयिकदृष्टीना द्वात्रिंशत्। एषा दृष्टिग्रन्थाना त्रयाणा त्रिपष्टुत्तराणा प्ररूपण निग्रहश्च दृष्टिवादे क्रियते। (स प, पृ० १०७)

इसका अभिप्राय यह है कि दृष्टिवाद अंगमें १८० क्रियावाद, ८४ अक्रियावाद, ६७ अज्ञानिकवाद और ३२ वैनयिकवाद, इसप्रकार कुल ३६३ दृष्टियोंका प्ररूपण और उनका निग्रह अर्थात् खंडन किया गया है। इन वादों और दृष्टियोंके कर्ताओंके जो नाम दिये गये हैं, उनमेंसे अनेक नाम वैदिक वर्गके भिन्न भिन्न साहित्यागमोंसे सम्बद्ध पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ, हारीत, वशिष्ठ, पाराशर सुप्रसिद्ध स्मृतिकारोंके नाम हैं। व्यासकृत स्मृति भी प्रसिद्ध है और वे महाभारत के कर्ता कहे जाते हैं। वाल्मीकि कृत रामायण सुविख्यात है, पर धर्मशास्त्रसंबन्धी उनका बनाया ग्रंथ नहीं पाया जाता। आश्वलायन श्रौतसूत्र भी प्रसिद्ध है। गर्गका नाम एक ज्योतिषसंहितासे सम्बद्ध है। कण्व ऋषिका नाम भी वैदिकसाहित्यसे सम्बद्ध रखता है। माध्यदिन एक वैदिक शाखाका नाम है। वादरायण वेदान्तशास्त्रके और जैमिनि पूर्वमीमांसाके सुप्रसिद्ध संस्थापक हैं। किन्तु शेष अधिकांश नाम बहुत कुछ अपरिचितसे हैं। इन नामोंके साथ उन उन दृष्टियोंका संबध किन्हीं ग्रंथोंपरसे चला है या उनकी चलाई कोई अलिखित विचारपरम्पराओंपरसे कहा गया है यह जानना कठिन है। पर तात्पर्य यह स्पष्ट है कि दृष्टिवादमें अनेक दार्शनिक मत-मतान्तरोंका परिचय और विवेक कराया गया था। दृष्टिवादके जो भेद आगे बतलाये गये हैं उनमें सूत्र और पूर्वोंके भीतर ही इन वादोंके परिशीलनकी गुंजाइश दिखाई देती है।

आजीविक सम्प्रदायके बहुत उल्लेख प्राचीन बौद्ध और जैन ग्रंथोंमें पाये जाते हैं। प्रस्तुत सूचना पर से जाना जाता है कि उनका शास्त्र और सिद्धान्त जैनियोंके शास्त्र और सिद्धान्तके बहुत ही निकटवर्ती था, केवल कुछ कुछ भेद-प्रभेदों और दृष्टिकोणोंमें अन्तर था। भूमिका जैनियों और आजीविकोंकी प्रायः एक ही थी। आगे चलकर, जान पड़ता है, जैनियोंने आजीविकोंकी मान्यताओं को अपने शास्त्रमें भी संग्रह कर लिया और इसप्रकार धीरे धीरे समस्त आजीविक पंथका अपने ही समाजमें अन्तर्भाव कर लिया। ऊपरकी सूचनामें यद्यपि टीकाकारने आजीविकोंको पाखंडी कहा है, पर उनकी मान्यताको वे अपने शास्त्रमें स्वीकार कर रहे हैं।

परिकर्मके पूर्वोक्त सात भेद दिग्म्बर मान्यतामें नहीं पाये जाते। पर इस मान्यताके जो पाच भेद चन्द्रपण्णत्ति आदि है, उनमें से प्रथम तीन तो श्वेताम्बर आगमके उपांगोंमें गिनाये हुए मिलते हैं, तथा चौथा दीवसायरपण्णत्ती व जंबूदीवपण्णत्ती और चन्द्रपण्णत्तीके नाम नदीसूत्रमें अगवाह्य श्रुतके आवश्यकव्यतिरिक्त भेदके अन्तर्गत पाये जाते हैं। किन्तु पाचवा भेद वियाहपण्णत्तिका नाम पाचवें श्रुताङ्गके अतिरिक्त और नहीं पाया जाता।

सिद्धसेणिया परिकर्मके १४ उपभेद

१. माउगापयाइ
२. एगट्टिअपयाइ
३. अट्ट या पादोट्ट'पयाइ
४. पाढोआमास या आगास' पयाइ
५. केउभूअ
६. रासिबद्ध
७. एगगुण
८. दुगुण
९. तिगुण
१०. केउभूअं
११. पडिग्गहो
१२. ससारपडिग्गहो
१३. नंदावत्तं
१४. सिद्धावत्त

१. चन्द्रपण्णत्ती— छत्तीसलक्षपंचपदसहस्सेहि (३६०५०००) चदायु—परिवारिद्धि—गइ—विबुस्सेह—वण्णणं कुणइ।

२. सूरपण्णत्ती—पंचलक्षतिणिसहस्सेहि पदेहि (५०३०००) सूरस्सायु—भोगोव—भोग—परिवारिद्धि—गइ—विबुस्सेह—दिणकिर—णुज्जोव—वण्णणं कुणइ।

३. जंबूदीवपण्णत्ती—तिणिलक्षपंचवीस—पदसहस्सेहि (३२५०००) जंबूदीवे णाणाविहमणुयाणं भोग—कम्मभूमियाण अण्णेसि च पव्वद—दह—णइ—वेइयाण वस्सावासाकट्टिमजिणहरादीणं वण्णणं कुणइ।

मणुस्सेणिया परिकर्मके भी १४ भेद हैं जिनमें प्रथम १३ भेद उपर्युक्त ही हैं। १४

४. दीवसायरपण्णत्ती—वावण्णलक्षछत्तीस—पदसहस्सेहि (५२३६०००) उद्धार—

१. ये पाचभेद नदीसूत्र और समवायाङ्गके हैं।

ये परिकर्मके भेद दोनों सम्प्रदायोंमें संख्या और नाम दोनों बातोंमें एक दूसरेसे सर्वथा भिन्न है। सिद्धश्रेणिकादि भेदोंका क्या रहस्य था, यह ज्ञात नहीं रहा। समवायागके टीकाकार कहते हैं—

‘ एतच्च सर्वं समूलोत्तरभेद सूत्रार्थतो व्यवच्छिन्न ’

अर्थात् यह सब परिकर्मशास्त्र अपने मूल और (आगे बतलाये जानेवाले) उत्तर भेदोंसाहित सूत्र और अर्थ दोनों प्रकारसे नष्ट होगया। किन्तु सूत्रकार व टीकाकारने इन सात भेदोंके सम्बन्धमें कुछ बातें ऐसी बतलायीं हैं जो बड़ी महत्वपूर्ण हैं। परिकर्मके सात भेदोंके सम्बन्धमें वे लिखते हैं—

इक्ष्वाहं छ परिकम्माइ ससमइयाइ, सत्त आजीवियाइ, उ चउक्कणइयाइ, सत्त तेरासियाइ

। (समवायागसूत्र)

एतेषां च परिकर्मणा पद आदिमानि परिकर्माणि स्वसामयिकान्येव। गोशालङ्क-प्रवर्तिताजीविक-पाखण्डिक-सिद्धान्तमतेन पुन. च्युताच्युतश्रेणिकापरिकर्मसहितानि सप्त प्रज्ञाप्यन्ते। इदानीं परिकर्मसु नय-चिन्ता। तत्र नैगमो द्विविधः साम्राहिकोऽसाम्राहिकश्च। तत्र साम्राहिक सग्रह प्रविष्टोऽसाम्राहिकश्च व्यवहारम्। तस्मात्सग्रहो व्यवहार ऋजुसूत्र शब्दादयश्चैव एवेत्येव चत्वारो नया। एतैश्चतुर्भिर्नये पद स्वसामयिकानि परिकर्माणि चिन्त्यन्ते, अतो भणित ‘ छ चउक्क-नयाइ ति भवन्ति। त एव चाजीविकात्रैराशिका भणिता। कस्माद् ? उच्यते, यस्मात्ते सर्वं व्यात्मकमिच्छन्ति, यथा जीवोऽजीवो जीवाजीव, लोकोऽलोको लोकालोक, सत् असत् सदसत् इत्येवमादि। नयचिन्तायामपि ते त्रिविध नयमिच्छन्ति। तद्यथा द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक उभयार्थिक। अतो भणित ‘सत्त तेरासिय ति। सप्त परिकर्माणि त्रैराशिकपाखण्डिकास्त्रिविधया नयचिन्तया चिन्तयन्तीत्यर्थः। (समवायाग टीका)

इसका अभिप्राय यह है कि परिकर्मके जो सात भेद ऊपर गिनाये गये हैं उनमेंसे प्रथम छ भेद तो स्वसमय अर्थात् अपने सिद्धान्तके अनुसार हैं, और सातवा भेद आजीविक सम्प्रदायकी मान्यताके अनुसार है। जैनियोंके सात नयोंमेंसे प्रथम अर्थात् नैगम नयका तो संग्रह और व्यवहारमें अन्तर्भाव हो जाता है, तथा अन्तिम दो अर्थात् समभिरूढ़ और एवंभूत शब्दनयमें प्रविष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार मुख्यतासे उनके चार ही नय रहते हैं, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र और शब्द। इस अपेक्षासे जैनी चउक्कणइक अर्थात् चतुष्कनयिक कहलाते हैं। आजीविक सम्प्रदायवाले सब वस्तुओंको त्रि-आत्मक मानते हैं, जैसे जीव, अजीव और जीवाजीव, लोक, अलोक और लोकालोक, सत्, असत् और सदसत्, इत्यादि। नयका चिन्तन भी वे तीन प्रकारसे करते हैं—द्रव्यार्थिक, पर्यायार्थिक और उभयार्थिक। अत आजीविक तेरासिय अर्थात् त्रैराशिक भी कहलाते हैं। उन्हींकी मान्यतानुसार परिकर्मका सातवा भेद ‘ चुआचुअसेणिआ ’ जोड़ा गया है।

इस सूचनासे जैन और आजीविक सम्प्रदायोंके परस्पर सम्पर्कपर बहुत प्रकाश पड़ता है। मंखल्लिगोशाळ महावीरस्वामी व बुद्धदेवके समसामयिक धर्मोपदेशक थे। उनके द्वारा स्थापित

आजीविक सम्प्रदायके बहुत उल्लेख प्राचीन बौद्ध और जैन ग्रंथोंमें पाये जाते हैं। प्रस्तुत सूचना पर से जाना जाता है कि उनका शास्त्र और सिद्धान्त जैनियोंके शास्त्र और सिद्धान्तके बहुत ही निकटवर्ती था, केवल कुछ कुछ भेद-प्रभेदों और दृष्टिकोणोंमें अन्तर था। भूमिका जैनियों और आजीविकोंकी प्रायः एक ही थी। आगे चलकर, जान पड़ता है, जैनियोंने आजीविकोंकी मान्यताओं को अपने शास्त्रमें भी संग्रह कर लिया और इसप्रकार धीरे धीरे समस्त आजीविक पंथका अपने ही समाजमें अन्तर्भाव कर लिया। ऊपरकी सूचनामें यद्यपि टीकाकारने आजीविकोंको पाखंडी कहा है, पर उनकी मान्यताको वे अपने शास्त्रमें स्वीकार कर रहे हैं।

परिकर्मके पूर्वोक्त सात भेद दिग्म्बर मान्यतामें नहीं पाये जाते। पर इस मान्यताके जो पाच भेद चंदपण्णत्ति आदि हैं, उनमें से प्रथम तीन तो श्वेताम्बर आगमके उपागोंमें गिनाये हुए मिलते हैं, तथा चौथा दीवसायरपण्णत्ती व जंबूदीवपण्णत्ती और चंदपण्णत्तीके नाम नदीसूत्रमें अगवाह्य श्रुतके आवश्यकव्यतिरिक्त भेदके अन्तर्गत पाये जाते हैं। किन्तु पाचवा भेद वियाहपण्णत्तिका नाम पाचवें श्रुताङ्गके अतिरिक्त और नहीं पाया जाता।

सिद्धसेणिया परिकर्मके १४ उपभेद

१. माउगापयाइ
२. एगट्टिअपयाइ
३. अट्ट या पादोट्ट'पयाइ
४. पाढोआमास या आगास' पयाइ
५. केउभूअ
६. रासिबद्ध
७. एगगुण
८. दुगुण
९. तिगुण
१०. केउभूअं
११. पडिग्गहो
१२. ससारपडिग्गहो
१३. नंदावत्तं
१४. सिद्धावत्त

१. चंदपण्णत्ती— छत्तीसलक्खपंचपदसहस्सेहि (३६०५०००) चंदायु—परिवारिद्धि—गइ—बिबुस्सेह—वण्णणं कुणइ।

२. सूरपण्णत्ती—पंचलक्खतिणिंसहस्सेहि पदेहि (५०३०००) सूरस्सायु—भोगोव—भोग—परिवारिद्धि—गइ—बिबुस्सेह—दिणकिर—गुज्जोव—वण्णणं कुणइ।

३. जंबूदीवपण्णत्ती—तिणिंलक्खपंचवीस—पदसहस्सेहि (३२५०००) जंबूदीवेणाणाविहमणुयाणं भोग—कम्मभूमियाणं अण्णेसिं च पव्वद—दह—णइ—वेइयाण वस्सावासाकट्टिमजिणहरादीणं वण्णणं कुणइ।

मणुस्सेणिया परिकर्मके भी १४ भेद हैं जिनमें प्रथम १३ भेद उपर्युक्त ही हैं। १४

४. दीवसायरपण्णत्ती—वावण्णलक्खछत्तीस—पदसहस्सेहि (५२३६०००) उद्धार—

१. ये पाचभेद नदीसूत्र और समवायाङ्गके हैं।

वा भेद ' मणुस्सावत्तं ' नामका है ।

पुट्टसेणिआदि शेष पाच परिकर्मोंमें प्रत्येक के ११ उपभेद हैं जो प्रथम तीनको छोड़ कर शेष पूर्वोक्तही है । अन्तिम भेदके स्थानमें स्वनामसूचक भेद है, जैसे पुट्टावत्त, ओगाटावत्त, उवसपज्जणावत्त, विप्पजहणावत्त और चुआचुआवत्त । इसप्रकार ये सब मिलकर ८३ प्रभेद होते हैं ।

पल्लवमाणेण दीवसायरपमाणं अण्णं पि दीवसायरतम्भूदत्तं बह्वेभ्यं वण्णेदि ।

५. वियाहपण्णत्ती - चउरासीदिलम्बलत्तीस- पदसहस्सेहि (८४३६०००) रूवि- अजीवदव्व अरूवि अजीवदव्व भवसिद्धिय- अभवसिद्धियरासि च वण्णेदि ।

परिकर्मके इन माउगापयाइ आदि उपभेदोंका कोई विवरण हमें उपलब्ध नहीं है । किन्तु मातृकापदसे जान पड़ता है उसमें लिपि विज्ञानका विवरण था । इसीप्रकार अन्य भेदोंमें शिक्षाके मूलविषय गणित, न्याय आदिका विवरण रहा जान पड़ता है ।

सुत्तके ८८ भेद

सुत्तके अन्तर्गत विषय

- १ उज्जुसुय या उजुगं
२. परिणयापरिणय
- ३ बहुभगिअं
४. विजयचरियं, विप्पचइयं या विनयचरिय
५. अणतर
६. परपर
७. मासाण (समाण-स. अ)
८. सज्जूहं (मासाण- ,,)
९. समिण्ण
१०. आहव्वायं (अहाच्चायं-स. अं.)
११. सोवत्थिअवत्त
१२. नदावत्त
१३. वहुल
१४. पुट्टापुट्ट
१५. विआवत्त

सुत्त अट्ठासीदिलम्बपदेहि (८८०००००) अबवओ, अवलेवओ, अकत्ता, अमोत्ता, णिग्गुणो, सव्वगओ, अणुमेत्तो, णाथि जीवो, जीवो चेव अत्थि, पुट्टवियादीण समुदएण जीवो उप्पज्जइ, णिच्चेयणो, णाणेण विणा, सचेयणो, णिच्चो, अणिच्चो अप्पेत्ति वण्णेदि । तेरासिय, णियदिवाद, विण्णाणवादं, सइवाद, पहाणवाद, दव्व-वाद, पुरिसवाद च वण्णेदि । उत्त च-

अट्ठासी अहियोरसु चउण्हमहियाराणमत्थि णिहेसो । पढमो अबधयाण, विदियो तेरासियाण बोद्धव्वो ॥ तदियो य णियइपक्खे हवइ चउत्थो ससमयम्मि । (धवला स. प., पृ. ११०)

१. सिद्धसेणिकादिपरिकर्म मूलभेदतः सप्तविधं, उत्तरभेदतस्तु त्र्यशीतिविधं मातृकापदादि ।

(समवायांग टीका).

वा भेद 'मणुस्सावत्त' नामका है।

पुट्टसेणिआदि शेष पाच परिकर्मोंमें प्रत्येक के ११ उपभेद हैं जो प्रथम तीनको छोड़ कर शेष पूर्वोक्तही है। अन्तिम भेदके स्थानमें स्थनामसूचक भेद है, जैसे पुट्टावत्त, ओगाढावत्त, उवसपज्जणावत्त, विप्पजहणावत्त और चुआचुआवत्त। इसप्रकार ये सब मिलकर ८३ प्रभेद होते हैं।

पल्लपमाणेण दीवसायरपमाणं अण्णं पि दीवसायरतम्भूदत्थ बहुभेय वण्णेदि।

५. वियाहपण्णत्ती- चउरासीदिलम्बलत्तीस- पदसहस्सेहि (८४३६०००) रुवि- अजीवदव्व अरुवि अजीवदव्व भवसिद्धिय- अभवसिद्धियरासिं च वण्णेदि।

परिकर्मके इन माउगापयाइ आदि उपभेदोंका कोई विवरण हमें उपलब्ध नहीं है। किन्तु मातृकापदसे जान पड़ता है उसमें लिपि विज्ञानका विवरण था। इसीप्रकार अन्य भेदोंमें शिक्षाके मूलविषय गणित, न्याय आदिका विवरण रहा जान पड़ता है।

सुत्तके ८८ भेद

- १ उज्जुसुय या उजुग
२. परिणयापरिणय
- ३ बहुभगिअ
४. विजयचरियं, विप्पचइयं या विनयचरिय
५. अणतर
६. परपरं
- ७ मासाण (समाण-स. अ)
८. सज्जूहं (मासाण- ,,)
- ९ समिण्ण
१०. आहव्वाय (अहाच्चायं-स. अं.)
११. सोवयिअवत्त
१२. नदावत्त
१३. बहुल
१४. पुट्टापुट्ट
१५. विआवत्त

सुत्तके अन्तर्गत त्रिषय

सुत्त अट्ठासीदिलम्बपदेहि (८८०००००) अववओ, अवलेवओ, अकत्ता, अमोत्ता, णिग्गुणो, सब्बगओ, अणुमेत्तो, णत्थि जीवो, जीवो चेव अत्थि, पुट्टवियादीण समुदएण जीवो उप्पज्जइ, णिच्चेयणो, णाणेण विणा, सच्चेयणो, णिच्चो, अणिच्चो अप्पेत्ति वण्णेदि। तेरासिय, णियदिवाद, विण्णाणवादं, सहवाद, पहाणवादं, दव्व-वाद, पुरिसिवाद च वण्णेदि। उक्त च-

अट्ठासी अहियारेसु चउण्हमहियाराणमत्थि णिद्देसो। पढमो अबधयाण, विदियो तेरासियाण बोद्धव्वो ॥ तदियो य णियइपक्खे हवइ चउत्थो ससमयम्मि। (धवला स. प., पृ ११०)

१. सिद्धसेणिकादिपरिकर्म मूलभेदतः सप्तविधः, उचरभेदतस्तु त्र्यश्वीतिविधः मातृकापदादि।

(समायाग टीका).

१६. एवभूअ

१७. दुयावत्त

१८. वत्तमाणप्पय

१९. समभिरूढ

२०. सव्वओभद

२१. पस्सासं (पणाम-स. अं.)

२२. दुप्पडिग्गह

ये ही २२ सूत्र चार प्रकारसे प्ररूपित है—

१ छिण्णछेअ-णइयाणि

२ अछिण्णछेअ-णइयाणि

३ तिक-णइयाणि

४ चउक्क-णइयाणि

इसप्रकार सूत्रोंकी संख्या $२२ \times ४ = ८८$

हो जाती है ।

श्वेताम्बर सम्प्रदायमें सूत्रके मुख्य भेद बावीस है । उनके अठासी भेदोंकी सूचना समवायांगमें इस प्रकार दी गई है—

इच्चेयाइ बावीस सुत्ताइ छिण्णछेअणइआइ ससमयसुत्तपरिवाडीए, इच्चेआइ बावीस सुत्ताइ अछिन्नछेअणइयाइ आजीवियसुत्तपरिवाडीए । इच्चेआइ बावीस सुत्ताइ तिक-णइयाइ तेरासियसुत्तपरिवाडीए, इच्चेआइ बावीस सुत्ताइ चउक्कणइयाइ ससमयसुत्तपरिवाडीए । एवमेव सपुग्गवावरेण अट्टासीदि सुत्ताइ भवतीति मक्खयाइ ।

यहां जिन चार नयोंकी अपेक्षासे बावीस सूत्रोंके अठासी भेद हो जाते हैं, उनका स्पष्टीकरण टीकामें इसप्रकार पाया जाता है—

एतानि किल कज्जुकादीनि द्वाविंशति सूत्राणि, तान्येव विभागतोऽष्टाशीतिर्भवन्ति । कथम् ? उच्यते—‘इच्चेयाइ बावीस सुत्ताइ छिन्नछेअणइयाइ ससमयसुत्तपरिवाडीए’ ति । इह यो नय सूत्रं छिन्न छेदेनेच्छति स छिन्नच्छेदनयो, यथा ‘धम्मो मगलमुक्किट्ठ’ इत्यादि श्लोक सूत्रार्थतः प्रत्येकछेदेन स्थितो न द्वितीयादिश्लोकमपेक्षते, प्रत्येककविरतपर्यन्त इत्यर्थः । एतान्येव द्वाविंशति स्वसमयसूत्रपरिपाठ्याः सूत्राणि स्थितानि । तथा इत्येतानि द्वाविंशति सूत्राणि अछिन्नछेदनयिकान्याजीविकसूत्रपरिपाठ्येति, अयमर्थः — इह यो नयः सूत्रमच्छिन्न छेदेनेच्छति सोऽछिन्नछेदनयो यथा, ‘धम्मो मगलमुक्किट्ठ,’ इत्यादि श्लोक एवार्थतो द्वितीयादिश्लोकमपेक्षमाणो द्वितीयादयश्च प्रथममिति अन्योऽन्यसापेक्षा इत्यर्थः । एतानि द्वाविंशतिराजीविकगोशालकप्रवर्तितपाखडसूत्रपरिपाठ्या अक्षररचनाविभागस्थितान्यप्यर्थतोऽन्योन्यमपेक्षमाणानि भवन्ति । ‘इच्चेयाइ’ इत्यादिसूत्रम् । तत्र तिरुणइयाइ ति नयत्रिकाभिप्रायतश्चिन्त्यन्त इत्यर्थः—अत्राशिकाश्रजीविका एवोच्यन्ते इति । तथा ‘इच्चेयाइ’ इत्यादिसूत्र । तत्र ‘चउक्कणइयाइ’ ति

नयचतुष्काभिप्रायतश्चिन्त्यन्त इति भावना, एवमेवेत्यादिसूत्रम् । एव चतस्रो द्वाविंशत्योऽष्टाशीतिः सूत्राणि भवन्ति ।

इस विवरणसे ज्ञात होता है कि उपर्युक्त बावीस सूत्रोंका चार प्रकारसे अध्ययन या व्याख्यान किया जाता था । प्रथम परिपाटी छिन्नछेदनय कहलाती थी जिसमें सूत्रगत एक एक वाक्य, पद या श्लोकका स्वतंत्रतासे पूर्वापर अपेक्षारहित अर्थ लगाया जाता था । यह परिपाटी स्वसमय अर्थात् जैनियोंमें प्रचलित थी । दूसरी परिपाटी अछिन्नछेदनय थी जिसके अनुसार प्रत्येक वाक्य, पद या श्लोकका अर्थ आगे पीछेके वाक्योंसे संबध लगाकर नैठाया जाता था । यह परिपाटी आजीविक सम्प्रदायमें चलती थी । तीसरा प्रकार त्रिकनय कहलाता था जिसमें द्रव्यार्थिक, पर्यायाधिक और उभयार्थिक व जीव, अजीव और जीवाजीव आदि उपर्युक्त त्रि-आत्मक व त्रिनय रूपसे वस्तुस्वरूपका चिन्तन किया जाता था । पूर्वोक्तानुसार यह परिपाटी आजीवकोंकी थी । तथा जो वस्तुचिन्तन पूर्वकथित चार नयोंकी अपेक्षासे चलता था वह चतुर्नय परिपाटी कहलाती थी और वह जैनियों की चीज थी । इस प्रकार निरपेक्ष शब्दार्थ और चतुर्नय चिन्तन, ये दो परिपाटियां जैनियोंकी और सापेक्ष शब्दार्थ तथा त्रिकनय चिन्तन, ये दो परिपाटिया आजीविकोंकी मिलकर बावीस सूत्रोंके अठासी भेद कर देती थीं । आजीविक ज्ञानशैलीको जैनियोंने किसप्रकार अपने ज्ञानभंडारमें अन्तर्भूत कर लिया यह यहां भी प्रकट हो रहा है ।

दिगम्बर सम्प्रदायमें सूत्रोंके भीतर प्रथम जीवका नाना दृष्टियोंसे अध्ययन और फिर दूसरे अनेक वादोंका अध्ययन किया जाता था, ऐसा कहा गया है । इन वादों में तेरासिय मतका उल्लेख सर्व प्रथम है जिससे तात्पर्य त्रैराशिक-आजीविक सिद्धान्तसे ही है, जो जैन सिद्धान्तके सबसे अधिक निकट होनेके कारण अपने सिद्धान्तके पश्चात् ही पढा जाता था । धवलामें सूत्रके ८८ अधिकारोंका उल्लेख है जिनमेंसे केवल चारके नाम दिये हैं । जयधवलामें स्पष्ट कह दिया है कि उन ८८ अधिकारोंके अब नामोंका भी उपदेश नहीं पाया जाता । किन्तु जो कुछ वर्णन दिगम्बर सम्प्रदायमें शेष रहा है उसमें विशेषता यह है कि वह उन लुप्त ग्रंथोंके विषयपर बहुत कुछ प्रकाश डालता है, श्वेताम्बर श्रुतमें केवल अधिकारोंके नाममात्र शेष हैं जिनसे प्रायः अब उनके विषयका अदाज लगाना भी कठिन है ।

पुत्रवर्गयके १४ भेद तथा उनके अन्तर्गत
वत्थू और चूलिका

१. उप्पाय (१० वत्थू + ४ चूलिका)
२. अग्गाणीय (१४ वत्थू + १२ चूलिका)
३. वीरिणं (८ ,, + ८ ,,)
४. अत्थिणात्थिपवाय (१८ + १०)

पुत्रवर्गयके १४ भेद तथा उनके
अन्तर्गत वत्थू

- १ उप्पाद (१० वत्थू)
२. अग्गोणिय (१४ वत्थू)
३. वीरियाणुपवाद (८ ,,)
४. अत्थिणात्थिपवाद (१८ ,,)

५. नाणप्पवायं (१२ वत्थू)	५. नाणपवाद (१२ वत्थू)
६ सच्चप्पवाय (२ ,,)	६. सच्चपवाद (१२ ,,)
७. आयप्पवाय (१६ ,,)	७. आदपवाद (१६ ,,)
८. कम्मप्पवायं (३० ,,)	८. कम्मपवादं (२० ,,)
९. पच्चक्खाणप्पवाय (२० ,,)	९. पच्चक्खाण (३० ,,)
१०. विज्जाणुप्पवायं (१५ ,,)	१० विज्जाणुवाद (१५ ,,)
११. अवज्ञ (१२ ,,)	११. कल्लाणवाद (१० ,,)
१२. पाणाळ (१३ ,,)	१२. पाणावाय (१० ,,)
१३. किरिआविसालं (३० ,,)	१३. किरियाविसाल (१० ,,)
१४. लोकविंदुसार (२५ ,,)	१४. लोकविंदुसार (१० ,,)

दृष्टिवादके इस विभागका नाम पूर्व क्यों पड़ा, इसका समाधान समवायाग व नन्दीसूत्रकी टीकाओमें इसप्रकार किया गया है—

अथ किं तत् पूर्वगत ? उच्यते । यस्मात्तीर्थकर तीर्थप्रवर्तनाकाले गणधराणा सर्वसूत्राधारत्वेन पूर्व पूर्वगत सूत्रार्थ भाषते तस्मात् पूर्वाणीति भणितानि । गणधरा. पुन श्रुतरचना विदधाना आचारादि-क्रमेण रचयन्ति स्थापयन्ति च । मतान्तरेण तु पूर्वगतसूत्रार्थ पूर्वमर्हता भाषितो गणधरैरपि पूर्वगतश्रुतमेव पूर्व रचितं, पश्चादाचारादि । नन्वेव यदाचारनिर्युक्त्यामभिहित ' सन्वोसि आयारो पढमो ' इत्यादि, तत्कथम् ? उच्यते । तत्र स्थापनामाश्रित्य तथोक्तमिह त्वक्षररचनां प्रतीत्य भणित पूर्व पूर्वाणि कृतानीति ।

(समवायाग टीका)

इसका तात्पर्य यह है कि तीर्थप्रवर्तनके समय तीर्थकर अपने गणधरोंको सबसे प्रथम पूर्वगत सूत्रार्थका ही व्याख्यान करते हैं, इससे इन्हें पूर्वगत कहा जाता है । किन्तु गणधर जब श्रुतकी ग्रथरचना करते हैं तब वे आचारादिक्रमसे ही उनकी रचना व व्यवस्था करते हैं, और इसी स्थापनाकी दृष्टिसे आचारागकी निर्युक्तिमें यह बात कही गई है कि सब श्रुतागोंमें आचाराग प्रथम है । यथार्थतः अक्षररचनाकी दृष्टिसे पूर्व ही पहले बनाये गये ।

एक आधुनिक मत× यह भीहै कि पूर्वोमे महावीरस्वामीसे पूर्व और उनके समयमें प्रचलित मत—मतान्तरोंका वर्णन किया गया था, इस कारण वे पूर्व कहलाये ।

चौदह पूर्वोके नामोंमे दोनों सम्प्रदायोंमें कोई विशेष भेद नहीं है, केवल ग्यारहवें पूर्वको अेताम्बर ' अवज्ञ ' कहते है और दिगम्बर ' कल्लाणवाद ' । अवज्ञका जो अर्थ टीकाकारने अवच्य अर्थात् ' सफल ' बतलाया है वह ' कल्याण ' के शब्दार्थके निकट पहुंच जाता है, इससे सम्भवतः वह उनके विषयभेदका द्योतक नहीं है । छठवें, आठवें, नवमें और ग्यारहसे चौदहवें तक इस

प्रकार सात पूर्वोके अन्तर्गत वस्तुओंकी सख्यामें दोनों सम्प्रदायोंमें मतभेद है। शेष सात पूर्वोकी वस्तु-संख्यामें कोई भेद नहीं है। श्वेताम्बर मान्यतामें प्रथम चार पूर्वोके अन्तर्गत वस्तुओंके अतिरिक्त चूल्काओंकी सख्या भी दी गई है, और दृष्टिवादके पंचमभेद चूल्काके वर्णनमें कहा है कि वहा उन्हीं चार पूर्वोकी चूल्काओसे अभिप्राय है। यदि ये चूल्काए पूर्वोके अन्तर्गत थीं, तो यह समझमें नहीं आता कि उनका फिर एक स्वतंत्र विभाग क्यों रखा गया। दिगम्बरीय मान्यतामें पूर्वोके भीतर कोई चूल्काए नहीं गिनायी गईं और चूल्का विभागके भीतर जो पांच चूल्काए बतलायी है उनका प्रथम चार पूर्वोसे कोई संबंध भी ज्ञात नहीं होता।

समवायाग और नन्दीसूत्रमें पूर्वोके अन्तर्गत वस्तुओं और चूल्काओंकी सख्या-सूचक निम्न तीन गाथाएँ पाई जाती हैं—

दस चोद्दस अट्टद्वारसेव बारस दुवे य वत्थूणि ।
 सोलस तीसा वीसा पण्णरस अण्णवायमि ॥ १ ॥
 बारस एक्कारसमे बारसमे तेरसेव वत्थूणि ।
 तीसा पुण तेरसमे चउदसमे पन्नवीसाओ ॥ २ ॥
 चत्तारि दुवाल्स अट्ट चेव दस चेव चूलवत्थूणि ।
 आइल्लण चउण्ह सेसाण चूलिया णत्थि ॥ ३ ॥

धवलामें (वेदनाखडके आदिमें) पूर्वोके अन्तर्गत वस्तुओं और वस्तुओंके अन्तर्गत पाहुडोंकी संख्याकी द्योतक निम्न तीन गाथाएँ पाई जाती हैं—

दस चोद्दस अट्टारस (अट्टद्वारस) वारस य दोसु पुब्बेसु ।
 सोलस वीस तीस दसममि य पण्णरस वत्थू ॥ १ ॥
 एवेसि पुब्बाण एवदिओ वत्थुसगहो भणिदो ।
 सेसाण पुब्बाण दस दस वत्थू पणिवयामि ॥ २ ॥
 एक्केकम्भिह य वत्थू वीस वीस च पाहुडा भणिदा ।
 विसम-समा हि य वत्थू सव्वे पुण पाहुडेहि समा ॥ ३ ॥

इनके अक भी धवलामें दिये हुए हैं जिन्हें हम निम्न तालिकाद्वारा अच्छीतरह प्रकट कर सकते हैं।

पूर्व	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	कुल
वत्थू	१०	१४	८	१८	१२	१२	१६	२०	३०	१५	१०	१०	१०	१०	१९५
पाहुड	२००	२८०	१६०	३६०	२४०	२४०	३२०	४००	६००	३००	२००	२००	२००	२००	३९००

सव्व-वत्थु-समासो पचाणउदिसदमेत्तो १९५ ।

सव्व पाहुड-समासो ति-सहस्स-णव-सद-मेत्तो ३९०० ।

जयधवलमे यह भी बतलाया गया है कि एक एक पाहुडके अन्तर्गत पुनः चौबीस चौबीस अनुयोगद्वार थे । यथा—

एदेसु अन्थाहियारेसु एक्केकस्स अन्थाहियारस्स वा पाहुडसण्णिदा बीस बीस अन्थाहियारा । तस्मिं पि अन्थाहियाराण एक्केकस्स अन्थाहियारस्स चउबीस चउबीस अणिओगटाराणि सण्णिदा अन्थाहियारा ।

इससे स्पष्ट है कि पूर्वोक्त अन्तर्गत वस्तु अधिकार थे, जिनकी संख्या किसी विशेष नियमसे नहीं निश्चित थी । किन्तु प्रत्येक वस्तुके अवान्तर अविकार पाहुड कहलाते थे और उनकी संख्या प्रत्येक वस्तुके भीतर नियमतः बीस बीस रहती थी और फिर एक एक पाहुडके भीतर चौबीस चौबीस अनुयोगद्वार थे । यह विभाग अब हमारे लिये केवल पूर्वोक्त विशालता मात्रका द्योतक है क्योंकि उन वस्तुओं और उनके अन्तर्गत पाहुडोंके अब नाम तक भी उपलब्ध नहीं है । पर इन्हीं ३९०० पाहुडोंमेंसे केवल दो पाहुडोंका उद्धार पट्खडागम और कसायपाहुड (धवला और जयधवला) में पाया जाता है जैसा कि आगे चलकर बतलाया जायगा । उनसे और उनकी उपलब्ध टीकाओंसे इस साहित्यकी रचनाशैली व कथनोपकथन पद्धतिका बहुत कुछ परिचय मिलता है ।

चौदह पूर्वोक्त विषय व परिमाण

१ उप्पादपुब्बं—तत्र च सर्वद्रव्याणां पर्यवाणां चोत्पादभावमगीकृत्य प्रज्ञापना कृता ।

(१०००००००)

२ अग्गेणीयं—तत्रापि सर्वेषां द्रव्याणां पर्यवाणां जीवविशेषाणां चाप्र परिमाणं वर्ण्यते ।

(९६००००००)

३ वीरियं—तत्राप्यजीवानां जीवानां च सकर्मैतराणां वीर्यं प्रोच्यते । (७०००००००)

४ अत्थिणात्थिपवादं—यच्चल्लोके यथास्ति यथा वा नास्ति, अथवा स्याद्वादाभिप्रायतः तदेवास्ति तदेव नास्तीत्येव प्रवदति ।

(६०००००००)

५ णाणपवादं—तस्मिन् मतिज्ञानादिपचकस्य भेदप्ररूपणा यस्मात्कृता तस्मात् ज्ञानप्रवादः ।

(९९९९९९९९)

चौदह पूर्वोक्त विषय व पदसंख्या

१ उप्पादपुब्बं जीव-काल-पोग्गलाणमुप्पाद-वय-धुवत्तं वर्ण्येइ । (१००००००००)

२ अग्गेणियं अगाणमग्गं वर्ण्येइ । अगाणमग्गं-पदं वर्ण्येदि त्ति अग्गेणियं गुणणाम् ।

(९६००००००)

३ वीरियाणुपवादं अप्पविरियं परविरियं उभयविरियं खेत्तविरियं भवविरियं तवविरियं वर्ण्येइ ।

(७०००००००)

४ अत्थिणत्थिपवादं जीवाजीवाण अत्थिणत्थित्तं वर्ण्येदि ।

(६०००००००)

५ णाणपवादं पंच णाणाणि तिणिणं अण्णाणाणि वर्ण्येदि ।

(९९९९९९९९)

६ सच्चपवादं—सत्यं सयम सत्यवचन वा तद्यत्र समेद सप्रतिपक्ष च वर्ण्यते तत्सत्य-प्रवादम् । (१००००००६)

७ आदपवादं—आत्मा अनेकधा यत्र नयदर्शनै-वर्ण्यते तदात्मप्रवाद । (२६०००००००)

८ कम्मपवादं—ज्ञानावरणादिकमष्टविध कर्म प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशादिभिर्मदैरन्यैश्चोत्तरो-त्तरभेदैर्यत्र वर्ण्यते तत्कर्मप्रवादम् । (१८०००००००)

९ पञ्चक्खाणं—तत्र सर्वं प्रत्याख्यानस्वरूप वर्ण्यते । (८४००००००)

१० विज्ञाणुवादं—तत्रानेके विद्यातिशया वर्णिताः । (११०००००००)

११ अघंज्झं—वन्ध्य नाम निष्फलम्, न वन्ध्यम-वन्ध्य सफलमित्यर्थः । तत्र हि सर्वे ज्ञानतपः-सयमयोगाः शुभफलेन सफला वर्ण्यन्ते, अप्रशस्ताश्च प्रमादादिकाः सर्वे अशुभफला वर्ण्यन्ते, अतोऽवन्ध्यम् । (२६०००००००)

१२ पाणावायं—तत्राप्यायुःप्राणविधान सर्वं समेदमन्ये च प्राणा वर्णिताः । (१५६००००००)

६ सच्चपवादं—वाग्गुतिः वाक्सस्कारकारण-प्रयोगो द्वादशधा भाषावक्तारश्च अनेक-प्रकार मृषाभिधान दशप्रकारश्च सत्य-सद्भावो यत्र निरूपितस्तत्सत्यप्रवादम् । (१०००००००६)

७ आदपवादं आद वर्णेदि वेदेति वा विण्हु-ति वा भोत्तेति वा बुद्धेति वा इच्छादिसंख-वेण । (२६००००००००)

८ कम्मपवादं अट्टविह कम्मं वर्णेदि । (१८०००००००)

९ पञ्चक्खाणं दब्ब—भाव—परिमियापरिमिय-पञ्चक्खाण उववासविहिं पच समिदीओ तिणि गुत्तीओ च परूवेदि । (८४०००००००)

१० विज्ञाणुवादं अंगुष्ठप्रसेनादीना अल्पविद्याना सप्तशतानि रोहिण्यादीना महाविद्याना पञ्च-शतानि अन्तरिक्ष--भौमाङ्गस्वर-स्वप्न-लक्षण-व्यजनल्लिङ्गान्यष्टौ महानिमित्तानि च कथयति । (११०००००००)

११ कल्याणं रवि—शशि—नक्षत्र—तारागणाना चारोपपाद—गति—विपर्ययफलानि शकुन-व्याहृतमर्हद्वलदेव — वासुदेव — चक्रधरादीना गर्भाचतरणादिमहाकल्याणानि च कथयति । (२६००००००००)

१२ पाणावायं कायचिकित्साद्यष्टागमायुर्वेद भूतिकर्म जागुलिप्रक्रम प्राणापानविभाग च विस्तरेण कथयति । (१३००००००००)

१३ किरियाविसालं-तत्त कायिक्यादयःक्रिया विशालं त्ति समेदा संयमक्रिया छन्दक्रिया-विधानानि च वर्ण्यन्ते ।

(९०००००००)

१३ किरियाविसालं लेखादिका द्वासप्ततिकला खेणाश्रतुःपष्टिगुणान् शिल्पानि कान्यगुण-दोषक्रिया छन्दोविचितिक्रिया च कथयति ।

(९०००००००)

१४ लोकविंदुसारं-तच्चास्मिन् लोके श्रुतलोके वा बिन्दुरिवाक्षरस्य सर्वोत्तममिति, सर्वाक्षर-सन्निपातप्रतिष्ठितत्वेन च लोकविन्दुसारं भणितम् ।

(१२५००००००)

१४ लोकविंदुसारं अष्टौ व्यवहारान् चत्वारि बीजानि मोक्षगमनक्रिया मोक्षसुख च कथयति ।

(१२५००००००)

पूर्वोक्ते अन्तर्गत विषयोंकी सूचना समवायाग व नन्दीसूत्रोंमें नहीं पायी जाती, वहाँ केवल नाम ही दिये गये हैं। विषयकी सूचना उनकी टीकाओंमें पायी जाती है। उपर्युक्त श्वेताम्बर मान्यताका विषय समवायाग टीकासे दिया गया है। उस परसे ऐसा ज्ञात होता है कि वहाँ विषयका अंदाज बहुत कुछ नामकी व्युत्पत्ति द्वारा लगाया गया है। वयलान्तर्गत विषय-सूचना कुछ विशेष है। पर विषयनिर्देशमें शब्दभेदको छोड़ कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं है। अवन्ध्य और कल्याणवादमें जो नामभेद है, उसीप्रकार विषयसूचनामें भी कुछ विशेष है। धवलामें उसके अन्तर्गत फलित ज्योतिष और शकुनशास्त्रका स्पष्ट उल्लेख है जो अवन्ध्यके विषयमें नहीं पाया जाता। उसी प्रकार वारह्वे प्राणावाय पूर्वके भीतर धवलामें कायचिकित्सादि अष्टांगायुर्वेदकी सूचना स्पष्ट दी गई है, वैसी समवायाग टीकामें नहीं पायी जाती। वहाँ केवल 'आयुषाणविधान' कहकर छोड़ दिया गया है। तेरहवें क्रियाविशालमें भी धवलामें स्पष्ट कहा है कि उसके अन्तर्गत लेखादि बहत्तर कलाओं, चौसठ स्त्री कलाओं और शिल्पोंका भी वर्णन है। यह समवायाग टीकामें नहीं पाया जाता।

पदप्रमाण दोनों मान्यताओंमें तेरह पूर्वोक्ता तो ठीक एकसा ही पाया जाता है, केवल वारह्वे पूर्व पाणावायकी पदसंख्या दोनोंमें भिन्न पाई जाती है। धवलके अनुसार उसका पदप्रमाण तेरह कोटि है जब कि समवायाग और नन्दीसूत्रकी टीकाओंमें एक कोटि छप्पन लाख (एका कोटी षट्पञ्चाशच्च पदलक्षाणि) पाया जाता है।

प्रथम नौ पूर्वोक्ता विषय तो अध्यात्मविद्या और नीति-सदाचारसे संबंध रखता है किन्तु आगेके विद्यानुवादादि पांच पूर्वोंमें मन्त्रतंत्र व कलाकौशल शिल्प आदि लौकिक विद्याओंका वर्णन था, ऐसा प्रतीत होता है। इसी विशेष भेदको लेकर दशपूर्वी और चौदहपूर्वी का अलग अलग उल्लेख पाया जाता है। धवलके वेदनाखंडके आदिमें जो मंगलाचरण है वह स्वयं इन्द्रभूति गौतम गणधरकृत और महाकम्मपयडिपाड्डके आदिमें उनके द्वारा निबद्ध कहा गया है। वहीसे

उठाकर उसे भूतबलि आचार्यने जैसाका तैसा वेदनाखंडके आदिमें रख दिया है, ऐसी धवलाकारकी सूचना है। इस मंगलाचरणमें ४४ नमस्कारात्मक सूत्र या पद है। इनमें बारहवें और तेरहवें सूत्रोंमें क्रमसे दशपूर्वियों और चौदह पूर्वियोंको अलग अलग नमस्कार किया गया है, जिसके रहस्यका उद्घाटन धवलाकारने इसप्रकार किया है—

णमो दसपुर्वियाणं ॥ १२ ॥

एत्थ दसपुर्विणो भिण्णाभिण्णभेएण दुविहा होति । तत्थ एककारसगाणि पढिऊण पुणो परियम्म-
सुत्तपढमाणियोगपुव्वगयचुलिया त्ति पचहियारणिवद्धिट्ठिवादे पढिऊणमाणे उत्पपायपुव्वमाडि कादूण पढताण
दसपुर्वीविज्जापवादे समत्ते रोहिणी-भाट्ठिपंचसयमहाविज्जाई अगुट्ठपसेणादिसत्तसयदहरविज्जाहि अणुगयाओ
किं भयव आणवेवत्ति दुक्कति । एव दुक्कण सव्वविज्जाण जो लोभो गच्छति सो भिण्णदसपुर्वी । जो पुण
ण तासु लोभ करेदि कम्मवसय थी होतो सो अभिण्णदसपुर्वी गाम । तत्थ अभिण्णदसपुर्वीजिणाण णमो-
कारं करेमि त्ति उच्च होदि । भिण्णदसपुर्वीण वथ पढिणिचित्ती ? जिणसद्धानुवचत्तीदो, ण च तेसिं जिणत्तमत्थि,
भग्गमहव्वएसु जिणत्तानुवचत्तीदो ।

णमो चोदसपुर्वियाणं ॥ १३ ॥

जिणाणमिदि एत्थानुवट्ठे । सयलसुदणाणधारिणो चोदसपुर्विणो, तेसिं चोदसपुर्वीण जिणाण णमो
इदि उच्च होदि । सेसहेट्ठिमपुर्वीण णमोकारो भिण्ण कदो ? ण, तेसिं पि कदो चेव तेहि विणा चोदसपुर्वी-
णुवचत्तीदो । चोदसपुर्वस्सेव णामणिहेस कादूण किमट्ठ णमोकारो कीरदे ? विज्जाणुपवादस्स समत्तीए इव
चोदस्सपुर्वसमत्तीए वि जिणवयणपच्चयदराणादो । चोदसपुर्वसमत्तीए को पच्चओ ? चोदसपुर्वीणि रामा-
णिय रत्ति काउस्सग्गेण ट्ठिदस्स पहादसमए भच्चवासियक्काणवत्तरजोदिसियक्कप्पवासियदेवेहि कयमहापूजा
सखकाहलात्तरवरकुला । होट्ठ पुव्वेसु दोसु ट्ठाणेरु जिणवयणपच्चओवलभो, जिणवयणत्त पढि सव्वगपुर्वीणि
समाणाणि त्ति तेसिं सव्वेसिं णामणिहेस काऊण णमोकारो भिण्ण कदो ? ण, जिणवयणत्तणेण सव्वगपुर्वीणि
सरिसत्ते सत्ते वि विज्जाणुपवादलोगविदुसाराण महल्लत्तमत्थि, एत्थेव देवपूजोत्तभादो । चोदसपुर्वीहरो
मिच्छत्त ण गच्छदि तम्मि भवे असज्जम च ण पढिवज्जदि, एसो एदस्स विसेसो ।

यहा धवलाकारने दशपूर्वियों और चौदहपूर्वियोंको अलग अलग नामनिर्देशपूर्वक नमस्कार
किये जानेका कारण यह बतलाया है, कि जब श्रुतपाठी आचारागादि ग्यारह श्रुतोंको पढ चुकता
है और दृष्टिवादके पांच अधिकारोका पाठ करते समय क्रमसे उत्पादादि पूर्व पढता हुआ दशम
पूर्व विद्यानुवादको समाप्त कर चुकता है, तब उससे रोहिणी आदि पांच सौ महाविद्याएँ और
अगुष्टप्रसेणादि सात सौ अल्प विद्याएँ आकर पूछती हैं 'हे भगवन्, क्या आज्ञा है ?' इसप्रकार
सब विद्याओंके प्राप्त हो जानेपर जो लोभमें पड जाता है वह तो भिन्नदशपूर्वी कहलाता है, और
जो उनके लोभमे न पटकर कर्मक्षयार्थी बना रहता है वह अभिन्नदशपूर्वी होता है। ये
अभिन्नदशपूर्वी ही 'जिन' सज्ञाको प्राप्त करते हैं और उन्हेंको यहा नमस्कार किया गया है।
किन्तु जो महाव्रतोंका भग कर देनेसे जिनसज्ञाको प्राप्त नहीं कर पाते उन्हें यहा नमस्कार नहीं
किया गया।

आगे यह प्रश्न उठाया गया है कि जब दश और चौदह पूर्वियोंको अलग अलग नमस्कार किया तब बीचके ग्यारहपूर्वी, वारहपूर्वी और तेरहपूर्वियों को भी क्यों नहीं पृथक् नमस्कार किया। इसका उत्तर दिया गया है कि उनको नमस्कार तो चौदहपूर्वियोंके नमस्कारमें आ ही जाता है, पर जैसा जिनवचनप्रत्यय विद्यानुवादकी समाप्तिके समय देखा जाता है वैसा ही चौदह-पूर्वोंकी समाप्तिपर पाया जाता है। जब चौदहपूर्वोंको समाप्त करके रात्रिमें श्रुत-केवली कायोत्सर्गसे विराजमान रहते हैं तब प्रभात समय भवनवासी, वाणव्यतर, ज्योतिषी, और कल्पवासी देव आकर उनकी शखर्त्यके साथ महापूजा करते हैं। इसप्रकार यद्यपि जिनवचनत्वकी अपेक्षासे सभी पूर्व समान है, तथापि विद्यानुप्रवाद और लोकविन्दुसारका महत्त्व विशेष है, क्योंकि यहीं देवोद्वारा पूजा प्राप्त होती है। दोनो अवस्थाओमें विशेषता केवल इतनी है कि चतुर्दशपूर्वधारी फिर मिथ्यात्वमें नहीं जा सकता और उस भवमें असयमको भी प्राप्ति नहीं होता।

इससे जाना जाता है कि श्रुतपाठियोंकी विद्या एक प्रकारसे दशम पूर्वपर ही समाप्त हो जाती थी, वहीं वह देवपूजाको भी प्राप्त कर लेता था और यदि लोभमें आकर पथभ्रष्ट न हुआ तो 'जिन' सज्ञाका भी अधिकारी रहता था। इससे दिग्ग्वर सम्प्रदायमें दृष्टिवादके प्रथमानुयोग नामक विभागको पूर्वगतसे पहले रखने की सार्थकता भी सिद्ध हो जाती है। यदि पूर्वगतके पश्चात् प्रथमानुयोग रहा तो उसका तात्पर्य यह होगा कि दशपूर्वियोंको उसका ज्ञान ही नहीं हो पायगा। अतएव इस दशपूर्वोंकी मान्यताके अनुसार प्रथमानुयोगको पूर्वोंसे पहले रखना बहुत सार्थक है। आगेके शेष पूर्व और चूलिकाएं लौकिक और चमत्कारिक विद्याओंसे ही संबन्ध रखती हैं, वे आत्मशुद्धि बढ़ानेमें उतनी कार्यकारी नहीं हैं, जितनी उसकी दृढताकी परीक्षा करानेमें हैं।

भिन्न और अभिन्न दशपूर्वोंकी मान्यताका निर्देश नदीसूत्रमें भी है, यथा—

‘इच्छेन्न दुर्वालयस्य गणिपिटकं चोद्धसपुर्विवस्स सम्मसुअ अभिण्णदसपुर्विवस्स सम्मसुअ, तेण पर भिण्णेषु भयणा से त सम्मसुअ’ (सू ४१)

टीकाकारने भिन्न और अभिन्न दशपूर्वोंका स्पष्टीकरण इस प्रकार किया है—

‘इत्येतद् द्वादशाग गणिपिटकं यश्चतुर्दशपूर्वां तस्य सफलमपि सामाधिक्यं विन्दुसार-पर्यवसानं नियमात् सम्यक् श्रुतं। ततो अधोमुखपरिहान्या नियमत सर्वं सम्यक् श्रुतं तावद् वक्तव्यं यावदभिन्नदश-पूर्वाणि—सम्पूर्णदशपूर्वधरस्य। सम्पूर्णदशपूर्वधरत्वादिकं हि नियमत सम्यग्दृष्टेरेव, न मिथ्यादृष्टे, तथा स्वाभा-व्यात्। तथाहि, यथा अभव्यो अग्निदेशमुपागतोऽपि तथा स्वभावत्वात् न अग्निभेदमाधातुमलम्, एव मिथ्या-दृष्टिरपि श्रुतमवगाहमानं प्रकर्षतोऽपि तावदवगाहते यावद्विश्रान्त्यूनानि दशपूर्वाणि भवन्ति, परिपूर्णानि तु तानि नावगाहं शक्नोति तथा स्वभावत्वादिति।’ इत्यादि

इसका तात्पर्य यह है कि जो सम्मगदृष्टि होता है वह तो दश पूर्वोका अव्ययन कर लेता है और आगे भी बढ़ता जाता है, किन्तु जो मिथ्यादृष्टि होता है वह कुछ कम दश पूर्वोक्त तो पढ़ता जाता है, किन्तु वह दशमेको भी पूरा नहीं कर पाता । इसका उदाहरण उन्होंने एक अभव्यका दिया है जो किसी ग्रथि-देशपर आजानेसे उस ग्रथिका भेदन नहीं कर पाता । पर टीकाकारने यह नहीं बतलाया कि कुछ कम दशवे पूर्वमे श्रुतपाठी कौनसी ग्रथि पाकर रुक जाता है और उसका भेदन क्यों नहीं कर पाता ।

अनुयोगके दो भेद

१. मूलपदमाणुओग

२. गणिकाणुओग

मूलप्रथमानुयोगका विषय

अरहताण भगवताण पुव्वभवा देवगमणाइ आउ-
चवणाइ जम्मणाइ अभिसेआ रायवरसिरीओ पव्व-
जाओ तवा य उग्गा केवलनाणुप्पयाओ तित्थ-
पवत्तणाणि सीसा गणा गणहरा अज्जपवत्तिणीओ
सवस्स चउव्विहस्स ज च परिमाण जिण मण
पज्जव आहिनाणी सम्मत्त सुअनाणिणो वाई
अणुत्तरगई उत्तरवेउव्विण्णो मुणिणो जत्तिआ
सिद्धा सिद्धीवहो जहदेसिओ जच्चिर च कालं
पाओवगया जे जेहिं जात्तिआइ भत्ताइ छेइत्ता
अतगडे मुणिवरुत्तमे तमरओधविप्पमुक्के मुख-
सुहमणुत्तर च पत्ते एवमन्ने अ एवमाइभावा
मूलपटमाणुओगे कहिआ ।

गंडिकाणुओग

गंडिकाणुओगे कुलगर-तित्थयर-चक्कवट्टि-दसार-
वलदेव-वासुदेव-गणधर-भइवाहु-तवोक्कम-हरिवस-
उत्सप्पिणी-चित्तर-अमर-नर-तिरिय--निरय-गइग-
मण-विविहपरियट्टणेसु एवमाइआओ गंडिकाओ
आधविज्जति पणविज्जति ।

प्रथमानुयोगका विषय

पटमाणुओए चउवीस अत्थाहियारा तित्थयर-
पुराणेषु सव्वपुराणाणमतम्भावादो (जयधवला)
पटमाणियोगो पच-सहस्सपदेहि (५०००)
पुराणं वण्णेदि । उत्तं च-
वारसविहं पुराण ज टिट्ठ जिणवरेहि सव्वेहिं ।
त सव्व वण्णेदि हु जिणवसे रायवसे य ॥ १ ॥
पटमो अरहताण विदियो पुण चक्कवट्टिवसो
दु । विज्जाहराण तदियो चउत्थओ वासु-
देवाण ॥२॥ चारणवसो तह पचमो दु छट्ठो य
पण्णसमणाण । सत्तमओ कुरुवसो अट्ठमओ तह
य हरिवसो ॥३॥ णवमो य इक्खयाण दसमो वि य
कासियाण बोद्धव्वो । वाईणेक्कारसमो बारसमो
णाहवसो दु ॥ ४ ॥

श्रैतान्तर सम्प्रदायमें दृष्टिवादके चौथे भेदका नाम अनुयोग है जिसके पुन दो प्रभेद होते हैं, मूलप्रथमानुयोग और गंडिकानुयोग । दिगम्बर सम्प्रदायमें प्रथमानुयोग ही दृष्टिवादका तीसरा भेद है । अनुयोगका अर्थ समवायाग टीकामें इसप्रकार दिया है—

अनुरूपोऽनुकूलो वा योगोऽनुयोगः सूत्रस्य निजेनाभिधेयेन सार्द्धमनुरूपः सम्बन्ध इत्यर्थः ।

अर्थात्—सूत्रद्वारा प्रतिपादित अर्थके अनुकूल सव्यवका नाम ही अनुयोग है । तात्पर्य यह कि जिसमे सूत्र कथित सिद्धांत या नियमोंके अनुकूल दृष्टान्त और उदाहरण पाये जायें वह अनुयोग है । उसके दो भेद करनेका अभिप्राय नंदीसूत्रकी टीकामें यह बतलाया गया है कि—

इह मूल धर्मप्रणयनात् तीर्थकरास्तेषां प्रथमः सम्यक्त्वासिद्धिर्गणपूर्वभवादिगोचरोऽनुयोगो मूल-प्रथमानुयोगः । इक्ष्वादीनां पूर्वापरपर्वपरिच्छिन्नो मध्यभागो गण्डिका, गण्डिकेव गण्डिका, एकाद्याधिकाराग्रथपद्धतिरित्यर्थः । तस्या अनुयोगो गण्डिकानुयोगः ।

इसका अभिप्राय यह है कि धर्मके प्रवर्तक होनेसे तीर्थकर ही मूल पुरुष है, अतएव उनका प्रथम अर्थात् सम्यक्त्वासिद्धिर्गण पूर्वभव आदिका वर्णन करनेवाला अनुयोग मूलप्रथमानुयोग है । और जैसे गन्ने आदिकी गडरी आजू बाजूकी गांठोंसे सीमित रहती है ऐसे ही जिसमे एक एक अधिकार अलग अलग हो उसे गण्डिकानुयोग कहते हैं, जैसे कुलकरगण्डिका आदि । किन्तु यह विभाग कोई विशेष महत्व नहीं रखता क्योंकि दोनोंमे विषयकी पुनरावृत्ति पायी जाती है । जैसे तीर्थकर और उनके गणधरोका वर्णन दोनों विभागोंमें आता है । दिगम्बरोंमें ऐसा कोई विभाग नहीं किया गया और साफ सीधे तौरसे बतलाया गया है कि दृष्टिवादके प्रथमानुयोगमे चौबीस अधिकारोद्धार बारह जिनवंशो और राजवंशोंका वर्णन किया गया है

दिगम्बर सम्प्रदायमें प्रथमानुयोगका अर्थ इसप्रकार किया गया है—

प्रथम मिथ्यादृष्टिप्रवृत्तिकमव्युत्पन्न वा प्रतिपाद्यमाश्रित्य प्रवृत्तोऽनुयोगोऽधिकारः प्रथमानुयोगः

(गोम्मटसार टीका)

इसका अभिप्राय यह है कि ' प्रथम ' का तात्पर्य अव्रती और अव्युत्पन्न मिथ्यादृष्टि शिष्यसे है और उसके लिये जिस अनुयोग की प्रवृत्ति होती है वह प्रथमानुयोग कहलाता है । इसीके भीतर सब पुराणोंका अन्तर्भाव हो जाता है । किन्तु इसका पद-प्रमाण केवल पांच हजार बतलाया गया है । इससे जान पड़ता है कि दृष्टिवादके अन्तर्गत प्रथमानुयोगमें सर्व कथावर्णन बहुत संक्षेपमें किया गया था । पुराणवादका विस्तार पीछे पीछे किया गया होगा ।

नन्दिसूत्रकी टीकामें गण्डिकानुयोगके अन्तर्गत चित्रान्तरगण्डिकाका बड़ा ही विचित्र और विस्तृत परिचय दिया है । पहले उन्होंने बतलाया है कि—

‘ कुलकराणां गण्डिका कुलकरगण्डिका, तत्र कुलकराणां विमलवाहनादीनां पूर्वभवजन्मादीनि सप्रपञ्चपुत्रपर्यन्ते । एव तीर्थकरगण्डिकादिष्वभिधानवशात्तो भावनीयः ‘ जाव चित्ततरगण्डिआल ’ इति ।

अर्थात् कुलकरगण्डिकामें विमलवाहनादि कुलकरोंके पूर्वभव जन्मादिका सविस्तर वर्णन किया गया है । इसीप्रकार तीर्थकरादि गण्डिकाओंमें उनके नामानुसार विषय वर्णन समझ लेना चाहिये

जहाँतक कि चित्रान्तरगण्डिका नहीं आती । फिर चित्रान्तरगण्डिकाका परिचय इस प्रकार प्रारम्भ किया गया है—

‘ चित्रा अनेकार्था , अन्तरे ऋषभाजिततीर्थरूपापान्तराले गण्डिकाः चित्रान्तरगण्डिका । एतदुक्तं भवति—ऋषभाजिततीर्थकान्तराले ऋषभवशसमुद्भूतभूपतीना शेषगतिगमनव्युदासेन शिवगतिगमनानुत्तरोपपातप्राप्तिप्रतिपादिका गण्डिकाश्चित्रान्तरगण्डिका । तासां च प्ररूपणा पूर्वाचार्येवमकारि—इह सुबुद्धिनामा सगरचक्रवर्तिनो महामात्योऽष्टापदपर्वते सगरचक्रवर्तिसुतेभ्य आदित्ययशःप्रभृतीना भगवदपभवनजाना भूपर्तानामेव सख्यामाख्यातुमपक्रमते स्म । आह च—

“ आडचचजसाईण उसभरस परपरानरवईण ।

सयरसुयाण सुबुद्धी इणमो सख परिन्हैइ ॥ १ ॥

आदित्ययशः प्रभृतीयो भगवन्नाभेयवशजास्त्रिखण्डभरतार्द्धमनुपाख्य पर्यन्ते पारमेश्वरी दीक्षामाभिगृह्य तत्प्रभावतः सकलकर्मक्षय कृत्वा चतुर्दश लक्षा निरन्तर सिद्धिमगमन् । तत एव सर्वार्थमिन्द्रा, ततो भूयोऽपि चतुर्दश लक्षा निरन्तर निर्वाणे, ततोऽप्येक सर्वार्थसिद्धे महाविमाने । एव चतुर्दशलक्षान्तरित सर्वार्थसिद्धावेकमस्तावद्वक्तव्यो यावत्तेऽप्येकका असख्येया भवन्ति । ततो भूयश्चतुर्दश लक्षा नरपतीना निरन्तर निर्वाणे, ततो द्वौ सर्वार्थसिद्धे । तत पुनरपि चतुर्दश लक्षा निरन्तर निर्वाणे । ततो भूयोऽपि द्वौ सर्वार्थसिद्धे । एव चतुर्दश लक्षा २ लक्षान्तरितो द्वौ २ सर्वार्थसिद्धे तावद्वक्तव्यौ यावत्तेऽपि द्विक २ सख्यया असख्येया भवन्ति । एव त्रिक २ सख्यादयोऽपि प्रत्येकमसख्येयास्तावद्वक्तव्या यावन्निरन्तर चतुर्दश लक्षा निर्वाणे । तत, पञ्चाशत्सर्वार्थसिद्धे । ततो भूयोऽपि चतुर्दश लक्षा निर्वाणे । तत पुनरपि पञ्चाशत्सर्वार्थसिद्धे । एव पञ्चाशत्सख्याका अपि चतुर्दश २ लक्षान्तरितास्तावद्वक्तव्या यावत्तेऽप्यसख्येया भवन्ति । उक्तच—

“ चोहस लक्खा सिद्धा णिवड्ढेण्णो य होइ सव्वट्ठे ।

एवैक्के ठाणे पुरिसजुगा होतिऽसखेज्जा ॥ १ ॥

पुणरपि चोहस लक्खा सिद्धा निव्वईण दो वि सव्वट्ठे ।

दुगठाणेऽवि असखा पुरिसजुगा होति नायव्वा ॥ २ ॥

जाव य लक्खा चोहस सिद्धा पण्णास होति सव्वट्ठे ।

पञ्चासट्ठाणे वि उ पुरिसजुगा होतिऽसखेज्जा ॥ ३ ॥

एगुत्तरा उ ठाणा सव्वट्ठे चैव जाव पञ्चासा ।

एक्केकरठाणे पुरिसजुगा होति असखेज्जा ॥ ४ ॥

इत्यादि ।

इसका तात्पर्य यह है कि ऋषभ और अजित तीर्थकारोंके अन्तराल कालमें ऋषभ वशके जो राजा हुए उनकी और गतियोंको छोड़कर केवल शिवगति और अनुत्तरोपपातकी प्राप्तिा प्रतिपादन करनेवाली गण्डिका चित्रान्तरगण्डिका कहलाती है । इसका पूर्वाचार्योंने ऐसा प्ररूपण किया है कि सगरचक्रवर्तीके सुबुद्धिनामक महामात्यने अष्टापद पर्वतपर सगरचक्रवर्तीके पुत्रोंको भगवान् ऋषभके वशज आदित्ययश आदि राजाओंकी संख्या इस प्रकार बताई—उक्त आदित्ययश आदि नाभेयवशके राजा त्रिखंड भरतार्द्धका पालन करके अन्त समय पारमेश्वरी दीक्षा धारण कर उसके प्रभावसे सब कर्मोंका क्षय करके चौदह लाख निरन्तर क्रमसे सिद्धिको प्राप्त हुए और

अनन्तर एक सर्वार्थसिद्धिको गया । फिर चौदह लाख निरन्तर मोक्षको गये और पश्चात् एक फिर सर्वार्थसिद्धिको गया । इसीप्रकार क्रमसे वे मोक्ष और सर्वार्थसिद्धिको तबतक जाते रहे जबतक कि सर्वार्थसिद्धिमे एक एक करके असंख्य होगये । इसके पश्चात् पुनः निरन्तर चौदह चौदह लाख मोक्षको और दो दो सर्वार्थसिद्धिको तबतक गये जबतक कि ये दो दो भी सर्वार्थसिद्धिमें असंख्य होगये । इसीप्रकार क्रमसे फिर चौदह लाख मोक्षगामियोंके अनन्तर तीन तीन, फिर चार चार करके पचास पचास तक सर्वार्थसिद्धिको गये और सभी असंख्य होते गये । इसके पश्चात् क्रम बदल गया और चौदह लाख सर्वार्थसिद्धिको जाने के पश्चात् एक एक मोक्षको जाने लगा और पूर्वोक्त प्रकारसे दो दो फिर तीन तीन करके पचास तक गये और सब असंख्य होते गये । फिर दो लाख निर्वाणको, फिर दो लाख सर्वार्थसिद्धिको, फिर तीन तीन लाख । इस प्रकारसे दोनों ओर यह सत्या भी असंख्य तक पहुच गई । यह सब चित्रान्तरगण्डिकामें दिखाया गया था । उसके आगे चार प्रकारकी और चित्रान्तरगण्डिकायें थीं—एकादिका एकोत्तरा, एकादिका द्व्युत्तरा, एकादिका त्र्युत्तरा और त्र्यादिका द्वाद्यादिविषयोत्तरा, जिनमें भी और और प्रकारसे मोक्ष और सर्वार्थसिद्धिको जानेवालोंकी सत्याएं बतायीं गई थीं ।

जान पड़ता है, इन सब सत्याओंका उपयोग अनुयोगके विषयकी अपेक्षा गणितकी मिन-मिन धाराओंके समझानेमें ही अधिक होता होगा ।

चूलिका

प्रथम चार पूर्वोक्ती चूलिकाए ही इसके अन्तर्गत हैं । उन चूलिकाओंकी संख्या ४+१२+८+१०=३४ है

पांच चूलिकाओंके अन्तर्गत विषय

- १ जलगया—जलगमण—जलथंभण—कारण—मत—तंत—तवच्छरणाणि वण्णेदि ।
- २ थलगया—भूमिगमणकारण—मत—तंत—तवच्छरणाणि वण्णेदि ।
- ३ मायागया—इंदजाल वण्णेदि
- ४ रूवगया—सीह—हय—हरिणादि—रूवायारेण परिणमणहेदु—मत—तंत—तवच्छरणाणि चित्त-कट्ट—लेप्प—लेणकम्मादि—लक्खणं च वण्णेदि ।
- ५ आयासगया—आगासगमणमिमित्त—मत—तंत—तवच्छरणाणि वण्णेदि ।

श्रुताम्बर ग्रंथोंमें यद्यपि चूलिका नामका दृष्टिवादका पाचवा भेद गिना गया है, किन्तु उसके भीतर न तो कोई ग्रंथ बताये गये और न कोई विषय, केवल इतना कह दिया गया है कि—

से कि तं चूलिआओ ? चूलिआओ आइह्लाण चउण्ह पुन्वाण चलिआ, सेमाट पुन्वाइ अचूलिआइ, से तं चूलिआओ ।

अर्थात् प्रथम चार पूर्वोंकी जो चूलिकाएं बता आये हैं वे ही चूलिकाएँ, यहाँ गिन लेना चाहिये । किन्तु, यदि ऐसा है तो चूलिकाको पूर्वोंका ही भेद रखना या, दृष्टिवादका एक अलग भेद बताकर उसका एक दूसरे भेदके अन्तर्गत निर्देश करनेसे क्या विशेषता आई ? फिर भी टीकाकार यह तो स्पष्ट बतलाते हैं कि दृष्टिवादका जो विषय परिकर्म, सूत्र, पूर्व और अनुयोगमें अनुक्त रहा वह चूलिकाओंमें समग्र किया गया—

‘ इह चूला शिस्तरमुच्यते, यथा मेरौ चूला । तत्र चूला इव चूला । दृष्टिवादे परिकर्म सूत्र-पर्वानुयोगेऽनुक्तार्थसमग्रहपरा ग्रथपद्धतयः । × × × एताश्च सर्वस्यापि दृष्टिवादस्योपरि ऋिल व्यापितान्त्रथैव च पठ्यन्ते । ’
(नन्दीसूत्र टीका)

इससे तो जान पड़ता है कि उन्हें पूर्वोंके भीतर बतलानेमें कुछ गड़बड़ी हुई है ।

दिगम्बर मान्यतामें पूर्वोंके भीतर कोई चूलिकाएं नहीं दिखाई गई । उसके जो पांच प्रभेद बतलाये गये हैं उनका प्रथम चार पूर्वोंसे विषयका भी कोई सम्बन्ध नहीं है । वे जल, यल, माया, रूप और आकाश सम्बन्धी इन्द्रजाल और मन्त्र-तन्त्रात्मक चमत्कारका प्ररूपण करती हैं, तथा अन्तिम पांच पूर्वोंके मन्त्रतन्त्रात्मक विषयकी धाराको लिये हुए हैं । प्रत्येक चूलिकाकी पदसंख्या २०९८९२०० बतलाई है, जिससे उनके भारी विस्तारका पता चलता है ।

अब यहाँ पूर्वोंके उन अंशोंका विशेष परिचय कराया जाता है जो ध्वला जयध्वलाके भीतर ग्रथित हैं और जिनकी तुलनाकी कोई सामग्री श्वेताम्बरीय उपर्युक्त आगमेंमें नहीं पायी जाती । इनकी रचना आदिका इतिहास सत्पररूपणा प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिया जा चुका है जिसका सारांश यह है कि भगवान् महावीरके पश्चात् क्रमशः अर्द्धाईस आचार्य हुए जिनका श्रुतज्ञान धीरे धीरे कम होता गया । ऐसे समयमें दो भिन्न भिन्न आचार्योंने दो भिन्न भिन्न पूर्वोंके अन्तर्गत एक एक पाहुडका उद्धार किया । धरसेनाचार्यने पुष्पदंत और भूतबलिको जो श्रुत पढ़ाया उसपरसे उन्होंने द्वितीय पूर्व आप्रायणीके एक पाहुडका उद्धार सूत्ररूपसे किया । आप्रायणीपूर्वके अन्तर्गत निम्न चौदह ‘ वस्तु ’ नामक अधिकार थे—पुष्पवंत, अवरत, ध्रुव, अध्रुव, चयणलद्धी, अद्धुवम, पणिधिकण, अहु, मौम्म, वयादिय, सब्बहु, कप्पणिजाण, अतीद-सिद्ध-बद्ध और अणागय-सिद्ध-बद्ध ।

हम ऊपर बतला ही आये हैं कि पूर्वोंकी प्रत्येक वस्तुमें नियमसे बीस बीस पाहुड रहते थे । अप्रायणी पूर्वकी पचम वस्तु चयनलद्धिके बीस पाहुडोंमें चौथे पाहुडका नाम कम्मपयड्डी या महाकम्मपयड्डी अथवा वेयणकसिणपाहुड × था । इसीका उद्धार पुष्पदंत और भूतबलिने

× कम्माण पयडिसरूव वण्णेदि, तेण कम्मपयडिपाहुडे ति गुणणाम । वेयणकसिणपाहुडे ति वि तस्स विदिय णाममत्तिव । वेयणा कम्माणमुदयो त कसिण णिरवसेस वण्णेदि अदो वेयणकसिणपाहुडमिदि एदमावि गुणणाममेव (स. प. १, पृ. १२४, १२५)

सूत्ररूपसे षट्खंडागमके भीतर किया । इस पाहुडके जो चौबीस अवान्तर अधिकार थे, उनके विषयका संक्षेप परिचय धवलाकारने वेदनाखंडके आदिमें कराया है जो इस प्रकार है—

१ कदि—कदीए ओरालिय-वेउव्विय-तेजाहार-
कम्मइयसरीराण संघादण-परिसादणकदी-
ओ भव-पटमापटम-चरिममि द्विदजीवाणं
कदि-णोकदि-अवत्तव्वसंखाओ च परूवि-
उज्जति ।

२ वेदणा—वेदणाए कम्म-पोग्गलाणं वेदणा-
सण्णिदाण वेदण-णिकखेवादि—सोलसेहि
अणिओगदारेहि परूवणा कीरदे ।

३ फास—फासणिओगदारेमि कम्म-पोग्गलाण
णाणावरणादिमेएण अट्ठभेदमुवगयाणं फास-
गुणसंबंधेण पत्त-फासणीमाण-फासणिकखे-
वादिसोलसेहि अणियोगदारेहि परूवणा
कीरदे ।

४ कम्म—कम्मेत्ति अणिओगदारे पोग्गलाणं
णाणावरणादिकम्मकरणक्खमत्तणेण पत्त-
कम्मसण्णाणं कम्मणिक्खेवादिसोलसेहि
अणियोगदारेहि परूवणा कीरदे ।

५ पयडि—पयडि ति अणियोगदारेमि पोग-
लाणं कदिमिह परूविद-संघादाणं वेदणाए
पण्णविदाक्त्वाविसेस-पच्चयादीणं फासमि
णिरूविद-वावाराणं पयडिणिकखेवादि—सोलस-
अणियोगदारेहि सहाव-परूवणा कीरदे ।

१ कृति—कृति अर्थाधिकारमें औदारिक,
वैक्रियिक, तैजस, आहारक और कार्मण,
इन पाचों शरीरोंकी सघातन और परि-
शातनरूप कृतिका तथा भवके प्रथम,
अप्रथम और चरम समयमें स्थित जीवोंके
कृति, नोकृति और अवक्तव्यरूप संख्या-
ओंका वर्णन है ।

२ वेदना—वेदना अर्थाधिकारमें वेदनासंज्ञिक
कर्मपुद्गलोंका वेदनानिक्षेप आदि सोलह
अधिकारोंके द्वारा वर्णन किया गया है ।

३ स्पर्श—स्पर्श अर्थाधिकारमें स्पर्श गुणके
संबन्धसे प्राप्त हुए स्पर्शनिर्माण, स्पर्श-
निक्षेप आदि सोलह अधिकारोंके द्वारा
ज्ञानावरणादिके भेदसे आठ भेदको प्राप्त
हुए कर्मपुद्गलोंका वर्णन किया गया है ।

४ कर्म—कर्म अर्थाधिकारमें कर्मनिक्षेप आदि
सोलह अधिकारोंके द्वारा ज्ञानावरणादि
कर्मकरणमें समर्थ होनेसे जिन्हें कर्मसंज्ञा
प्राप्त हो गई है, ऐसे पुद्गलोंका वर्णन
किया गया है ।

५ प्रकृति—प्रकृति अर्थाधिकारमें कृति अधि-
कारमें कहे गये सघातनरूप, वेदना अधि-
कारमें कहे गये अवस्थाविशेष प्रत्ययादि-
रूप, स्पर्शमें कहे गये जीवसे संबद्ध
और जीवके साथ संबद्ध होनेसे उत्पन्न
हुए गुणके द्वारा कर्म अधिकारमें कथित
रूपसे व्यापार करनेवाले पुद्गलोंके स्वभाव

का निरूपण प्रकृतिनिक्षेप आदि सोलह अधिकारोंके द्वारा किया गया है ।

६ बंधण-जं तं बंधण त चउव्विहं-बंधो बधगा बधणिज्ज बधविधाणमिदि । तत्थ बधो जीवकम्मपदेसाणं सोदियमणादियं च बध वण्णेदि । बधगाहियारो अट्ठविहकम्म-बंधगे परूवेदि, सो च खुद्दाबंधे परूविदो । बधणिज्ज बंधपाओग-तदपाओग-पोगल-दव्व परूवेदि । बधविहाणं पयडिबध ठिदिबधं अणुभागाबधं पदेसबध च परूवेदि ।

६ बन्धन-बन्ध, बन्धक, बन्धनीय और बन्धविधान, इसप्रकार बन्धन अर्थाधिकारके चार भेद हैं । उनमेंसे बन्ध अधिकार जीव और कर्मप्रदेशोंका सादि और अनादिरूप बन्धका वर्णन करता है । बन्धक अधिकार आठ प्रकारके कर्मोंके बन्धकका प्रतिपादन करता है जिसका कथन क्षुल्लकबन्धमें किया जा चुका है । बन्धके योग्य पुद्गलद्रव्यका कथन बन्धनीय अधिकार करता है । बन्धविधान अधिकार प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभाग-बन्ध और प्रदेशबन्ध, इन चार बन्धोंके भेदोंका कथन करता है ।

७ निबन्धण-निबन्धण मूलत्तरपयडीण निबन्धण वण्णेदि । जह्वा चक्खिदिय रूग्गमि निबद्ध, सोदिदिय सद्दमि निबद्ध, घाणिदियं गधमि निबद्धं, निच्चिमदियं रसमि निबद्धं, फासिदिय कक्खदादिफासेसु निबद्धं, तह्वा इमाओ पयडीओ एदेसु अत्थेसु निबद्धाओ त्ति निबन्धण परूवेदि, एसो भावत्थो ।

७ निबन्धन-निबन्धन अधिकार मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतियोंके निबन्धनका कथन करता है । जैसे, चक्षुरिन्द्रिय रूपमें निबद्ध है । श्रोत्रेन्द्रिय शब्दमें निबद्ध है । घ्राणेन्द्रिय गन्धमें निबद्ध है । जिह्वा इन्द्रिय रसमें निबद्ध है और स्पर्शनेन्द्रिय कर्कश आदि स्पर्शमें निबद्ध है । उसी-प्रकार ये मूलप्रकृतियाँ और उत्तरप्रकृतियाँ इन विषयोंमें निबद्ध हैं, इसप्रकार निबन्धन अर्थाधिकार प्ररूपण करता है यह भावार्थ जानना चाहिये ।

८ पक्कम-पक्कमेत्ति अणियोगहारं अकम्मसरू-वेण ट्ठिदाणं कम्मइयवगगाखधाण मूलत्तर-पयडिसरूवेण परिणममाणं पयडि-ट्ठिदि-अणुभागविसेसेण विसिद्धान पदेसपरूवण

८ प्रक्रम-प्रक्रम अर्थाधिकार जो वर्गणास्कन्ध अभी कर्मरूपसे स्थित नहीं हैं, किंतु जो मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतिरूपसे परिणमन करनेवाले हैं और जो प्रकृति, स्थिति और

कुणदि ।

९. **उवक्कम**—उवक्कमेत्ति अणियोगद्धारस्स चत्तारि अहियारा—बधणोवक्कमो उदीरणोवक्कमो उवसामणोवक्कमो विपरिणामोवक्कमो चेदि । तत्थ बंधोवक्कमो बंधविदियसमयप्पहुडि अट्ठण कम्माण पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसाण बधवणण कुणदि । उदीरणोवक्कमो पयडि-ट्ठिदि-अणुभागपदेसाणमुदीरण परूवेदि । उवसामणोवक्कमो पसत्थोवसामणमप्पसत्थोवसामणण च पयडि-ट्ठिदि अणुभाग-पदेसभेदाभिणण परूवेदि । विपरिणाममुवक्कमो पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसाण देसणिज्जर सयलणिज्जर च परूवेदि ।

१०. **उदय**—उदयाणियोगद्धार पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसुदय परूवेदि ।

११. **मोक्ख**—मोक्खो पुण देस-सयलणिज्जराहि परपयडिसकमोक्कहुणक्कहुण—अद्धट्ठिदिगलणेहि पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसभिणण मोक्ख वण्णेदि ति अत्थभेदो ।

१२. **संक्रम**—सकमेत्ति अणियोगद्धार पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेससकमे परूवेदि ।

अनुभागकी विशेषतासे वैशिष्ट्यको प्राप्त है ऐसे कर्मवर्गणास्कन्धोंके प्रदेशोका प्ररूपण करता है ।

९. **उपक्रम**—उपक्रम अर्थाधिकारके चार अधिकार है बन्धनोपक्रम, उदीरणोपक्रम, उपशामनोपक्रम और विपरिणामोपक्रम । उनमेंसे बन्धनोपक्रम अधिकार बन्ध होनेके दूसरे समयसे लेकर प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशरूप ज्ञानावरणादि आठों कर्मोंके बन्धका वर्णन करता है । उदीरणोपक्रम अधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंकी उदीरणाका कथन करता है । उपशामनोपक्रम अधिकार, प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशके भेदसे भेदको प्राप्त हुए प्रशस्तोपशमना और अप्रशस्तोपशमनाका कथन करता है । विपरिणामोपक्रम अधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंकी देशनिर्जरा और सकलनिर्जराका कथन करता है ।

१०. **उदय**—उदय अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंके उदयका कथन करता है ।

११. **मोक्ष**—मोक्ष अर्थाधिकार देशनिर्जरा और सकलनिर्जराकेद्वारा परप्रकृतिसकमण, उत्कर्षण अपकर्षण और स्थितिगलनसे प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध और प्रदेशबन्धका आत्मासे भिन्न होना मोक्ष है, इसका वर्णन करता है ।

१२. **संक्रम**—सक्रम अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंके संक्रमणका प्ररूपण करता है ।

- १३ लेस्सा-लेस्सेत्ति अणिओगद्दार छदव्वले-
स्साओ पख्वेदि ।
- १४ लेस्सायम्म-लेस्सापरिणामेत्ति अणियोग-
द्दारमंतरग-छलेस्सा-परिणयजीवाण वज्झ-
कज्जपरूपण कुणदि ।
- १५ लेस्सापरिणाम-लेस्सापरिणामेत्ति अणि-
योगद्दार जीव-पोगगलाण दव्व-भावलेस्साहि
परिणमणविहाण वण्णेदि ।
- १६ सादमसाद-सादमसादेत्ति अणियोगद्दारमे-
यतसाद-अणयततोदाण (२) गदियादि-
मग्गणाओ अस्सिदूण परूवण कुणइ ।
- १७ दीहेरहस्स-दीहेरहस्सेत्ति अणिओगद्दार
पयडि-ट्टिदि-अणुभाग-पदेसे अस्सिदूण
दीहेरहस्सत्त परूवेदि ।
- १८ भवधारणीय-भवधारणीयं त्ति अणियोग-
द्दार केण कम्मेण णेरइय-तिरिक्ख-मणुस-
देवभवा धरिज्जत्ति त्ति परूवेदि ।
- १९ पोगगलत्त-पोगगलत्थेत्ति अणिओगद्दार गह-
णादो अत्ता पोगगला परिणामदो अत्ता पोगगला
उवभोगदो अत्ता पोगगला आहारदो अत्ता
पोगगला ममत्तीदो अत्ता पोगगला परिगहादो
अत्ता पोगगला त्ति अप्पणिज्जाणप्पणिज्ज-
पोगगलाण पोगगलाण सबधेण पोगगलत्त
पत्तजीवाण च परूवण कुणदि ।
- १३ लेश्या-लेश्या आनुयोगद्दार छह द्रव्य
लेश्याओंका प्रतिपादन करता है ।
- १४ लेश्याकर्म-लेश्याकर्म अर्थाधिकार अन्तरग
छह लेश्याओंसे परिणत जीवोंके बाह्य
कार्योंका प्रतिपादन करता है ।
- १५ लेश्यापरिणाम-लेश्यापरिणाम अर्थाधिकार
जीव और पुद्गलोंके द्रव्य और भावरूपसे
परिणमन करनेके विधानका कथन करता
है ।
- १६ सातासात-सातासात अर्थाधिकार एकान्त
सात, अनेकान्त सात, एकान्त असात,
अनेकान्त असातका गति आदि मार्गणा-
ओंके आश्रयसे वर्णन करता है ।
- १७ दीर्घ-ह्रस्व-दीर्घ-ह्रस्व अर्थाधिकार प्रकृति,
स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंका आश्रय
लेकर दीर्घता और ह्रस्वताका कथन
करता है ।
- १८ भवधारणीय-भवधारणीय अर्थाधिकार,
किस कर्मसे नरकभव प्राप्त होता है,
किससे तिर्यचभव, किससे मनुष्यभव
और किससे देवभव प्राप्त होता है, इसका
कथन करता है ।
- १९ पुद्गलात्त-पुद्गलार्थ अनुयोगद्दार दण्डादिके
ग्रहण करनेसे आत्त पुद्गलोंका, मित्या-
त्वादि परिणामोंसे आत्त पुद्गलोंका,
उपभोगसे आत्त पुद्गलोंका, आहारसे आत्त
पुद्गलोंका, ममतासे आत्त पुद्गलोंका और
परिग्रहसे आत्त पुद्गलोंका, इसप्रकार
आत्मसात् किये हुए और नहीं किये हुए

पुद्गलोका तथा पुद्गलके संबन्धसे पुद्गलत्वको प्राप्त हुए जीवोका वर्णन करता है ।

२० निधत्तमणिधत्त— निधत्तमणिधत्तमिदि अणियोगद्वार पयडि--द्विदि-अणुभागाण निधत्तमणिधत्तं च परूवेदि । निधत्तमिदि किं ? ज पदेसग्ग ण सक्कमुदए दाहु अण्णपयडिं वा सकामेहु त निवत्त णाम । तन्निवरीयमणिवत्त ।

२० निधत्तानिधत्त--निधत्तानिधत्त अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति और अनुभागके निधत्त और अनिवत्तका प्रतिपादन करता है । जिसमें प्रदेशाग्र उदय अर्थात् उद्दीरणामे नहीं दिया जा सकता है और अन्य प्रकृतिरूप सक्रमणको भी प्राप्त नहीं कराया जा सकता है, उसे निधत्त कहते हैं । अनिवत्त इससे विपरीत होता है ।

२१ णिकाचिदमणिकाचिद--णिकाचिदमणि-काचिदमिदि अणियोगद्वार पयडि-द्विदि-अणुभागाण णिकाचण परूवेदि । णिकाच-णमिदि किं ? ज पदेसग्ग ण सक्कमोक्क-द्विदुमण्णपयडिं सकामेहुमुदए दाहु वा तण्णिकाचिद णाम । तन्निवरीदमणिका-चिद ।

२१ निकाचितानिकाचित--निकाचितानिका-चित अर्थाधिकार प्रकृति, स्थिति और अनु-भागके निकाचित और अनिकाचितका वर्णन करता है । जिसमें प्रदेशाग्रका उत्कर्षण, अपकर्षण, परप्रकृतिसक्रमण नहीं हो सकता और न वह उदय अथवा उद्दीरणामे ही दिया जा सकता है उसे निकाचित कहते हैं । अनिकाचित इससे विपरीत होता है ।

२२ कम्मद्विदि--कम्मद्विदि त्ति अणियोगद्वार सव्वकम्माण सत्तिकम्मद्विदिमुक्कद्विणोक्कद्विण-जणिद्विदिच परूवेदि ।

२२ कर्मस्थिति--कर्मस्थिति अनुयोगद्वार संपूर्ण कर्मोंकी शक्तिरूप कर्मस्थितिका और उत्कर्षण तथा अपकर्षणसे उत्पन्न हुई कर्मस्थितिका वर्णन करता है ।

२३ पच्छिमक्खंध-पच्छिमक्खंधेति अणिओग-द्वार दड-कपाट-पदर-लोगपूरणाणि तत्थ द्विदि-अणुभागखडयघादणाविहाण जोग-किट्ठीओ काऊण जोगणिरोहसरूव कम्म-क्खवणविहाण च परूवेदि ।

२३ पश्चिमस्कन्ध--पश्चिमस्कन्ध अर्थाधिकार दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूरणरूप समुद्घातका, इस समुद्घातमें होनेवाले स्थितिकाडकघात और अनुभागकाण्डक-घातके विधानका, योगोंकी कृष्टि करके होनेवाले योगनिरोधके स्वरूपका और कर्मक्षपणके विधानका वर्णन करता है ।

२४ अप्पाबहुग — अप्पाबहुगाणिओगद्वार २४ अल्पबहुत्थ — अल्पबहुत्थ अनुयोगद्वार
 अदीदसव्वाणिओगद्वारेसु अप्पाबहुग अतीत सपूर्ण अनुयोगद्वारोमें अल्पबहुत्थका
 परूवेदि । प्रतिपादन करता है ।

इन चौबीस अधिकारोके विषयका प्रतिपादन पुष्पदन्त और भूतबलिने कुछ अपने स्वतंत्र विभाग से किया है जिसके कारण उनकी कृति षट्खंडागम कहलाती है । उक्त चौबीस अधिकारोंमें पाचवा बंधन विषयकी दृष्टिसे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है । इसीके कुछ अवान्तर अधिकारोको लेकर प्रथम तीन खंडो अर्थात् जीवट्टाण, खुदाबध और बधसामित्तविचयकी रचना हुई है । इन तीन खंडोंमें समानता यह है कि उनमें जीवका बधककी प्रधानतासे प्रतिपादन किया गया है । उनका मगलाचरण भी एक है । इन्हीं तीन खंडोपर कुन्दकुन्दद्वारा परिकर्म नामक टीका लिखी कही गयी है । इन्हीं तीन खंडोके पारगत होनेसे अनुमानतः त्रैविद्यदेवकी उपाधि प्राप्त होती थी । इन्हीं तीन खंडोंका सक्षेप सिद्धान्तचक्रवर्ती नेमिचन्द्रकृत गोम्मटसारके प्रथम विभाग जीवकाडमें पाया जाता है ।

इन तीन खंडोंके पश्चात् उक्त चौबीस अधिकारोका प्ररूपण कृति वेदनादि क्रमसे किया गया है और प्रथम छह अर्थात् बधन तकके प्ररूपणको अधिकार व अवान्तर अधिकारकी प्रधानता-नुसार अगले तीन खंडों वेदणा, वगणा और महाबंधमे विभाजित कर दिया गया है । इन तीन खंडोंके विषय-विवेचनकी समानता यह है कि यहा बधनीय कर्मकी प्रधानतासे विवेचन किया गया है । इनमें अन्तिम महाबंध सबसे बड़ा है और स्वतंत्र पुस्तकारूढ है । जो उपर्युक्त तीन खंडोंके अतिरिक्त इन तीनोंमें भी पारंगत हो जाते थे, वे सिद्धान्तचक्रवर्ती पदके अधिकारी होते थे । सि. च. नेमिचन्द्रने इनका सक्षेप गोम्मटसार कर्मकाडमें किया है ।

भूतबलि रचित सूत्रग्रंथ छठवें बधन अधिकारके साथही समाप्त हो जाता है । शेष निबन्धनादि अठारह अधिकारोंका प्ररूपण धवला टीकाके रचयिता वीरसेनाचार्यकृत है, जिसे उन्होंने चूलिका कहकर पृथक् निर्देश कर दिया है ।

उपर्युक्त खंडविभागादिका परिचय प्रथम जिल्दकी भूमिकामें दिये हुए मानचित्रोसे स्पष्ट-तया समझमें आजाता है । उन चित्रोंमें बतलायी हुई जीवट्टाणकी नवमीं चूलिका गति-आगतिकी उत्पत्तिके विषयमें एक सूचना कर देना आवश्यक प्रतीत होता है । वह चूलिका धवलामें वियाह-पण्णत्ति से उत्पन्न हुई कही गयी है । मानचित्रमें व्याख्याप्रज्ञप्तिके आगे (पाचवा अंग) ऐसा लिख दिया गया है, क्योंकि यह नाम पाचवें अंगका पाया जाता है । किन्तु दृष्टिवादके प्रथम विभाग परिकर्मके पांच भेदोंमें भी पाचवा भेद वियाहपण्णत्ति नामका पाया जाता है । अतएव संभव है कि गति-आगति चूलिकाकी उत्पादक वियाहपण्णत्तिसे इसीका अभिप्राय हो ?

पाँचवें पूर्व णाणपवाद (ज्ञानप्रवाद) के एक पाहुडका उद्धार गुणधराचार्यद्वारा गाथारूपमें किया गया । णाणपवादकी वारह वस्तुओंमेंसे दशम वस्तुके तीसरे पाहुडका नाम 'पेज' या 'पेज्जदोस' या 'कसाय' पाहुड था । इसीका गुणधराचार्यने १८० गाथाओं (और ५३ विवरण-गाथाओंमें) उद्धार किया, जिसका नाम कसायपाहुड है । इसका परिचय स्वयं मूत्रकार व टीकाकारके शब्दोंमें संक्षेपतः इसप्रकार है—

पुञ्जमि पचममि दु दमसे वधुमि पाहुटे तदिये ।

पेज ति पाहुडमि दु हवदि कसायाण पाहुडणाम ॥ १ ॥

*

*

*

गाहामदे असीदे अथे पण्णारसधा विहत्तमि ।

वोच्छामि सुत्तगाहा जइ गाहा जमि अत्थमि ॥

टीका—सौलसपदसहस्रेहि वे कोडाकोडिगुरुसट्टिलक्ख-सत्तावण्णसहस्स-वेसद-वाणउदिकोटी-वासट्टिलक्ख-अट्टसहस्सक्खरूपणोहि ज भणिद गणहरदेवेण इदभूदिणा कमायपाहुड तमसीदि-सदगाहाहि चेव जाणावेमि ति गाहासदे असीदे ति पढमपइजा कदा । तत्थ अणेगेहि अत्थाहियारेहि परुविदं कसाय-पाहुडमेत्थ पण्णारसेहि चेव अत्थाहियारेहि परुवेमि ति जाणावणट्ठ अथे पण्णारसधा विहत्तमि ति विदियपइजा कदा । × × × ।

*

*

*

संपहि कसायपाहुडस्स पण्णारस-अत्थाहियार-परुणट्ठं गुणहरभडारओ दो सुत्तगाथाओ पठदि—

पेज्जदोस-विहत्तीट्ठिदि-अणुभागे च बंधगे चेय ।

वेदगएवजोरो वि य चउट्ठाण-विद्यज्जणे चे य ॥

सम्मत्त-देसविरयी संजम-उवसासणा च खवणा च ।

दसण-चरित्तमोहे अद्धापरिमाणणिट्ठेसो ॥

इसका तात्पर्य यह है कि यह कसायपाहुड पंचम पूर्वकी दसम वस्तुके पेज्जनामक तृतीय पाहुडसे उत्पन्न हुआ है । इन्द्रभूति गौतमकृत उस मूलग्रंथका परिमाण बहुत भारी था और अधिकार भी अनेक थे । प्रस्तुत कसायपाहुडमें १८० गाथाएं १५ अधिकारोंमें विभक्त हैं । गाथाओंमें सूचित पन्द्रह अधिकार जयधवलकारने तीन प्रकारसे बतलाये हैं । इनमेंसे जो विभाग उन्होंने चूर्णिकार यतिवृषभके आधारसे दिये हैं, वे निम्नप्रकार हैं—

१ पेज्जदोस

२ विहत्ती-ट्ठिदि-अणुभाग

३ बंधग (अकर्मबंध) }
४ संकम (कर्मबंध) } बंधग

५ उदय (कर्मोदय)

६ उदीरणा (अकर्मोदय) } वेदग

७ उवजोग

८ चउट्ठाण

९ वंजण	१३ चरित्तमोहणीयस्स उवसामणा	} संजम
१० दंसणमोहणीयरस्स उवसामणा	१४ " " " " " " " "	
११ " " " " " " " "	१५ अद्धापरिमाणणिदेम ।	
१२ देसविरदी		

इस प्राप्तके आगे पीछेका इतिहास संक्षेपमें व्यवलाकारने इसप्रकार दिया है—

‘ एसो अ थो विउल्लगिरिमन्थयन्थेण पच्चक्खीरुय-ति फालगोयर उट्ठेण वड्डमाणभडारण्ण गोठम-थेरस्स कहिदो । पुणो सो अ-थो आइरियपरंपराए आगतू गुणहरभडारय सपत्तो । पुणो तत्तो आइरिय-परंपराए आगतूण अज्जमंशु-नागहत्थीग भडारणाण मूल पत्तो । पुणो तेहि देहि वि क्रमेण जदिवसहभडा-रयस्स वक्खणिदो । तेण वि × × सिस्साणुगगहट्ट चुण्णिगसुत्ते लिहिदो ’ ।

अर्थात् इस कसायपाहुडका मूल विषय वर्धमान स्वामीने त्रिपुला वलपर गौतम गणधरको कहा । वही आचार्य-परंपरासे गुणधर भट्टारकको प्राप्त हुआ । उनसे आचार्य-परंपराद्वारा वही आर्यमखु और नागहस्ती आचार्योंके पास आया, जिन्होंने क्रमसे यतिवृषभ भट्टारकको उसका व्याख्यान किया । यतिवृषभने फिर उसपर चूर्णिसूत्र रचे ।

गुणधराचार्यकृत गाथारूप कसायपाहुड और यतिवृषभकृत चूर्णिसूत्र वीरसेन और जिनसेना-चार्यकृत जयवलामें प्रथित है जिसका परिमाण ६० हजार श्लोक है । इस टीकामें आर्यमखु और नागहस्तीके अलग अलग व्याख्यानके तथा उच्चारणाचार्यकृत वृत्तिसूत्रके भी अनेक उल्लेख पाये जाते हैं । यतिवृषभके चूर्णिसूत्रोंकी संख्या छह हजार और वृत्तिसूत्रोंकी बारह हजार बताई जाती है ।

नदीसूत्रमें पूर्वोक्त प्रभेदोंमें पाहुडों और पाहुडिकाओंका भी निम्नप्रकार उल्लेख है, किन्तु उनका विशेष परिचय कुछ नहीं पाया जाता—

‘ से ण अगट्ठयाए वारसमे अगे एगे सुअक्खधे चोइस पुउराइ, सखेज्जा वत्थू, सखेज्जा चूलवत्थू, सखेज्जा पाहुडा, सखेज्जा पाहुडपाहुडा, सखेज्जाओ पाहुडिआओ, सखेज्जाओ पाहुडपाहुडिआओ सखेज्जाइ पणमहम्मइ पयग्गेण सखेज्जा अक्खरा, अणत्ता गमा अणत्ता पज्जना आदि

६. ग्रंथका विषय

स प्ररूपणाके प्रथम भागमें आचार्य गुणस्थानों और मार्गणास्थानोंका विवरण कर चुके हैं । अब इस भागमें पूर्वोक्त विवरणके आश्रयसे व्यवलाकार वीरसेन स्वामी उन्हींका विशेष प्ररूपण करते हैं—

सपहि सगसुत्तविवरणसमत्ताणतर तेहिं परूवण भणिस्सामो । (५ ४११)

किन्तु इस विशेष प्ररूपणमे उन्होंने गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति आदि बीस प्ररूपणाओं द्वारा जीवोंकी परीक्षा की है। यह बीस प्ररूपणाओंका विभाग पूर्वोक्त सत्प्ररूपणाके सूत्रोंमें नहीं पाया जाता, और इसीलिये टीकाकारने एक शका उठाकर यह मतला दिया है कि सूत्रोंमें स्पष्ट-उल्लिखित न होने पर भी इन बीस प्ररूपणाओंका सूत्रकारकृत गुणस्थान और मार्गणास्थानोंके भेदोमे अन्तर्भाव हो जाता है, अतः ये प्ररूपणाएं सूत्रोक्त नहीं हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता (पृ ४१४)।

‘सूत्रेण सूचितार्थानां स्पष्टीकरणार्थं विवक्षितविधानेन प्ररूपणोच्यते । न पौनरुक्त्यादि कथञ्चित्तेषां भेदात्’ । (पृ ४१५)

इससे यह तो स्पष्ट है कि यह बीस प्ररूपणारूप विभाग पुष्पदन्ताचार्यकृत नहीं हैं। वह स्वयं ब्रह्माकारकृत भी नहीं हैं, क्योंकि उन्होंने उन प्ररूपणाओंका नागनिर्देश करनेवाली एक प्राचीन गाथाको ‘उक्तं च’ रूपमे उद्धृत किया है। इस निगागता प्राचीनतम निरूपण हमें यतिवृषभाचार्य कृत निधेयपण्णत्तिमें मिलता है। यथा—

गुण-जीवा पञ्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गगा कमसो ।

उवजोगा कहिदग्ग णारइयाणं जहाजोग्ग ॥२७३॥

✽

✽

✽

गुण-जीवा पञ्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गगा कमसो ।

उवजोगा कहिदग्ग एठाण कुमारदेवाणं ॥१८३॥

आदि.

किन्तु यह अभी निश्चयतः नहीं कहा जा सकता कि इस बीस प्ररूपणारूप विभागका आदिकर्ता कौन है ? यह विषय अन्वेषणीय है।

गुणस्थानो व मार्गणास्थानके अनेक भेद प्रभेदोंका विशिष्ट जीवोंकी अपेक्षासे सामान्य, पर्याप्त व अपर्याप्त रूप प्ररूपण करनेसे आलापोंकी सख्या कई सौ पर पहुँच जाती है। इस आलाप विभागका परिचय विषय—सूचीको देखनेसे मिल सकता है। अतः उस सम्बन्धमें यहाँ विशेष कथनकी आवश्यकता नहीं है। प्रथम भागकी भूमिकामे गुणस्थानो और मार्गणाओंका सामान्य परिचय देकर यह सूचित किया गया था कि अगले खंडमें विषयका विशेष विवेचन किया जायगा। किन्तु इस भागका कलेवर अपेक्षासे अधिक बढ़ गया है और प्रस्तावना भी अन्य उपयोगी विषयोंकी चर्चासे यथेष्ट विस्तृत हो चुकी है। अतः हम उक्त विषयके विशेष विवेचन करनेकी आकांक्षाका अभी फिर भी नियन्त्रण करते हैं।

७. रचना और भाषाशैली

प्रस्तुत ग्रंथविभागमें सूत्र नहीं है। सत्प्ररूपणाका जो विषय ओघ और आदेश अर्थात् गुणस्थान और मार्गणास्थानोंद्वारा प्रथम १७७ सूत्रोंमें प्रतिपादित हो चुका है उसीका यहा बीस प्ररूपणाओं द्वारा निर्देश किया गया है।

इस बीस प्रकारकी प्ररूपणाके आदिमें टीकाकारने 'ओघेण अत्थि मिच्छाङ्की० सिद्धा चेदि' इस प्रकारसे सूत्र दिया है और उमे ओघसूत्र कहा है। हमारी अ. प्रतिमें इसपर ७४, आ. में १७४, तथा स में १७५ की संख्या पायी जाती है जो उन प्रतियों की पूर्व सूत्रगणनाके क्रमसे है। पर स्पष्टत वह सूत्र पृथक् नहीं है, बबलाकारने पूर्वोक्त ९ से २३ तकके ओघ सूत्रोंका प्रकृत विषयकी बहासे उत्पत्ति बतलाने के लिये समष्टिरूपसे उल्लेख मात्र किया है।

इस भागमे गाथाएं भी बहुत थोड़ी पायी जाती है, जिसका कारण यहा प्रतिपादित विषयकी विशेषता है। अवतरण गाथाओंकी संख्या यहा केवल १३ है जिनमेंसे एक (न २२०) कुद-कुदके बोधपाहुडमे और दो (२२३, २२४) प्राकृत पचसप्रहमें* भी पायी जाती हैं। गाथा न. (२२८) 'उत्त च पिंडियाए' ऐसा कहकर उद्धृत की गई है। हमने इस गाथाकी खोज कराई, पर बीरसेवामंदिरके प परमानन्दजी शास्त्रीने हमें सूचित किया कि यह गाथा न तो प्राकृत पचसप्रह मे है न तिलोपपण्णतिमें और न श्वेताम्बरीय कर्मप्रकृति, पचसप्रह, जीवसमास विशेषावश्यक आदि ग्रन्थोंमें है। जान पडता है 'पिंडिका' नामका कोई प्राचीन ग्रथ रहा है जो अबतक अज्ञात है। इन तीन गाथाओंको छोडकर शेष सब कहीं जैसी की तैसी और कहीं किंचित् पाठभेद को लिये हुए गोम्मटसार जीवकांडमे भी संगृहीत है।

इस विभागमें संस्कृत केवल प्रारभमें थोड़ी सी पायी जाती है। शेष समस्त रचना प्राकृतमें ही है। पर यहा विषयकी विशेषता ऐसी है कि उसमें प्रतिपादन और विवेचनकी गुजा-इश कम है। अतएव जैसी साहित्यिक वाक्यशैली प्रथम विभागमें पायी जाती है वैसी यहा बहुत कम है। जहा कहीं शका-समाधानका प्रसंग आ गया है, वहाँ साहित्यिक शैली पायी जाती है। ऐसे शका समाधान इस विभागमें ३३ पाये जाते हैं। शेष भागमें तो गुणस्थान और मार्गणास्थानकी अपेक्षा जीवविशेषोमे गुणस्थान आदि बीस प्ररूपणाओंकी संख्या मात्र गिनायी गयी है, जिसमे वाक्य रचनाकी व्याकरणात्मक शुद्धिपर ध्यान नहीं दिया गया। पद कहीं सवि-भक्ति हैं और कहीं विभक्ति-रहित अपनेप्राति पदिक रूपमें। समास-बधन भी शिथिलसा पाया जाता है, उदाहरणार्थ 'आहारभयमेद्गुणसण्णा चेदि' (पृ ४१३)। चेदि से पूर्वके पद समास-

* यह ग्रंथ अभी अभी 'बीरसेवा मन्दिर सरसावा' द्वारा प्रकाशमें लाया जा रहा है। उसमें उक्त गाथा-ओंके होनेकी सूचना हमें वहाँके पं परमानन्दजी शास्त्री द्वारा मिली।

युक्त समझे जाय, या अलग अलग ? यदि अलग अलग लें तो वे सब विभक्तिहीन रह जाने हैं, यदि समासरूप ले तो 'च' की कोई सार्थकता नहीं रह जाती। संशोधनमें यह प्रयत्न किया गया है कि यथाशक्ति प्रतियोंके पाठको सुरक्षित रखते हुए जितने कम सुधारसे काम चल सके उतना कम सुधार करना। किंतु अविभक्तिक पदोंको जानबूझकर बिना यथेष्ट कारणके सविभक्तिक बनानेका प्रयत्न नहीं किया गया। इस कारण प्ररूपणाओमें बहुतायतसे विभक्तिहीन पद पाये जायगे।

इन प्ररूपणाओमें आलापोंके नामनिर्देश सम्भावतः पुनः पुनः आये हैं। प्रतियोमें इन्हें प्रायः सक्षेपतः आदिके अक्षर देकर बिन्दु रखकर ही सूचित किया है, जैसे 'गुणट्टाण' के स्थानपर गुण०, 'पञ्जत्तीओ' के स्थानपर प० आदि। यदि सब प्रतियोमें ये सक्षिप्त रूप एकसे होते, तो समझा जाता कि वे मूलादर्श प्रतिके अनुसार हैं, अतः मुद्रितरूपमें भी उन्हें वैसे ही रखना कदाचित् उपयुक्त होता। किन्तु किसी प्रतिमें एक अक्षर लिखकर, किसीमें दो अक्षर लिखकर आदि भिन्नरूपसे सक्षेप बनाये गये हैं और किसी प्रतिमें वे पूरे रूपमें भी लिखे हैं। इसप्रकार बिन्दुसहित साक्षिप्तरूप कारजाकी प्रतिमें सबसे अधिक और आराकी प्रतिमें सबसे कम हैं। इस अव्यवस्थाको देखते हुए आदर्श प्रतिमें बिन्दु है या नहीं, इस विषयमें शका हो जानेके कारण हमने इन साक्षिप्त रूपोंका उपयोग न करके पूरे शब्द लिखना ही उचित समझा।

प्रत्येक आलापमें बीस बीस प्ररूपणाएँ हैं। पर कहीं कहीं प्रतियोमें एक शब्दसे लगाकर पूरे आलाप तक भी छूटे हुए पाये जाते हैं। इनकी पूर्ति एक दूसरी प्रतियोसे हो गई है, किन्तु कहीं कहीं उपलब्ध सभी प्रतियोमें पाठ छूटे हुए हैं जैसा कि पाठ-टिप्पण व प्रति-मिलान और छूटे हुए पाठोंकी तालिकासे ज्ञात हो सकेगा। इन पाठोंकी पूर्ति विषयको देख समझकर कर्ताकी शैलीमें ही उन्हींके अन्वय आये हुए शब्दोंद्वारा करदी गई है। जहाँ ऐसे जोड़े हुए पाठ एक दो शब्दोंसे अधिक बड़े हैं वहाँ वे कोष्ठकके भीतर रख दिये गये हैं।

मूलमें जहाँ कोई विवाद नहीं है वहाँ प्ररूपणाओंकी प्रत्येक स्थानमें संख्या मात्र दी गई है। अनुवादमें सर्वत्र उन प्ररूपणाओंकी स्पष्ट सूचना कर देनेका प्रयत्न किया गया है और मूलका सावधानीसे अनुसरण करते हुए भी वाक्यरचना यथाशक्ति मुद्दावारेके अनुसार और सरल रखी गई है।

मूलमें जो आलाप आये हैं उनको और भी स्पष्ट करने तथा दृष्टिपातमात्रसे ज्ञेय बनानेके लिये प्रत्येक आलापका नकशा भी बनाकर उसी पृष्ठपर नीचे दे दिया गया है। इनमें संख्याएँ अंकित करनेमें सावधानी तो पूरी रखी गई है, फिर भी संभव है दृष्टिदोषसे दो चार जगह एकाध अंक अशुद्ध छप गया हो। पर मूल और अनुवाद साम्प्रदान होनेसे उनके कारण पाठकोंको कोई भ्रम न हो सकेगा। नकशोंका मिलान गोम्मतसारके प्रस्तुत प्रकरणसे भी कर लिया गया है।

सत्प्ररूपणा-आलापसूची

विषय	नकशा नं	पृष्ठ नं	विषय	नकशा नं	पृष्ठ नं.
ओष आलाप		४१५-४४८	आदेश आलाप		
सामान्य		४१५	१ गतिमार्गणा		
पर्याप्त	१	४२०	१ नरकगति		
अपर्याप्त	२	४२१	सामान्य	२८	४४८
१ मिथ्यादृष्टि			पर्याप्त	२९	४४९
सामान्य	३	४२३	अपर्याप्त	३०	४५०
पर्याप्त	४	४२४	मिथ्यादृष्टि		
अपर्याप्त	५	४२५	सामान्य	३१	४५१
२ सासादनसम्यग्दृष्टि			पर्याप्त	३२	४५१
सामान्य	६	४२६	अपर्याप्त	३३	४५२
पर्याप्त	७	४२६	सासादनसम्यग्दृष्टि	३४	४५३
अपर्याप्त	८	४२७	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	३५	४५३
३ सम्यग्मिथ्यादृष्टि	९	४२८	असंयतसम्यग्दृष्टि		
४ असंयतसम्यग्दृष्टि			सामान्य	३६	४५४
सामान्य	१०	४२८	पर्याप्त	३७	४५४
पर्याप्त	११	४२९	अपर्याप्त	३८	४५५
अपर्याप्त	१२	४३०	प्रथमपृथिवी		
५ सयतासंयत	१३	४३१	सामान्य	३९	४५६
६ प्रमत्तसंयत्त	१४	४३२	पर्याप्त	४०	४५७
७ अप्रमत्तसयत	१५	४३३	अपर्याप्त	४१	४५८
८ अपूर्वकरण	१६	४३४	मिथ्यादृष्टि		
९ अनिवृत्तिकरण			सामान्य	४२	४५९
प्रथम भाग	१७	४३५	पर्याप्त	४३	४५९
द्वितीय ,,	१८	४३६	अपर्याप्त	४४	४६०
तृतीय ,,	१९	४३६	सासादनसम्यग्दृष्टि	४५	४६१
चतुर्थ ,,	२०	४३७	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	४६	४६१
पंचम ,,	२१	४३८	असंयतसम्यग्दृष्टि—		
१० मूक्षमसाम्पराय	२२	४३८	सामान्य	४७	४६२
११ उपशान्तकपाय	२३	४३९	पर्याप्त	४८	४६३
१२ क्षीणकपाय	२४	४४०	अपर्याप्त	४९	”
१३ सयोगिकेवली	२५	४४०	द्वितीयपृथिवी		
१४ अयोगिकेवली	२६	४४५	सामान्य	५०	४६४
१५ सिद्ध	२७	४४७	पर्याप्त	५१	४६५

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
अपर्याप्त	५२	"	पर्याप्त	८०	"
मिथ्यादृष्टि			अपर्याप्त	८१	४८८
सामान्य	५३	४६६	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	८२	४८९
पर्याप्त	५४	४६७	असंयतसम्यग्दृष्टि		
अपर्याप्त	५५	"	सामान्य	८३	४८९
सासादनसम्यग्दृष्टि	५६	४६८	पर्याप्त	८४	४९०
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	५७	४६९	अपर्याप्त	८५	४९१
असंयतसम्यग्दृष्टि	५८	४६९	संयतासंयत	८६	४९१
तृतीयादि पृथिीके			पंचेन्द्रियतिर्य्यचपर्याप्त		४९२
आलाप		४७०	पंचेन्द्रियतिर्य्यचयोनिमती		
२ तिर्य्यचगति—			सामान्य	८७	४९२
सामान्य	५९	४७१	पर्याप्त	८८	४९३
पर्याप्त	६०	४७२	अपर्याप्त	८९	४९४
अपर्याप्त	६१	४७३	मिथ्यादृष्टि		
मिथ्यादृष्टि			सामान्य	९०	४९४
सामान्य	६२	४७४	पर्याप्त	९१	४९५
पर्याप्त	६३	४७५	अपर्याप्त	९२	४९६
अपर्याप्त	६४	"	सासादनसम्यग्दृष्टि		
सासादनसम्यग्दृष्टि			सामान्य	९३	४९७
सामान्य	६५	४७६	पर्याप्त	९४	४९७
पर्याप्त	६६	४७७	अपर्याप्त	९५	४९८
अपर्याप्त	६७	४७८	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	९६	४९८
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	६८	४७८	असंयतसम्यग्दृष्टि	९७	४९९
असंयतसम्यग्दृष्टि			त	९८	५००
सामान्य	६९	४७९	पंचेन्द्रियतिर्य्यचलब्ध—		
पर्याप्त	७०	४८०	पर्याप्तक	९९	५००
अपर्याप्त	७१	४८०	३ मनुष्यगति		
संयतासंयत	७२	४८१	सामान्य	१००	५०१
पंचेन्द्रियतिर्य्यच			पर्याप्त	१०१	५०२
सामान्य	७३	४८२	अपर्याप्त	१०२	५०३
पर्याप्त	७४	४८३	मिथ्यादृष्टि		
अपर्याप्त	७५	४८४	सामान्य	१०३	५०५
मिथ्यादृष्टि			पर्याप्त	१०४	५०५
सामान्य	७६	४८५	अपर्याप्त	१०५	५०६
पर्याप्त	७७	"	सासादनसम्यग्दृष्टि		
अपर्याप्त	७८	४८६	सामान्य	१०६	५०७
सासादनसम्यग्दृष्टि			पर्याप्त	१०७	"
सामान्य	७९	४८७	अपर्याप्त	१०८	५०८

विषय	नकशा नं	पृष्ठ नं.
सम्यग्मिथ्याद्वष्टि	१०९	५०८
असंयतसम्यग्द्वष्टि		
सामान्य	११०	५०९
पर्याप्त	१११	५१०
अपर्याप्त	११२	५१०
संयतासंयत	११३	५११
प्रमत्तसंयतादि		५१२
मनुष्यपर्याप्त		५१२
मनुष्यनी		
सामान्य	११४	५१३
पर्याप्त	११५	५१४
अपर्याप्त	११६	५१५
मिथ्याद्वष्टि		
सामान्य	११७	५१६
पर्याप्त	११८	५१७
अपर्याप्त	११९	"
सासादनसम्यग्द्वष्टि		
सामान्य	१२०	५१८
पर्याप्त	१२१	५१९
अपर्याप्त	१२२	"
सम्यग्मिथ्याद्वष्टि	१२३	५२०
असंयतसम्यग्द्वष्टि	१२४	५२०
संयतासंयत	१२५	५२१
प्रमत्तसंयत	१२६	५२२
अप्रमत्तसंयत	१२७	५२२
अपूर्वकरण	१२८	५२३
अनिवृत्तिप्रथमभाग	१२९	५२४
" द्वितीय भाग	१३०	५२४
" तृतीय "	१३१	५२५
" चतुर्थ "	१३२	५२६
" पंचम "	१३३	५२६
सूक्ष्मसाम्पराय	१३४	५२७
उपशान्तकपाय	१३५	५२८
क्षीणकपाय	१३६	५२८
सयोगिकेवली	१३७	५२९
अयोगिकेवली	१३८	५३०
लब्धपर्याप्तकमनुष्य	१३९	५३०

विषय	नकशा नं	पृष्ठ नं.
४ देवगति		
सामान्य	१४०	५३१
पर्याप्त	१४१	५३२
अपर्याप्त	१४२	५३६
मिथ्याद्वष्टि		
सामान्य	१४३	५३७
पर्याप्त	१४४	"
अपर्याप्त	१४५	५३८
सासादनसम्यग्द्वष्टि		
सामान्य	१४६	५३८
पर्याप्त	१४७	५३९
अपर्याप्त	१४८	५४०
सम्यग्मिथ्याद्वष्टि	१४९	५४०
असंयतसम्यग्द्वष्टि		
सामान्य	१५०	५४१
पर्याप्त	१५१	५४२
अपर्याप्त	१५२	"
भवनत्रिक		
सामान्य	१५३	५४३
पर्याप्त	१५४	५४४
अपर्याप्त	१५५	"
मिथ्याद्वष्टि		
सामान्य	१५६	५४५
पर्याप्त	१५७	५४६
अपर्याप्त	१५८	"
सासादनसम्यग्द्वष्टि		
सामान्य	१५९	५४७
पर्याप्त	१६०	५४८
अपर्याप्त	१६१	"
सम्यग्मिथ्याद्वष्टि	१६२	५४९
असंयतसम्यग्द्वष्टि	१६३	५५०
भवनत्रिक पुरुषवेदी		५५०
भवनत्रिक स्त्रीवेदी		"
सौधर्म-पेशान		
सामान्य	१६४	५५१
पर्याप्त	१६५	५५१
अपर्याप्त	१६६	५५२

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	१६७	५५३
पर्याप्त	१६८	५५४
अपर्याप्त	१६९	"
सासादनसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	१७०	५५५
पर्याप्त	१७१	५५६
अपर्याप्त	१७२	"
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१७३	५५७
असंयतसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	१७४	५५७
पर्याप्त	१७५	५५८
अपर्याप्त	१७६	५५९
सौधर्म पेशान पुरुषवेदी		५६०
सौधर्म पेशान स्त्रीवेदी		५६०
सानतकुमार माहेन्द्र		
सामान्य	१७७	५६१
पर्याप्त	१७८	५६२
अपर्याप्त	१७९	"
मिथ्यादृष्ट्यादि		५६३
ब्रह्म से नौ अवेयक		५६३
नौ अनुदिश पांच अनुत्तर		
सामान्य	१८०	५६४
पर्याप्त	१८१	५६५
अपर्याप्त	१८२	५६८
५ सिद्धगति		५६८
२ इन्द्रियमार्गणा		
१ एकेन्द्रिय		
सामान्य	१८३	५६९
पर्याप्त	१८४	५७०
अपर्याप्त	१८५	५७१
बादर एकेन्द्रिय		
सामान्य	१८६	५७१
पर्याप्त	१८७	५७२
अपर्याप्त	१८८	"
बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त		५७३
लब्धपर्याप्त		५७३

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
सूक्ष्म एकेन्द्रिय		
सामान्य	१८९	५७३
पर्याप्त	१९०	५७४
अपर्याप्त	१९१	"
सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त		५७५
" " लब्धपर्याप्त		"
२ द्वीन्द्रिय		
सामान्य	१९२	५७५
पर्याप्त	१९३	५७६
अपर्याप्त	१९४	५७७
द्वीन्द्रिय पर्याप्त		५७७
" लब्धपर्याप्त		"
३ त्रीन्द्रिय		
सामान्य	१९५	५७७
पर्याप्त	१९६	५७८
अपर्याप्त	१९७	५७९
त्रीन्द्रिय पर्याप्त		५७९
" लब्धपर्याप्त		"
४ चतुरिन्द्रिय		
सामान्य	१९८	५७९
पर्याप्त	१९९	५८०
अपर्याप्त	२००	५८१
चतुरिन्द्रियपर्याप्त		५८२
" लब्धपर्याप्त		"
५ पंचेन्द्रिय		
सामान्य	२०१	५८२
पर्याप्त	२०२	५८३
अपर्याप्त	२०३	५८४
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	२०४	५८४
पर्याप्त	२०५	५८५
अपर्याप्त	२०६	५८६
सासादनादि		५८७
असंज्ञीपंचेन्द्रिय		
सामान्य	२०७	५८७
पर्याप्त	२०८	"
अपर्याप्त	२०९	५८८
पंचेन्द्रियलब्धपर्याप्त	२१०	५८९

विषय	नकशा नं	पृष्ठ नं.
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१०९	५०८
असंयतसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	११०	५०९
पर्याप्त	१११	५१०
अपर्याप्त	११२	५१०
संयतासंयत	११३	५११
प्रमत्तसंयतादि		५१२
मनुष्यपर्याप्त		५१२
मनुष्यनी		
सामान्य	११४	५१३
पर्याप्त	११५	५१४
अपर्याप्त	११६	५१५
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	११७	५१६
पर्याप्त	११८	५१७
अपर्याप्त	११९	"
सासादनसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	१२०	५१८
पर्याप्त	१२१	५१९
अपर्याप्त	१२२	"
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१२३	५२०
असंयतसम्यग्दृष्टि	१२४	५२०
संयतासंयत	१२५	५२१
प्रमत्तसंयत	१२६	५२२
अप्रमत्तसंयत	१२७	५२२
अपूर्वकरण	१२८	५२३
अनिवृत्तिप्रथमभाग	१२९	५२४
" द्वितीय भाग	१३०	५२४
" तृतीय "	१३१	५२५
" चतुर्थ "	१३२	५२६
" पंचम "	१३३	५२६
सूक्ष्मसाम्पराय	१३४	५२७
उपशान्तकषाय	१३५	५२८
क्षीणकषाय	१३६	५२८
सयोगिकेवली	१३७	५२९
अयोगिकेवली	१३८	५३०
लब्ध्यपर्याप्तकमनुष्य	१३९	५३०

विषय	नकशा न	पृष्ठ न
४ देवगति		
सामान्य	१४०	५३१
पर्याप्त	१४१	५३२
अपर्याप्त	१४२	५३६
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	१४३	५३७
पर्याप्त	१४४	"
अपर्याप्त	१४५	५३८
सासादनसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	१४६	५३८
पर्याप्त	१४७	५३९
अपर्याप्त	१४८	५४०
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१४९	५४०
असंयतसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	१५०	५४१
पर्याप्त	१५१	५४२
अपर्याप्त	१५२	"
भवनत्रिक		
सामान्य	१५३	५४३
पर्याप्त	१५४	५४४
अपर्याप्त	१५५	"
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	१५६	५४५
पर्याप्त	१५७	५४६
अपर्याप्त	१५८	"
सासादनसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	१५९	५४७
पर्याप्त	१६०	५४८
अपर्याप्त	१६१	"
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१६२	५४९
असंयतसम्यग्दृष्टि	१६३	५५०
भवनत्रिक पुरुषवेदी		५५०
भवनत्रिक स्त्रीवेदी		"
सौधर्म-पेशान		
सामान्य	१६४	५५१
पर्याप्त	१६५	५५१
अपर्याप्त	१६६	५५२

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
मिथ्यादृष्टि			सूक्ष्म एकेन्द्रिय		
सामान्य	१६७	५५३	सामान्य	१८९	५७३
पर्याप्त	१६८	५५४	पर्याप्त	१९०	५७४
अपर्याप्त	१६९	"	अपर्याप्त	१९१	"
सासादनसम्यग्दृष्टि			सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त		५७५
सामान्य	१७०	५५५	" " लब्धपर्याप्त		"
पर्याप्त	१७१	५५६	२ द्वीन्द्रिय		
अपर्याप्त	१७२	"	सामान्य	१९२	५७५
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१७३	५५७	पर्याप्त	१९३	५७६
असंयतसम्यग्दृष्टि			अपर्याप्त	१९४	५७७
सामान्य	१७४	५५७	द्वीन्द्रिय पर्याप्त		५७७
पर्याप्त	१७५	५५८	" लब्धपर्याप्त		"
अपर्याप्त	१७६	५५९	३ त्रीन्द्रिय		
सौधर्म पेशान पुरुषवेदी		५६०	सामान्य	१९५	५७७
सौधर्म पेशान स्त्रीवेदी		५६०	पर्याप्त	१९६	५७८
सानत्कुमार माहेन्द्र			अपर्याप्त	१९७	५७९
सामान्य	१७७	५६१	त्रीन्द्रिय पर्याप्त		५७९
पर्याप्त	१७८	५६२	" लब्धपर्याप्त		"
अपर्याप्त	१७९	"	४ चतुरिन्द्रिय		
मिथ्यादृष्ट्यादि		५६३	सामान्य	१९८	५७९
ब्रह्म से नौ त्रैवेयक		५६३	पर्याप्त	१९९	५८०
नौ अनुदिश पांच अनुत्तर			अपर्याप्त	२००	५८१
सामान्य	१८०	५६४	चतुरिन्द्रिय पर्याप्त		५८२
पर्याप्त	१८१	५६५	" लब्धपर्याप्त		"
अपर्याप्त	१८२	५६८	५ पंचेन्द्रिय		
५ सिद्धगति		५६८	सामान्य	२०१	५८२
२ इन्द्रियमार्गणा			पर्याप्त	२०२	५८३
१ एकेन्द्रिय			अपर्याप्त	२०३	५८४
सामान्य	१८३	५६९	मिथ्यादृष्टि		
पर्याप्त	१८४	५७०	सामान्य	२०४	५८४
अपर्याप्त	१८५	५७१	पर्याप्त	२०५	५८५
यादर एकेन्द्रिय			अपर्याप्त	२०६	५८६
सामान्य	१८६	५७१	सासादनादि		५८७
पर्याप्त	१८७	५७२	असंख्यपंचेन्द्रिय		
अपर्याप्त	१८८	"	सामान्य	२०७	५८७
यादर एकेन्द्रिय पर्याप्त		५७३	पर्याप्त	२०८	"
" लब्धपर्याप्त		५७३	अपर्याप्त	२०९	५८८
			पंचेन्द्रियलब्धपर्याप्त	२१०	५८९

विषय	नकाशा न.	पृष्ठ नं.	विषय	नकाशा न.	पृष्ठ नं.
सङ्गीपचेन्द्रिय	२११	५८५	वादरसाधारणवनस्पति		
असङ्गीपचेन्द्रिय	२१२	५९०	सामान्य	२३१	६१८
६ अनिन्द्रिय		५९०	पर्याप्त	२३२	६१९
३ कायमार्गणा			अपर्याप्त	२३३	६२०
सामान्य	२१३	५९१	वादरसाधारणपर्याप्त		६२०
पर्याप्त	२१४	६०१	" लब्धपर्याप्त		"
अपर्याप्त	२१५	६०२	सूक्ष्मसाधारण		"
मिथ्यादृष्ट्यादि		६०४	६ त्रसकायिक		
१ पृथिवीकायिक			सामान्य	२३४	६२१
सामान्य	२१६	६०४	पर्याप्त	२३५	६२२
पर्याप्त	२१७	६०५	अपर्याप्त	२३६	६२३
अपर्याप्त	२१८	६०६	मिथ्यादृष्टि		
वादरपृथिवीकायिक			सामान्य	२३७	६२४
सामान्य	२१९	६०७	पर्याप्त	२३८	६२५
पर्याप्त	२२०	६०८	अपर्याप्त	२३९	६२६
अपर्याप्त	२२१	"	सासादनादि		६२७
वादरपृथिवीकायिकपर्याप्त		६०९	७ अकायिक	२४०	६२७
" लब्धपर्याप्त		"	त्रसकायिक पर्याप्त		६२७
सूक्ष्मपृथिवीकायिक		"	" लब्धपर्याप्त	२४१	"
२ अपकायिक		६०९	४ योगमार्गणा		
३ अशिकायिक		६१०	१ मनोयोगी	२४२	६२८
४ वायुकायिक		६११	मिथ्यादृष्टि	२४३	६२९
५ वनस्पतिकायिक			सासादन०	२४४	६३०
सामान्य	२२२	६१२	सम्यग्मिथ्यादृष्टि	२४५	६३०
पर्याप्त	२२३	६१३	असंयतसम्यग्दृष्टि	२४६	६३१
अपर्याप्त	२२४	"	संयतासंयत	२४७	६३२
प्रत्येकवनस्पतिकायिक			प्रमत्तसंयत	२४८	६३२
सामान्य	२२५	६१४	अप्रमत्तसंयतादि		६३३
पर्याप्त	२२६	६१५	सत्यमनोयोगी		"
अपर्याप्त	२२७	"	असत्यमृषामनोयोगी		"
प्रत्येकवनस्पतिकायिक पर्याप्त		६१६	मृषामनोयोगी	२४९	६३३
" " लब्धपर्याप्त		"	मिथ्यादृष्ट्यादि		६३४
वादरनिगोदप्रतिष्ठित		"	२ वचनयोगी	२५०	६३४
साधारण स्पतिकायिक			मिथ्यादृष्टि	२५१	६३५
सामान्य	२२८	६१६	सासादनादि		६३६
पर्याप्त	२२९	६१७	सत्यवचनयोगी		६३६
अपर्याप्त	२३०	६१८	मृषावचनयोगी		"

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
सत्यमृषावचनयोगी		"
असत्यमृषावचनयोगी		"
३ काययोगी		
सामान्य	२५२	६३७
पर्याप्त	२५३	६३८
अपर्याप्त	२५४	६३९
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	२५५	६४०
पर्याप्त	२५६	६४१
अपर्याप्त	२५७	"
सासादनसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	२५८	६४२
पर्याप्त	२५९	६४३
अपर्याप्त	२६०	"
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	२६१	६४४
असंयतसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	२६२	६४४
पर्याप्त	२६३	६४५
अपर्याप्त	२६४	६४६
संयतासंयत	२६५	६४६
प्रमत्तसंयत	२६६	६४७
अप्रमत्तसंयत	२६७	६४८
अपूर्वकरणादि		६४८
सयोगिकेवली	२६८	६४८
औद्धारिककाययोगी	२६९	६४९
मिथ्यादृष्टि	२७०	६५०
सासादनसम्यग्दृष्टि	२७१	६५१
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	२७२	६५१
असंयतसम्यग्दृष्टि	२७३	६५२
संयतासंयतादि		"
औद्धारिकमिश्रकाययोगी	२७४	६५३
मिथ्यादृष्टि	२७५	६५५
सासादनसम्यग्दृष्टि	२७६	६५६
असंयतसम्यग्दृष्टि	२७७	"
सयोगिकेवली	२७८	६५८
वैक्रियिककाययोगी	२७९	६६१
मिथ्यादृष्टि	२८०	६६२
सासादनसम्यग्दृष्टि	२८१	६६२

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	२८०	६६३
असंयतसम्यग्दृष्टि	२८३	"
वैक्रियिकमिश्रकाययोगी	२८४	६६४
मिथ्यादृष्टि	२८५	६६५
सासादनसम्यग्दृष्टि	२८६	६६५
असंयतसम्यग्दृष्टि	२८७	६६६
आहारिककाययोगी	२८८	६६७
आहारिकमिश्रकाययोगी	२८९	६६८
कार्मणकाययोगी	२९०	६६८
मिथ्यादृष्टि	२९१	६७०
सासादनसम्यग्दृष्टि	२९२	६७०
असंयतसम्यग्दृष्टि	२९३	६७१
सयोगिकेवली	३९४	६७२
४ अयोगी		६७२
५ वेदमार्गणा		
१ स्त्रीवेदी		
सामान्य	२९५	६७३
पर्याप्त	२९६	६७४
अपर्याप्त	२९७	"
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	२९८	६७५
पर्याप्त	२९९	६७६
अपर्याप्त	३००	"
सासादनसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	३०१	६७७
पर्याप्त	३०२	६७८
अपर्याप्त	३०३	"
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	३०४	६७९
असंयतसम्यग्दृष्टि	३०५	६७९
संयतासंयत	३०६	६८०
प्रमत्तसंयत	३०७	६८१
अप्रमत्तसंयत	३०८	६८२
अपूर्वकरण	३०९	६८२
अनिवृत्तिकरण	३१०	६८३
२ पुरुषवेदी		
सामान्य	३११	६८४
पर्याप्त	३१२	६८४

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
अपर्याप्त	३१३	६८५
मिथ्याद्वष्टि		
सामान्य	३१४	६८६
पर्याप्त	३१५	"
अपर्याप्त	३१६	६८७
सासादनसम्यग्द्वष्टि		६८८
३ नपुंसकवेदी		
सामान्य	३१७	६८८
पर्याप्त	३१८	६८९
अपर्याप्त	३१९	६९०
मिथ्याद्वष्टि		
सामान्य	३२०	६९०
पर्याप्त	३२१	६९१
अपर्याप्त	३२२	६९२
सासादनसम्यग्द्वष्टि		
सामान्य	३२३	६९३
पर्याप्त	३२४	"
अपर्याप्त	३२५	६९४
सम्यग्मिथ्याद्वष्टि	३२६	६९५
असंयतसम्यग्द्वष्टि		
सामान्य	३२७	६९५
पर्याप्त	३२८	६९६
अपर्याप्त	३२९	६९७
संयतासंयत	३३०	६९७
प्रमत्तसंयतादि		६९८
४ अपगतवेदी	३३१	६९८
अनिवृत्तिकरण		
द्वितीय भागादि		६९९
६ कपायमार्गणा		
शोधकपायी		
सामान्य	३३२	७००
पर्याप्त	३३३	७०१
अपर्याप्त	३३४	"
मिथ्याद्वष्टि		
सामान्य	३३५	७०२
पर्याप्त	३३६	७०३
अपर्याप्त	३३७	७०४

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
सासादनसम्यग्द्वष्टि		
सामान्य	३३८	७०४
पर्याप्त	३३९	७०५
अपर्याप्त	३४०	७०५
सम्यग्मिथ्याद्वष्टि	३४१	७०६
असंयतसम्यग्द्वष्टि		
सामान्य	३४२	७०७
पर्याप्त	३४३	"
अपर्याप्त	३४४	७०८
संयतासंयत	३४५	७०९
प्रमत्तसंयत	३४६	७०९
अप्रमत्तसंयत	३४७	७१०
अपूर्वकरण	३४८	७११
अनिवृत्तिकरण		
प्र० भा०	३४९	७११
" द्वि० भा०	३५०	७१२
मान, माया और		
लोभकपायी		७१२
अक्रपायी	३५१	७१३
उपशान्तकपायादि		७१४
७ ज्ञानमार्गणा		७१४
मति-श्रुत-अज्ञानी		
सामान्य	३५२	७१४
पर्याप्त	३५३	७१५
अपर्याप्त	३५४	७१६
मिथ्याद्वष्टि		
सामान्य	३५५	७१६
पर्याप्त	३५६	७१७
अपर्याप्त	३५७	७१८
सासादनसम्यग्द्वष्टि		
सामान्य	३५८	७१९
पर्याप्त	३५९	"
अपर्याप्त	३६०	७२०
विभंगज्ञानी	३६१	७२०
मिथ्याद्वष्टि	३६२	७२१
सासादनसम्यग्द्वष्टि	३६३	७२२
मतिश्रुतज्ञानी		

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
सामान्य	३६४	७२२
पर्याप्त	३६५	७२३
अपर्याप्त	३६६	७२४
असंयतसम्यग्दृष्टि—		
सामान्य	३६७	७२४
पर्याप्त	३६८	७२५
अपर्याप्त	३६९	७२६
संयतासंयतादि		७२६
अवधिज्ञानी		७२६
मनःपर्ययज्ञानी	३७०	७२७
प्रमत्तसंयतादि		७२९
केवलज्ञानी	३७१	७२९
सयोगी आदि		७३०
८ संयममार्गणा	३७२	७३०
प्रमत्तसंयत	३७३	७३१
अप्रमत्तसंयत	३७४	७३२
अपूर्वकरणादि		७३२
सामायिकशुद्धिसंयत	३७५	७३३
प्रमत्तसंयतादि		७३३
छेदोपस्थापनासंयत		"
परिहारशुद्धिसंयत	३७६	७३३
प्रमत्तसंयतादि		७३४
सूक्ष्मसाम्परायसंयत		७३५
यथाख्यातसंयत	३७७	७३५
उपशान्तकषायादि		७३५
असंयत		
सामान्य	३७८	७३६
पर्याप्त	३७९	"
अपर्याप्त	३८०	७३७
मिथ्यादृष्ट्यादि		७३८
९ दर्शनमार्गणा		
१ चक्षुदर्शनी		
सामान्य	३८१	७३८
पर्याप्त	३८२	७३९
अपर्याप्त	३८३	७४०
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	३८४	७४१
पर्याप्त	३८५	"

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
अपर्याप्त	३८६	७४२
सासादनसम्यग्दृष्ट्यादि		७४३
२ अक्षुदर्शनी		
सामान्य	३८७	७४३
पर्याप्त	३८८	७४३
अपर्याप्त	३८९	"
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	३९०	७४५
पर्याप्त	३९१	७४६
अपर्याप्त	३९२	७४७
सासादनसम्यग्दृष्ट्यादि		७४७
३ अवधिदर्शनी		
सामान्य	३९३	७४८
पर्याप्त	३९४	७४८
अपर्याप्त	३९५	७४९
असंयतसम्यग्दृष्ट्यादि		७५०
४ केवलदर्शनी		७५०
१० लेख्यामार्गणा		७५०
१ कृष्णलेख्या		
सामान्य	३९६	७५०
पर्याप्त	३९७	७५१
अपर्याप्त	३९८	७५२
मिथ्यादृष्टि		
सामान्य	३९९	७५३
पर्याप्त	४००	"
अपर्याप्त	४०१	७५४
सासादनसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	४०२	७५५
पर्याप्त	४०३	"
अपर्याप्त	४०४	७५६
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	४०५	७५७
असंयतसम्यग्दृष्टि		
सामान्य	४०६	७५७
पर्याप्त	४०७	७५८
अपर्याप्त	४०८	७५९
२ नीललेख्या		७५९
३ कापोतलेख्या		
सामान्य	४०९	७५९

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
पर्याप्त	४१०	७६०	अपर्याप्त	४४०	७८१
अपर्याप्त	४११	७६१	मिथ्याद्वष्टि		
मिथ्याद्वष्टि			सामान्य	४४१	७८१
सामान्य	४१२	७६२	पर्याप्त	४४२	७८२
पर्याप्त	४१३	७६२	अपर्याप्त	४४३	७८३
अपर्याप्त	४१४	७६३	सासादनसम्यग्द्वष्टि		
सासादनसम्यग्द्वष्टि			सामान्य	४४४	७८३
सामान्य	४१५	७६४	पर्याप्त	४४५	७८४
पर्याप्त	४१६	"	अपर्याप्त	४४६	७८५
अपर्याप्त	४१७	७६५	सम्यग्मिथ्याद्वष्टि	४४७	७८५
सम्यग्मिथ्याद्वष्टि	४१८	७६६	असंयतसम्यग्द्वष्टि		
असंयतसम्यग्द्वष्टि			सामान्य	४४८	७८६
सामान्य	४१९	७६६	पर्याप्त	४४९	७८६
पर्याप्त	४२०	७६७	अपर्याप्त	४५०	७८७
अपर्याप्त	४२१	७६८	संयतासंयत	४५१	७८८
४ तेजोलेख्या			प्रमत्तसंयत	४५२	७८८
सामान्य	४२२	७६८	अप्रमत्तसंयत	४५३	७८९
पर्याप्त	४२३	७६९	६ शुक्लेख्या		
अपर्याप्त	४२४	७७०	सामान्य	४५४	७९०
मिथ्याद्वष्टि			पर्याप्त	४५५	७९१
सामान्य	४२५	७७१	अपर्याप्त	४५६	"
पर्याप्त	४२६	"	मिथ्याद्वष्टि		
अपर्याप्त	४२७	७७२	सामान्य	४५७	७९२
सासादनसम्यग्द्वष्टि			पर्याप्त	४५८	७९३
सामान्य	४२८	७७३	अपर्याप्त	४५९	"
पर्याप्त	४२९	"	सासादनसम्यग्द्वष्टि		
अपर्याप्त	४३०	७७४	सामान्य	४६०	७९४
सम्यग्मिथ्याद्वष्टि	४३१	७७५	पर्याप्त	४६१	७९५
असंयतसम्यग्द्वष्टि			अपर्याप्त	४६२	७९६
सामान्य	४३२	७७६	सम्यग्मिथ्याद्वष्टि	४६३	७९६
पर्याप्त	४३३	"	असंयतसम्यग्द्वष्टि		
अपर्याप्त	४३४	७७७	सामान्य	४६४	७९७
संयतासंयत	४३५	७७७	पर्याप्त	४६५	७९८
प्रमत्तसंयत	४३६	७७८	अपर्याप्त	४६६	"
अप्रमत्तसंयत	४३७	७७९	संयत	४६७	७९९
५ पञ्चलेख्या			संयत	४६८	७९९
सामान्य	४३८	७७९	असंयत	४६९	८००
पर्याप्त	४३९	७८०	अपूर्वकरणादि		८०१

विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं.	पृष्ठ नं.
७ अलेक्ष्य		८०१	अपर्याप्त	४९४	८१९
११ भव्यमार्गणा			असंयतसम्यग्दृष्टि		
भव्यसिद्धिक	"	"	सामान्य	४९५	८२०
अभव्यसिद्धिक			पर्याप्त	४९६	"
सामान्य	४७०	८०१	अपर्याप्त	४९७	८२१
पर्याप्त	४७१	८०२	संयतासंयत	४९८	८२१
अपर्याप्त	४७२	८०३	प्रमत्तसंयत	४९९	८२२
भव्याभव्य-विमुक्त		८०३	अप्रमत्तसंयत	५००	८२३
१२ सम्यक्त्वमार्गणा			अपूर्वकरणादि		८२५
सामान्य	४७३	८०३	मिथ्यात्वादि		८२५
पर्याप्त	४७४	८०४	१३ सङ्गिमार्गणा		
अपर्याप्त	४७५	८०५	१ संज्ञी		
असंयतसम्यग्दृष्ट्यादि		८०६	सामान्य	५०१	८२५
१ क्षायिकसम्यग्दृष्टि			पर्याप्त	५०२	८२६
सामान्य	४७६	८०७	अपर्याप्त	५०३	८२७
पर्याप्त	४७७	८०८	मिथ्यादृष्टि		
अपर्याप्त	४७८	"	सामान्य	५०४	८२७
असंयतसम्यग्दृष्टि			पर्याप्त	५०५	८२८
सामान्य	४७९	८०९	अपर्याप्त	५०६	८२९
पर्याप्त	४८०	८१०	सासादनसम्यग्दृष्टि		
अपर्याप्त	४८१	८११	सामान्य	५०७	८२९
संयतासंयत	४८२	८११	पर्याप्त	५०८	८३०
प्रमत्तसंयतादि		८१२	अपर्याप्त	५०९	"
२ वेदकसम्यग्दृष्टि			सम्यग्मिथ्यादृष्टि	५१०	८३१
सामान्य	४८३	८१२	असंयतसम्यग्दृष्टि		
पर्याप्त	४८४	८१३	सामान्य	५११	८३२
अपर्याप्त	४८५	"	पर्याप्त	५१२	८३२
असंयतसम्यग्दृष्टि			अपर्याप्त	५१३	८३३
सामान्य	४८६	८१४	संयतासंयतादि		८३३
पर्याप्त	४८७	८१५	२ असंज्ञी		
अपर्याप्त	४८८	"	सामान्य	५१४	८३४
संयतासंयत	४८९	८१६	पर्याप्त	५१५	"
प्रमत्तसंयत	४९०	८१६	अपर्याप्त	५१६	८३५
अप्रमत्तसंयत	४९१	८१७	१४ आहारमार्गणा		
३ उपशमसम्यग्दृष्टि			सामान्य	५१७	८३६
सामान्य	४९२	८१८	पर्याप्त	५१८	८३७
पर्याप्त	४९३	८१८	अपर्याप्त	५१९	८३८

विषय	नकशा नं	पृष्ठ नं.	विषय	नकशा नं	पृष्ठ नं.
मिथ्यादृष्टि			अप्रमत्तसंयत	५३२	८४६
सामान्य	५२०	८३९	अपूर्वकरण	५३३	८४७
पर्याप्त	५२१	"	अनिवृत्तिकरण	५३४	"
अपर्याप्त	५२२	८४०	सूक्ष्मसाम्पराय	५३५	८४८
सासादनसम्यग्दृष्टि			उपशान्तकपाय	५३६	८४९
सामान्य	५२३	८४०	क्षीणकपाय	५३७	"
पर्याप्त	५२४	८४१	सयोगिकेवली	५३८	८५०
अपर्याप्त	५२५	८४२	अनाहारी	५३९	८५१
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	५२६	"	मिथ्यादृष्टि	५४०	८५२
असंयतसम्यग्दृष्टि			सासादनसम्यग्दृष्टि	५४१	"
सामान्य	५२७	८४३	असंयतसम्यग्दृष्टि	५४२	८५३
पर्याप्त	५२८	"	सयोगिकेवली	५४३	८५४
अपर्याप्त	५२९	८४४	अयोगिकेवली	५४४	"
संयतासंयत	५३०	८४५	सिद्धभगवान्	५४५	८५५
प्रमत्तसंयत	५३१	"			

सत्प्ररूपणाके

आलापान्तर्गत विशेष विषयोंकी सूची

क्रम नं	विषय	पृष्ठ नं.	क्रम नं	विषय	पृष्ठ नं.
१	प्ररूपणाका स्वरूप और भेद- निरूपण	४११	८	अपर्याप्त कालमें तीनों सम्यक्त्वोंके होनेका कारण	४३०
२	प्राणका स्वरूप और प्राणोंका पृथक् निर्देश कथन	४१२	९	भावलेख्याके स्वरूपमें मतभेद और उसका निराकरण	४३१
३	संज्ञाके भेद और उनका पृथक् निर्देश	४१३	१०	अप्रमत्तसंयतके तीन सज्ञाओंके होनेमें हेतु	४३३
४	उपयोगका स्वरूप और उसका पृथक् निर्देश	४१३	११	अपूर्वकरण गुणस्थानमें वचनयोग और काययोगके होनेका कारण	४३४
५	प्ररूपणाओंका सूत्रोक्तत्व-अनुक्तत्व- विचार और भेदाभेद निरूपण	४१४	१२	उपशान्तकपायादि गुणस्थानोंमें शुक्लेश्या होनेका कारण	४३९
६	अपर्याप्तकालमें द्रव्यलेख्या कापोत और शुक्ल ही क्यों होती है, इस बातका विचार	४२२	१३	कपाट, प्रतर और लोकपूरण समु- दातगत केवलीके पर्याप्त-अप- र्याप्तत्वका विचार	४४१
७	अपर्याप्त कालमें छहों भावलेख्या- ओंके होनेका कारण	४२२	१४	भावोन्द्रियका लक्षण और केवलीके उसके अभावका समर्थन	४४४

क्रम नं.	विषय	पृष्ठ नं.	क्रम नं.	विषय	पृष्ठ नं.
१५	अयोगिकेवलीके एक आयुप्राणका समर्थन	४४५		सम्यग्दृष्टि जीवोंके भवसे छहों	
१६	कालाकालाभास द्रव्यलेश्याका स्वरूप	४४८	३१	लेश्याओंके अस्तित्वका प्रतिपादन	६५६
१७	तिर्थचोंके अपर्याप्तकालमें क्षायिक और क्षायोपशमिक सम्यक्त्वका समर्थन	४८१		औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगि-केवलीके आयु और कायबल प्राणोंके अतिरिक्त शेष प्राणोंके अभावका समर्थन	६५८
१८	संयतासंयत तिर्थचोंके क्षायिक-सम्यक्त्वके अभावका कारण	४८२	३२	औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगि-केवलीके केवल एक कापोतलेश्या होनेका समर्थन	६६०
१९	अयोगिकेवलीके अनाहारकत्व-समर्थन	५०३	३३	आहारककाययोगी जीवोंके स्त्रीवेद नपुंसकवेद, मनःपर्ययज्ञान और परिहारविशुद्धि संयमके अभावके कारणका प्रतिपादन	६६७
२०	असंयतसम्यक्त्वी मनुष्यके अपर्याप्त कालमें एक पुरुषवेद तथा भावलेश्याओंके होनेका कारण	५१०	३४	कार्मणकाययोगी जीवोंके अनाहार-कत्वका समर्थन	६६९
२१	मनुष्यनियोंके आहारकशरीर न होनेका कारण	५१२	३५	स्त्रीवेदी प्रमत्तसंयतके परिहार-संयमादिके अभावका प्रतिपादन	६८१
२२	देवोंके पर्याप्तकालमें छहों द्रव्य-लेश्याओंका समर्थन	५३२	३६	विशुद्धित ज्ञान और दर्शनमार्ग-णाके आलाप कहनेपर शेष ज्ञान और दर्शनके नहीं बतानेके कारण का प्रतिपादन	७२६
२३	देवोंके अपर्याप्तकालमें उपशम-सम्यक्त्वका सद्भाव-समर्थन	५५९	३७	मनःपर्ययज्ञानके साथ द्वितीयोप-शमसम्यक्त्वके होने और प्रथमो-शमसम्यक्त्वके नहीं होनेका कारण	७२७
२४	अनुदिशादि देवोंके पर्याप्तकालमें उपशमसम्यक्त्वके अभावका विशिष्ट समर्थन	५६६	३८	कृष्णलेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्त-कालमें वेदकसम्यक्त्वके अस्तित्वका प्रतिपादन	७५२
२५	जीवसमासोंके एकसे लगाकर ५७ भेदों तकका निरूपण	५९१	३९	शुक्ललेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके औदारिकमिश्रकाययोगके अभावका प्रतिपादन	७९४
२६	बादर जलकायिक जीवोंके वर्णका विचार	६०९	४०	उपशमसम्यक्त्वीके मनःपर्ययज्ञानके सद्भाव-असद्भावका विचार	८२२
२७	मनोयोगियोंके वचन और काय-प्राणके अस्तित्वका समर्थन	६२८	४१	संयमादि मार्गणाओंमें असंयमादि विपक्षी भावोंके बतानेका कारण	८२५
२८	सयोगिकेवलीके जीवसमासके अस्तित्वका समर्थन	६५३			
२९	औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके द्रव्यसे एक कापोतलेश्या अथवा छहों लेश्याएं और भावसे छहों लेश्याओंके अस्तित्वका प्रतिपादन	६५३			
३०	औदारिकमिश्रकाययोगी असंयत				

शुद्धि पत्र

(पुस्तक-१)

(पुस्तक-२)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२७	२ [हि]	पीले सरसों	श्वेत सरसों
६८	७ [हि]	हम दोनों	हम दोनों
			साधु
१०३	६ [हि]	इन सबकी दशाका	इन दशोंका
११०	१३ [हि]	निर्गुण ही है	निर्गुण ही है, सर्वगत ही है,
१३८	१९ [हि]	नामकर्मका उदय	नामकर्मका सत्त्व
१७५	३ [मूल]	नान्यन्तरेण	तान्यन्तरेण
१८२	११ [हि]	११ वीं पंक्तिसे आगे	x
x शका-क्षपकश्रेणीमें होनेवाले परिणामोंमें कर्मोंका क्षपण कारण है. और उपशमश्रेणीमें होनेवाले परिणामोंमें कर्मोंका उपशमन कारण है, इसलिए इन भिन्न भिन्न परिणामोंमें एकता कैसे बन सकती है ?			
समाधान-नहीं, क्योंकि, क्षपक और उपशमक जीवोंके होनेवाले उन परिणामोंमें अपूर्वत्वके प्रति समानता पाई जाती है इससे उनमें एकता बन जाती है।			
२३०	७ [हि]	अपेक्षा पर पदार्थसे भी	अपेक्षा भी पर पदार्थसे
२४०	२ [मूल]	-मिति	-मिति।
११	१ [हि]	चाहिये।	चाहिये। अर्थात् वनस्पतितकके जीवोंके एक स्पर्शनेन्द्रिय होती है।
३१८	५ [हि]	पूर्ण होनेकी	पूर्ण नहीं होनेकी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४२१	२	छम्भेद द्विदा	छम्भेदद्विदा
४२८	८	तिण्णिवेद	निण्णिवेद
४३१	६	केइ	केइ
४४३	२० [हि]	और संयता-संयतोंके	संयतासंयत और संयतोंके
४४६	६ [हि]	होने हैं।	होते हैं। यह प्राण अल्प प्राण है या अप्रधान है।
४५०	९ [हि]	कृतस्यकृचेदक-	कृतकृत्यवेदक-
४५३	८	तिहि	तीहि
४५९	२२	मिथ्यादृष्टि	मिथ्यादृष्टि सामान्य
५०६	नं. १०४ स.	६	स. १
५६९	३	संजदासंजदा	संजदासंजदा
५७०	८	णवुंसयवेद	णवुंसयवेद
५९२	२ (टि)	पाठव्युत्क्रमः	पाठव्युत्क्रमः
७५२	न ३९८	द. १	द. ३
२ (परि. १)	१६	(परि. भा २) १६	(परि. भा २) १५
६ (परि. २)	९		२२८ लेस्ता य द्व्वभावं ७८८ (पिडिका ?)

संतपरुवणा-आलाप



सिरि-भगवंत-पुष्पदंत-भूदबलि-पणीदे

छकरवंडागमे

जीवट्टाणं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरिय-विरइया टीका

धवला

संपहि संत-सुत्त-विवरण-समचाणंतरं तेसिं परूवणं भणिस्सामो । परूवणा
णाम किं उच्चं होदि ? ओघादेसेहि गुणेषु जीवसमासेसु पज्जत्तीसु पाणेषु सण्णासु
गदीसु इंदिएसु काएसु जोगेसु वेदेसु कसाएसु पाणेषु संजमेसु दंसणेसु लेस्सासु भविएसु
अभविएसु सम्मत्तेसु सण्णि-असण्णीसु आहारि-अणाहारीसु उवजोगेसु च पज्जत्तापज्जत्त-
वेसेसणेहि विसेसिऊण जा जीव-परिक्खा सा परूवणा णाम । उच्चं च—

गुण जीवा पज्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गणाओ य ।

उवजोगो वि य कमसो वीस तु परूवणा भणिया ॥२१७॥

सत्प्ररूपणाके सूत्रोंका विवरण त हो जानेके अनन्तर अब उनकी प्ररूपणाका चर्चन
करते हैं—

शंका—प्ररूपणा किसे कहते हैं ?

समाधान—सामान्य और विशेषकी अपेक्षा गुणस्थानोंमें, जीवस ोंमें, पर्याप्तियोंमें,
प्राणोंमें, संज्ञाओंमें, गतियोंमें, इन्द्रियोंमें, कार्योंमें, योगोंमें, वेदोंमें, कषायोंमें, ज्ञानोंमें, संयमोंमें,
दर्शनोंमें, लेइयाओंमें, भव्योंमें, अभव्योंमें, सम्यक्त्वोंमें, सङ्गी-असंज्ञियोंमें, आहारी-अनाहारियोंमें
और उपयोगोंमें पर्याप्त और अपर्याप्त विशेषणोंसे विशेषित करके जो जीवोंकी परीक्षा की जाती
है, उसे प्ररूपणा कहते हैं । कहा भी है—

गुणस्थान, जीव स, पर्याप्ति, , , चौदह मार्गणार्थ और उपयोग,
प्रकार क्रमसे वीस प्ररूपणार्थ कही गई हैं ॥ २१७ ॥

१ गो. बी २.

सेसाणं परूवणाणमत्थो वुत्तो । पाण-सण्णा-उवजोग-परूवणाणमत्थो वुत्तदे । प्राणिति जीवति एभिरिति प्राणाः । के ते ? पञ्चेन्द्रियाणि मनोबलं वाग्वलं कायबलं उच्छ्वासनिश्वासौ आयुरिति । नैतेषामिन्द्रियाणामेकेन्द्रियादिष्वन्तर्भावः; चक्षुरादिकषोपशमनिबन्धनानामिन्द्रियाणामेकेन्द्रियादिजातिभिः साम्याभावात् । नेन्द्रियपर्याप्तावन्तर्भावः; चक्षुरिन्द्रियाद्यावरणक्षयोपशमलक्षणेन्द्रियाणां क्षयोपशमापेक्षया बाह्यार्थग्रहणशक्त्युत्पत्तिनिमित्तपुद्गलप्रचयस्य चैकत्वविरोधात् । न च मनोबलं मनःपर्याप्तावन्तर्भवति; मनोवर्गणास्कन्धनिष्पन्नपुद्गलप्रचयस्य तस्मादुत्पन्नात्मबलस्य चैकत्वविरोधात् । नापि वाग्वलं भाषापर्याप्तावन्तर्भवति; आहारवर्गणास्कन्धनिष्पन्नपुद्गलप्रचयस्य तस्मादुत्पन्नायाः भाषावर्गणास्कन्धानां श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यपर्यायेण परिणमनशक्तेश्च साम्याभावात् । नापि कायबलं शरीरपर्याप्तावन्तर्भवति; वीर्यान्तरायजनितक्षयोपशमस्य खलरसभागनिमित्तशक्तिनिबन्धनपुद्गलप्रचयस्य चैकत्वाभावात् । तथोच्छ्वासनिश्वासप्राणपर्याप्त्योः कार्यकारणयोरात्मपुद्गलोपादा-

वीस प्ररूपणाओंमेंसे तीन प्ररूपणाओंको छोड़कर शेष प्ररूपणाओंका अर्थ पहले कह आये हैं, अतः यहां पर प्राण, संज्ञा, और उपयोग इन तीन प्ररूपणाओंका अर्थ कहते हैं। द्वारा जीव जीता है उन्हें प्राण कहते हैं ।

शंका—वे प्राण कौनसे हैं ?

समाधान—पांच इन्द्रियां, मने ; वचनबल, कायबल, उच्छ्वास-निश्वास और आयु ये दश प्राण हैं ।

इन पांचों इन्द्रियोंका एकेन्द्रियजाति आदि पांच जातियोंमें अन्तर्भाव नहीं होता है; क्योंकि, चक्षुरिन्द्रियावरण आदि कर्मोंके क्षयोपशमके निमित्तसे उत्पन्न हुई इन्द्रियोंकी एकेन्द्रियजाति आदि जातियोंके साथ समानता नहीं पाई जाती है । उसीप्रकार उक्त पांचों इन्द्रियोंका इन्द्रियपर्याप्तिमें भी अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, चक्षुरिन्द्रिय आदिको आवरण करनेवाले कर्मोंके क्षयोपशमस्वरूप इन्द्रियोंको और क्षयोपशमकी अपेक्षा बाह्य पदार्थोंको ग्रहण करनेकी शक्तिके उत्पन्न करनेमें निमित्तभूत पुद्गलोंके प्रचयको एक मान लेनेमें विरोध आता है । उसीप्रकार मनोबलका मनःपर्याप्तिमें भी अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, मनोवर्गणाके स्कन्धोंसे उत्पन्न हुए पुद्गलप्रचयको और उससे उत्पन्न हुए आत्मबल (मनोबल) को एक में विरोध आता है । तथा वचनबल भी भाषापर्याप्तिमें अन्तर्भूत नहीं होता है, क्योंकि, आहारवर्गणाके स्कन्धोंसे उत्पन्न हुए पुद्गलप्रचयका और उससे उत्पन्न हुई भाषावर्गणाके स्कन्धोंका श्रोत्रेन्द्रियके द्वारा ग्रहण करने योग्य पर्यायसे परिणमन करनेरूप शक्तिका परस्पर का अभाव है । तथा कायबलका भी शरीरपर्याप्तिमें अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, वीर्यान्तरायके उदयाभाव और उपशमसे उत्पन्न हुए क्षयोपशमकी और खल-रसभागकी निमित्तभूत शक्तिके कारण पुद्गलप्रचयकी एकता नहीं पाई जाती है । इसीप्रकार उच्छ्वासनिश्वास प्राण कार्य है और आत्मोपादानकारणक है तथा उच्छ्वासनिः पर्याप्ति कारण है और पुद्गलोपा-

नयोर्भेदोऽभिधातव्य इति ।

सण्णा चउव्विहा आहार-भय-मेहुण-परिग्रह-सण्णा चेदि । मैथुनसंज्ञा वेदस्या-
न्तर्भवतीति चेन्न, वेदत्रयोदयसामान्यनिबन्धनमैथुनसंज्ञाया वेदोदयविशेषलक्षणवेदस्य
चैकत्वानुपपत्तेः । परिग्रहसंज्ञापि न लोभेनैकत्वमास्कन्दति; लोभोदयसामान्यस्यालीढ-
बाह्यार्थलोभतः परिग्रहसंज्ञामादधानतो भेदात् । यदि चतस्रोऽपि संज्ञा आलीढबाह्यार्थाः,
अप्रमत्तानां संज्ञाभावः स्यादिति चेन्न, तत्रोपचारतस्तत्सत्त्वाभ्युपगमात् । स्वपरग्रहण-
परिणाम उपयोगः । न स ज्ञानदर्शनमार्गणयोरन्तर्भवति; ज्ञानदृगावरणकर्मक्षयोपशमस्य
तदुभयकारणस्योपयोगत्वविरोधात् ।

अथ स्यादियं विंशतिविधा प्ररूपणा किमु सूत्रेणोक्ता उत नोक्तेति ? किं चातः ?
यदि नोक्ता, नेयं प्ररूपणा भवति; सूत्रानुक्तप्रतिपादनात् । अथोक्ता, जीवसमासप्राणपर्या-

दाननिमित्तक है, अतएव इन दोनोंमें भेद समझ लेना चाहिये ।

संज्ञा चार प्रकारकी है, आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रहसंज्ञा ।

शंका—मैथुनसंज्ञा वेदमें अन्तर्भाव हो जायगा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, तीनों वेदोंके उदय सामान्यके निमित्तसे उत्पन्न हुई
मैथुनसंज्ञा और वेदोंके उदय-विशेष स्वरूप वेद, इन दोनोंमें एकत्व नहीं बन सकता है । इसीप्रकार
परिग्रहसंज्ञा भी लोभकषायके साथ एकत्वको प्राप्त नहीं होती है, क्योंकि, बाह्य पदार्थोंको
विषय करनेवाला होनेके कारण परिग्रहसंज्ञाको धारण करनेवाले लोभसे लोभकषायके उदय-
रूप सामान्य लोभका भेद है । अर्थात् बाह्य पदार्थोंके निमित्तसे जो लोभ होता है उसे परिग्रह-
संज्ञा कहते हैं, और लोभकषायके उदयसे उत्पन्न हुए परिणामोंको लोभ कहते हैं ।

शंका—यदि ये चारों ही संज्ञाएं बाह्य पदार्थोंके संसर्गसे उत्पन्न होती हैं तो अ-
गुणस्थानवर्ती जीवोंके संज्ञाओंका अभाव हो जाना चाहिये ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अप्रमत्तोंमें उपचारसे उन संज्ञाओंका सद्भाव स्वीकार
किया गया है ।

स्व और परको ग्रहण करनेवाले परिणामविशेषको उपयोग कहते हैं । वह उपयोग
ज्ञानमार्गणा और दर्शनमार्गणमें अन्तर्भूत नहीं होता है, क्योंकि, ज्ञान और दर्शन इन दोनोंके
कारणरूप ज्ञानावरण और दर्शनावरणके क्षयोपशमको उपयोग माननेमें विरोध आता है ।

शंका—यह वीस प्रकारकी प्ररूपणा रही आओ, किन्तु यह बतलाइये कि यह प्ररूपणा
सूत्रानुसार कही गई है, या नहीं ?

प्रतिशंका—इस प्रश्नसे क्या प्रयोजन है ?

शंका—यदि सूत्रानुसार नहीं कहीं गई है तो यह प्ररूपणा नहीं हो सकती है,
क्योंकि, यह सूत्रमें नहीं कहे गये विषयका प्रतिपादन करती है । और यदि सूत्रानुसार
कही गई है, तो जीवसमास, प्राण, पर्याप्ति, उपयोग और संज्ञाप्ररूपणाका मार्गणाओंमें

पुष्ट्युपयोगसंज्ञानां मार्गणासु यथान्तर्भावो भवति तथा वक्तव्यमिति । न द्वितीयपक्षोक्त-
दोषोऽनभ्युपगमात् । प्रथमपक्षेऽन्तर्भावो वक्तव्यश्चेदुच्यते । पर्याप्तिजीवसमासाः काये-
न्द्रियमार्गणयोर्निलीनाः; एकद्वित्रिचतुःपञ्चेन्द्रियसूक्ष्मबादरपर्याप्तापर्याप्तभेदानां तत्र प्रति-
पादितत्वात् । उच्छ्वासमाषामनोबलप्राणाश्च तत्रैव निलीनाः; तेषां पर्याप्तिकार्यत्वात् ।

यबलप्राणोऽपि योगमार्गणातो निर्गतः; बललक्षणत्वाद्योगस्य । आयुःप्राणो गतौ
निलीनः; द्वयोरन्योन्याविनाभावित्वात् । इन्द्रियप्राणा ज्ञानमार्गणायां निलीनाः; भावेन्द्रियस्य
ज्ञानावरणक्षयोपशमरूपत्वात् । आहारे या तृष्णा काक्षा साहारसंज्ञा । सा च रतिरूपत्वा-
न्मोहपर्यायः । रतिरपि रागरूपत्वात्मायालोभयोरन्तर्भवति । ततः कषायमार्गणाया-
माहारसंज्ञा द्रष्टव्या । भयसंज्ञा भयात्मिका । भयञ्च क्रोधमानयोरन्तर्लीनम्; द्वेषरूपत्वात् ।
जो भयसंज्ञापि कषायमार्गणाप्रभवा । मैथुनसंज्ञा वेदमार्गणाप्रभेदः; स्त्रीपुंनपुंसकवेदानां
तीव्रोदयरूपत्वात् । परिग्रहसंज्ञापि कषायमार्गणोद्भूता; बाह्यार्थालीढलोभरूपत्वात् । साका-

जिसप्रकार अन्तर्भाव होता है उसप्रकार कथन करना चाहिये ?

समाधान—दूसरे पक्षमें दिया गया दूषण तो यहां पर आता नहीं है, क्योंकि, वैसा

। नहीं गया है । तथा प्रथम पक्षमें जो जीवसमास आदिके चौदह मार्गणाओंमें अन्तर्भाव
करनेकी बात कही है, सो कहा जाता है । पर्याप्ति और जीवसमास प्ररूपणा काय और इन्द्रिय
मार्गणामें अन्तर्भूत हो जाती हैं, क्योंकि, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय,
सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त और अपर्याप्तरूप भेदोंका उक्त दोनों मार्गणाओंमें प्रतिपादन किया गया
है । उच्छ्वासनिःश्वास, वचनबल और मनोबल, इन तीन प्राणोंका भी उक्त दोनों मार्गणाओंमें

भाव होता है, क्योंकि, ये तीनों प्राण पर्याप्तियोंके कार्य हैं । कायबलप्राण भी योगमार्ग-
णासे निकला है, क्योंकि, योग काय, वचन और मनोबलस्वरूप होता है । आयुप्राण गति-
मार्गणामें अन्तर्भूत है, क्योंकि, आयु और गति ये दोनों परस्पर अविनाभावी हैं । अर्थात्
क्षित गतिके उदय होने पर तज्जातीय आयुका उदय होता है और विवक्षित आयुके उदय
होने पर तज्जातीय गतिका उदय होता है । इन्द्रियप्राण ज्ञानमार्गणामें अन्तर्लीन हो जाते हैं, क्योंकि,
भावेन्द्रियां ज्ञानावरणके क्षयोपशमरूप होती हैं । आहारके विषयमें जो तृष्णा या आकांक्षा
होती है उसे आहारसंज्ञा कहते हैं । वह रतिस्वरूप होनेसे मोहकी पर्याय (भेद) है । रति
भी रागरूप होनेके कारण माया और लोभमें अन्तर्भूत होती है । इसलिये कषायमार्गणामें आहार-
संज्ञा समझना चाहिये । भयसंज्ञा भयरूप है, और भय द्वेषरूप होनेके कारण क्रोध और मानमें
अन्तर्भूत है, इसलिये भयसंज्ञा भी कषायमार्गणासे उत्पन्न हुई समझना चाहिये । मैथुनसंज्ञा
वेदमार्गणाका प्रभेद है, क्योंकि, वह मैथुनसंज्ञा स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदके तीनों उदयरूप
है । परिग्रहसंज्ञा भी कषायमार्गणासे उत्पन्न हुई है, क्योंकि, यह संज्ञा बाह्य पदार्थोंमें व्याप्त
लोभरूप है । साकार उपयोग ज्ञानमार्गणामें और अनाकार उपयोग दर्शनमार्गणामें

१ इन्द्रिकाए लोणा जीवा पञ्जति आणमासमाणो । जोगे काओ पाणे अन्खा गदिमगणे आऊ ॥ गो. जी. ५

२ मायालोहे रदिपुच्चाहार कोहमाणगग्धि भय । वेदे मेहुणसण्णा लोहग्धि परिग्गहे सण्णा ॥ गो. जी. ६.

रोपयोगो ज्ञानमार्गणायामनाकारोपयोगो दर्शनमार्गणायां (अन्तर्भवति) तयोर्ज्ञानदर्शन-
रूपत्वात् । न पौनरुक्त्यमपि; कथञ्चित्तेभ्यो भेदात् । प्ररूपणायां किं प्रयोजनमिति
चेदुच्यते, क्षेत्रेण सूचितार्थानां स्पष्टीकरणार्थं विंशतिविधानेन प्ररूपणोच्यते ।

तत्थ 'ओघेण अत्थि मिच्छाइट्ठी सिद्धा० चेदि' एदस्स ओघ-सुत्तस्स ताव
प्ररूपणा वुच्चदे । तं जहा- *अत्थि चोदस्स गुणट्ठाणाणि चोदस्स-गुणट्ठाणादीद-गुणट्ठाणं
पि अत्थि । अत्थि चोदस्स जीवसमासा । के ते ? एइंदिया दुविहा वादरा सुहुमा ।

अन्तर्भूत होते हैं, क्योंकि, वे दोनों ज्ञान और दर्शनरूप ही हैं । ऐसा होते हुए भी उक्त प्ररू-
पणाओंके स्वतन्त्र कथन करनेमें पुनरुक्ति दोष भी नहीं आता है, क्योंकि, मार्गणाओंसे उक्त
प्ररूपणाएँ कथचित् भिन्न हैं ।

शंका—प्ररूपणा करनेमें क्या प्रयोजन है ?

समाधान—सूत्रके द्वारा सूचित पदार्थोंके स्पष्टीकरण करनेके लिये बीस प्रकारसे
प्ररूपणा कही जाती है ।

'सामान्यसे मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि,
संयतासंयत, प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्वकरणप्रविष्ट-शुद्धि-संयतोंमें उपशमक और क्षपक,
अनिवृत्तिकरण प्रविष्ट-शुद्धि-संयतोंमें उपशमक और क्षपक, सूक्ष्मसांपराय-प्रविष्ट-शुद्धि-संयतोंमें
उपशमक और क्षपक, उपशान्तकषाय-वीतराग-छद्मस्थ, क्षीणकषाय-वीतराग छद्मस्थ, सयोग-
केवली और अयोगकेवली जीव होते हैं । तथा सिद्ध भी होते हैं।' पहले इस सामान्य सूत्रकी
प्ररूपणा कहते हैं । वह इसप्रकार है—चौदहों गुणस्थान हैं और चौदह गुणस्थानोंसे अतीत-
गुणस्थान भी है । चौदहों जीवसमास हैं ।

शंका—वे चौदहों जीवसमास कौनसे हैं ?

१ सागारो उवजोगो णाणे मग्गहि दसणे मग्गे । अणगारो उवजोगो लीणो चि जिणेहिं णिदिट्ठ ॥ गो. जी. ७.

२ जी स तू ९-२३

*

सामान्य जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.जी	प	प्रा	स ग	ह. का. यो	वे. क. हा. स	द	ले	म.	स.	स.	आ	उ.
१४ १४	६५ ६अ.	१०, ७	४ ४	५ ६	१५ ३	४ ८	७ ४	६ ६	२ ६	२ २	२ २	२ २
१४ १४	५५ ५अ	९, ७	४ ४	५ ६	१५ ३	४ ८	७ ४	६ ६	२ ६	२ २	२ २	२ २
१४ १४	४५ ४अ	८, ६	४ ४	५ ६	१५ ३	४ ८	७ ४	६ ६	२ ६	२ २	२ २	२ २
	अ. प.	७, ५	क्षीण स.	क्षीण स.	अपुन. वे.	अकषा	कल	कल	अल	अल	अल	अल
	अ. प.	६, ४	क्षीण स.	क्षीण स.	अपुन. वे.	अकषा	कल	कल	अल	अल	अल	अल
	अ. प.	४, ३	क्षीण स.	क्षीण स.	अपुन. वे.	अकषा	कल	कल	अल	अल	अल	अल
	अ. प.	४, २	क्षीण स.	क्षीण स.	अपुन. वे.	अकषा	कल	कल	अल	अल	अल	अल
	अ. प.	१	क्षीण स.	क्षीण स.	अपुन. वे.	अकषा	कल	कल	अल	अल	अल	अल
	अ. प.	अ प्रा	क्षीण स.	क्षीण स.	अपुन. वे.	अकषा	कल	कल	अल	अल	अल	अल

बादरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । सुहुमा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । वीइंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । तीइंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । चउरिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । पंचिंदिया दुविहा सण्णिणो असण्णिणो । सण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता । असण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि' । एदे चोइस जीवसमासा अदीद-जीवसमासा वि अत्थि । अत्थि छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ अदीद-पज्जत्ती वि अत्थि । आहारपज्जत्ती सरीरपज्जत्ती इंदियपज्जत्ती आणापाणपज्जत्ती भासापज्जत्ती मणपज्जत्ती चेदि । एदाओ छ पज्जत्तीओ सण्णिपज्जत्ताणं । एदेसिं चेव अपज्जत्तकाले एदाओ चेव असमत्ताओ छ अपज्जत्तीओ भवंति । मणपज्जत्तीए विणा एदाओ चेव पंच पज्जत्तीओ असण्णि-पंचिंदिय-पज्जत्तप्पहुडि जाव वीइंदिय-पज्जत्ताणं भवंति । तेसिं चेव अपज्जत्ताणं एदाओ चेव अणिप्पणाओ पंच अपज्जत्तीओ वुच्चंति । एदाओ चेव भासा-मणपज्जत्तीहि विणा चत्तारि पज्जत्तीओ एइंदिय-पज्जत्ताणं भवंति । एदेसिं चेव अपज्जत्तकाले एदाओ चेव असंपुण्णाओ चत्तारि अपज्जत्तीओ भवंति । एदासिं छण्हम-

समाधान—' एकेन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, बादर और सूक्ष्म । बादर जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । सूक्ष्म जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । द्वीन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । त्रीन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । चतुरिन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके हैं, संज्ञी और असंज्ञी । संज्ञी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त । असंज्ञी जीव दो प्रकारके हैं, पर्याप्त और अपर्याप्त ' । इसप्रकार ये चौदह स होते हैं ।

अतीत-जीवसमास भी जीव होते हैं । छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां और चार अपर्याप्तियां हैं । तथा अतीतपर्याप्ति भी है । आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इन्द्रियपर्याप्ति, आनापाणपर्याप्ति, भाषापर्याप्ति और मनःपर्याप्ति ये छह पर्याप्तियां हैं । ये छहों पर्याप्तियां संज्ञी-पर्याप्तिके होती हैं । इन्हीं जीवोंके अपर्याप्त-कालमें पूर्णताको प्राप्त नहीं हुई ये ही छह अपर्याप्तियां होती हैं । मनःपर्याप्तिके विना उक्त पांचों ही पर्याप्तियां असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्तोंसे लेकर द्वीन्द्रिय-पर्याप्तक जीवोंतक होती हैं । अपर्याप्तक अवस्थाको प्राप्त उन्हीं जीवोंके अपूर्णताको ये ही पांच अपर्याप्तियां होती हैं । भाषापर्याप्ति और मनःपर्याप्ति विना ये ही चार पर्याप्तियां एकेन्द्रिय पर्याप्तोंके होती हैं । इन्हीं एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालमें अपूर्णताको ये ही चार अपर्याप्तियां होती हैं । इन छह पर्याप्तियोंके अभावको अतीतपर्याप्ति

भावो अदीद-पज्जत्ती।णाम । उत्तं च—

आहार-सरीरिंदिय-पज्जत्ती आणपाण-भास-मणो ।

चत्तारि पंच छव्वि य एइंदिय-विगल-सण्णीणं ॥२१८॥

जह पुण्णापुण्णाइ गिह-घड-वत्थाइयाइ दब्बाइं ।

तह पुण्णापुण्णाओ पज्जत्तियरा मुणेयब्बा ॥ २१९ ॥

अत्थि दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छप्पाण सत्त पाण पंच पाण छप्पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दोण्णि पाण एक पाण अदीद-पाणो वि अत्थि । चक्खु-सोद-घाण-जिह्म-फासमिदि पंचिंदियाणि, मणबल वचिबल यबल इदि तिण्णि बला, आणापाणो आऊ चेदि एदे दस पाणा । उत्तं च—

पंच वि इंदिय-पाणा मण-वचि-काएण तिण्णि बलपाणा ।

आणप्पाणप्पाणा आउगपाणेण होति दस पाणा ॥ २२० ॥

क े हैं । । भी है—

आहार, शरीर, इन्द्रिय, आनापान, भाषा और मन ये छह पर्याप्तियां हैं । उनमेंसे एकैन्द्रिय जीवोंके चार, वि त्रय और असंज्ञी-पंचेन्द्रियोंके पांच और संज्ञी जीवोंके छह पर्याप्तियां होती हैं ॥ २१८ ॥

वि प्रकार गृह, घट और आदि द्रव्य पूर्ण और अपूर्ण दोनों प्रकारके होते हैं, उसीप्रकार जीव भी पूर्ण और अपूर्ण दो प्रकारके होते हैं उनमेंसे पूर्ण जीव पर्याप्तक और अपूर्ण जीव अपर्याप्तक कहलाते हैं ॥ २१९ ॥

दश प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात प्राण, आठ प्राण, छह प्राण, सात प्राण, प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, चार प्राण, दो प्राण और एक प्राण होते हैं तथा अतीतप्राणस्थान भी है । चक्षुरिन्द्रिय, श्रोत्रेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय ये पांच इन्द्रियां, मनोबल, वचनबल, कायबल ये तीन बल, श्वासोच्छ्वास और आयु ये दश प्राण होते हैं । कहा भी है—

पांचों इन्द्रियां, मनोबल, वचनबल और कायबल श्वासोच्छ्वास और आयु ये दश प्राण हैं ॥ २२० ॥

एदे दस पाणा पंचिंदिय-सण्णिपज्जत्ताणं । आणापाण-भासा-मणेहि विणा सण्णि-
पंचिंदिय-अपज्जत्ताणं सत्त पाणा भवंति । दसण्हं पाणाण मज्झे मणेण विणा णव पाणा
असण्णि-पंचिंदिय-पज्जत्ताणं भवंति । एदेसिं चेव अपज्जत्ताणं भासा-आणापाण-
पाणेहि विणा सत्त पाणा भवंति । पुव्विल्ल-णव-पाणेसु सोदिंदिय-पाणे अवणिदे चदुरिंदिय-
पज्जत्तस्स अट्ठ पाणा भवंति । एदेसिं चेव चदुरिंदिय-अपज्जत्ताणं आणावाण-भासाहि विणा
छप्पाणा भवंति । पुव्विल-अट्ठण्हं पाणाणं मज्झे चर्क्खिदि ए अवणिदे तीइंदिय-पज्जत्तयस्स
सत्त पाणा भवंति । तेसु सत्तसु आणावाण-भासापाणे अवणिदे तीइंदिय-अपज्जत्तयस्स
पंच पाणा भवंति । तीइंदियस्स वुत्त-सत्तण्हं पाणाणं मज्झे घाणिदि ए अवणिदे बीइंदिय-
पज्जत्तयस्स छप्पाणा भवंति । तेसु छसु आणावाण-भासाहि विणा बीइंदिय-अपज्जत्तयस्स
चत्तारि पाणा भवंति । बीइंदिय-पज्जत्तयस्स वुत्त-छण्हं पाणाणं मज्झे जिड्ढिभदियपाणे
भासापाणे अवणिदे एइंदिय-पज्जत्तयस्स चत्तारि पाणा भवंति । तेसु आणावाणपाणे
अवणिदे एइंदिय अपज्जत्तयस्स तिण्णि पाणा भवंति । उत्तं च—

दस सण्णीण पाणा सेसेगूणंतिमस्स वे ऊणा ।

पज्जत्तेसिदरेसु य सत्त दुगे सेसगेगूणा^१ ॥ २२१ ॥

पूर्वोक्त दश चन्द्रिय-संज्ञी-पर्याप्तकोंके होते हैं । आनापान, वचनबल और
मने इन तीन के विना शेष सात प्राण संज्ञी-पंचेन्द्रिय-अपर्याप्तोंके होते हैं । दश
प्राणोंमेंसे लके विना शेष नौ प्राण असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्तकोंके होते हैं । और अपर्याप्त
अवस्थाको प्राप्त इन्हीं जीवोंके वचनबल और आनापान प्राणके विना शेष सात प्राण होते हैं ।
पूर्वोक्त नौ प्राणोंमेंसे श्रोत्रेन्द्रिय प्राणको कम कर देने पर शेष आठ प्राण चतुरिन्द्रिय पर्याप्त
जीवोंके होते हैं । इन्हीं चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंके आनापान और वचनबलके विना शेष
छह प्राण होते हैं । पूर्वोक्त आठ प्राणोंमेंसे चक्षु इन्द्रियके कम कर देने पर शेष सात प्राण
त्रीन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके होते हैं । उन सात प्राणोंमेंसे आनापान और वचनबल प्राणके कम
कर देने पर शेष पांच प्राण त्रीन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं । त्रीन्द्रिय जीवोंके कहे गये
सात प्राणोंमेंसे घ्राणेन्द्रियके कम कर देने पर शेष छह प्राण द्वीन्द्रिय पर्याप्तकोंके होते हैं । उन छह
प्राणोंमेंसे आनापान और व लके कम कर देने पर शेष चार प्राण द्वीन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके
होते हैं । द्वीन्द्रिय-पर्याप्तकोंके कहे गये छह प्राणोंमेंसे रसनेन्द्रिय-प्राण और वचनबल-
प्राणके कम कर देने पर शेष चार प्राण एकेन्द्रिय-पर्याप्तकोंके होते हैं । उनमेंसे आनापान प्राणके
कम कर देने पर शेष तीन प्राण एकेन्द्रिय-अपर्याप्तकोंके होते हैं । कहा भी है—

संज्ञी जीवोंके दश प्राण होते हैं । शेष जीवोंके एक एक प्राण कम करना चाहिये ।

१ इदियकायाऊणि य पुण्णापुण्णेषु पुण्णगे आणा । वीइदियादिपुण्णे वचीमणो सण्णिपुण्णव ॥ गो जी १३२

२ गो. जी. १३३

दसण्हं पाणाणमभावो अदीदपाणो णाम । अत्थि चत्तारि सण्णा, खीणसण्णा वि अत्थि । काओ चत्तारि सण्णाओ इदि चे ? वुच्चदे-आहारसण्णा भयसण्णा मेहुणसण्णा परिग्रहसण्णा चेदि । एदासिं चउण्हं सण्णाणं अभावो खीणसण्णा णाम । अत्थि चत्तारि गदीओ, सिद्धगदी वि अत्थि । एइंदियादी पंच जादीओ, अदीद-जादी वि अत्थि । अत्थि पुढविकायादी छक्काया, अदीदकाओ वि अत्थि । अत्थि पण्णरह जोगा, अजोगो वि अत्थि । अत्थि तिण्णि वेदा, अवगदवेदो वि अत्थि । अत्थि चत्तारि कसाया, अकसाओ वि अत्थि । अत्थि अट्ठ णाणाणि । अत्थि सत्त संजमा, णेव संजमो णेव संजमासंजमो णेव असंजमो वि अत्थि । अत्थि चत्तारि दंसणाणि । दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, अलेस्सा वि अत्थि । भवसिद्धिया वि अत्थि, अभवसिद्धिया वि अत्थि, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया वि अत्थि । छ सम्मत्ताणि अत्थि । सण्णिणो वि अत्थि, असण्णिणो वि अत्थि, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि । आहारिणो

किन्तु अन्तिम अर्थात् एकेन्द्रिय जीवोंके दो प्राण कम होते हैं । यह पर्याप्तकोंका है । किन्तु अपर्याप्तक जीवोंमें संज्ञी और असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके सात, सात प्राण होते हैं । तथा शेष जीवोंके उत्तरोत्तर एक एक कम प्राण होते हैं ॥ २२१ ॥

विशेषार्थ—केवली भगवान्के पांच इन्द्रियां और मनोबलको छोड़कर शेष चार होते हैं । तथा योग निरोधके समय वचनबलका अभाव हो जाने पर कायबल आन और आयु ये तीन होते हैं और अन्तमें कायबल और आयु ये दो प्राण होते हैं । तथा चौदहवें गुणस्थानमें केवल एक आयुप्राण होता है ।

इन दशों प्राणोंके अभावको अतीत-प्राण कहते हैं । चारों संज्ञापं होती हैं और क्षीण-संज्ञा भी होती है ।

शंका—वे चार संज्ञापं कौनसी हैं ?

समाधान—आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रहसंज्ञा ये चार पं हैं ।

इन चारों संज्ञाओंके अभावको क्षीणसंज्ञा कहते हैं ।

चार गतियां होती हैं और सिद्धगति भी है । एकेन्द्रियादि पांच जातियां होती हैं और अतीत-जातिरूप स्थान भी है । पृथिवीकाय आदि छह काय होते हैं और अतीतकाय स्थान भी है । पन्द्रह योग होते हैं और अयोग स्थान भी है । तीन वेद होते हैं और अपगतवेद स्थान भी है । चार कषायें होती हैं और अकषाय स्थान भी है । आठ ज्ञान होते हैं । सात संयम होते हैं और संयम, संयमासंयम और असंयम रहित भी स्थान है । चार दर्शन होते हैं । द्रव्य और भावके भेदसे छह लेख्यापं होती हैं और अलेख्यास्थान भी है । भव्यसिद्धिक जीव होते हैं, अभव्य-सिद्धिक जीव होते हैं और भव्यसिद्धिक तथा अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है । छह सम्पत्त्व होते हैं । संज्ञी भी होते हैं, असंज्ञी भी होते हैं और संज्ञी तथा, असंज्ञी

वि अत्थि, अणाहारिणो वि अत्थि । सागारुवजुत्ता वि अत्थि, अणागारुवजुत्ता वि अत्थि, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वि अत्थि ।

पञ्जत्त-विसिद्धे ओघे भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणद्वान्णाणि, अदीदगुणद्वान्णं गत्थि; पञ्जत्तेसु तरस संभवाभावादो । सत्त जीवसमासा, अदीदजीवसमासो गत्थि; छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ चत्तारि पञ्जत्तीओ, अदीदपञ्जत्ती गत्थि; दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छपाण चत्तारि पाण, अदीदपाणो गत्थि; चत्तारि सण्णा, खीणसण्णा वि अत्थि; चत्तारि गदीओ, सिद्धगदी गत्थि; एइंदियादी पंच जादीओ अत्थि, अदीदजादी गत्थि; पुढवीकायादी छकाया अत्थि, अकाओ गत्थि; ओरालिय-वेउव्विय-आहारमिस्स-कम्मइयकायजोगेहि विणा एक्कारह जोग, अजोगो वि अत्थि; तिण्णि वेद, अवगदवेदो वि अत्थि; चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अत्थि; अट्ठ णाण, सत्त संजम, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो गत्थि; चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि

विकल्प रहित भी स्थान होता है । आहारक भी होते हैं और अनाहारक भी होते हैं । साकार उपयोगसे युक्त भी होते हैं अनाकार उपयोगसे भी युक्त होते हैं और साकार उपयोग तथा अनाकार उपयोग इन दोनोंसे युगपत् युक्त भी होते हैं ।

पर्याप्त अवस्थासे युक्त जीवोंके ओघालाप कहने पर—चौदहो गुणस्थान होते हैं । अतीत-गुणस्थानरूप स्थान नहीं होता है, क्योंकि, पर्याप्तकोंमें अतीत-गुणस्थान अर्थात् सिद्ध अवस्थाकी संभावना नहीं है । पर्याप्तसंबन्धी सातों जीवसमास होते हैं, किन्तु अतीत जीव-

(सिद्ध अवस्था) रूप स्थान नहीं है । सत्ती जीवोंके छहों पर्याप्तियां, असत्ती और विकल-त्रयोंके पांच पर्याप्तियां और एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियां होती हैं, किन्तु अतीत-पर्याप्तिरूप स्थान नहीं होता है । सत्तीके दशों प्राण, असत्तीके नौ प्राण, चतुरिन्द्रियके आठ प्राण, त्रीन्द्रियके सात प्राण, द्वीन्द्रियके छह प्राण, और एकेन्द्रियके चार प्राण होते हैं, किन्तु अतीत प्राणरूप स्थान नहीं है । चारों संज्ञायें होती हैं और क्षीणसन्नारूप स्थान भी होता है । चारों गतियां होती हैं, किन्तु सिद्धगति नहीं होती है । एकेन्द्रियादि पांचों जातियां होती हैं, किन्तु अतीत-जातिरूप स्थान नहीं होता है । पृथिवीकाय आदि छहों काय होते हैं, किन्तु अकाय-रूप स्थान नहीं होता है । औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियकमिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोगके बिना ग्यारह योग होते हैं और अयोग-स्थान भी होता है । तीनों वेद होते हैं और अपगतवेद-स्थान भी होता है । चारों कषायें होती हैं और अकषाय-स्थान भी होता है । आठों ज्ञान होते हैं । सातों संयम होते हैं किन्तु संयम, संयमासंयम और असंयम इन तीनोंसे रहित स्थान नहीं होता है । चारों दर्शन होते हैं । द्रव्य और भावके भेदसे छहों लेख्यायें होती

छ लस्साओ, अलेस्सा वि अत्थि; दब्बेण छ लेस्सेत्ति भणिदे सरीररस छव्वण्णा घेत्तव्वाX ।
भावेण छ लेस्सा त्ति भणिदे जोग-कसाया छब्भेदं ट्ठिदा घेत्तव्वा* । भवसिद्धिया अभव-
सिद्धिया, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया णत्थि; छ सम्मत्ताणि, सण्णिणो
असण्णिणो, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि; आहारिणो अणाहारिणो,
सागारुवजुत्ता वा अणागारुवजुत्ता वा, सागारणगारेहि जुगवदुवजुत्ता वि अत्थि' ।

સંપદિ અપજ્ઞત્તિ-પજ્ઞાય-ધિસિદ્ધે ઓઘે ભળ્લમાળે અત્થિ મિચ્છાઈટ્ટી સાસણસમ્મા-
ઈટ્ટી અસંજદસમ્માઈટ્ટી પમત્તસંજદા સજોગિકેવલિ ત્તિ પંચ ગુણદ્વાળાણિ, સત્ત જીવ-
સમાસા, છ અપજ્ઞત્તીઓ પંચ અપજ્ઞત્તીઓ ચત્તારિ અપજ્ઞત્તીઓ, સત્ત પાણ સત્ત પાણ

हैं और अलेक्ष्यास्थान भी होता है। द्रव्यसे छहों लेक्ष्याएं होती हैं ऐसा कथन करने पर शरीरसंबन्धी छह वर्णोंका ग्रहण करना चाहिये। भावसे छहों लेक्ष्याएं होती हैं ऐसा कथन करने पर योग और कषायोंकी छह भेदोंको प्राप्त मिश्रित अवस्थाका ग्रहण करना चाहिये। भव्यसिद्धिक होते हैं और अभव्यसिद्धिक होते हैं, किंतु भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान नहीं होता है। छहों सम्यक्त्व होते हैं। संज्ञी होते हैं, असंज्ञी भी होते हैं, तथा तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानकी अपेक्षा संज्ञी और असंज्ञी विकल्प रहित भी जीव होते हैं। आहारक होते हैं और अनाहारक भी होते हैं। साकार उपयोगवाले होते हैं, अनाकार उपयोगवाले होते हैं और साकार तथा अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

अब अपर्याप्ति-पर्यायसे युक्त अपर्याप्तक जीवोंके, ओघालाप कहने पर—मिथ्यादाष्टि, सासादनसम्यग्दष्टि, असंयतसम्यग्दष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान होते हैं । अपर्याप्तरूप सात जीवसमाप्त होते हैं । अपर्याप्त संज्ञीके छहों अपर्याप्तियां, अपर्याप्त असंज्ञी और चिकलत्रयोंके पांच अपर्याप्तियां और अपर्याप्त एकेन्द्रिय जीवोंके चार अपर्याप्तियां होती हैं । संज्ञी, असंज्ञी, चतुरिन्द्रिय,

✕ वण्णोदयेण जणिदो सरिरवण्णो दु दव्वदो लेत्सा ॥ गो जी ४९४

* जौगपउत्ती लेस्सा कसायउदयाणुराजिया होई ॥ गो जी ४९०.

नं. ३

पर्याप्त जीवोंके सामान्य-आलाप.

गुंजी	प	मा	स	ग	इ	का	यो	वै	क	जा	सय	द	ले	भ	स	सही	आ	उ
१४ ७ प.	६ प.	१०/९	४	४	५	६	११ औ मि वै मि आ मि रुई के विना	३	४	८	७	४	६ भा ६	२ भ अभ	६	२ स अस	२ आहा अना	२ साका अनाका गुं उ

छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, अदीदसण्णा वि अत्थि; चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छकाया, ओरालियमिस्स-वेउव्वियमिस्स-आहारमिस्स-कम्मइयकायजोगेत्ति चत्तारि जोगा, तिण्णि वेद, अवगदवेदो वि अत्थि; चत्तारि कसाय, अकसाओ वि अत्थि; मणपज्जव-विभंगणणेहि विणा छण्णाण, चत्तारि संजम सामाइय-छेदोवट्ठावण-जहाक्खादासंजमेहि, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; जम्हा सव्व-कम्मस्स विस्ससोवचओ सुकिलो भवदि तम्हा विग्गहगदीए वट्ठमाण-सव्व-जीवाणं सरीरस्स सुकलेस्सा भवदि । पुणो सरीरं घेत्तूण जाव पज्जत्तीओ समाणेदि ताव छव्वण-परमाणु-पुंज-णिप्पज्जमाण-सरीरत्तादो तस्स सरीरस्स लेस्सा काउलेस्सेत्ति भण्णदे', एवं दो सरीर-साओ भवंति । भावेण छ लेस्सेत्ति वुत्ते णेरइय-तिरिक्ख-भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियदेवाणमपज्जत्तकाले किण्ह-णील-काउलेस्साओ भवंति । सोधम्मादि-उवरिम-

जीन्द्रिय, द्वीन्द्रिय और एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंकी अपेक्षा कमसे सात प्राण, प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण होते हैं । चारों सङ्घाएँ होती हैं और अतीत-संज्ञारूप स्थान भी होता है । चारों गतियाँ होती हैं । एकेन्द्रिय-जाति आदि पांचों जातियाँ होती हैं । पृथिवीकाय आदि छहों काय होते हैं । औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र, आहारकमिश्र और कर्मणकाय इसप्रकार चार योग होते हैं । तीनों वेद होते हैं और अपगतवेदरूप भी स्थान होता है । चारों कषायें होती हैं और कषायरहित भी स्थान होता है । मनःपर्यय और विभंग-ज्ञानके विना छह ज्ञान होते हैं । सूक्ष्मसांपराय, परिहार-विशुद्धि और संयमासंयमके विना सामायिक, छेदोपस्थापना, यथाख्यात और असंयम ये चार होते हैं । चारों दर्शन होते हैं । द्रव्यलेश्याकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेश्या होती है और भावलेश्याकी अपेक्षा छहों लेश्याएँ होती हैं । अपर्याप्त अवस्थामें द्रव्यकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेश्याएँ ही क्यों होती हैं, आगे इसीका समाधान करते हैं कि जिस कारणसे संपूर्ण कर्मोंका विस्त्रसोपचय शुक्ल ही होता है, इसलिये विग्रहगतिमें विद्यमान संपूर्ण जीवोंके शरीरकी शुक्ललेश्या होती है । तदनन्तर शरीरको ग्रहण करके जबतक पर्याप्तियोंको पूर्ण करता है त छह वर्णवाले परमाणुओंके पुंजोंसे शरीरकी उत्पत्ति होती है, इसलिये उस शरीरकी कापोत लेश्या कही जाती है । इसप्रकार अपर्याप्त अवस्थामें शरीर-संबन्धी दो ही लेश्याएँ होती हैं । भावकी अपेक्षा छहों लेश्याएँ होती हैं ऐसा कथन करने पर नारकी, तिर्यच, भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिषी देवोंके अपर्याप्त-कालमें कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएँ होती हैं । तथा सौधर्मादि ऊपरके देवोंके अपर्याप्त कालमें पीत, पद्म और

देवाणमपज्जत्तकाले तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ भवंति । भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मा-मिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण जुगवदुवजुत्ता वि अत्थि ।

संपहि मिच्छाइहीणं ओघालावे भण्णमाणे अत्थि एय गुणट्ठाणं, चोदस जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छप्पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एहंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, आहार-दुगेण विणा तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

गुह्य लेख्याएं होती हैं पेसा जानना चाहिये। भव्यसिद्धिक होते हैं और अभव्यसिद्धिक भी होते हैं। सम्यग्भिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व होते हैं। संज्ञी होते हैं, असंज्ञी होते हैं और संज्ञी, असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी होते हैं। आहारक होते हैं और अनाहारक भी होते हैं। साकार उपयोगवाले होते हैं, अनाकार उपयोगवाले होते हैं और युगपत् उन दोनों उपयोगोंसे युक्त भी होते हैं।

अब भिथ्याद्वष्टि जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक भिथ्यात्व गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां; एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां; संज्ञीके दश प्राण, सात प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण, सात प्राण; चतुरिन्द्रियके आठ प्राण, छह प्राण; त्रीन्द्रियके सात प्राण, पांच प्राण, द्वीन्द्रियके छह प्राण, चार प्राण; एकेन्द्रियके चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजातिको आदि लेकर पाचों जातियां, पृथिवीकायको आदि लेकर छहों काय, आहारकद्विक अर्थात् आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, यम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन,

नं. २

अपर्याप्त जीवोंके सामान्य-आलाप.

गु.	जी	प.	प्रा	सं	ग	इ.	का	यो	वि	क.	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स.	संज्ञी.	आ.	उ
५	७	६ अप	७	४	४	५	६	४	३	४	६	४	४	६	२	२	५	२	२
मि	अप.	५	७	४	४			औ	मि		मन	सामा	४	४	२	२	५	२	२
सा	५	५	७	४	४			वे	५	४	विम	छे	४	४	म.	५	स.	आहा.	साका.
अवि	५	५	५	४	४			५	अपु	४	विना	यथा	४	४	अ	५	अस	अना.	अना
प्र			४					कर्म	५		अस	अस	४	४		५	अस	अना.	अना
सयो			३					५	५		अस	अस	४	४		५	अस	अना.	अना

गु	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	फ	हा	सय	द	ले	भ	स	सक्षि	आ	उ
१ भि	७ पर्या	६ प ५ , ४ ,	१० ९ , ८ , ६ , ४	४	४	५	६	१० म ४ व ४ औ १ पं. १	३	४	न अज्ञा	१ अस	२ चधु अचधु	६ द मा	२ भ अम	१, १ मि.	२ स अस	१ आहा	२ साका अना.

तेसिं चैव अपञ्जत्तोवे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीविसमासा, छ
अपञ्जत्तोओ पंच अपञ्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच
पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी
पंच जादीओ, पुढवीकायादी छकाया, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंग-
णाणेण विणा दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण छ
लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो

उन्हीं मिथ्यावादि जीवोंके अपर्याप्त-कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक मिथ्यात्व गुणस्थान, अपर्याप्तसंबन्धी सात जीवसमास, सब्हीके छहों अपर्याप्तियां, असंखी और विकलत्र-योंके पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपर्याप्तियां, संखीके सात प्राण, असंखीके सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके छह प्राण, त्रीन्द्रियोंके पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके चार प्राण, एकेन्द्रियोंके तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकायादि छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र और कर्मण ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषायें, विभंगावधि-ज्ञानके बिना दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेश्या, भ १ अपेक्षा छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सन्निक, असन्निक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त-आलाप.

गु	जी	प	मा	स	ग	ह	का	यो	वे	क	हा	सय	द	ले	म	स	सक्षि	आ	उ
१	७	६	७	४	४	५	६	३	३	४	२	१	२	२	२	१	२	२	२
मि	अप	अ	अप	अ	अ	अ	अ	मि	मि	कुम	कुम	असं	वक्षु	का	म	मि	स.	आहा.	साका.
		५	५	५	५	५	५	कर्म			कुशु,		अव	गु	अम		अस.	अना	आना
		५	५	५	५	५	५							भा					

गु	जी	प	प्र	स	ग	ह	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्ति	आ	उ
१ मा	२ मप मअ	६ प ६ अ	१० ७	४	४	१ पचे	९ नस	१३ आ	३ द्रि	४	अज्ञा	१ अम	२ चक्षु अव	६ मा द	१ म	१ मासा	१ स	२ आहा अना	२ साका अना.

वज्जुत्ता वि होति अणागारुवज्जुत्ता वि ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिण्णि गदी णिरयगदीए विणा, पंचिदियजादी तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विहंगणाणेण विणा दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता अणागारुवज्जुत्ता वा होति ।

और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक दूसरा गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, मनोबल, वचनबल और स्वासोच्छ्वासके विना सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारकमिश्रके विना अपर्याप्त-संबन्धी तीन योग, तीनों वेद, चारों कषायें, विभंग-ज्ञानके विना दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्लेश्या, भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

न. ७

सासादन सम्यग्दृष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग.	इ	का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	स	प				पंचे	त्रस.	म ४			अज्ञा	अस	चक्षु	सा ६	म, सासा		स.	आहा.	साका.
	प							व. ४					अचक्षु						अना.
								औ १											
								वे. १											

नं ८

सासादन सम्यग्दृष्टियोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स.	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स	संक्षि	आ.	उ.
१	१	६	७	४	३	१	१	३	३	४	२	१	२	द्र २	१	१	१	२	२
सा	स	अ	अप	अप.	विना	पच	त्रस	औ मि			कुम	अस.	चक्षु	का	म	सासा	स	आहा.	साका.
								वे १			कुक्षु		अच	शु				अना	अना.
								कामे						सा. ६					

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	मज्ञि	आ	उ.
१	१	६	०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र ६	१	१	१	१	२
मम्य.	म				पंच	नम	म ४	व ४			ज्ञान	अस	चक्षु	भा ६	म	सम्य.	स	आहा	साका.
	प						औ. १	वे. १			अज्ञा.		अचक्षु.						अना
											मिथ								

तेसिं चैव अपज्जत्ताणमोवपरूवणे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीव-समासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; णिरयादो आगंतूण मणुस्सेसुप्पण्ण-असंजदसम्माइट्ठीणमपज्जत्तकाले किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ लब्भंति । भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, अणादिय-मिच्छाइट्ठी वा सादिय-मिच्छाइट्ठी वा चदुसु वि गदीसु उवसमसम्मत्तं धेत्तूण द्विदजीवा ण काल करोति । तं कथं णव्वदि त्ति वुत्ते आइरिय-वयणादो वक्खाणदो य णव्वदि । चारित्तमोह उवसामगा मदा देवेषु उववज्जंति ते अस्सिदूण अपज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि । वेदगसम्मत्तं पुण देव-मणुस्सेसु अपज्जत्तकाले लब्भदि, वेदगसम्मत्तेण सह गद-देव-मणुस्साणमण्णोण-गमणागमण-विरोहाभावादो । कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं तिरिक्ख-णेइयाणमपज्जत्त-काले लब्भदि । खइयसम्मत्तं पि चदुसु वि गदीसु पुव्वायु-बंधं पडुच्च अपज्जत्तकाले

उन्हीं असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त कालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—एक चौथा गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, मनोबल, वचनबल और आनापानके विना सात प्राण, चारों संज्ञायें, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियकमिश्र और कर्मण ये तीन योग, स्त्रीवेदके विना दो वेद, चारों कषायें, मति, श्रुत और अवाधि ये तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु, अचक्षु और अवाधि ये तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्लेश्या, भावसे छहों लेश्याएं होती हैं । छहों लेश्याएं होनेका यह कारण है कि नरकगतिसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले असंयत-सम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त कालमें कृष्ण, नील और कापोत ये तीन लेश्याएं पायीं जाती हैं । लेश्याओंके आगे भव्यसिद्धिक, तीनों सम्यक्त्व होते हैं, क्योंकि, अनादि मिथ्यादृष्टि अथवा सादि मिथ्यादृष्टि जीव चारों ही गतियोंमें उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करके पाये जाते हैं, किन्तु मरणको प्राप्त नहीं होते हैं ।

शंका—यह कैसे जाना जाता है कि, उपशम-सम्यग्दृष्टि जीव मरण नहीं करते हैं ?

समाधान—आचार्योंके वचनसे और (सूत्र) व्याख्यानसे जाना जाता है कि उपशम-सम्यग्दृष्टि जीव मरते नहीं हैं । किन्तु चारित्रमोहके उपशम करने वाले जीव मरते हैं और देवोंमें उत्पन्न होते हैं, अतः उनकी अपेक्षा अपर्याप्तकालमें उपशमसम्यक्त्व पाया जाता है । वेदक-सम्यक्त्व तो देव और मनुष्योंके अपर्याप्तकालमें पाया ही जाता है, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वके साथ मरणको प्राप्त हुए देव और मनुष्योंके परस्पर गमनागमनमें कोई विरोध नहीं पाया जाता है । कृतकस्यवेदककी अपेक्षा तो वेदकसम्यक्त्व तिर्यच और नारकी जीवोंके अपर्याप्त कालमें भी पाया जाता है । क्षायिक सम्यक्त्व भी सम्यग्दर्शनके पहले बाधी गई आयुके बंधकी अपेक्षासे चारों ही गतियोंके अपर्याप्तकालमें पाया जाता है, इसलिये असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके अपर्याप्तकालमें तीनों ही सम्यक्त्व होते हैं ।

लब्धदि तेण तिण्णि सम्मत्ताणि अपज्जत्तकाले भवंति । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा ।

संजदासंजदाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमामो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ; केइं सरीर-णिव्वत्तणट्ठमागद-परमाणु-वण्णं घेत्तूण संजदासंजदादीण भावलेस्सं परूवयंति । तण्ण घडदे, कुदो ? दव्व-भावलेस्साणं भेदाभावादो ' लिम्पतीति लेइया ' इति वचनव्याघाताच्च । कम्म-लेव-हेद्दो जोग-कसाया चेव भाव-लेस्सा त्ति गेण्हिदव्वं । भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि,

सम्यक्त्वके आगे संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं ।

संयतासंयत जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक पांचवा गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यंच और मनुष्य ये दो गतियां, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग और औदारिककाय ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कपायें, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यकी अपेक्षा छहों लेइयाएं, भावकी अपेक्षा तेज, पद्म और शुक्कलेइयाएं होती हैं ।

कितने ही आचार्य, शरीर-रचनाके लिये आये हुए परमाणुओंके वर्णको लेकर संयता-संयतादि गुणस्थानवर्ती जीवोंके भावलेइयाका वर्णन करते हैं । किन्तु यह उनका कथन घटित नहीं होता है, क्योंकि, वैसा माननेपर द्रव्य और भावलेइयामें फिर कोई भेद ही नहीं रह जाता है और ' जो लिम्पन करती है उसे लेइया कहते हैं ' इस आगम वचनका व्याघात भी होता है । इसलिये ' कर्मलेपका कारण होनेसे योग और कपायसे अनुरजित प्रवृत्ति ही भावलेइया है ' ऐसा अर्थ ग्रहण करना चाहिये ।

लेइयाओंके आगे भव्यसिद्धिक, तीनों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और

नं १२

असंयतसम्यग्दृष्टियोंके अर्थात्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	ई	का	यो	वे	क	ज्ञा	संय	द	ले	म	सं	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	४	१	१	३	२	४	३	१	३	३	१	३	१	१	२
मि	स अ	अप	अप			प	मि	ओ मि १	ली	मति	मति	अत	के व	मि ३	म	ओ.	स	आहा	साका
ले							मि	वे. मि १	मिना	श्रुत	अव		विना	मा. ६		क्षी	अना	अना	

अप्पमत्तसंजदाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जनीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, असादावेदणीयस्स उदीरणाभावादो आहार-सण्णा अप्पमत्तसंजदस्स णत्थि । कारणभूद-कम्मोदय-संभवादो उवयारेण भय-मेहुण-परिगहसण्णा अत्थि । मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद,

आलापोंके अतिरिक्त उनके पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका स्वतन्त्ररूपसे कथन किया है फिर भी छठे गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका स्वतन्त्र कथन न करके केवल ओघालाप ही कहा गया है, इससे ऐसा प्रतीत होता है कि ध्वलाकारकी दृष्टि विग्रह-गतिसंबन्धी गुणस्थानोंमें ही पृथक् रूपसे आलापोंके दिखानेकी रही है अन्य अपर्याप्त संबन्धी गुणस्थानोंमें नहीं । गोम्मटसार जीवकाण्डकी टीकामें भी अन्तमें आलापोंका कथन करते हुए टीकाकारने इसी सरणीको ग्रहण किया है । अतएव मूलमें छठे गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्त संबन्धी आलापोंका पृथक् रूपसे नहीं पाया जाना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है । फिर भी सर्व साधारण पाठकोंके परिज्ञानार्थ वे यहां लिखे जाते हैं ।

प्रमत्तसंयतके पर्याप्तसंबन्धी ओघालापके कहनेपर—एक छठा गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दसों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय जाति-त्रसकाय, वैश्रियककाय और अपर्याप्तसंबन्धी चारों योगोंके बिना दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवल-ज्ञानके बिना चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, केवल दर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं और भावसे पाँच, और शुक्ल, ये तीन लेश्याएं, भव्यासिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपर्याप्त अवस्थाको प्राप्त उन्हीं प्रमत्तसंयतोंके ओघालाप कहनेपर—एक छठा गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, मन, वचनबल और श्वासो-च्छ्वासके बिना सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, एक आहार-मिश्रकाययोग, एक पुरुष वेद, चारों कषाय, मन-पर्यय और केवलज्ञानके बिना तीन , सामायिक और छेदोपस्थापना संयम, केवल दर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेश्या, भावसे पाँच, पञ्च और शुक्ल लेश्या, भव्यासिद्धिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यग्दर्शन, संज्ञी, आहारी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अप्रमत्तसंयत जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक सातवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दसों प्राण, आहार, भय और मैथुन ये तीन संज्ञाएं, होती हैं, क्योंकि, असादावेदनीय कर्मकी उदीरणाका अभाव हो जानेसे अप्रमत्तसंयतके आहारसंज्ञा नहीं होती है । किन्तु भय आदि संज्ञाओंके कारणभूत कर्मोंका उदय संभव है, इसलिये उपचारसे भय, मैथुन और परिग्रहसंज्ञाएं हैं । संज्ञाके आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चार मनो-योग, चार वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषायें, केवलज्ञानके

चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

अपूर्वकरणगुणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, ज्झाणणिमपुव्वकरणणं भवदु णाम वचिबलस्स अत्थित्तं भासापज्जत्ति-सण्णिद-पागेगलखंध-जणिद-सत्ति-सब्भावादो । ण पुण वचिजोगो कायजोगो वा इदि ? न, अन्तर्जल्पप्रयत्नस्य कायगतसूक्ष्मप्रयत्नस्य च तत्र सत्त्वात् । तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, परिहारसुद्धिसंजमेण विणा दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ,

विना चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, केवल-दर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं और भावसे तेज पद्म और शुक्लेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक आठवां गुणस्थान, एक सञ्जी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञाएं-मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग, एक औदारिक, काययोग ये नौ योग होते हैं ।

शंका—ध्यानमें लीन अपूर्वकरणगुणस्थानवर्ती जीवोंके वचनबलका सद्भाव भले ही रहा आवे, क्योंकि, भाषापर्याप्तिनामक पौद्गलिक स्कन्धोंसे उत्पन्न हुई शक्तिका उनके सद्भाव पाया जाता है किन्तु उनके वचनयोग या काययोगका सद्भाव नहीं मानना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ध्यान-अवस्थामें भी अन्तर्जल्पके लिये प्रयत्नरूप वचन-योग और कायगत-सूक्ष्म-प्रयत्नरूप काययोगका सत्त्व अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवोंके पाया ही जाता है इसलिये वहां वचनयोग और काययोग भी संभव हैं ।

योगोंके आगे तीनों वेद, चारों कपायें, केवल ज्ञानके विना शेष चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे

न. १५

अग्रमत्तसंयतोंके आलाप.

शु	जो	प.	प्रा.	म	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द	ले	म.	स.	सत्ति	आ	उ
१	१	६	१०	३	१	१	२	९	३	४	४	३	३	६	२	३	१	१	२
अग्र	म	प		आदा	म	प	तस.	म. ८			के	सा.	के	८	म.	आ.	स	आदा	साका.
				विना				व ४			विना	छे.	विना	३		क्षायो			अना
								आ. १			परि			भाम.					

भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

पढम-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जीओ, दस पाण, दो सण्णा, अपुव्वकरणस्स चरिम-समए भयस्स उदीरणोदयो णट्ठो तेण भयसण्णा णत्थि । मणुमगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्माओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

केवल शुक्लेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवर्ती जीवोंके ओघालाप कहनेपर— नौवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो संज्ञाप होती हैं। दो संज्ञाप होने का कारण यह है कि अपूर्वकरण गुणस्थानके अन्तिम समयमें भयकी उदीरणा तथा उदय नष्ट हो गया है, इसलिये यहाँपर भय-संज्ञा नहीं है । उसके आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चार मनोयोग, चार वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषायें, केवलज्ञानके बिना चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्लेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमि और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

न. १६

अपूर्वकरण-आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	७	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	२	३	६	१	२	१	१	१
अपु	प.	स		आहा.	म	पवे	त्रस	म ४			के	सा	के	द	म	का		आहा	साका
				विना				व ४			विना	के	के	द	म	का			अना
								औ १						शुक्ल					

न. १७

अनिवृत्तिकरण-प्रथमभाग-आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	२	१	१	१	९	३	४	४	२	३	६	१	२	१	१	२
अनि	मप			मे.	म	पवे.	त्रस	म ४			के	सा.	के	द	म	औ		आहा.	साका.
प्र				परि				व ४			विना	के	के	द	म	क्षा			आना
भा								औ. १						भा					

विदिय-द्वान-द्विद-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, अंतरकरणं काऊण पुणो अंतोमुहुत्तं गतूण वेदोदओ णट्ठो तेण मेहुणसण्णा णत्थि । मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भवेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा' ।

तदिय-द्वान-द्विद-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, तिण्णि कसाय, वेदेसु खीणेषु पुणो अंतोमुहुत्तं गंतूण कोधोदयो णस्सदि तेण कोधकसाओ णत्थि । चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके द्वितीय भागवर्ती जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक नौवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, परिग्रहसंज्ञा होती है । एक परिग्रह संज्ञाके होनेका यह कारण है कि अन्तरकरण करनेके अनन्तर अन्तर्मुहूर्त जाकर वेदका उदय नष्ट हो जाता है, इसलिये द्वितीय भागवर्ती जीवके मैथुनसंज्ञा नहीं रहती है । संज्ञा आलापके आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, चारो कपाये, केवलज्ञानके बिना चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवल-दर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याए और भावसे शुक्ललेश्या, भव्यसिद्धिक, औप-शमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके तृतीयभागवर्ती जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक नौवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, क्रोधकपायके बिना तीन कपायें होती हैं । तीन कपायोंके होनेका यह कारण है कि तीनों वेदोंके क्षय हो जाने पर पुनः एक अन्तर्मुहूर्त जाकर क्रोधकपायका उदय नष्ट हो जाता है, इसलिये इस भागमें क्रोधकपाय नहीं है । आगे केवलज्ञानके बिना चार ज्ञान, सामायिक और

नं. १८

अनिवृत्तिकरण-द्वितीयभाग-आलाप

गु	जी	प	प्रा	ग	ग	इ	वा	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	१	१	१	१	१	०	४	४	२	३	६	१	०	१	१	०
अनि	गप			परि	म	पंच	तम	म	४	४	३	सा	३	३	म	आ	म	आह	साका
रि								व	४	४	३	उ	३	३	आ	क्षा			अना
मा								ओ	३	४	३	३	३	३	आ	क्षा			अना

दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

चउ-ट्ठाण-ट्ठिद-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमातो, छप्पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, दो कसाय, कोधोदए विणट्ठे पुणो अंतोमुहुत्तं गंतूण माणोदओ वि णस्सदि तेण माणकसाओ तत्थ णत्थि । चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंमण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे शुक्लेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके चतुर्थभागवर्ती जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक नौवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, एक परिग्रह संज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, माया और लोभ ये दो कषायें होती हैं । दो कषायोंके होनेका यह कारण है कि क्रोधकषायके उदय नष्ट होने पर पुनः एक अन्तर्मुहूर्त आगे जाकर मानकषायका उदय भी नष्ट हो जाता है इसलिये मानकषाय इस भागवर्ती जीवोंके नहीं है । आगे केवलज्ञानके बिना चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे शुक्लेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १९

अनिवृत्तिकरण-चतुर्थभाग-आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	३	४	२	३	६	१	२	१	१	२
अनि	सं प			प	म	पंचे	त्रस	म ४	०	३	४	२	३	६	१	२	१	१	२
वृ								व ४	अप	माया	के	सा	के द	द्र	म	औ	स.	आहा	साका
मा								ओ १	अप	लोभ	विना	ले	विना	१	मा	क्षा			अना.

नं. २०

अनिवृत्तिकरण चतुर्थभाग-आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	३	४	२	३	६	१	२	१	१	२
अनि	सं प			प	म	पंचे	त्रस	म ४	०	३	४	२	३	६	१	२	१	१	२
चतु								व ४	अप	माया	के	सा	के द	द्र	म	औ	स	आहा	साका
मा								ओ १	अप	लोभ	विना	ले	विना	१	मा	क्षा			अना

पंचम-ट्ठाण-द्विद-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छप्पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, लोभकसाओ, माणोदये विणट्ठे पुणो अंतोमुहुत्तं गंतूण माओदओ वि णस्सदि तेण मायाकसाओ तत्थ णत्थि । चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सुहुमसांपराइयाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलोभकमाओ, चत्तारि णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण शुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं,

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके पंचम भागवर्ती जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक नौवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, लोभकपाय है। लोभकपाय होनेका यह कारण है कि मानकपायके उदयके नष्ट हो जाने पर पुनः एक अन्तर्मुहूर्त आगे जाकर माया-कपायका उदय भी नष्ट हो जाता है, इसलिए मायाकपाय इस भागमें नहीं है। आगे केवलज्ञानके विना चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे शुक्कलेख्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, सांक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्ती जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक दशवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, सूक्ष्म परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारो मनोयोग, चारो वचनयोग और औदारिक काययोग ये नौ योग, अपगतवेद, सूक्ष्म लोभकपाय, केवलज्ञानके विना चार ज्ञान, सूक्ष्मसाम्परायविशुद्धि संयम, केवलदर्शनके विना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहो लेख्याण, भावसे शुक्कलेख्या, भव्यसिद्धिक,

न. २१

अनिवृत्तिकरण—पंचमभाग—आल्लाप.

शु	जी	प	प्रा	म	ग.	इ	रा	यो	त्रे	र	ज्ञा	मय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	६	०	३	६	१	२	१	१	२
अनि.	म	प		प		प	तम	म	४		त्रे	मा	त्रे	द	म	आ.	स	आहा	साका
पच								३	४		विना	३	विना	१		क्षा			अना.
मा								आ	१					मा					

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हंति अणागारुवजुत्ता वां ।

उवसंतकसायाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, उवसंतसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, उवसंतकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; केण कारणेण सुक्कलेस्सा? कम्म-णोकम्म-लेव-णिमित्त-जोगो अत्थि त्ति । भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-

औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

उपशान्तकपाय गुणस्थानवर्ती जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक ग्यारहवां गुणस्थान, एक सञ्जी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, उपशान्तसंज्ञा होती है । सञ्ज्ञाके उपशान्त होने का यह कारण है कि यहांपर मोहनीय कर्मका पूर्ण उपशम रहता है, इसलिये उसके निमित्तसे होनेवाली सञ्ज्ञा भी उपशान्त ही रहती हैं, अतएव यहां उपशान्तसंज्ञा कही । आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, उपशान्तकपाय, केवलज्ञानके बिना चार ज्ञान, यथाख्यातशुद्धिसयम, केवलदर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे शुक्क-लेइया होती है ।

शंका—जब कि इस गुणस्थानमें कपायोंका उदय नहीं पाया जाता है, तो फिर यहां शुक्कलेइया किस कारणसे कही ?

समाधान—यहां पर कर्म और नो कर्मके लेपके निमित्तभूत योगका सद्भाव पाया जाता है, इसलिये शुक्कलेइया कही है ।

लेइयाके आगे भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, सन्निक,

नं. २२

सूक्ष्मसम्पराय-आलाप

गु	जी	प	मा	से	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	२	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	४	१	३	६	१	२	१	१	२
सू	स.प			सू.प	म	पु	तस.	म ४		सू.लो	के	सूक्ष्म.	के द	द्र	म	औ	स	आहा	साका
								ब ४			विना		विना		भा	सा			अनाका
								औ १						शु					

पंचम-ट्टाण-ट्ठिद-अणियट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छप्पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, लोभकसाओ, माणोदये विणट्ठे पुणो अंतोमुहुत्तं गंतूण माओदओ वि णस्सदि तेण मायाकसाओ तत्थ णत्थि । चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सुहुमसांपराइयाणमोघालावे भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलोभकसाओ, चत्तारि णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिमंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण शुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं,

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके पंचम भागवर्ती जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक नौवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, लोभकपाय है। लोभकपाय होनेका यह कारण है कि मानकषायके उदयके नष्ट हो जाने पर पुनः एक अन्तर्मुहूर्त आगे जाकर माया-कषायका उदय भी नष्ट हो जाता है, इसलिए मायाकषाय इस भागमें नहीं है। आगे केवलज्ञानके बिना चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, केवलदर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्याणं, भावसे शुक्कलेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्ती जीवोंके ओघालाप कहनेपर—एक दशवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, सूक्ष्म परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक काययोग ये नौ योग, अपगतवेद, सूक्ष्म लोभकषाय, केवलज्ञानके बिना चार ज्ञान, सूक्ष्मसाम्परायाविशुद्धि सयम, केवलदर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्याणं, भावसे शुक्कलेश्या, भव्यसिद्धिक,

नं. २१

अनिवृत्तिकरण-पंचमभाग-ओघालाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग.	ई	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	४	२	३	६	१	२	१	१	२
अनि	स.प			प			म	४			के	सा	के द	६	भ	ओ.	स	आहा	साका
पच							व	४			विना	छे	विना	१		क्षा			अना.
मा							ओ	१						मा					

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हंति अणागारुवजुत्ता वा ।

उवसंतकसायाणमोघालावे भणमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, उवसंतसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, उवसंतकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; केण कारणेण सुक्कलेस्सा? कम्म-णोकम्म-लेव-णिमित्त-जोगो अत्थि त्ति । भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-

औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

उपशान्तकपाय गुणस्थानवर्ती जीवोंके ओघालाप कहने पर—एक ग्यारहवां गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, उपशान्तसंज्ञा होती है । संज्ञाके उपशान्त होने का यह कारण है कि यहांपर मोहनीय कर्मका पूर्ण उपशम रहता है, इसलिये उसके निमित्तसे होनेवाली संज्ञाएं भी उपशान्त ही रहती हैं, अतएव यहां उपशान्तसंज्ञा कही । आगे मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, उपशान्तकपाय, केवलज्ञानके बिना चार ज्ञान, यथाख्यातशुद्धिसंयम, केवलदर्शनके बिना तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्ल-लेश्या होती है ।

शुंका—जब कि इस गुणस्थानमें कपायोंका उदय नहीं पाया जाता है, तो फिर यहां शुक्ललेश्या किस कारणसे कही ?

समाधान—यहां पर कर्म और नो कर्मके लेपके निमित्तभूत योगका सद्भाव पाया जाता है, इसलिये शुक्ललेश्या कही है ।

लेश्याके आगे भव्यासिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, सन्निक,

नं. २२

सूक्ष्मसाभिप्राय=आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	४	१	३	६	२	२	१	१	२
सू	स.प			सू	प	म	पु	म	व	सू	लो	के	के	द्र	म	औ	स	आहा	साका
								व	ओ		विना	सूक्ष्म	विना	मा	क्ष			अनाका	

सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवन्मासा, छ पञ्चत्तीओ,

सयोगिकेवलियोंके ओघालाप कहने पर—एक तेरहवां गुणस्थान, सञ्जी-पर्याप्त और संञ्जी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अर्पयाप्तियां होती हैं।

गु जी	प प्रा	स ग	ड का	यो वे	ऊ ज्ञा	सय द	ले म	स सज्ञि	आ उ
१ २ ल पः म म	६ १० ०	१ १ म प	१ १ त्र स	९ ४ म व ४ औ १	० अक छपा	४ के वि यथा	३ के द विना त्र ६ मा शु भ	१ औ क्षा.	१ आ हा साका अना

यु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	जा	सय	द	ले	म	स	सजि	आ	उ
१	२	६	१०	०	१	१	१	९	०	०	४	१	३	६	१	१	१	१	२
प	प			क्षी	म	पं	वस	म	४	४	के	यथा	के	द	मा	भ	क्ष	आ	साका
स	स							ओ	१	१	विना	विना			शु		स	अना	अना

छ अपज्जत्तीओ, केवली कवाड-पदर-लोगपूरण-गओ पज्जत्तो अपज्जत्तो वा ? ण ताव पज्जत्तो, 'ओरालियमिस्सकायजोगो अपज्जत्ताणं' इच्छेदेण सुत्तेण तस्स अपज्जत्तसिद्धीदो । सजोगिं मोत्तूण अण्णे ओरालियमिस्सकायजोगिणो अपज्जत्ता 'सम्मामिच्छाइट्ठि-संजदा-संजद-संजदद्वाणे गियमा पज्जत्ता' ति सुत्त-णिद्देसादो । ण, आहारमिस्सकायजोग-पमत्तसंजदाणं पि पज्जत्तयत्त-प्पसंगादो । ण च एव, 'आहारमिस्सकायजोगो अपज्जत्ताणं' ति सुत्तेण तस्स अपज्जत्तभाव-सिद्धीदो । अणवगासत्तादो एदेण सुत्तेण

शंका—कपाट, प्रतर और लोकपूरण समुद्धातको प्राप्त केवली पर्याप्त है या अपर्याप्त ?

समाधान—उन्हें पर्याप्त तो माना नहीं जा सकता, क्योंकि, 'औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है' इस सूत्रसे उनके अपर्याप्तपना सिद्ध है, इसलिये वे अपर्याप्तक ही हैं ।

शंका—'सम्यग्मिथ्यादृष्टि, संयतासंयत और संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं, इसप्रकार सूत्र-निर्देश होनेके कारण यही सिद्ध होता है कि सयोगीको छोड़कर अन्य औदारिकमिश्रकाययोगवाले जीव अपर्याप्तक हैं । यहां शंकाकारका यह अभिप्राय है कि औदारिकमिश्रयोगवाले जीव अपर्याप्तक होते हैं यह सामान्य विधि है और सम्यग्मिथ्यादृष्टि संयतासंयत और संयत जीव पर्याप्तक होते हैं यह विशेष विधि है और संयतोंमें सयोगियोंका अन्तर्भाव हो ही जाता है अतएव 'विशेषविधिना सामान्य-विधिर्बाध्यते' इस नियमके अनुसार उक्त विशेष-विधिसे सामान्य-विधि बाधित हो जाती है जिससे कपाटादि समुद्धातगत केवलीको अपर्याप्त सिद्ध करना असंभव है ?

समाधान—ऐसा नहीं है, क्योंकि, यदि 'विशेष-विधिसे सामान्य-विधि बाधित होती है' इस नियमके अनुसार 'औदारिकमिश्रकाययोगवाले जीव अपर्याप्तक होते हैं' यह सामान्य-विधि 'सम्यग्मिथ्यादृष्टि आदि पर्याप्तक होते हैं' इससे बाधी जाती है तो आहारमिश्रकाययोगवाले प्रमत्तसंयतोंको भी पर्याप्तक ही मानना पड़ेगा, क्योंकि, वे भी संयत हैं । किंतु ऐसा नहीं है, क्योंकि, 'आहारकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है' इस सूत्रसे वे अपर्याप्तक ही सिद्ध होते हैं ।

शंका—'आहारमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है' यह सूत्र अनवकाश है,

१ जी म सू ७६ २ जी. स सू ९०. ३ जी. स. सू ७८

४ अन्तरगादय्यपवादो वलायान् । परि शे पृ ३५८ येन नाप्राप्ते यो विधिरारम्यते स तस्य वाक्यो भवति । येन नाप्राप्ते इत्यस्य यत्कर्तृकावश्यकप्राप्ताविलयथो ननुद्वयस्य प्रकृतार्थदातृबोधकत्वात् । एव च शेषशान्तिद्वयविशेषवर्मात्रच्छिन्नवृत्तिमामान्यवर्मावच्छिन्नोद्देश्यरूपाश्रयस्य विशेषशान्तिना वाध । तदप्राप्तियोग्येऽचारि-
१५१ पेतस्य बाधकत्वे बोद्धम् । परि शे ३५९, ३६८.

‘संजदट्टाणे णियमा पज्जत्ता’ ति एदं सुत्तं बाहिज्जदि, ‘ओरालियमिस्सकायजोगो अपज्जत्ताणं’ ति एदेण ण बाहिज्जदि सावगासत्तेण बलाभावादो^१ । ण, ‘संजदट्टाणे णियमा पज्जत्ता’ ति एदस्म वि सुत्तस्स सावगासत्तदंसणादो । सजोगिट्टाणं दोसु वि सुत्तेसु सावगासेसु जुगवं दुक्केसु ‘संजदट्टाणे णियमा पज्जत्ता’ ति एदेण सुत्तेण ओरालियमिस्सकायजोगो अपज्जत्ताणं’ ति एदं सुत्तं बाहिज्जदि परत्तादो^२ । ण, परसदो इट्ठवाचओ^३ ति धेप्पमाणे पुब्बेण बाहिज्जदि ति अणेयंतियादो । णियम-सदो

अर्थात् इस सूत्रकी प्रवृत्तिके लिये कोई दूसरा स्थल नहीं है, अतः इस सूत्रसे ‘संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक ही होते हैं’ यह सूत्र बाधा जाता है । किंतु औदारिक-मिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है’ इस सूत्रसे ‘संयतोंके स्थानमें जीव पर्याप्तक ही होते हैं’ यह सूत्र नहीं बाधा जाता, क्योंकि, ‘औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है’ यह सूत्र सावकाश होनेके कारण, अर्थात्, इस सूत्रकी प्रवृत्तिके लिये सयोगियोंको छोड़कर अन्य स्थल भी होनेके कारण, निर्बल है अतः आहारकसमुदातगत जीवोंके जिस-प्रकार अपर्याप्तपना सिद्ध किया जा सकता है उसप्रकार समुदातगत केवलियोंके नहीं किया जा सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ‘संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होता है’ यह सूत्र भी सावकाश देखा जाता है, अर्थात्, सयोगीको छोड़कर अन्य स्थलमें भी इस सूत्रकी प्रवृत्ति देखी जाती है, अतः निर्बल है और इसलिये ‘औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है’ इस सूत्रकी प्रवृत्तिको नहीं रोक सकता है ।

शंका—पूर्वोक्त समाधानसे यद्यपि यह सिद्ध हो गया कि पूर्वोक्त दोनों सूत्र सावकाश होते हुए भी सयोगी गुणस्थानमें युगपत् प्राप्त हैं, फिर भी ‘परो विधिर्बाधको भवति’ अर्थात्, पर विधि बाधक होती है, इस नियमके अनुसार ‘संयतोंके स्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं’ इस सूत्रके द्वारा ‘औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके ही होता है’ यह सूत्र बाधा जाता है, क्योंकि, यह सूत्र पर है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ‘परो विधिर्बाधको भवति’ इस नियममें पर शब्द इष्ट अर्थात् अभिप्रेत अर्थका वाचक है, पर शब्दका ऐसा अर्थ लेनेपर जिसप्रकार ‘संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं’ इस सूत्रसे ‘औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता

१ जी स सू ९०

२ जी स. सू ७८

३ अपवादो यदन्यत्र चरितार्थस्तहि अन्तरगेण बाध्यते निरवकाशत्वरूपस्य बाधकत्ववीजस्याभावात् । परि. शे पृ ३८६

४ पूर्वापर बलान् विप्रतिपेक्षाम्नात् (विप्रतिपेक्षे पर कायमिति सूत्रात्) पूर्वस्य पर बाधकमिति यावत् । परि शे पृ २३७

५ विप्रतिपेक्षमूत्रस्थपरशब्दस्य एवाचित्वम् । परि शे पृ २४५

सप्पओजणो णिप्पओजणो ? ण त्रिदिय-पक्खो, पुप्फयंत-वयण-विणिग्गयस्स णिप्फलत्त-विरोहादो । ण चेदस्स सुत्तस्स णिच्चत्त-पयासण-फलं, णियम-सद्द-वदिरित्त-सुत्ताणमणिच्चत्त-प्पसंगादो । ण च एवं, 'ओरालियकायजोगो पज्जत्ताणं' ति सुत्ते णियमाभावेण अपज्जत्तेसु वि ओरालियकायजोगस्स अत्थित्त-प्पसंगादो । तदो णियम-सद्दो णावओ । अण्णहा अणत्थयत्त-प्पसंगादो । किमेदेण जाणाविज्जदि ? 'सम्मामिच्छाइट्ठि-संजदासंजद-संजद-ट्ठाणे णियमा पज्जत्ता' ति एदं सुत्तमणिच्चमिदि तेणं उत्तरसरीरमुट्ठाविद-सम्मामिच्छाइट्ठि-संजदासंजद संजदाण कवाड-पदर-लोगपूरण-गद-सजोगीण च सिद्धम-

है 'यह सूत्र बाधा जाता है, उसीप्रकार पूर्व अर्थात् 'औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है' इस सूत्रसे संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं, यह सूत्र भी बाधा जाता है, अतः शंकाकारके पूर्वोक्त कथनमें अनेकान्त दोष आ जाता है ।

शंका—जब कि कपाट-समुद्धातगत केवली-अवस्थामें अभिप्रेत होनेके कारण 'औदारिक मिश्रकाययोग अपर्याप्तकोंके होता है' यह सूत्र पर है तो 'संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्त होते हैं, इस सूत्रमें आये हुए नियम शब्दकी क्या सार्थकता रह गई ? और ऐसी अवस्थामें यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि उक्त सूत्रमें आया हुआ नियम शब्द सप्रयोजन है कि निष्प्रये ?

समाधान—इन दोनों विकल्पोंमेंसे दूसरा विकल्प तो माना नहीं जा सकता है, क्योंकि, पुष्पदन्तके वचनसे निकले हुए तत्त्वमें निरर्थकताका होना विरुद्ध है । और सूत्रकी नित्यताका प्रकाशन करना भी नियम शब्दका फल नहीं होता है, क्योंकि, ऐसा माननेपर सूत्रोंमें नियम शब्द नहीं पाया जाता है उन्हें अनित्यताका प्रसंग आ जायगा । परंतु ऐसा नहीं है, क्योंकि, ऐसा माननेपर 'औदारिककाययोग पर्याप्तकोंके होता है' इस सूत्रमें नियम शब्दका अभाव होनेसे अपर्याप्तकोंमें भी औदारिक काययोगके अस्तित्वका प्रसंग प्राप्त होगा, जो कि इष्ट नहीं है । अतः सूत्रमें आया हुआ नियम शब्द ज्ञापक है नियामक नहीं । यदि ऐसा न माना जाय तो उसको अनर्थकपनेका प्रसंग आ जायगा ।

शंका—इस नियम शब्दके द्वारा क्या ज्ञापित होता है ?

समाधान—इससे यह ज्ञापित होता है कि 'गमिथ्याहाट्ठि संयतासंयत और संयतस्थानमें जीव नियमसे पर्याप्तक होते हैं' यह सूत्र अनित्य है । अपने विषयमें सर्वत्र समान प्रवृत्तिका नाम नित्यता है और अपने विषयमें ही कहीं प्रवृत्ति हो और कहीं न हो इसका नाम अनित्यता है । इससे उत्तरशरीरको उत्पन्न करनेवाले सम्यग्गमिथ्याहाट्ठि, और संयतासंयतोंके तथा कपाट, प्रतर और लोकपूरण समुद्धातको प्राप्त केवलियोंके अपर्याप्तपना

१ कृताकृतप्रसंगि नित्य तद्विपरीतमनित्यम् । परि श्लो पृ २५०

२ जी. सं. सू. ७६.

३ जी. सं. सू. ९०

४ प्रतिष्ठु 'मि तेण' इति पाठ ।

पज्जत्तं ।

अद्वारद्व सरीरी अपज्जत्तो णाम । ण च सजोगम्मि सरीर-पट्टवणमत्थि, तदो ण तस्स अपज्जत्तमिदि ण, छ-पज्जत्ति-सत्ति-वज्जियस्स अपज्जत्त-ववएसादो । छहि इंदि-एहि विणा चत्तारि पाणा दो वा । दब्बेंदियाणं णिप्पत्ति पडुच्च के वि दस पाणे भवन्ति^१ । तण्ण घडदे । कुदो ? भाविंदियाभावादो । भाविंदियं णाम पंचण्हमिंदियाणं खओवसमो । ण सो खीणावरणे अत्थि । अध दब्बिंदियस्स जदि गहणं कीरदि तो सण्णीणमपज्जत्त-काले सत्त पाणा पिंडिदूण दो चेव पाणा भवन्ति, पंचण्हं दब्बेंदियाणमभावादो । तम्हा

सिद्ध हो जाता है ।

विशेषार्थ—‘सम्मामिच्छाद्वि-संजदासंजद संजद-द्वाने णियमा पज्जत्ता’ इस सूत्रको अनित्य बतलाकर उत्तरशरीरको उत्पन्न करनेवाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि और संयतासंयतोंको भी जो अपर्याप्तक सिद्ध किया है, इससे पेसा प्रतीत होता है कि इस कथनसे टीकाकारका यह अभिप्राय होगा कि तीसरे गुणस्थानमें उत्तरवैक्रियिक और उत्तर-औदारिक तथा पांचवें गुण-^२ में उत्तर-औदारिकको उत्पन्न करनेवाले जीव जबतक उस उत्तर-शरीरकी पूर्णता नहीं कर लेते हैं त अ ^१प्तक कहे गये हैं। जिसप्रकार तेरहवें गुणस्थानमें पर्याप्त नामकर्मका उदय रहते हुए और शरीरकी पूर्णता होते हुए भी योगकी अपूर्णतासे जीव अपर्याप्तक कहा जाता है, उसीप्रकार यहांपर भी पर्याप्त नामकर्मका उदय रहते हुए, योगकी पूर्णता रहते हुए और मूल शरीरकी भी पूर्णता रहते हुए केवल उत्तर शरीरकी अपूर्णतासे अपर्याप्तक कहा गया है ।

शंका—जिसका आरंभ किया हुआ शरीर अर्ध अर्थात् अपूर्ण है उसे अपर्याप्त कहते हैं। परंतु सयोगी-अवस्थामें शरीरका आरंभ तो होता नहीं, अतः सयोगीके अपर्याप्तपना नहीं बन सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, कपाटादि समुद्धात-अवस्थामें सयोगी छह पर्याप्तिरूप शक्तिसे रहित होते हैं, अतएव उन्हें अपर्याप्त कहा है ।

सयोगी जिनके पांच भावेन्द्रियां और भावमन नहीं रहता है, अतः इन छहके विना प्राण पाये जाते हैं। तथा समुद्धातकी अपर्याप्त अवस्थामें वचनबल और श्वासोच्छ्वासका अभाव हो जानेसे, अथवा तेरहवें गुणस्थानके अन्तमें आयु और काय ये दो ही प्राण पाये जाते हैं। परंतु कितने ही आचार्य द्रव्येन्द्रियोंकी पूर्णताकी अपेक्षा दश प्राण कहते हैं, परंतु उनका पेसा कहना घटित नहीं होता है, क्योंकि, सयोगी जिनके भावेन्द्रियां नहीं पाई जाती है। पांचों इन्द्रियावरण कर्मोंके क्षयोपशमको भावेन्द्रिय कहते हैं। परंतु जिनका आवरणकर्म समूल नष्ट हो गया है उनके वह क्षयोपशम नहीं होता है। और यदि प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंका ही ग्रहण किया जावे तो संज्ञी जीवोंके अपर्याप्त कालमें सात प्राणोंके स्थानपर कुल दो ही प्राण कहे जायेंगे, क्योंकि, उनके द्रव्येन्द्रियोंका अभाव होता है। अतः यह सिद्ध हुआ कि सयोगी जिनके चार

वरण-खओवसम-लक्खण-पंचिंदियपाणा तत्थ संति, खीणावरणे खओवसमाभावादो । आणा-
वाण-भासा-मणपाणा वि णत्थि, पज्जत्ति-जणिद-पाण-सण्णिद-सत्ति-अभावादो । ण सरीर-
ो वि अत्थि, सरीरोदय-जणिद-कम्म-णोकम्मागमाभावादो । तदो एक्को चेव
पाणो । उवयारमस्सिऊण एक्को वा छ वा सत्त वा पाणा भवंति । एस पाणो पुण

हैं नहीं, क्योंकि, ज्ञानावरणादि कर्मोंके क्षय हो जानेपर क्षयोपशमका अभाव पाया जाता है ।
इसीप्र आनापान, भाषा, और मनःप्राण भी उनके नहीं हैं, क्योंकि, पर्याप्तिजनित प्राण-
ली शक्तिका उनके अभाव है । उसीप्रकार उनके कायबल नामका भी प्राण नहीं है,
क्योंकि, उनके शरीर नामकर्मके उदय-जनित कर्म और नोकर्मोंके आगमनका अभाव है । इस-
लिये अयोगकेवलीके एक आयुप्राण ही होता है ऐसा समझना चाहिये । किन्तु उपचारका
आश्रय लेकर उनके एक प्राण, छह प्राण अथवा सात प्राण भी होते हैं ।

विशेषार्थ—वास्तवमें अयोगी जिनके एक आयु प्राण ही होता है फिर भी उपचारसे
उनके यहां पर एक या छह या सात प्राण बतलाये हैं । ' जहां मुख्यका तो अभाव हो किन्तु
कथन करनेका प्रयोजन या निमित्त हो वहां पर उपचारकी प्रवृत्ति होती है ' उपचारकी
इस व्याख्याके अनुसार यहां चौदहवें गुणस्थानमें क्षयोपशमरूप मुख्य इन्द्रियोंका तो अभाव है ।
फिर भी अयोगी जिनके पंचेन्द्रियजाति नामकर्मका उदय पाया जाता है और वह जीवविपाकी
है, इस निमित्तसे उन्हें पंचेन्द्रिय कहना बन जाता है । इसलिये उनके पांच इन्द्रिय प्राणोंका
कथन भी सप्रयोजन है । इसप्रकार पांच इन्द्रियोंमें आयुको मिला देने पर छह प्राण
हो जाते हैं । यहां पर इन्द्रियोंसे अभिप्राय उस शक्तिसे है जिससे अयोगी जिनमें पंचेन्द्रिय
पनेका व्यवहार होता है । परंतु उस शक्तिके सम्पादनका या पांच इन्द्रियोंका आधार शरीर है,
अतः इस निमित्तसे अयोगी जिनके कायबलका कथन करना भी सप्रयोजन है । इसप्रकार पूर्वोक्त
छह प्राणोंमें बलके और मिला देने पर सात प्राण हो जाते हैं । यद्यपि उनके पहलेकी छह
पर्याप्तियां उसीप्रकारसे स्थित हैं, अतः वे पर्याप्तक कहे जाते हैं । तथा पर्याप्तक अवस्थामें
मनःप्राण भी होता है, इसलिये उनके मनःप्राणका भी कथन करना चाहिये था । परंतु उसके
कथन नहीं करनेका यह कारण प्रतीत होता है कि उनमें संज्ञीव्यवहार लुप्त हो गया है । औप-
चारिक संज्ञीव्यवहार भी उनमें नहीं माना गया है, अतः अयोगियोंके मनः प्राण नहीं कहा ।
इसीप्रकार वचनबल और श्वासोच्छ्वासके अभावका भी कारण समझ लेना चाहिये । ऊपर सयोगी
जिनके जो पांच इंद्रियां और एक मन इसप्रकार छह प्राणोंका निषेध करके केवल चार ही प्राण
बतलाये हैं वह मुख्य कथन है । अतः जिस उपचारकी अपेक्षा यहां छह अथवा सात प्राण कहे
हैं वही उपचार वहां भी लागू होता है । आयु प्राण तो अयोगियोंके मुख्य प्राण है फिर भी उसे
भी उपचारमें ले लिया है, इसलिये इसे कथनका विवक्षाभेद ही समझना चाहिये । यहां
उपचारका प्रयोजन ऐसा प्रतीत होता है कि विवक्षित पर्यायमें रखना जो आयुका काम है

अप्पपाणो । खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण अलेस्सा; लेव-कारण-जोग-कसायाभावादो । भवसिद्धिया, खइयसम्माइट्ठिणो, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा होति ।

सिद्धाणं ति भण्णमाणे अत्थि एयं अदीद-गुणट्ठाणं, अदीद-जीवसमासो, अदीद-पञ्जतीओ, अदीद पाणा, खीणसण्णा, सिद्धगदी, अणिंदिया, अकाया, अजोगिणो, अवगदवेदा, खीणकसाया, केवलणाणिणो, णेव संजदा णेव असंजदा णेव संजदासंजदा, केवलदंसण, दब्ब-भावोहिं अलेस्सिया, णेव भवसिद्धिया, खइयसम्माइट्ठिणो, णेव सण्णिणो

वह यहां भी पाया जाता है, इसलिये तो वह मुख्य प्राण है। फिर भी जीवनका अवस्थान अल्प है। और अवस्थानके कारणभूत नये कर्मोंका आना, योगप्रवृत्ति आदि भी नष्ट हो गये हैं, अतः आयु भी इस अपेक्षासे औपचारिक प्राण कहा जाता है। इसप्रकार अयोगियोंके उपचारसे एक या छह या सात प्राण कटे गये हैं।

प्राण आलापके आगे-क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अयोग, अपगत-वेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे लेइयारहितस्थान होता है। लेइयाके नहीं होनेका यह कारण है कि कर्म-लेपके कारण-भूत योग और कषाय, इन दोनोंका ही उनके अभाव है। लेइया आलापके आगे-भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, संज्ञी और असंज्ञी विकल्पसे रहित, अनाहारक, साकारोपयोग तथा अना-कारोपयोग इन दोनों ही उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

सिद्धपरमेष्ठीके ओघालाप कहनेपर—एक अतीत-गुणस्थान, अतीत-जीवसमास, अतीत पर्याप्ति, अतीत-प्राण, क्षीण, संज्ञा, सिद्धगति, अनिन्द्रिय, अकाय, अयोगी, अवेदी, क्षीणकषाय, केवलज्ञानी, संयत, असंयत और सयतासंयत विकल्पोंसे विमुक्त, केवलदर्शनी, द्रव्य और भावसे अलेइय, भव्यसिद्धिक-विकल्पातीत, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों

नं २६

अयोगिकेवलीके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा.	सय	द.	ले	म.	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१	१	१	१	१	०	०	०	१	१	१	६	१	१	१	१	२
जो	प		ज	म	पवे	तस	अयो	अपुन	अक.	के	यथा.	के द.	द्र. ०	मा. अले	म	क्षा	अनु	अना.	साका अना यु उ

येव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा होंति ।

एव मूलोद्यालावा समत्ता ।

आदेसेण गदियाणुवादेण णिरयगदीए णेरइयाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुण-
ट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि
सण्णाओ, णिरयगदी, पंच्चिदियजादी, तसकाओ, ओरालिय-ओरालियमिस्म-आहार-आहार-
मिस्सेहिं विणा एगारह जोग, णवुंसयवेदो, णेरइया दव्व-भावेहिं णवुंसयवेदा चेव भवन्ति
त्ति । चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण कालाकालाभास-काउ-
सुक्कलेस्साओ, दव्वलेस्सा कालाकालाभासा सुट्ठकण्हेत्ति' जं वुत्तं होदि । एसा णेरइयाणं

विकल्पोंसे मुक्त, अनाहारक, साकारोपयोग और अनाकारोपयोगसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

इसप्रकार मूल ओघालाप समाप्त हुए।

आदेशकी अपेक्षा गतिमार्गणाके अनुवादसे नरकगतिमें नारकियोंके आलाप कहनेपर-
आदिके चार गुणस्थान, सञ्जी-पर्याप्त सञ्जी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों
अपर्याप्तियां, पर्याप्तकालकी अपेक्षा दस प्राण और अपर्याप्तकालकी अपेक्षा सात प्राण, चारों
संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, आहार्-
रककाययोग, आहार श्रकाययोग, इन चारों योगोंके बिना ग्यारह योग, नपुंसकवेद होता
है। एक नपुंसकवेदके होनेका यह कारण है कि नारकी जीव द्रव्य और भाव इन दोनों ही
वेदोंकी अपेक्षा नपुंसकवेदी होते हैं। वेद आलापके आगे चारों कपायें, तीनों अज्ञान और
तीन ज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्तत्वकी अपेक्षा
कालाकालाभास लेश्या, और अपर्याप्तत्वकी अपेक्षा कापोत और शुक्लेश्या होती है। पर्याप्त-
अवस्थामें जो कालाकालाभास लेश्या कही है उसके कहनेका यह तात्पर्य है कि पर्याप्त अव-
स्थामें कालाकालाभास अर्थात् अतिकृष्ण लेश्या होती है। नारकियोंकी पर्याप्त-अवस्थामें यह

१ प्रतिपु 'करणेत्ति' इति पाठः ।

ਸੰ ੨੭

सिद्धोंके आलाप.

गु.	जी	प	भा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संक्षि	आ	उ
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	०	०	१	०	१	२
अ.गु	अ जी.	अ प	अ भा	क्षणस.	सि अनि	अका	अयो	अपा	दीणक.	के	अनु	के द	अले	अनु	क्षा	अनु	अना	ताका.	अना मु उ

पञ्चत्तकाले सरीरलेस्सा भवदि । विग्गहगदीए पुण णेइयादि-सव्व-जीवाणं दव्वलेस्सा सुक्का चेव भवदि, कम्म-विस्ससोवचयस्स धवलवण्णं मोत्तूण अण्ण-वण्णाभावादो । सरीर-गहिद-पटम-समय-प्पहुडि जाव अपञ्चत्त-काल-चरिम-समओ चि ताव सरीरस्स काउलेस्सा चेव, संवलिद-सयल-वण्णादो । भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२८} ।

तेसिं चेव पञ्चत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पञ्चत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काला-कालाभासलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ

शरीरलेइया होती है। किन्तु विग्रहगतिमें नारकी आदि सभी जीवोंकी द्रव्यलेइया शुक्ल ही होती है, क्योंकि, कर्मोंके विस्रसोपवयका धवलवर्ण छोड़कर अन्यवर्ण नहीं होता है, तथा शरीर-ग्रहण करनेके प्रथम समयसे लगाकर अपर्याप्तकालके चरम समयतक शरीरकी कापोतगेइया ही होती है, क्योंकि, उस समय शरीर संवलित सकल वर्णवाला होता है। भावकी अपेक्षा तो कृष्ण, नील और कापोतलेइया होती है। लेइया आलापके आगे भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं नारकियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी ओघालाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेइया और भावसे कृष्ण, नील और कापोतलेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक,

नं. २८

नार ।मान्य आलाप.

शु	जी	प.	प्रा	स.	ग	इ	का	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द	ले.	म.	स.	सक्षि	आ	उ
४	२	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	६	१	३	द्र ३	२	६	१	२	२
स प	प.	७			न. प		त.	म. ४	न.		अज्ञा ३	अस.	के द.	कृ. का	म. अ		स	आहा.	साका.
स अ.	६							व ४			ज्ञा ३		विना	शु				अना	अना.
	अ							वै २						मा ३					
								कर्म १						अशु					

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा पच्च णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं खइयसम्मत्तं मिच्छत्तं च । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

आहारक, ।रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नारकियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि और असंयत-सम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रि श्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, विभंगज्ञानके विना कुमति और कुश्रुति ये दो अज्ञान तथा मति, श्रुत और अवधि ये तीन ज्ञान, इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेझ्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेझ्याएं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व क्षायोपशमिक और क्षायिक ये तीन सम्यक्त्व होते हैं । इनमें वेदक त्व तो कृतत्यकवेदकी अपेक्षा होता है और उसमें क्षायिक और मिथ्यात्वके मिला देने पर नारकियोंकी अपर्याप्त अवस्थामें तीन सम्यक्त्व होते हैं । सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

१ प्रथमायां पृथिव्या पर्याप्तापर्याप्तमाना क्षायिक क्षायोपशमिक चास्ति । स सि १, ७

न २९

नारकसामान्य पर्याप्त आलाप

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ.	उ
४	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	६	१	३	द्र १	२	६	१	१	२
मि	स	प			न			म	४	न	अज्ञा ३	अस	के द	क	म.		स.	आहा	साका
मा	प							व. ४			ज्ञा ३		विना	मा ३	अ				अना
म								वे. १						अशु					
अ																			

न ३०

नारकसामान्य अपर्याप्त आलाप

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
२	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	५	१	३	द्र २	२	३	१	२	२
मि	स	अ	अप		न			वे मि	न		कुम	अम	के द	का श	म	मि	स	आहा	साका.
अवि								वै	कर्म		कुश्रु.		विना	मा ३	अ	क्षा		अना	अना
											ज्ञा ३			अशु		क्षायो			

संपहि णेरइय-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा' ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण कालाकाला-

अब नारकी मिथ्यादृष्टिजीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण और सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभासलेख्या और अपर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व सन्निक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही नारकी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसम्बन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरक-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और कर्मणकाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभासकृष्ण-

नं ३१

नारकसामान्य-मिथ्यादृष्टि आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सजि	आ	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	३	१	२	द्र ३	२	१	१	२	२
मि	म प	प प	प प		न	प	न	म ४	न		अस	च	क	का	म	मिथ्या	स	आहा	साका
	म अ	६	७					व. ४			उ	अ	अ	शु	अ			अना	अना.
		अ	अ					वै २						मा ३					
								कर्म १						अशु					

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा पच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं खइयसम्मत्तं^१ मिच्छत्तं च । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नारकियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि और असंयत-सम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवस, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाये, विभंगज्ञानके विना कुमति और कुश्रुति ये दो अज्ञान तथा मति, श्रुत और अवधि ये तीन ज्ञान, इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्यापं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व क्षायोपशमिक और क्षायिक ये तीन सम्यक्त्व होते हैं । इनमे वेदकसम्यक्त्व तो कृतत्यकृवेदककी अपेक्षा होता है और उसमें क्षायिक और मिथ्यात्वके मिला देने पर नारकियोंकी अपर्याप्त अवस्थामें तीन सम्यक्त्व होते हैं । सम्यक्त्व आलापके आगे साज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

१ प्रथमायां पृथिव्या पर्यातापर्यातकानां क्षायिक क्षायोपशमिक चास्ति । स मि १, ७

न २९

नारकसामान्य पर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
४	१	६	१०	४	१	१	१	९	७	४	६	१	३	द्र १	२	६	१	१	२
मि	स	प			न			म ४	न		अज्ञा ३	अस	के द	कृ	म.		स.	आहा	साका.
मा	प							व. ४			ज्ञा ३		विना	मा ३	अ				अना
स								वै. १						अशु					
अ																			

न ३०

नारकसामान्य अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
२	१	६	७	४	१	१	१	२	२	१	४	५	३	द्र २	२	३	१	२	२
मि	स	अ	अप		न			वै मि	न		कुम	अस	के द	का श्रु	म	मि	स	आहा	साका.
अवि								कर्म			कुश्रु.		विना	मा ३	अ	क्षा		अना	अना
											ज्ञा ३			अशु		क्षायो			

संपहि णेरइय-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण कालाकाला-

अब नारकी मिथ्यादृष्टिजीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण और सात प्राण, चारों संज्ञाप, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कपायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभासलेख्या और अपर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेख्यायें, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्यायें, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व सन्निक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नारकी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसम्बन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाप, नरक-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और कर्मणकाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कपायें, तीनों अज्ञान, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभासकृष्ण-

नं ३१

नारकसामान्य-मिथ्यादृष्टि आलाप.

शु	जी	प	श्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	रु	ज्ञा	सय	द.	ले	म	स	सज्जि	आ	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	३	१	२	३	२	१	१	२	२
मि	म प	प	प	प	न	प	प	म ४	न		अस	व.	क	म	सिथ्या	स	आहा.	साका	
	म अ	अ	अ	अ				वै २			अ	अ	अ	अ	अ		अना	अना	
								कर्म. १					मा ३	अशु					

भासलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा” ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, दोणिण अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हेंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

लेइया, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइया, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हों नारकी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसवन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों , नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्र और कार्मण ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, कुमाति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं ३२

नारकसामान्य-मिथ्यादृष्टि पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स.	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स	सज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र १	२	१	१	१	२
मि	स अ.				न	पचे	त्रम	म ४ व ४ वै १	न		अज्ञा	अस.	चक्षु अच	मा ३ अशु	म	म	स	आहा	साका अना
															मिथ्याः				

नं. ३३

नारकसामान्य-मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्ति	आ	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र २	२	१	१	२	२
मि.	स	अ	ल	ल	न	पवे	त्रस	वै. मि			कुम	अस	चक्षु	का	म	१	स	आहा	राका.
								कर्म			कुषु		अचक्षु.	शु	अ			अना	अना
														मा ३					
														अशु					

सासणसम्माइड्ढीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा' ।

सम्माभिच्छाइड्ढीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण तिहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजम, दो दंसण, दव्वेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण किण्ह-णील काउलेस्साओ; भवसिद्धिया,

नारकी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहनेपर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास लेइया, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नारकी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास लेइया, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं, भव्यसिद्धिक

न. ३३

नारकसामान्य-सासादन आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	३	१	१	१	१	२
सा	स	प			न	पंचे	त्रस	म	४	अज्ञा	अय	च	कृ	मा	म	सासा	स	आहा.	साका.
								वै	१			अच	अशु						अना

सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

असंजदसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्ज-
त्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिदिय-
जादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम,
तिण्णि दंसण, दब्बेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-
लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-
वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवममासो, छ

सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नारकी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि
गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और सज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और
छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण और सात प्राण, चारों सजापं, नरकगति, पचेन्द्रियजाति,
त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारो वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकामिश्रकाययोग और
कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कपायें, आदिके तीन ज्ञान, असंयम,
आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेज्या तथा कापोत और शुक्ल लेज्याए,
भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेज्याएं, भव्यसादिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोप-
शमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक साकारोपयोगी और अनाकारो-
पयोगी होते हैं ।

न ३५

नारकसामान्य-सम्यग्मिथ्यादृष्टि आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	३	१	१	१	१	२
सम्य-	स प				न	प	त्रस-	म ४ व ४ वे १	म	ज्ञान मिश्र अज्ञा	अप	च जव	क ठ भा ३ अशु	म सम्य	स	संज्ञि	आहा	साका अनाका	

न ३६

नारकसामान्य-असंयत सम्यग्दृष्टिके सामान्य आलाप

गु	जी	प	प्रा	म	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	३	१	३	३	१	३	१	२	२
अभि	प.प.स.स	प.क.अ	७		न	प	त्रस	म.६ प.४ वे.२ कार्म	म	मति श्रुत अव	अम	के.ठ त्रिना	क. ठ भा.३ अशु	म. आ. क्षायो	म	स	१ म	आहा अना	साका अना

पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि मम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुककलेस्साओ, भावेण जहणिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण

उन्ही नारकी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक सञ्ज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, धायिक और धायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही नारकी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक सञ्ज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कर्मण ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्या, भव्यसिद्धिक उपशमसम्यक्त्वके बिना दो सम्यक्त्व

नं. ३७

नारकसामान्य-असंयतसम्यग्दृष्टि पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	मति.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	१	४	३	१	३	१	१	३	१	१	२
अग्नि	सप				न	पंचे	त्रस	म	४	४	मति	अस	के	द	म	औ	स	आहा	साका.
								न	४	४	श्रुत		विना	मा	३	क्षा.			अना
								वे	१		अनु.			अशु		क्षायो			

विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-
वजुत्ता वा^{१८} ।

पढमादि-मत्तहं पुढवीणं लेस्साओ जाणावेई एसा गाहा—

काऊ काऊ काऊ णीला णीला य णील-किण्हा य ।

किण्हा य परमकिण्हा लेस्सा पढमादिपुढवीणं ॥ २२२ ॥

पढमाए पुढवीए णेरइयाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीव-
समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ,
णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तमकाओ, एगारह जोग, णवुंमयवेद, चत्तारि कमाय,

सन्निक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रथमादि सातों पृथिवियोंकी लेख्याओंको यह निम्न गाथा बतलाती है—

कापोत, कापोत, कापोत और नील, नील, नील और कृष्ण, कृष्ण तथा परमकृष्ण
लेख्या प्रथमादि पृथिवियोंमें क्रमशः जानना चाहिये ॥ २२२ ॥

विशेषार्थ—प्रथम पृथिवीमें जघन्य कापोतलेख्या होती है । दूसरी पृथिवीमें
मध्यम कापोतलेख्या होती है । तीसरी पृथिवीमें उत्कृष्ट कापोतलेख्या और जघन्य नीललेख्या
होती है । चौथी पृथिवीमें मध्यम नीललेख्या होती है । पांचवीं पृथिवीमें उत्कृष्ट नीललेख्या
और जघन्य कृष्णलेख्या होती है । छठी पृथिवीमें मध्यम कृष्णलेख्या होती है और सातवीं
पृथिवीमें परमकृष्णलेख्या होती है ॥

प्रथम-पृथिवी गत नारकोके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान,
संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तिगां, छहों अपर्याप्तिगां,
दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग
चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह

१ गो. जी. ५२९ प्रतिपु 'काऊ काऊ तह काओ णील णीला य णील किण्हा य' इति पाठ ।

नं. ३८

नारकसामान्य-असंयतसम्यग्दृष्टि अपर्याप्त आलाप

गु.	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	मा	सय	द	ले	भ	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	२	१	२	१	४	३	१	३	द्र २	१	२	१	२	२
सं.	स.अ	ल	ल		न.	प	त्रम	वै	मि	न	मति	अस	के	का.	भ	क्षायो	स	आहा	साका
ल								कर्म			श्रुत		द	शु				अना.	अना
											अव		विना	मा ३					
														अशु					

छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण कालाकालाभास-काउ-मुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिआ काउलेस्सा, भवसिद्धिआ अभवसिद्धिआ, छ सम्मत्त, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हेति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमामो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णडुंसयवेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण कालाकाला-भासलेस्सा, भावेण जहण्णिआ काउलेस्सा, भवसिद्धिआ अभवसिद्धिआ, छ सम्मत्तं,

योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेइया तथा अपर्याप्त-अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेइयाए, भावसे जघन्य कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही प्रथम-पृथिवी गत नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाप, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकिक्रियकाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषायें, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेइया, भावसे जघन्य कापोतलेइया, भव्य-

नं. ३९

प्रथमपृथिवी-नारकसामान्य आलाप.

शु	जी	प	शा	स	ग	इ.	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
४	१	६ प.	१०	४	१	१	१	११	१	४	६	१	३	३	२	६	१	२	२
मि	स प	६ अ	७		न			म ४	म ४	ज्ञान ३	अस.	के द.	विना	क	म	स.	आहा	साका	
सा.	स अ							व ४	व ४	अज्ञा				का	म		अना	अना.	
सम्य								का १	का १					शु	म				
अवि														का.	छ				

मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हेति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद. चत्तारि कसाय, पंच पाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ. सुक्कलेस्साओ, भावेण जहणिया काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हेति अणागारुवजुत्ता वा ।

सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक. छहो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—मिथ्यादृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, एक संज्ञो-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कर्मण ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपायें, कुमति कुश्रुत ओर आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेष्ट्याएँ, भावसे जघन्य कापोतलेष्ट्या. भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक मिथ्यात्व, श्रायोपशमिक और क्षायिक ये तीन सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, अनाहारक. साकारोपयोगी अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४०

प्रथमपृथिवी-नारक पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	ङ	का	यो	वे	क	ज्ञा	मय	द	ले	भ	म	मत्ति	आ	उ
४	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	९	१	३	१	२	६	१	१	२
मि	पं			न			म	४		जा	३ अस	मि	ड	म		स	आहा	साका	
मा	रा						व	४		अजा	३	मि	क	अम				अना	
म							वै	१					मा	१					
अ													का						

नं. ४१

प्रथमपृथिवी-नारक अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	ङ	का	यो	वे	क	ज्ञा	मय	द	ले	भ	म	मत्ति	आ	उ
२	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	५	१	३	३	२	३	१	२	२
मि	म अ						वै	मि		मि	कुम	अस	के	द	का	म	मि	आहा	साका
अवि					न	पंच	वस	कर्म		मि	कुश्रु	जा. ३	विना	शु	मा १	क्ष	सायो	अना	आना
														का					

संपहि पढम-पुढवि-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहणिया काउ-लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-वज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा' ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण

अब प्रथम-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञाप, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास लेइया तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और - लेइयाणं, भावसे जघन्य कापोत लेइया; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सं, आहा-रक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर-एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाप, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन,

नं. ४२

प्रथमपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि आलाप.

यु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय.	द	ले.	म.	स.संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	३	१०	४	२	१	१	११	१	४	३	१	२	द्र ३	२	१	२	२
मि	म	प	प	७	न.	पु	पु	म ४	पु	अज्ञा	अस		च	कृ. का	म.	मि.	आहा.	साका
	म	अ	अ					व. ४					अच	उ	अम	स	अना.	अना.
								वे २						मा १				
								का १						का.				

कालाकालाभासलेस्सा, भावेण जहणिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असज्जम, दो दंसण, दब्बेण काउ-
सुक्कलेस्साओ, भावेण जहणिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेख्या, भावसे जघन्य कापोतलेख्या, भव्यसिद्धिक अभव्य-
सिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही प्रथम-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—
एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहो अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाए, नरकगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेख्याए, भावसे जघन्य कापोतलेख्या भव्य-
सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अना-
कारोपयोगी होते हैं ।

१ प्रतिपु 'अभवसिद्धिया' इति पाठो नास्ति

नं. ४३

प्रथमपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	जा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	८	१	१	९	८	४	३	१	२	द्र १	२	१	१	८	२
मि	पप			न	पचे	त्रम	म	४	न	अजा	अस	च	अच	कू	म	मि	स	आहा	साका
							व	४	वै १					मा १	अ				अना.

नं. ४४

प्रथमपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	म	ग	इ	का	यो	वे	क	जा	सय	द	ल	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	०	१	२	द्र २	०	१	१	२	२
मि	ल			न	प	त्रस	वे	मि	मि	कूम	अम	च	अच	का	म	मि	म	आहा	साका
							कर्म		मि	कुश्रु				शु	अ			अना	जना
														मा १	का				

सासणसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्ज-
त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग,
णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण कालाकाला-
भासलेस्सा, भावेण जहण्णिआ काउलेस्सा; भवसिद्धिया, मासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहा-
रिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

सम्मामिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव
जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजम,
दो दंसण, दब्बेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण जहण्णिआ काउलेस्सा; भवसिद्धिया,

प्रथम-पृथिवी-गत सासादनसम्यग्दृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक सासादन
गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति,
पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाययोग ये नौ
योग, नपुंसकवेद चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे
कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्या, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व,
सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रथम-पृथिवी-गत सम्यग्मिथ्यादृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यात्व
गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति,
पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाययोग ये नौ योग,
नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान-मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे
कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्या, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व,

नं ४५

प्रथमपृथिवी-नारक सासादनसम्यग्दृष्टि आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	वा	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	भ	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	८	१	१	१	१	२
मा	प	प			न.	पचे	त्रस	म ४	व ४	वे १	अज्ञा	अस	च	ह १	म.	समा	स	आहा	२
													अच	मा १	का				साका. अना

सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाग सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरियगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण जहण्णिणा काउलेरसा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रथम-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तिया और छहों अपर्याप्तियां, दशो प्राण और सात प्राण, चारों सञ्ज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे पर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेश्या तथा अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कापोत और शुक्ललेश्या, भावसे जघन्य कापोतलेश्या. भव्यसिद्धिक, औपशमिक क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, अनाहारक साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं ४६

प्रथमपृथिवी-नारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र १	१	१	१	१	२
स	प			न	पचे	त्रस		म ४	न		ज्ञान	अम	च	क	म	सम्य	स	आहा	साका
म								व ४			अज्ञा.		अ	मा. १					अना
								वै १			मिश्र			का					

नं. ४७

प्रथमपृथिवी-नारक असंयतसम्यग्दृष्टि सामान्य आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	३	१	३	द्र ३	१	३	१	२	२
स	प	६	७	न	पचे	त्रस		म. ४	न		मति.	अम	ने. द.	ट	म	आ	स	आहा.	साका.
म	अ							व. ४			श्रुत.		विना	शु		क्ष		अना.	अना.
								व. २			अव			मा १		क्षायो			
								का. १						का					

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दच्चेण काला-
कालाभासलेस्सा, भावेण जहण्णि या काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो,
आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दच्चेण काउ-
सुकलेस्साओ, भावेण जहण्णि या काउलेस्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो

उन्ही प्रथम-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दृष्टि नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेइया, भावसे जघन्य कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं प्रथम-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दृष्टि नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ललेइयापं, भावसे जघन्य कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, उप-
शमसम्यक्त्वे विना क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक,

न. ४८

प्रथमपृथिवी-नारक असंयतसम्यग्दृष्टि पर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	मा	स	ग	ड	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स	संज्ञि	आ.	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	३	१	३	१	१	२
क	स				न		प	म	४	न	मति	अस	के द	कृ	म.	जौ.	स.	आहा.	साका.
ले	प						प	व. ४	वे. १		श्रुत		विना	मा	१	क्षा			अना
								वे. १			अव			का		क्षायो.			

सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा १।

विदियाए पुढवीए णेरइयाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीव-
समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरय-
गदी, पच्चिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुसयवेद, चत्तारि कमाय, छ णाण,
असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिम-
काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्णिणो,
आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ० ।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं ।

द्वितीय-पृथिवी-गत नारकोंके आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त
और सज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास. छहों पर्याप्तिया, छहों अपर्याप्तिया. दशों प्राण, सात
प्राण, चारों सज्ञाए, नारकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय. चारों मनोयोग चारों वचनयोग,
वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद,
चारों कषाय. तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन,
द्रव्यसे पर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा कालाकालाभास कृष्णलेइया तथा अपर्याप्त अवस्थाकी
अपेक्षा कापोत और शुक्ल लेइयाए, भावसे मध्यम कापोतलेइया. भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक,
क्षायिक सम्यक्त्वके विना पांच सम्यक्त्व. सज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और
अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४९

प्रथमपृथिवी-नारक असंयतसम्यदृष्टि अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	२	२	१	४	३	१	३	द्व २	१	२	१	२	२
अवि	स अ	अप		न			वि	मि	न		मति	अस	के द	ना शु	म	क्षा	स	आहा	साका
							वि	कर्म			श्रुत		विना	मा १		क्षायो		अना	अना

नं. ५०

द्वितीयपृथिवी-नारक सामान्य आलाप.

गु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ	उ
४	२	६	१०	४	१	१	२	१	१	४	६	१	३	द्व ३	२	५	१	२	२
मि.	म प	प.	७	न.	प	न.	म.	४	न		अज्ञा ३	अस.	के द.	क	म.	जी	स	आहा	मासा.
सा	स अ.	६					व ४				ज्ञान ३		विना	का	अ	क्षायो.		अना	अना.
मम्य		अ					वे २							शु		मि.			
अ							का १							मा १		मासा			
														ना		मम्य			

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णयुंसयवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असजम, तिण्णि दसण, दब्बेण काला-कालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्म-त्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो, मागारुज्जुत्ता होंति अणागारुज्जुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णयुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो,

उन्ही द्वितीय-पृथिवी-गत नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेइया, भावसे मध्यम कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, धायिकसम्यक्त्वके बिना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही द्वितीय-पृथिवी-गत नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेइयाप, भावसे मध्यम कापोतलेइया, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक साकारोपयोगी और

नं ५१

द्वितीयपृथिवी-नारक पर्याप्त आलाप

गु	जी.	प	प्रा	सं.	ग	इ	का.	यो.	वे	क.	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स	संज्ञि	आ	उ
४	१	६	१०	४	१	१	१	१	१	४	६	१	३	३	२	५	१	२	२
मि	प			न		प	त	म	व	ज्ञा	अज्ञा	अस	के	क	म	मि	स	आहा	साका
ग	स							व	वै				विना,	मा	अ.	सासा			अना
अ								१					का.		क्षायो.	सम्य.			

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण कालाकालाभास-काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा काउलेस्सा, भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

अनाकारोपयोगी होते हैं ।

द्वितीय-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और सज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवस , छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण. प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस-काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेस्या तथा कापोत और शुक्ल लेस्यापं, भावसे मध्यम कापोतलेस्या, भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक मिथ्यात्व, संज्ञिक आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ५२

द्वितीयपृथिवी-नारक अपर्याप्त आलाप.

ग	जी	प	प्रा	म	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ.	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	३	२	१	१	२	२
मि	ल	अ			न	प.	वै	मि	कु	कु	कु	अम	चक्षु	का.	म.	मि.	स	आहा	साका
	म						कर्म	कर्म	कु	कु	कु		अच	शु	अ			अना	अना
														मा. १					
														का					

नं ५३

द्वितीयपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि सामान्य आलाप

ग	जी	प	प्रा	म	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	३	१	७	३	२	१	१	२	२
मि	अ	प	७		न	प	म	४	म	अ	अना	अम	चक्षु	कु	म	मि	स	आहा	साका
	म	अ					व	४	व				अच	का. शु	अ			अना	अना
	म	अ					व	४	व					मा. १					
							का	१	का					का					

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दन्वेण काला-कालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिमा काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दन्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण मज्झिमा काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं द्वितीय-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग और वैकियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेइया, भावसे मध्यम कापोत-लेइया, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं द्वितीय-पृथिवी-गत मिथ्यादृष्टि नारकोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ललेइयापं, भावसे मध्यम कापोतलेइया, भव्य-

न. ५३

द्वितीयपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि पर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	१	२	१	१	१	२
मि	स	प			न.	पचे.	वस.	म	व.	४	अज्ञा	अस	च	कृ	म	मि	स	आहा	साका.
								४	१				अव	मा	१	अ.			अना.
								१					का						

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सासणसम्माइद्धीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिम-काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सिद्धिक. अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व संज्ञिक, आहारक, अनाहारक. साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

द्वितीय-पृथिवी गत सासादनसम्यग्दृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर-एक सासादन गुण-स्थान, एक संबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेख्या, भावसे मध्यम कापोतलेख्या, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यग्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ५५

द्वितीयपृथिवी-नारक मिथ्यादृष्टि अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	३	२	१	१	२	२
मि.	स				न	पंचे	त्रम	वै. मि			कुम.	अध	चक्षु	का	म	मि	म	आहा	साका.
अ	अ							कर्म			कुक्षु		अचक्षु.	शु	अ			अना	अना.
														मा					
														का					

नं. ५६

द्वितीयपृथिवी-नारक सासादनसम्यग्दृष्टि आलाप

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	म.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	३	१	१	१	१	२
मा	स				न	पंचे	त्रम	म. ४			अज्ञा	अस	चक्षु	का	म	म	म	आहा	माका
								व ४					अच.	मा				अना	अना
								वै १						का					

सम्माभिच्छाड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ज-
त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग,
णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजम, दो
दंसण, दब्बेण कालाकालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिमा-काउलेस्सा; भवसिद्धिया,
सम्माभिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^० ।

असंजदसम्माड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव
जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण
कालाकालाभासलेस्सा, भावेण मज्झिमा काउलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण विणा दो

द्वितीय-पृथिवी-गत सम्यग्मिथ्यादृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यात्व
गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारों संज्ञाएं,
नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाय-
योग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनो अज्ञानमिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम,
चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे मध्यम कापोत-
लेश्या, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-
कारोपयोगी होते हैं ।

द्वितीय-पृथिवी-गत असंयतसम्यग्दृष्टि नारकोंके आलाप कहने पर—एक अविरत-
सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों
संज्ञाएं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकि-
यिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके
तीन दर्शन, द्रव्यसे कालाकालाभास कृष्णलेश्या, भावसे मध्यम कापोतलेश्या, भव्यसिद्धिक,

नं. ५७

द्वितीयपृथिवी-नारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि आलाप.

गु.	जी.	प.	मा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र १	१	१	१	१	२
स. प					न	पि	पि	म ४	पि	ज्ञान	अस	च	अच	कृ	म १	सम्य	स	आहा	साका.
								वै १			अज्ञा			मा १					अनाका
											मिथ			का					

सम्भन्तं, शण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^८ ।

एवं तदिय-पुढवि-आदि जाव सत्तम-पुढवि त्ति चट्ठहं गुणट्ठाणणमालावो वत्तव्वो । णवरि विसेसो तदियाए णवण्हं इंदयाणं मज्झे उवरिम अट्ठसु इदएसु उक्कस्सिया काउलेस्सा भवदि । हेट्ठिमए णवमे इंदए केसिंचि जीवाणभुक्कस्सिया काउलेस्सा केसिंचि जहणिया णीललेस्सा । कुदो ? जहण्णुक्कस्स-णिल-काउलेस्साणं सत्त-सागरोवम-काल-णिदेसादो । तेण तदिय-पुढवीए उक्कस्सिया काउलेस्सा जहणिया णीललेस्सा च वत्तव्वा । चउत्थीए पुढवीए मज्झिमा णीललेस्सा । पंचमीए पुढवीए चउण्हमुवरिम-इंदयाणं उक्कस्सिया णीललेस्सा चेव भवदि । पंचए उक्कस्सिया णीललेस्सा जहण्णा किण्हलेस्सा च भवदि । कुदो ? जहण्णुक्कस्स-किण्ह-णिललेस्साणं मत्तारम-सागरोवम-काल-णिदेसादो ।

ध्यायिकसम्यक्त्वके विना औपशमिक और ध्यायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकार तृतीय-पृथिवीसे लेकर सातवी पृथिवी तक नारकियोंमें चारों गुणस्थानोंके आलाप कहना चाहिये । इतनी विशेषता है कि तृतीय पृथिवीके नौ इन्द्रक बिलोंमेंसे ऊपरके आठ इन्द्रक बिलोंमें उत्कृष्ट कापोतलेइया होती है और नीचेके नौवें इन्द्रक बिलमें कितने ही नारकी जीवोंके उत्कृष्ट कापोतलेइया होती है, तथा कितने ही नारकोंके जघन्य नीललेइया होती है, क्योंकि, जघन्य नीललेइया और उत्कृष्ट कापोतलेइयाकी सात सागरोपम स्थितिका आगममें निर्देश है । अतएव तीसरी पृथिवीके नौवें इन्द्रक बिलमें ही उत्कृष्ट कापोत और जघन्य नीललेइया बन सकती है । इसप्रकार तृतीय पृथिवीमें उत्कृष्ट कापोतलेइया और जघन्य नीललेइया कहना चाहिए । चौथी पृथिवीमें मध्यम नीललेइया है । पांचवी पृथिवीके पांच इन्द्रक बिलोंमेंसे ऊपरके चार इन्द्रक बिलोंमें उत्कृष्ट नीललेइया ही है, और पांचवें इन्द्रक बिलमें उत्कृष्ट नीललेइया तथा जघन्य कृष्णलेइया है, क्योंकि, जघन्य कृष्णलेइया और उत्कृष्ट नीललेइयाका आगममें सत्रह सागरप्रमाण कालका निर्देश किया

नं. ५८

द्वितीयपृथिवी-नारक असंयतसम्यग्दृष्टि आलाप.

गु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	मय	द	ले	म	स	मज्झि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	२	१	९	४	३	१	३	३	३	१	२	१	१	२
वि	म	प					न	प	वे	म	४	म	अ	म	म	आप	स	आहा	माका
								व	४	म	४	म	उ	म		आया			अना
								म	१	अ				म					

एदाओ दो लेस्साओ पंचम-पुढवी-णेरइयाणं भवंति। छट्ठीए पुढवीए णेरइयाणं मज्झिम-किण्हलेस्सा भवदि। सत्तमीए पुढवीए णेरइयाणं उक्कस्सिया किण्हलेस्सा भवदि।

तिरिक्खगईए तिरिक्खाणं भण्णमाणे तिरिक्खा पंचविधा भवंति, तिरिक्खा पंचि-दियतिरिक्खा पंचिदियतिरिक्खपज्जत्ता पंचिदियतिरिक्खजोणिणी पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्ता चेदि। तत्थ तिरिक्खाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, चौदम जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तरि पज्जत्तीओ चत्तरि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तरि पाण चत्तरि पाण तिण्णि पाण, चत्तरि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काय, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तरि कमाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्ताणि, साण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-

गया है। अतएव पांचवी पृथिवीके पांचवें इन्द्रक बिलमें ही उत्कृष्ट नीललेइया और जघन्य कृष्णलेइया बन सकती है। इसप्रकार ये दोनों ही लेइयाएं पांचवीं पृथिवीके नारकी जीवोंके होती हैं। छठी पृथिवीके नारकोंके मध्यम कृष्णलेइया होती है। सातवीं पृथिवीके नारकोंके उत्कृष्ट कृष्णलेइया होती है।

इसप्रकार नरकगतिके आलाप समाप्त हुए।

अब तिर्यचगतिके आलापोंको कहते हैं। तिर्यच पांच प्रकारके होते हैं, १ तिर्यच, २ पंचेन्द्रिय तिर्यच, ३ पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यच, ४ पंचेन्द्रिय योनिमती तिर्यच, और ५ पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यच,। इनमेंसे सामान्य तिर्यचोंके आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके दशों प्राण, सात प्राण, असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके नौ प्राण, सात प्राण, चतुरिन्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, छह प्राण, त्रीन्द्रिय जीवोंके सात प्राण, पांच प्राण, द्वीन्द्रिय जीवोंके छह प्राण, चार प्राण, और एकेन्द्रिय जीवोंके चार प्राण, तीन प्राण, क्रमशः पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थामें होते हैं। चारों तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवी आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और वेश-संयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, रोपयोगी

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा १ ।

एवं तदिय-पुढवि-आदि जाव सत्तम-पुढवि त्ति चट्ठहं गुणट्ठाणाणमालावो वत्तव्वो । णवरि विसेसो तदियाए णवण्हं इंदयाणं मज्जे उवरिम अट्ठसु इदएसु उक्कस्सिया काउलेस्सा भवदि । हेट्ठिमए णवमे इंदए केसिंचि जीवाणभुक्कस्सिया काउलेस्सा केसिंचि जहणिया णीललेस्सा । कुदो ? जहणुक्कस्स-णील-काउलेस्माणं मत्त-सागरोवम-काल-णिदेसादो । तेण तदिय-पुढवीए उक्कस्सिया काउलेस्सा जहणिया णीललेस्सा च वत्तव्वा । चउत्थीए पुढवीए मज्झिमा णीललेस्सा । पंचमीए पुढवीए चउण्हमुवरिम-इंदयाणं उक्कस्सिया णीललेस्सा चेव भवदि । पंचए उक्कस्सिया णीललेस्सा जहण्णा किण्हलेस्सा च भवदि । कुदो ? जहणुक्कस्स-किण्ह-णीललेस्माणं मत्ताग्ग-मागरोवम-काल-णिदेसादो ।

ध्यायिक कत्वके विना ओपशमिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, साक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकार तृतीय-पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक नारकियोंमें चारों गुणस्थानोंके आलाप कहना चाहिये । इतनी विशेषता है कि तृतीय पृथिवीके नौ इन्द्रक बिलोंमेंसे ऊपरके आठ इन्द्रक में उत्कृष्ट कापोतलेश्या होती है और नीचेके नौवें इन्द्रक बिलमें कितने ही नारकी जीवोंके उत्कृष्ट कापोतलेश्या होती है, तथा कितने ही नारकोंके जघन्य नीललेश्या होती है, क्योंकि, जघन्य नीललेश्या और उत्कृष्ट कापोतलेश्याकी सात सागरोपम स्थितिका आगममें निर्देश है । अतएव तीसरी पृथिवीके नौवें इन्द्रक बिलमें ही उत्कृष्ट कापोत और जघन्य नीललेश्या बन सकती है । इसप्रकार तृतीय पृथिवीमें उत्कृष्ट कापोतलेश्या और जघन्य नीललेश्या कहना चाहिए । चौथी पृथिवीमें मध्यम नीललेश्या है । पांचवी पृथिवीके पांच इन्द्रक बिलोंमेंसे ऊपरके चार इन्द्रक बिलोंमें उत्कृष्ट नीललेश्या ही है, और पांचवें इन्द्रक बिलमें उत्कृष्ट नीललेश्या तथा जघन्य कृष्णलेश्या है, क्योंकि, जघन्य कृष्णलेश्या और उत्कृष्ट नीललेश्याका आगममें सत्तह सागरप्रमाण कालका निर्देश किया

नं. ५८

द्वितीयपृथिवी-नारक असंयतसम्पद्वाष्टि आलाप

गु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्षि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र	१	१	२	१	२
अवि	सप				न	पचे	वस	म	४	४	मति	अस	के	द	म	औप	स	आहा	साका
								व	४	४	धुत		विना	भा	१	क्षायो			अना
								व	१		अव			का					

एदाओ दो लेस्साओ पंचम-पुढवी-णेरइयाणं भवंति। छट्ठीए पुढवीए णेगइयाणं मज्झिम-किण्हलेस्सा भवदि। सत्तमीए पुढवीए णेरइयाणं उक्कस्सिया किण्हलेस्सा भवदि।

तिरिक्खगईए तिरिक्खाणं भण्णमाणे तिरिक्खा पंचविधा भवंति, तिरिक्खा पंचि-दियतिरिक्खा पंचिदियतिरिक्खपज्जत्ता पंचिदियतिरिक्खजोणिणी पंचिदियतिरिक्खअपज्जत्ता चेदि। तत्थ तिरिक्खाणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, चोदम जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छकाय, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दो मंजम, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्ताणि, साण्णिणो अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-

गया है। अतएव पांचवी पृथिवीके पांचवें इन्द्रक बिलमें ही उत्कृष्ट नीललेइया और जघन्य कृष्णलेइया बन सकती है। इसप्रकार ये दोनों ही लेइयाएँ पांचवीं पृथिवीके नारकी जीवोंके होती हैं। छठी पृथिवीके नारकोंके मध्यम कृष्णलेइया होती है। सातवीं पृथिवीके नारकोंके उत्कृष्ट कृष्णलेइया होती है।

इसप्रकार नरकगतिके आलाप समाप्त हुए।

अब तिर्यचगतिके आलापोंको कहते हैं। तिर्यच पांच प्रकारके होते हैं, १ तिर्यच, २ पंचेन्द्रिय तिर्यच, ३ पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यच, ४ पंचेन्द्रिय योनिमती तिर्यच, और ५ पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यच,। इनमेंसे सामान्य तिर्यचोंके आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञी और विकलत्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके दशों प्राण, सात प्राण, असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके नौ प्राण, सात प्राण, चतुरिन्द्रिय जीवोंके आठ प्राण, छह प्राण, त्रीन्द्रिय जीवोंके सात प्राण, पांच प्राण, डीन्द्रिय जीवोंके छह प्राण, चार प्राण, और एकेन्द्रिय जीवोंके चार प्राण, तीन प्राण, कमशः पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थामें होते हैं। चारों '।'एँ, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और वेश-संयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएँ, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म	स	सज्जि	आ	उ.
५ मि सा सम्प अवि देश	७ पर्या.	६ ५ ४	१० ९ ८ ७ ६ ४	४ ति	२	५	६	९ म ४ व ४ औ १	३	४	हान ३ अज्ञा. ३	२ अस. देश	३ के द. विना	३ द्र ह मा ह	२ प्र उम	६	२ स. अस	२ आहा.	२ साका. अना

तिणिण दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता अणागारुवजुत्ता वा होंति ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिणिण गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिणिण पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छ काया, वे जोग, तिणिण वेद, चत्तारि कसाय, विभंग-णाणेण विणा पंच पाण, असंजम, तिणिण दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील काउलेस्साओ । कि कारणं ? जेण तेउ-पम्मलेस्सिया वि देवा तिरिक्खे-सुप्पज्जमाणा णियमेण णट्ठ लेस्सा भवन्ति त्ति । भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासणसम्मत्तं खइयसम्मत्तं कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं एवं चत्तारि सम्मत्तं,

सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही सामान्य तिर्यचोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, अपर्याप्तसंबन्धी सातों जीव-समास, संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तोंके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञी पंचेन्द्रियों और विकलत्वयोंके पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार अपर्याप्तियां, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके सात प्राण, असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके छह प्राण, त्रीन्द्रियोंके पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके चार प्राण और एकेन्द्रिय जीवोंके तीन प्राण होते हैं । चारों सत्ताएं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, विभंगावधिज्ञानके विना पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्लेश्याएं, भावसे कृष्ण नील और कापोत लेश्याएं, होती हैं ।

शंका—सामान्य तिर्यचोंके अपर्याप्तकालमें तीनों अशुभ लेश्याएं ही क्यों होती हैं ?

समाधान—क्योंकि, तेजोलेश्या और पद्मलेश्यावाले भी देव यदि तिर्यचोंमें उत्पन्न होते हैं तो नियमसे उनकी शुभलेश्याएं नष्ट हो जाती हैं, इसलिये तिर्यचोंकी अपर्याप्त अवस्थामें तीन अशुभ लेश्याएं ही होती हैं ।

लेश्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, धायिकसम्यक्त्व और कृतकृत्यकी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्व इस प्रकार चार सम्यक्त्व, संज्ञिक,

“संपहि तिरिक्ख-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चोदस जीवसमासा,
छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ
चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त
पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ,
तिरिक्खगदी, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काया, एगारह जोग,
तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, द्व्व-भावेहि छ

अब तिर्यच मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, १ पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, असंख्य पंचेन्द्रियों और चि त्रयोंके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रियोंके चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, १ पंचेन्द्रियोंके दश प्राण और प्राण, असंख्य पंचेन्द्रियोंके नौ प्राण और सात प्राण, चतुरिन्द्रियोंके आठ प्राण और छह प्राण, त्रिन्द्रियोंके सात प्राण और पांच प्राण, द्विन्द्रियोंके और चार प्राण, एकेन्द्रियोंके चार प्राण और तीन प्राण क्रमशः पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थामें होते हैं। चारों संज्ञाप, तिर्यचगति, एकेन्द्रिय जाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे

ग	जी	प	प्रा	स	ग	ह	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ	उ
३	७	६अ.	७	४	१	५	६	२	३	४	५	१	३	द्र. २	२	४	२	२	२
मि	अ प	५,,	७		ति			औ मि			कुम	अस	के द	का	म	मि	स	आहा	
सा		४,,	६					कर्म.			कुशु			शु	क्ष	सा	अस	अना	साका
अवि			५								मति			मा ३		क्षा			आना
			४								श्रुत.			अशु		क्षायो.			
			३								अव								

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	साक्षि	आ.	उ
१	१४	६प ६अ ५प ५अ ४प ४अ	१०,७ ९,७ ८,६ ७,५ ६,४ ४,३	४	२ ति	५	६	११ म ४ ब ४ औ २ का १	३	४	३ अज्ञा	१ अस	२ च अच	द्र ६ मा ६ म	२ म अम	१ मि	१ स अस	२ आहा 'अना.	२ साका अना

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया, सामणम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तिरिक्ख-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमामो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण तीहिं अण्णाणेहि मिरमाणि, असंजम, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो,

उन्ही सामान्य तिर्यच सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक सङ्गी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाप, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, ओदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइया, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सङ्गिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सामान्य तिर्यच सम्यग्मिथ्यादष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादष्टि गुणस्थान, एक सङ्गी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाप, तिर्यच-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञानोसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहो लेइयाप, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व.

नं. ६७

सामान्य तिर्यच सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	ऊ	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सङ्गि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	३	४	७	१	२	२	१	१	१	२	२
सा	स	अ	अप		ति	ए	मि	ओ	मि	कुम	कुश्रु	अम	वक्षु	का	शु	म	मामा	आहा	सका.
								कर्म					अच	मा	इ		स	अना	अना
														अशु					

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण जहणिया काउलेस्सा, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो

उन्ही सामान्य तिर्यच असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व सक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही सामान्य तिर्यच असंयत ग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्या, भावसे जघन्य कापोतलेख्या, भव्य-सिद्धिक, उपशमसम्यक्त्वके बिना क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व होते हैं ।

नं. ७०

सामान्य तिर्यच असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	ज्ञ.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	साक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	३	द्व. ६	१	३	१	१	२
अति.	सं.	प.		ति		पंचे.	त्रस.	म ४			मति	जम	के द	मा ६	म.	ओं.	स.	आहा	साका
								व ४			श्रुत		विना			क्षा			अना
								ओं. १			अव					बायो.			

सम्मत्तं । मणुस्सा पुव्ववद्व-तिरिक्खयुगा पच्छा सम्मत्तं घेत्तूण दंसणमोहणीयं खविय खइयसम्माइट्ठी होदूण असंखेज्ज-वस्सायुगेसु तिरिक्खेसु उप्पज्जंति ण अण्णत्थ, तण भोगभूमि-तिरिक्खेसुप्पज्जमाणं पेक्खिऊण असंजदसम्माइट्ठि-अपज्जत्तकाले खइयसम्मत्तं लब्भदि । तत्थ उप्पज्जमाण-कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं लब्भदि । एवं तिरिक्ख-असंजदसम्माइट्ठिस्स अपज्जत्तकाले दो सम्मत्ताणि हवंति । सण्णिणो, आहारिणो अणा-हारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा १ ।

तिरिक्ख-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, सजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण

पूर्वाक्त दो सम्यक्त्वोंके होनेका यह कारण है कि जिन मनुष्योंने सम्यग्दर्शन होनेके पहले तिर्यच आयुको बांध लिया है वे पीछे सम्यक्त्वको ग्रहण कर और दर्शनमोहनीयको क्षपण करके क्षायिकसम्यग्दृष्टि होकर असंख्यात वर्षकी आयुवाले भोगभूमिके तिर्यचोंमें ही उत्पन्न होते हैं, अन्यत्र नहीं । इस कारण भोगभूमिके तिर्यचोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंकी अपेक्षासे असंयतसम्यग्दृष्टिके अपर्याप्तकालमें क्षायिकसम्यक्त्व पाया जाता है । और उन्ही भोगभूमिके तिर्यचोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके कृतकृत्यवेदककी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्व भी पाया जाता है । इसप्रकार तिर्यच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालमें दो सम्यक्त्व होते हैं । सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सामान्य तिर्यच संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशाविरत गुणस्थान, एक सखी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिकाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे पीत, पन्न और शुक्ल लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके

१ प्रतिपु ' छिप्पहुडि ' इति पाठ ।

न. ७१

सामान्य तिर्यच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	द्र २	१	२	१	२	२
क	स	अ	क	क	ति.	क	वम	औ	मि	पु	मति	अस	के	द	का.	म	क्षा	आहा	साका
								कर्म			श्रुत		विना	शु	मा १	क्षायो	स	अना.	अना.
											अव			का					

दंसण, दव्व भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खिगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं उवसमसम्मत्तं णत्थि, मिच्छत्तं सासणसम्मत्तं खइयसम्मत्तं फदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तमिदि चत्तारि सम्मत्तं । सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहो लेख्याए, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, सन्निक, असन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारो कपाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक होते हैं । इनके सम्यग्मिथ्यात्व और उपशमसम्यक्त्व नहीं होता है, किन्तु मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, क्षायिकसम्यक्त्व और कृतकृत्यकी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्व ये चार सम्यक्त्व होते हैं । सन्निक, असन्निक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

न. ७५.

पंचेन्द्रिय तिर्यच जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	म	ग	इ	का	यो	वे	क	जा	सय	द	ले	भ	म.	सहि	आ	उ
३	२	६अ	७	४	१	१	१	२	३	४	५	१	३	२	२	४	२	२	२
मि	स.अप	५,,	७		ति	प	त्रस	ओ मि.			कुम	अस	के द	का	म	मि	स	आहा	साका
मा	अम	,,						कर्म.			कुश्रु		त्रिना	गु	ज	सा	जस	अना	अना
अ											मति			भा ३		क्षा			
											श्रुत.			अशु		सायो			
											अव								

असंजम, दो दसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पांचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णान, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवमिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक मिथ्यात्व, सन्निक, असन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सन्नी-अपर्याप्त और असन्नी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, सन्नीके छहों अपर्याप्तियां, असन्नीके पांच अपर्याप्तियां, सन्नीके सात प्राण और असन्नीके सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाय-योग ये दो योग, तीनो वेद, चारों कषाय, दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सन्निक, असन्निक आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ७७

पंचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	२	द्र	६	२	१	२	२
मि	स	प	५	९	ति	पंचे	त्रस	म	४		अज्ञा	अस	चक्षु	मा	६	म	मि	स	आहा
	अस							व. ४					अच		अ		अम		साका.
	प							औ १											अना

नं. ७८

पंचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

गु	जी.	प	प्रा.	स	ग.	इ	का	यो.	वे	क.	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ.
१	२	६	७	४	१	१	१	२	३	४	२	१	२	द्र	२	२	१	२	२
मि.	स	अ	अ.	७	ति	पृ	त्रस	औ मि			कुम	अस	चक्षु	का	म	मि	स	आहा	साका.
	अस	५	अ					कार्म			वृधु		अचक्षु	शु	अ		अम	अना	अना
														मा ३	अगु				

असंजम, दो दसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता हंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिग्गिखगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता हंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याप, भव्यसिद्धिक. अभव्यसिद्धिक मिथ्यात्व, सन्निक, असन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही पंचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सन्नी-अपर्याप्त और असन्नी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, सन्नीके छहों अपर्याप्तियां, असन्नीके पांच अपर्याप्तियां, सन्नीके सात प्राण और असन्नीके सात प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति. पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाय-योग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याप, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याप, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सन्निक. असन्निक आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ७७

पंचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	म	सन्नि	आ	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	२	६	२	१	२	१	२
मि	स	प	५	९	ति	पंचे.	त्रस	म	४		अज्ञा	अस	चक्षु	मा	६	म	मि	स	आहा
	अस							व. ४					अच		अ.		जम		साका.
	प							औ १											अना

नं. ७८

पंचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी.	प	प्रा.	स	ग.	इ	का	यो.	वे	क.	ज्ञा	सय	द	ले	म	म	सन्नि	आ	उ.
१	२	६	७	४	१	१	१	२	३	४	२	१	२	६	२	१	२	२	२
मि.	सं	अ	अ.	७	ति	प्रां	त्रस	औ.मि			कुम.	अस	चक्षु	का	म	मि	स	आहा	साका.
	अस	”	५					कर्म			कुधु		अचक्षु	शु	अ		अस	अना	अना
		अ											मा ३	अशु					

छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसि चैव अपज्जत्तणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिक्खिगदी, पच्चिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सामणमम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याए, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यच सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसवन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक सन्नि-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाप, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, ओदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याए, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याए भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, अनाहारक साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

[नं. ८०

पंचेन्द्रिय तिर्यच सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	२	६	१	१	१	१	२
सा	प			ति	प	स	म	४		अज्ञा	अस	चक्षु	मा	६	म	सा	स	आहा	साका
	अ				व	व	व	४				अच							अना
	अ				औ	१													

नं ८१

पंचेन्द्रिय तिर्यच सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	३	४	२	१	२	६	१	१	१	२	२
सा	स	अ	अ	ति	प	स	औ	मि		कुम	अम	चक्षु	का	मा	३	सा	स	आहा	साका
							कर्म			कुश्रु		अच	शु	मा	३			अना	अनाका
													अशु						

पंचिदियतिरिक्ख-सम्माभिच्छाड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्माभिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

पंचिदियतिरिक्ख-असंजदसम्माड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीव-समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख-गदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

पंचेन्द्रिय तिर्यच सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापे, तिर्यच-गति, पंचेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पंचेन्द्रिय तिर्यच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापे, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, अस-काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक

नं. ८२

पंचेन्द्रिय तिर्यच सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप

यु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
मन्य	सप				ति	पंचे	वस	म	४		ज्ञान	अस	चक्षु	मा	५	म	सम्य	स	साका
								व	४		३		अव					आहा	अना
								औ	१		अज्ञा								
											मिश्र								

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^१।

तेंसि चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, तिक्खिखगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-
वजुत्ता वा^१।

और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व. संक्षिक. आहारक. अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यच तसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्या लसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ८३

पंचेन्द्रिय तिर्यच असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	११	३	४	३	१	३	द्र ६	१	३	१	२	२
सप	प	प	७		ति.	पचे	वस	म ४			मति	अस	के द	मा ६	म	औप	स	आहा	साका
ल	अ	अ						व. ४			श्रुत		विना			क्षा	अना	अना	
								औ. २			अव.					क्षायो			
								का १											

नं. ८४

पंचेन्द्रिय तिर्यच असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	३	द्र ६	१	३	१	१	२
सप	प	प			ति	पचे	वस	म ४			मति	अम	के द	मा ६	म.	औ.	स.	आहा	साका.
ल								व. ४			श्रुत		विना			क्षा		अना	
								औ. १			अव					क्षायो			

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण जहणिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा' ।

पंचिंदियतिरिक्ख-सजदासंजदाण भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तेण

उन्ही पंचेन्द्रिय तिर्यच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएं, भावसे जघन्य कापोतलेइया, भव्य-सिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पंचेन्द्रिय तिर्यच संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारो संज्ञाएं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारो कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ललेइयाएं, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व,

नं. ८५

पंचेन्द्रिय तिर्यच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	शा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	जा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	४२	१	२	संज्ञि	आ	उ.
स	अ	ल			ति	म	त्रम	औ	मि	पु	मति	अस	के	द	का.	म	१	२	२
ल								कर्म			युत		विना	शु	क्षायो	क्षा	स	आहा	साका
											अव			मा	१			अना.	अना.
														का					

विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता हंति अणागारुवज्जुत्ता वा^६ ।

पंचिदियतिरिक्खपज्जत्ताणं भण्णमाणे मिच्छाइड्ढि-प्पहुडि जाव संजदासंजदा ति
पंचिदियतिरिक्ख-भंगो । णवरि विसेसो पुरिस-णवुंसयवेदा दो चेव भवंति, इत्थिवेदो
णत्थि । अथवा तिण्णि वेदा भवंति ।

पंचिदियतिरिक्खजोणिणीणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, चत्तारि जीव-
समासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त
पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ,
एगारह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं

संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पंचेन्द्रिय तिर्यच पर्याप्तकोंके आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर संयतासंयत गुणस्थान तक पंचेन्द्रिय तिर्यच सामान्यके आलापोके समान ही आलाप समझना चाहिये। विशेष बात यह है कि इनके वेद स्थानपर पुरुष और नपुंसक ये दो ही वेद होते हैं, स्त्रीवेद नहीं होता है। अथवा तीनों ही वेद होते हैं।

विशेषार्थ—पंचेन्द्रिय तिर्यच पर्याप्तकोंके दो ही वेद बतलानेका यह अभिप्राय है कि योनिमती जीवोंका पर्याप्तक भेदमे अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, योनिमतियोंका स्वतंत्र भेद गिनाया है। अथवा पर्याप्त और योनिमती तिर्यच इन दोनों भेदोंको गौण करके पर्याप्त शब्दके द्वारा सभी पर्याप्तकोंका ग्रहण किया जावे तो पंचेन्द्रिय तिर्यच पर्याप्तकोंके आलापमें तीनों वेदोंका भी सद्भाव सिद्ध हो जाता है।

पचेन्द्रिय-तिर्यच योनिमतिर्योके आलाप कहने पर—आदिके पांच गुणस्थान, सञ्ज्ञी पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त, असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास सञ्ज्ञीके छह पर्याप्तियां और छह अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां, सञ्ज्ञीके दशों प्राण, सात प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण, सात प्राण, चारों सज्ञापे, तिर्यचगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, स्त्रीवेद. चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम और देशसयम ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे

नं. ८६

पंचेन्द्रिय तिर्यच संयतासंयत जीवोंके आलाप

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	ब.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	साहि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	३	६	१	२	१	१	७
देश	प				ति	पच	नस	म ४	मिति	देश	के द	विना.	मा ३	शुभ	म	औप.	स	आहा	साका
	म							आं १	धुत	अव						शायी			अना

सण्णिणीओ असण्णिणीओ, आहारिणी, सागारुवजुत्ता हेति अणागारुवजुत्ता वा ।

पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तजोणिणीणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्टाणाणि, दो जीव-समासा, छ अपज्जत्तीओ, पच्च अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्त सासणसम्मत्तमिदि दो सम्मत्तं, सण्णिणी अस-ण्णिणी, आहारिणी अणाहारिणी, सागारुवजुत्ता हेति अणागारुवजुत्ता वा ।

पंचिंदियतिरिक्खजोणिणी-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाण, चत्तारि

आहारक, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यच्च योनिमतियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्या-दृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञीके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच अपर्याप्तियां, सज्ञी और असंज्ञीके सात सात प्राण, चारो संज्ञापं, तिर्यच्चगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाय-योग और कर्मणकाययोग ये दो योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, कुमति ओर कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्कलेक्ष्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्यापं भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक मिथ्यात्व और सासादन-सम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, सज्ञिनी, असंज्ञिनी आहारिणी, अनाहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

पंचेन्द्रिय तिर्यच्च मिथ्यादृष्टि योनिमतियोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, सज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीव-

नं. ८९

पंचेन्द्रिय तिर्यच्च योनिमतीके अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	जा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ	उ
२	२	६अ	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र	२	२	२	२	२
मि	स	अ	५	७	ति	॥	वस	ओ	मि	नी	कुम	अस	चक्षु	का	म	मि	स	आहा	साका
सा	अस	॥					कर्म				कुश्रु		अव	शु	अ	सा	अस	अना	अना
														भा ३	अशु				

मिच्छत्तं, सण्णिणीओ असण्णिणीओ, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

तासिमपज्जत्तीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ अपज्ज-
त्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी,
पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो
दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अमव-
सिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणी असण्णिणी, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ता
होति अणागारुवजुत्ता वा' ।

मिथ्यात्व, सञ्ज्ञिनी, असंज्ञिनी आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि योनिमतियोंके अपर्याप्तकालसबन्धी आलाप कहने
पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सञ्ज्ञि-अपर्याप्त ओर असंज्ञि-अपर्याप्त ये दो जीवसमास,
सञ्ज्ञिनीके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञिनीके पांच अपर्याप्तियां, सञ्ज्ञिनी अपर्याप्तके सात प्राण,
असंज्ञिनी अपर्याप्तके सात प्राण, चारों सञ्ज्ञापं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय,
औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, खीवेद, चारों कषाय, कुमति
और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और
शुक्ललेदयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापेत लेदयाप, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक
मिथ्यात्व, सञ्ज्ञिनी, असंज्ञिनी, आहारिणी, अनाहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाका-
रोपयोगिनी होती हैं ।

नं ९१

पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमती मिथ्यादृष्टिके पर्याप्त आलाप.

शु	जी.	प	प्रा	सं.	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	सं	सञ्ज्ञि	आ	उ
१	२	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र ६	२	१	२	१	२
मि	स प.	५	९		ति	पचे	त्रस	म ४ व ४ औ १	खी		अज्ञा	अस	चक्षु अच	मा ६	म अ	मि	स अस	आहा	साका अना

नं. ९२

पंचेन्द्रिय तिर्यच योनिमती मिथ्यादृष्टिके अपर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	सं	सञ्ज्ञि	आ	उ
१	२	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र २	२	१	२	२	२
मि	स अप अस	५ ,,	७ ,,		ति	पचे	त्रस	औ मि कर्म	खी		कुम कुश्रु.	अस	चक्षु अच.	का शु अशु	म अ	मि	स अस	आहा अना	साका. अना

जोग, इत्थि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ वा होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

तासिमपज्जत्तीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अप-ज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ण-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सासणसम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

पंचिदियतिरिक्खजोणिणी-सम्मामिच्छाइद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छप्पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदिय-

और औदारिककाययोग ये नौ योग, खीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

उन्ही पंचेन्द्रिय तिर्यच्च सासादनसम्यग्दृष्टि योनिमतियोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यच्चगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रक^{काययोग और} कर्मणकाययोग ये दो योग, खीवेद, चारों कषाय, कुमाति और कुथुत^{वेदो अज्ञान,} असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्या, भाव^{से छण्ण, नील} और कापोत लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी^{अनाहारिणी,} साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

पंचेन्द्रिय तिर्यच्च सम्यग्मिथ्यादृष्टि योनिमतियोंके आलाप कहने पर—एक^{सम्यग्मिथ्या-} दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीव स, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं,

नं ९५ पंचेन्द्रिय तिर्यच्च योनिमती सासादनसम्यग्दृष्टिके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	व
१	२	६	७	४	२	१	१	२	२	४	२	१	२	३	२	१	१	१	२
मा.	स.	अ	अ					ति	पु	मं	ओ	मि	स्त्री	कुम	अस	चक्षु	का	म	मासा
								कर्म				कुथु	अच	गु			स	आहा	साका
														मा				अना.	अनाका
														अशु.					

जादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णा-
णेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सम्मा-
मिच्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ सागारुवजुत्ताओ होति अणागारुवजुत्ताओ वा" ।

पंचिंदिय-तिरिक्ख-जोणिणी-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं,
एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदिय-
जादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि
दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं,
सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ताओ वा" ।

तिर्य्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग
ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु
और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यासिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व,
संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होती हैं ।

पंचेन्द्रिय-तिर्य्यच असंयतसम्यग्दष्टि योनिमतियोंके आलाप कहने पर—एक अविरत-
सम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों
संज्ञापं, तिर्य्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-
काययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन,
द्रव्य और भावसे छहो लेख्यापं, भव्यासिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी,
आहारिणी, रोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

नं. ९६

पंचेन्द्रिय तिर्य्यच योनिमती सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य	स प				ति	पंचे	त्रस	म ४	खी		ज्ञान	अस	चक्षु	मा ६	म	सम्य	स	आहा	साका.
								व ४			३		अच						अना.
								औ १			अज्ञा								
											मिश्र								

नं. ९७

पंचेन्द्रिय तिर्य्यच योनिमती असंयतसम्यग्दृष्टियोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
सम्य	स प				ति	पंचे	त्रस	म ४	खी		मति	अस	के द	मा ६	म	औप	स	आहा	साका.
								व. ४			श्रुत		विना			क्षायो			अना.
								औ १			अव								

पंचिंदिय-तिरिक्ख-जोणिणी-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धियाओ, खइय-सम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ वा होंति अणागारुवजुत्ताओ वा^१ ।

पंचिंदिय-तिरिक्ख-लद्धि-अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, वे जीव-समासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-

पंचेन्द्रिय-तिर्यंच संयतासंयत योनिमतियोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेइयापं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके विना दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

पंचेन्द्रिय-तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, संज्ञीके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच अपर्याप्तियां, संज्ञी-अपर्याप्तके सात प्राण, असंज्ञी-अपर्याप्तके सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमाति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे कृष्ण, नील, और कापोत लेइयापं, भव्य-

नं. ९८

पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती संयतासंयतोंके आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का.	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स	सज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र ६	१	२	१	१	२
देहः	स				ति		पंच	म ४	ली		मति	देह	के द	मा ३	म.	औप	स.	आहा	साका
प.	प.						स	व ४			श्रुत	विना	गुम			धायो		अना	
							औ. १				अव								

लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता चां ।

एव तिरिक्खगदी समत्ता ।

मणुसा चउव्विहा हवंति मणुस्सा मणुस-पज्जत्ता मणुसिणीओ मणुस-अपज्जत्ता चेदि । तत्थ मणुस्पाणं भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो,

सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इस प्रकार तिर्य्यचगतिके आलाप समाप्त हुए ।

मनुष्य चार प्रकारके होते हैं—मनुष्य, मनुष्य-पर्याप्त, मनुष्यिनी और लब्धपर्याप्त मनुष्य । उनमेंसे मनुष्यसामान्यके आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण सात प्राण, चारों संज्ञाएं, और क्षीणसंज्ञारूप भी स्थान होता है । मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग और वैक्रियिकभिश्रकाययोगके बिना तेरह योग, तथा अयोग-स्थान भी होता है, तीनों वेद तथा अपगतवेद-स्थान भी होता है । चारों कषाय तथा अकषाय-स्थान भी होता है । आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं तथा अलेख्या-स्थान भी होता है । भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, सज्ञिक, तथा संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है । आहारक, अनाहारक, साकारो-

नं. ९९

पंचेन्द्रिय तिर्य्यच लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	भा.	सं	ग	इ	का	यो.	वे.	क	सा	संय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ.	उ.
१	२	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	२	२	१	२	२	२
मि	स	अ	अ	७	ति	ण	स	मौ.मि	तु	कुम	अस	चक्षु	का	मा ३	म	मि	स	आहा	साका.
	अस	अ	अ					कामे		कुक्षु			अचक्षु.	शु	अ	अस	अना	अना	अना

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ अदीदसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचि-
दियजादी, तसकाओ, आहारमिस्सेण सह तिण्णि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि,
चत्तारि कसाय अकसाओ वा, पंच णाण केवलणाणेण छ णाण, असंजम सामाइय-
छेदोवट्ठावण-जहाक्खादेहि चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण
छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्त-उवसमसम्मत्तेण विणा चत्तारि
सम्मत्तं, सण्णिणो अणुभओ वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारु-
वजुत्ता वा तदुभया वा^{१६} ।

उन्ही सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहो अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं तथा अतीतसंज्ञा स्थान भी है, मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारमिश्रकाययोगके साथ औदारिक-मिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग इसप्रकार तीन योग, तीनों वेद तथा अपगतवेद-स्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषाय स्थान भी है, कुमति, कुश्रुत तथा आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान और केवलज्ञान इसप्रकार छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यात ये चार संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याप, भावसे छहो लेख्याप, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यगिमिथ्यात्व और उपशमसम्यक्त्वके बिना चार सम्यक्त्व, संज्ञिक, और अनुभय अर्थात् संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

सं. १०२

सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्त आलाप.

[illegible]

मणुस-मिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एमारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अमवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा हेति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अमवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता

सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, और संज्ञी-अपर्याप्त, ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही मिथ्यादृष्टि सामान्य मनुष्योके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक,

नं १०३

सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टियोंके सामान्य आलाप.

गु	जी	प	शा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ.	उ.
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
मि	ल	प	१०	४	१	१	१	११	३	४	३	१	२	द्र ६	२	१	१	२	२
मि	ल	प	७		म	प	त्रस	म ४			अज्ञा.	अस	चक्षु	मा ६	म	मि	स.	आहा	साका
मि	ल	प	अ					व ४					अच,		अ		अना	अना	अना

होति अणागारुवजुत्ता वा' ^{०५} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दन्वेण काउ-सुक्क-लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होति अणागारुवजुत्ता वा' ^{०६} ।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अन्नान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

न. १०४

सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	२	द्र ६	२	६	१	१	२
मि	स.प			म	प.	त्र	म ४	व ४			अज्ञा	अस.	चक्षु	मा ६	अ	मि.	स.	आहा	साका
							औ १						अच		म				अना

न. १०५

सामान्य मनुष्य मिथ्यादृष्टियोंके अपर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	३	४	२	१	२	द्र २	२	१	१	२	२
मि	स.अ.			म.	प	त्र	औ मि	कर्म			कुम	अस	चक्षु	का	म.	मि	स	आहा	साका
											कुश्रु		अच	शु	अ			अना	अना.
														मा ३					
														अशु					

अणागारुवजुत्ता वा' ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

मणुस्स-सम्मामिच्छाद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वारं, एओ जीवसमासो, छ

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही सासादनसम्यग्दृष्टि सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक सखी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, ओदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, साका-रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि सामान्य मनुष्योंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुण-

न १०७

सामान्य मनुष्य सासादनसम्यग्दृष्टियोंके पर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सखि	आ	उ
१	१	६	२०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	२	६	१	१	१	१	२
मा	स	प			म	पंचे	त्रस	म ४ व ४ ओ १			अज्ञा.	अस	व अ.	मा. ६	म	सासा	म	आहा.	साका अना

नं. १०८

सामान्य मनुष्य सासादनसम्यग्दृष्टियोंके अपर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	म	मज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	३	४	०	१	२	२	२	१	१	२	२
मा	स	अ			म	म	नग	ओ मि कर्म		शुभ शुश्रु	म	म	वक्षु अच	का शु मा ३ अशु	म	मा	स	आहा अना	साका अना

पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा होति अणागारुवजुत्ता वा ।

“ मणुस असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमामा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम,

स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाणं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लक्ष्याणं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

असंयतसम्यग्दृष्टि सामान्य मनुष्योंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाण, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कामर्णकाययोग ये ग्यारह योग. तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन,

नं १०९

सामान्य मनुष्य सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके आलाप.

गु.	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	ठ	ले	म	स.	संज्ञि	आ	उ
१	२	६	१०	४	१	१	२	९	३	४	३	१	२	३	६	१	१	१	२
म	प			ग.	पचे	त्रस.	म ४	व ४		ज्ञान	अस	चक्षु	गा	दम.	पम्य		रा	आग	साका.
							ओ. १			अज्ञा	मिश्र	अच						अना.	

नं. ११०

सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्दृष्टियोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	ठ	ले	म	स.	संज्ञि	आ	उ
१	२	६	१०	४	१	१	२	११	३	४	३	१	३	६	१	३	१	२	२
म	प	६	अ	७	म	पचे	त्रम	म. ४			मति	अस	के	द	मा	६	म.	आहा	साका.
ले	म	अ						व. ४			श्रुत.		विना.				आना	अना.	
								आ. १			अद					आप	सा		

तिणिण दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिणिण सम्मत्तं, सणिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिणिण वेद, चत्तारि कसाय, तिणिण णाण, अमंजम, तिणिण दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिणिण सम्मत्तं, सणिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद । देव-णेरइअ मणुस्स-असंजदमम्माइड्डिणो जदि मणुस्सेसु उपपज्जंति तो

द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षाधिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही असंयतसम्यग्दष्टि सामान्य मनुष्योंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षाधिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही असंयतसम्यग्दष्टि सामान्य मनुष्योंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये दो योग, एक पुरुषवेद होता है । केवल एक पुरुषवेद होनेका यह कारण है कि देव, नारकी और मनुष्य असंयतसम्यग्दष्टि जीव मरकर यदि मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं, तो

न १११

सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्दष्टियोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	र	ज्ञा	मय	द	ले	भ	स	सज्जि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	२	६	१	३	१	१	२
म	प.				म	पच	म	४		मनि	अम	फे	ड	मा	६	म	आ	आहा	साका
								४		श्रुन						क्षा	स	अना	अना
								१		अन						नाया			

णियमा पुरिसवेदेसु चेव उप्पज्जंति ण अण्णवेदेसु, तेण पुरिसवेदो चेव भणिदो । चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावण छ लेस्साओ । तं जहा—णेरइया असंजदसम्माइट्ठिणो पढम-पुढवि-आदि जाव छट्ठी-पुढवि-पज्जवसाणासु पुढवीसु ट्ठिदा कालं काळण मणुस्सेसु चेव अप्पण्णो पुढवि-पाओग्ग-लेस्साहि सह उप्पज्जंति त्ति किण्ह-गील-काउलेस्सा लब्भति । देवा वि असंजदसम्मा-इट्ठिणो कालं काळण मणुस्सेसु उप्पज्जमाणा तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साहि सह मणुस्सेसु उव्वज्जंति, तेण मणुस्स-असंजदसम्माइट्ठिणमपज्जत्तकाले छ लेस्साओ हवन्ति । भवसिद्धिया, उव्वसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

मणुस्स-सजदासंजदाण भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ

नियमसे पुरुषवेदी मनुष्योंमें ही उत्पन्न होते हैं, अन्यवेदवाले मनुष्योंमें नहीं, इससे एक पुरुष-वेद ही कहा है । वेद आलाप के आगे चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं होती हैं । अचिरतसम्यग्दृष्टि अपर्याप्त मनुष्योंके छहों लेश्याएं होनेका कारण यह है कि प्रथम पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी-पर्यंत पृथिवियोंमें रहनेवाले असंयतसम्यग्दृष्टि नारकी मरण करके मनुष्योंमें अपनी अपनी पृथिवीके योग्य लेश्याओंके साथही उत्पन्न होते हैं, इसलिये तो उनके कृष्ण, नील और कापोत-लेश्याएं पाई जाती हैं । उसीप्रकार असंयतसम्यग्दृष्टि देव भी मरण करके मनुष्योंमें उत्पन्न होते हुए अपनी अपनी पीत, पद्म और शुक्ल लेश्याओंके साथ ही मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं, इसलिए मनुष्य असंयतसम्यग्दृष्टियोंके अपर्याप्तकालमें छहों लेश्याएं बन जाती हैं । सम्यक्त्व आलापके आगे भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्वके बिना दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सयतासंयत सामान्य मनुष्योंके आलाप कहने पर—एक देशाविरत गुणस्थान, एक

नं. ११२

सामान्य मनुष्य असंयतसम्यग्दृष्टियोंके अपर्याप्त आलाप

गु.	जी.	प.	मा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	क्षा.	सय.	द.	ते.	म.	स.	साक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	३	२	२	१	२	२
अ	स	ज	ज		म.	पु.	व्य.	ओ	मि	पु.	मति.	अस.	के	द.	का.	क्ष	स	आहा	साका
								कर्म			श्रुत		विना	मा	६	क्षायो		अना.	अना.

पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुमगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

संपहि पमत्तसंजद-प्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति ताव मूलोघालावो अणूणो अण-धिओ वत्तव्वो । मणुस्म-पज्जत्ताणं भण्णमाणे मिच्छाडिट्ठि-प्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति ताव मणुरसोघभंगो । अथवा इत्थिवेदेण विणा दो वेदा वत्तव्वा एत्तियमेत्तो चेव विसेमो ।

संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जानि, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिकाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे पाँच, पद्म और शुक्कलेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षाथिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अब प्रमत्तसयत गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक न्यूनता और अधिकतासे रहित मूल ओघालाप कहना चाहिये, अर्थात्, गुणस्थानोंकी अपेक्षा जो आलाप छठे गुणस्थानसे लेकर चौदहवें गुणस्थान तक कह आये हैं वे ही यहा मनुष्योंके छठे गुण स्थानसे चौदहवें गुणस्थान तकके समझना चाहिये, क्योंकि छठेसे आगेके सभी गुणस्थान मनुष्योंके ही होते हैं, इसलिये सामान्य कथनमें और इस कथनमें कोई विशेषता नहीं है ।

मनुष्य-पर्याप्तकोंके आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक मनुष्य-सामान्यके आलापोंके समान आलाप जानना चाहिये । अथवा वेद आलाप कहते समय खीवेदके बिना दो वेद ही कहना चाहिये, क्योंकि सामान्य मनुष्योंसे पर्याप्त मनुष्योंमें इतनी ही विशेषता है ।

विशेषार्थ—जब मनुष्योंके अचान्तर भेदोंकी विवक्षा न करके पर्याप्त शब्दके द्वारा सामान्यसे सभी पर्याप्त मनुष्योंका ग्रहण किया जाता है तब पर्याप्त मनुष्योंमें तीनों वेद-

नं. ११३

सामान्य मनुष्य संयतासंयतोंके आलाप.

ग	जी	प	प्रा	सं.	ग	इ	का	यो	वे	र	जा	सय	द.	ले	म.	म.	सजि	जा	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	३	६	१	३	१	१	२
क्ष	सं	प			म	प	म	म ४			मति	ठेग	१ ठ	मा.३	म	ओ	म	आहा	साका
								व. ४			धुन.		प्रिना	गम		क्षा			अना
								ओ १			अव.					क्षायो			

मणुसिणीर्णं भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छप्पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिदियजार्दी, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, एत्थ आहार-आहारमिस्सकायजोगा णत्थि । किं कारणं ? जेसिं भावो इत्थिवेदो दव्वं पुण पुरिसवेदो, ते वि जीवा संजमं पडिवज्जंति । दव्वित्थिवेदा संजमं ण पडिवज्जंति, सचेलत्तादो । भावित्थिवेदाणं दव्वेण पुंवेदाणं पि संजदाणं णाहाररिद्धी समुप्पज्जदि दव्व-भावहि पुरिस-वेदाणमेव समुप्पज्जदि तेणित्थिवेदे पि णिरुद्धे आहारदुगं णत्थि, तेण एगारह जोगा भणिया । इत्थिवेदो अवगदवेदो वि अत्थि, एत्थ भाववेदेण पयदं ण दव्ववेदेण । किं कारणं ?

वाल्लोका ग्रहण हो जाता है, अतः इस अपेक्षासे पर्याप्त मनुष्योंके आलाप सामान्य मनुष्योंके समान बतलाये गये हैं । परंतु जब मनुष्योंके अवान्तर भेदोंमेंसे पर्याप्त मनुष्योंका ग्रहण किया जाता है तब पर्याप्त मनुष्योंसे पुरुष और नपुंसक वेदी मनुष्योंका ही ग्रहण होता है, क्योंकि स्त्रीवेदी मनुष्योंका स्वतंत्र भेद गिनाया है । मनुष्यके अवान्तर भेदोंमें पर्याप्त शब्द पुरुष और नपुंसकवेदी मनुष्योंमें ही रूढ है, इसलिये इस अपेक्षासे पर्याप्त मनुष्योंके आलाप कहते समय स्त्रीवेदका छोड़कर आलाप कहे हैं ।

मनुष्यनी (योनिमती) स्त्रियोंके आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और असंक्षी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों सक्षाय तथा क्षीणसंभारूप भी स्थान है । मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, तथा अयोगरूप भी स्थान है । इन मनुष्यनियोंके आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये दो योग नहीं होते हैं ।

शंका—मनुष्य-स्त्रियोंके आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग नहीं होनेका क्या कारण है ?

समाधान—यद्यपि जिनके भावकी अपेक्षा स्त्रीवेद और द्रव्यकी अपेक्षा पुरुषवेद होता है वे (भावस्त्री) जीव भी संयमको प्राप्त होते हैं । किन्तु द्रव्यकी अपेक्षा स्त्रीवेदवाले जीव संयमको नहीं प्राप्त होते हैं, क्योंकि, वे सचेल अर्थात् वल्लसहित होते हैं । फिर भी भावकी अपेक्षा स्त्रीवेदी और द्रव्यकी अपेक्षा पुरुषवेदी संयमधारी जीवोंके आहारक्राद्धि उत्पन्न नहीं होती है, किन्तु द्रव्य और भाव इन दोनों ही वेदोंकी अपेक्षासे पुरुषवेदवाले जीवोंके ही आहारक्राद्धि उत्पन्न होती है । इसलिये स्त्रीवेदवाले मनुष्योंके आहारक्राद्धिकके बिना ग्यारह योग कहे गए हैं । योग आलापके आगे स्त्रीवेद तथा अपगतवेद स्थान भी होता है । यहा भाववेदसे प्रयोजन है, द्रव्यवेदसे नहीं । इसका कारण यह है कि यदि यहा द्रव्यवेदसे

मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सङ्गी-पर्याप्त, और संज्ञी-अपर्याप्त, ये दो जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, छहो अपर्याप्तियां, दशो प्राण, सात प्राण, चारों सङ्गाएं, मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनो-योग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, छविद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो

मनुष्यनियोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	मा.	स	ग	ह	का	यो	वे	क	हा	सय	व	ले	म	स	सलि	आ	उ
३	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	२	३	द्र २	२	३	१	२	२
मि	ग.	अ	अ		म		तस.	आ मि	सी		कुम	अस	चक्षु	का शु	म	मि	स	आहा	साका
मा				क्षिणिस		पव		कर्म	अपग	अक्षया	कुक्षु	यथा	अच	मा ४	अ	सा	अनु	अना	अनाका
म											क.		कंव	अशु ३		क्षा			यु उ.
														शु १					

मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोंके सामान्य आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	र	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स	सिद्धि	आ	उ
१	२	दिप	१०	४	२	२	२	११	१	४	३	१	२	द्र द्	२	१	१	२	२
मि	स प	देअ	७	म		प्रै	नस्	म ४ ली			अज्ञा	अम	चक्षु	भा ह	भ मि	स	आहा	साका.	
	स अ							व ८ ओ १ का १					अच		अ		अना	अना	

असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्ताओ, भवसिद्धियाओ अमवसिद्धियाओ, मिच्छत्तं, मण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ हेति अणागारु-
वजुत्ताओ वा ।

मिच्छाइद्धि-पज्जत्त-मणुसिणीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाण, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्ताओ, भवसिद्धियाओ अमवसिद्धियाओ, मिच्छत्तं, मण्णिणी, आहारिणीओ, सागारु-
वजुत्ताओ हेति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

मिच्छाइद्धि-अपज्जत्त-मणुसिणीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-
समासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण

दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याए, भव्यसिद्धिक, अमव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिनी, आहारिणी, अनाहारिणी, साकारोपयोगिनी तथा अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

मिथ्याइद्धि मनुष्यनियोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्याइद्धि गुणस्थान, एक संज्ञी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारो मनोयोग, चारों वचनयोग तथा औदारिककाय-
योग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारो कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याए, भव्यसिद्धिक, अमव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

मिथ्याइद्धि अपर्याप्त मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्याइद्धि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाप, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन,

नं. ११८

मिथ्याइद्धि मनुष्यनियोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	पे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	६	२	१	१	१	२
मि	५			म	के	के	म	४	मी	अज्ञा	जस	चक्षु	अच	मा	६	म	मि	आहा	साका
स							जो	४	१						अ		स	अना	

[illegible]

पञ्जत्त-मणुसिणी-सामणमम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सासणमम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारु-वजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा' ।

अपञ्जत्त-मणुसिणी-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं,

पर्याप्त सासादनसम्यग्दष्टि मनुष्यनिर्योके आलाप कहने पर—एक सासादन गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्य-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, खीवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सन्निनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

अपर्याप्त सासादनसम्यग्दष्टि मनुष्यनिर्योके आलाप कहने पर—एक सासादन गुण-स्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, खीवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत ये तीन अशुभ लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सन्निनी, आहारिणी, अनाहारिणी, साकारोप-

न. १२१

सासादनसम्यग्दष्टि मनुष्यनिर्योके पर्याप्त आलाप

ग	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	श	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स.	संज्ञि	आ.	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	२	६	१	५	१	१	१
सा.	म.प.				म	प	म	म.४	मी		अज्ञा	अस	चक्षु	मा	द.म	सासा	स	आहा	साका
								व.४	औ				अच						अना

सण्णिणी, आहारिणी अणाहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' १ ।

मणुसिणी-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होति अणागारुवजुत्ताओ वा' १ ।

मणुसिणी-असंजदसम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो,

योगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों चचनयोग ओर औदारिकाययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहो लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यत्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

असंयतसम्यग्दृष्टि मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तिया, दशों प्राण, चारो संज्ञाण, मनु-

नं. १२२

सासाधनसम्यग्दृष्टि मनुष्यनियोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	म	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	२	१	१	१	२	२
सा.	स	अ	ज		म	प	म	ओ मि	नी		कृम	अस	चक्षु	द्र २	म	सामा	स	आहा	साका.
								कर्म			कृशु		अचक्षु.	शु				अना	अना
														भा ३					
														अशु					

नं. १२३

सम्यग्मिथ्यादृष्टि मनुष्यनियोंके आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	म	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	२	२	१	१	१	१	२
गम्य	मप				म	पवे	म	म ४	श्री		ज्ञान	अस	चक्षु	द्र ६	म	सम्य	म	आहा	गाफा
								व ४			३		अच	मा ६					अना
								ओ १			अज्ञा								
											मिश्र								

छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंमण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धियाओ, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ताओ चा^{११} ।

“मणुसिणी-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंमण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ,

प्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षयोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

संयतासंयत मनुष्यनिर्योके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षयोपशमिक

नं १२४

असंयतसम्यग्दृष्टि मनुष्यनिर्योके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र ६	१	३	१	१	२
लो	म	प			म	प	व	म ४ व. ४ औ. १	स्त्री		मति श्रुत अव	अस	के द विना.		म	औप क्षा क्षायो	स	आहा	साका अना.

नं. १२५

संयतासंयत मनुष्यनिर्योके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र ६	१	२	१	१	२
दृष्ट	स	प			म	प	व	म ४ व. ४ औ. १	स्त्री		मति श्रुत अव	देश	के द विना	मा ३ शुभ	म.	औप क्षा क्षायो	स.	आहा	साका अना

सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणुसिणी पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद-णवुंसयवेदाणमुदए आहारदुगं मणपज्जवणाणं परिहारसुद्धिसंजमो च णत्थि । इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८६} ।

मणुसिणी-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, आहारसण्णाए विणा तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी,

ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

प्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक सङ्गी-पर्याप्त जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारो संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारो मनोयोग, चारो वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग होते हैं । नौ योगोंके होनेका कारण यह है कि खीवेद और नपुंसकवेदके उदय होने पर आहारक-काययोग, आहारकमिश्रकाययोग, मनःपर्ययज्ञान और परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होते हैं योग आलापके आगे खीवेद, चारो कपाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल ये तीन शुभ लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

अप्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तधिरत गुणस्थान, एक सङ्गी-पर्याप्त जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, दशो प्राण, आहार-संज्ञाके बिना शेष तीन संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारो मनोयोग, चारो वचनयोग, और औदारिक-

न. १२६

प्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का	यो	वि	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	म	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	२	३	६	१	३	१	१	२
प्रम	म	प		म	प	त्र	म	४	त्री		मति	सामा	के	द	मा	३	स.	आहा	सावा
							व	४			श्रुत	उद्दो	विना	शुभ	भ	क्षा			अना
							ओ	१			अव					क्षायो			

तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ हँति अणागारुवजुत्ताओ वा” ।

“मणुसिणी-अपुव्वकरणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणी,

काययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, और शुद्ध ये तीन शुभ लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

अपूर्वकरण गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना दोष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामा और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुद्ध-लेश्या, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्वके विना औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व,

नं. १२७

अप्रमत्तसंयत मनुष्यनियोंके आलाप

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	सहि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	१	४	३	२	३	द्र ६	१	३	१	१	२
अ	प.			आहा	म	प	त	म ४	स्त्री.		मति	सामा	के द	भा ३	म.	औ.	स.	आहा	साका
प	प			विना				व ४	औ १		श्रुत.	छेदो	विना	शुभ.		क्षा.			अना.
											अव					क्षायो			

नं. १२८

अपूर्वकरण गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	सहि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	१	४	३	२	३	द्र ६	१	३	१	१	२
अ	प.			आहा	म.	प	त	म ४	स्त्री		मति	सामा	के.द	भा १	म.	औ.	स	आहा.	साका.
प	प			विना				व ४	औ १		श्रुत	छेदो	विना	शु		क्षा			अना.
											अव								

आहारिणी, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणुसिणी-पढम-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, आहार-भयसण्णाहि विणा दो सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणी, सागारुवजुत्ताओ होति अणागारुवजुत्ताओ वा^{१०} ।

मणुसिणी-विदिय-अणियद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण

संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक सञ्ज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहार और भयसंज्ञाके बिना शेष दो सञ्ज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनो-योग, चारों वचनयोग और औदारिकाययोग ये नौ योग, खिवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे शुक्ल लेख्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्प्रकत्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके द्वितीय भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक सञ्ज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिकाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे शुक्ललेख्या,

नं. १२२

अनिवृत्तिकरण प्रथमभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का.	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	२	६	१०	२	१	१	२	९	१	४	३	२	३	६	१	२	१	१	०
अ.	स.प.			मै.	म	पचे.	वस	म	४	व्री	मति	सामा	के	द	मा	१	म	आहा	साका
प्र				परि				व.	४		श्रुत	छेदो	विना.	शु		क्ष	स	अना	
भा								ओं	१		अव								

जोग, अवगदवेदो, लोभकसाओ, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता हेंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३} ।

^{३३}मणुसिणी-सुहुमसांपराइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलोभकसाओ, तिण्णि णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धियाओ, दो सम्मत्तं,

और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, लोभकपाय, आदिके तीन ज्ञान, सामा-
यिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे
शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी,
साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक सूक्ष्मसा-
ंपराय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, सूक्ष्म परि-
ग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और
औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, सूक्ष्म लोभकपाय, आदिके तीन ज्ञान, सूक्ष्म-
सांपरायसुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे शुक्कलेइया, भव्य-

नं. १३३ अनिवृत्तिकरणके पंचमभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	३	२	३	६	१	२	१	१	२
अ	स			परि	म	पे	म	४	अप	लो	मति	सामा	के द	मा	१	औप	स	आहा	साका
पं	प						व	४	अ		शुत	छेदी	विना	शु		क्षा			अना
मा							ओ	१			अव								

नं १३४ सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	३	१	३	६	१	२	१	१	२
पू	ग			स	म	पे	म	४	अप	सूक्ष्म	मति	सूक्ष्म	के द	मा	१	औप	स	आहा	साका
प				प			व	४	अ	लोभ	शुत	सा	विना	शु		क्षा			अना
							ओ	१			अव								

मणुसिणी-चउत्थ-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, दो कसाय, तिण्णि णाण, अग्गि-दद्व-वीए अंकुरो व्व इत्थि णवुंसय-वेदोदय-दूसिय-जीवे वेदोदए फिट्ठे वि ण मणपज्जवणाणमुप्पज्जदि । दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

मणुसिणी-पंचम-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमामो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके चतुर्थ भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग ये नौ योग; अपगतवेद, माया और लोभ ये दो कषाय, आदिके तीन होते हैं। यहांपर खविदेके नष्ट हो जाने पर भी मनःपर्ययज्ञानके नहीं होनेका कारण यह है कि जैसे अग्निसे दग्ध हुए बीजमें अंकुर उत्पन्न नहीं हो सकता है, उसीप्रकार स्त्री और नपुंसकवेदके उदयसे दूषित जीवमें, वेदोदयके नष्ट हो जाने पर भी, मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न नहीं होता है, इसलिये यहां पर भी तीन ज्ञान ही कहे गये हैं। ज्ञान आलापके आगे सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे शुक्कलेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके पंचम भागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, एक परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग

नं १३२

अनिवृत्तिकरणके चतुर्थभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	२	३	२	३	द्र ६	१	२	१	१	२
अ	स			प.	म.	पचे	वस	म ४	०	माया	मति	सामा	के द	मा १	म	औ	स	आहा	साका.
च	प							व ४	०	लोभा.	श्रुत	उदे	विना	शु					अना
मा								औ. १			अव								

जोग, अवगदवेदो, लोभकसाओ, तिणिण णाण, दो संजम, तिणिण दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

^{१३}मणुसिणी-सुहुमसांपराइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलोभकसाओ, तिणिण णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमो, तिणिण दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धियाओ, दो सम्मत्तं,

और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, लोभकपाय, आदिके तीन ज्ञान, सामा-
यिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे
शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, सज्जिनी, आहारिणी,
साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनिर्योके आलाप कहने पर—एक सूक्ष्मसा-
म्पराय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों पाण, सूक्ष्म परि-
ग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और
औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, सूक्ष्म लोभकपाय, आदिके तीन ज्ञान, सूक्ष्म-
साम्परायशुद्धिसयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे शुक्कलेइया, भव्य-

नं. १३३ अनिवृत्तिकरणके पंचमभागवर्तिनी मनुष्यनिर्योके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	सज्जि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	३	२	३	६.६	१	२	१	१	२
अ	स			परि	म	पु	पु	म ४	०	लो	मति.	सामा	के द	सा १	म.	औप	स.	आहा.	साका.
प	प							व. ४	अपु	शुत	अव	लेदी.	विना	शु		क्षा			अना.
भा								औ १											

नं १३४ सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनिर्योके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	सज्जि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	३	१	३	६.६	१	२	१	१	२
गु.	स			प.	म	पु	पु	म ४	अपु	सूक्ष्म	मति	सूक्ष्म	के. द	सा १	म	औप	स	आहा	साका
प	प							व. ४	अपु	लोभ.	शुत.	सा	विना	शु.		क्षा			अना
								औ १			अव								

मणुसिणी-चउत्थ-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग; अवगदवेदो, दो कसाय, तिण्णि णाण, अग्गि-दद्व-वीए अंकुरो व्व इत्थि णवुंसय-वेदोदय-दूसिय-जीवे वेदोदए फिट्ठे वि ण मणपज्जवणाणमुप्पज्जदि । दो संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता हेंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

मणुसिणी-पंचम-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमामो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके चतुर्थ भागवर्तिनी मनुष्यनिर्योके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग ये नौ योग; अपगतवेद, माया और लोभ ये दो कषाय, आदिके तीन होते हैं। यहांपर स्त्रीवेदके नष्ट हो जाने पर भी मनःपर्ययज्ञानके नहीं होनेका कारण यह है कि जैसे अग्निसे दग्ध हुए बीजमें अंकुर उत्पन्न नहीं हो सकता है, उसीप्रकार स्त्री और नपुंसकवेदके उदयसे दूषित जीवमें, वेदोदयके नष्ट हो जाने पर भी, मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न नहीं होता है, इसलिये यहां पर भी तीन ज्ञान ही कहे गये हैं। ज्ञान आलापके आगे सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे लहों लेश्यापं, भावसे शुक्ललेश्या; भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके पंचम भागवर्तिनी मनुष्यनिर्योके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, एक परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग

नं १३२

अनिवृत्तिकरणके चतुर्थभागवर्तिनी मनुष्यनिर्योके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्ति	आ	उ
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	२	३	२	३	द्र ६	१	२	१	१	२
अ	स			प.	म.	पचे	त्रस	म ४	०	माया	मति	मामा	के द	मा १	म	औ	स	आहा	साका.
च	प							व ४	०	लोभ.	श्रुत	छेदो	प्रिना	शु		क्षा			अना
मा								औ १	०	अव	अव								

जोग, अवगदवेदो, लोभकसाओ, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणी, आहारिणी, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{१३१} ।

^{१३२}मणुसिणी-सुहुमसांपराइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, सुहुमलोभकसाओ, तिण्णि णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धियाओ, दो सम्मत्तं,

और औदारिकाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, लोभकपाय, आदिके तीन ज्ञान, सामा-
यिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे
शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, सन्निनी, आहारिणी,
साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक सूक्ष्मसा-
म्पराय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, सूक्ष्म परि-
ग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और
औदारिकाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, सूक्ष्म लोभकपाय, आदिके तीन ज्ञान, सूक्ष्म-
साम्परायशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे शुक्कलेइया, भव्य-

नं. १३३ अनिवृत्तिकरणके पंचमभागवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६	१०	१	२	१	१	९	०	१	३	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अ	स			परि	म	पु	तस	म ४ व ४ औ १	० उपम.	लो	मति युत अव.	सामा लेवी.	के द विना.	सा १ शु.	म. औप क्षा.	स	आहा.	साका.	जना.

नं १३४ सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
२	२	६	१०	१	२	१	१	९	०	१	३	१	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अ	स			परि	म	पु	तस	म ४ व ४ औ १	० उपम.	सूक्ष्म लोभ.	मति युत. अव	सूक्ष्म- सा	के द विना	मा १ शु.	म. औप क्षा	स	आहा.	साका	अना

सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

मणुसिणीसु उवसंतकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, उवसंतसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, उवसंतकसाओ, तिण्णि णाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धियाओ, दो सम्मत्तं, सण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ताओ होंति अणागारुवजुत्ताओ वा ।

मणुसिणीसु खीणकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, खीणकसाओ, तिण्णि णाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसजमो, तिण्णि दंसण,

सिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

उपशान्तकषाय गुणस्थानवर्तिनो मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक उपशान्तकषाय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, उपशान्तसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, उपशान्तकषाय, आदिके तीन ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे शुक्कलेख्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

क्षीणकषाय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक क्षीणकषाय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, क्षीणकषाय, आदिके तीन ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, आदिके

नं. १३५

उपशान्तकषाय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यी	वे	क	जा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	२०	०	१	१	१	९	०	०	३	१	३	६	१	२	१	१	२
उप	सी	प		उ	म	प्रा	त्रस	म ४	उ	मति	यथा	के	ट	भा	म	औप	स	आहा	साका
			स					व ४	ले	क	श्रुत	विना		शु		क्षा			अना
								ओ १			अव								

दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तं, राण्णिणीओ, आहारिणीओ, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा' ॥

१ मणुसिणी-सजोगिजिणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमामा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण दो वा, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, सत्त जोग, अवगदवेदो, अरुसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तं,

तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, धायिकसम्यक्त्व, संज्ञिनी, आहारिणी, साकारोपयोगिनी और अनाकारोपयोगिनी होती हैं ।

सयोगिजिन गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक सयोगि-केवली गुणस्थान, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, वचनबल, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, तथा समुदा-तकी अपर्याप्त अवस्थामें, वचनबल और श्वासोच्छ्वासका अभाव हो जानेसे, अथवा तेरहवें गुणस्थानके अन्तमे आयु और कायबल ये दो प्राण होते हैं । क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, सत्य और अनुभय ये दो मनोयोग, ये ही दोनों वचनयोग, औदा-रिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये सात योग, अपगतवेदस्थान, अकषायस्थान, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, धायिकसम्यक्त्व, संज्ञिनी और असंज्ञिनी इन दोनों

नं. १३६

क्षीणकषाय गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	०	१	१	१	९	०	०	३	१	३	द्र ६	२	१	१	१	२
क्षीण	स प			क्षीणसं.	म.	पंच	त्रम	म. ४ व ४ ओ १	अपग	क्षीणक	मति शुत अव	यथा	के द विना	मा १ शु	भ	क्षा	स	आहा	साका अना.

नं. १३७

सयोगिकेवली गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	२	६प	४	०	१	१	१	७	०	०	२	१	१	द्र ६	१	१	०	२	२
स्यो	प अ	६अ	२	क्षीणसं	म	पंच	त्रम	म २ व २ ओ २ का १	अपग	अक्षय	के	यथा	के द	मा १ शु	म.	क्षा	अनु	आहा. अना.	साका अना. यु उ

णेव सण्णिणीओ णेव असण्णिणीओ, आहारिणीओ अणाहारिणीओ, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ताओ वा होंति ।

मणुसिणी-अजोगिजिणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, एओ पाणो, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण अलेस्सा; भवसिद्धियाओ, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणीओ णेव असण्णिणीओ, अणाहारिणीओ, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ताओ वा होंति” ।

लद्धि-अपज्जत्त-मणुस्साणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे

विकल्पोंसे विमुक्त, आहारिणी, अनाहारिणी, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होती हैं ।

अयोगिजिन गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप कहने पर—एक अयोगिकेवली गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, एक आयु प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्य-गति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अयोगस्थान, अपगतवेदस्थान, अकषायस्थान, केवल-ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, केवलदर्शन, द्रव्यसे छहो लेख्यापं, भावसे अलेख्यास्थान, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिनी और असंज्ञिनी इन दोनों विकल्पोंसे मुक्त, अनाहारिणी, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होती हैं ।

लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद,

नं. १३८

अयोगिकेवली गुणस्थानवर्तिनी मनुष्यनियोंके आलाप.

गु	जी	प	मा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	व
१	१	६	१	०	१	१	१	०	०	०	१	१	१	६	१	१	०	१	२
अयो	पर्या		आयु	क्षीण	म	पंचे	मन्त्र	अयोग	अपग	अकषा	के.	यथा	के द	द्र ० भा	म	क्षा	उम विना	अना.	साका. अनाका यु उ.

जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-
लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो,
आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

एव मणुसगदी समत्ता ।

“देवगदीए देवाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, णवुंसयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण,

चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत ये तीन लेश्याणं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

इसप्रकार मनुष्योंके आलाप समाप्त हुए।

देवगतिमें सामान्य देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसक वेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान,

नं. १३९

लब्धपर्याप्तक मनुष्यके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स.	सहि	आ	उ.
१	१	इअ.	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	उ.
मि	स, अ			म	प.	वस	औ मि.	कर्म	न.		कुभ.	अस	चक्षु	का	म	मि	स.	आहा.	साका.
											कुश्रु		अच	शु	अ.		अना	अना.	
														मा. ३					
														अशु.					

न. १४०

देवोंके सामान्य आलाप

[illegible]

असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ एत्थ सिस्सो भणदि—देवाणं पज्जत्तकाले दब्बदो छ लेस्साओ हवंति त्ति एदं ण घडदे, तेसिं पज्जत्तकाले भावदो छ-लेस्साभावादो । मा भवंतु देवाणं भावदो छ लेस्साओ दब्बदो पुण छ लेस्सा भवंति चेव, दब्ब-भावानमेगत्ताभावादो । इदि एदमवि वयणं ण घडदे, जम्हा जा भावलेस्सा तल्लेस्सा चेव ओरालिय-वेउव्विय-आहारसरीणोक्कम्म-परमाणवो आगच्छंति । तं कथं णव्वदि त्ति भणिदे सोधम्मादिदेवाणं भावलेस्साणुरुव-दब्बलेस्सापरुवणादो णव्वदि । ण च देवाणं पज्जत्तकाले तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ मोत्तूणणलेस्साओ अत्थि, तम्हा देवाणं पज्जत्तकाले दब्बदो तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साहि होदब्बमिदि । एत्थ उवउज्जंतीओ गाहाओ—

असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाए, (यहां तीन अगुम लेइयाए अपर्याप्तकालकी अपेक्षा जानना चाहिये ।) भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्मत्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, स्कारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सामान्य देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाए, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारो मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, स्त्री और पुरुष ये दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाए होती हैं ।

शंका—यहांपर शिष्य कहता है कि देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्यसे छहों लेइयाए होती हैं यह वचन घटित नहीं होता है, क्योंकि, उनके पर्याप्तकालमें भावसे छहों लेइयाओंका अभाव है । यदि कहा जाय कि देवोंके भावसे छहों लेइयाए मत होवें, किन्तु द्रव्यसे छहों लेइयाए होती ही हैं, क्योंकि द्रव्य और भावमें एकताका अभाव अर्थात् भेद है । सो ऐसा कथन भी नहीं बनता है, क्योंकि, जो भावलेइया होती है, उसी लेइयावाले ही औदारिक, वैक्रियिक और आहारकशरीरसंबन्धी नोक्कर्म परमाणु आते हैं । यदि यह कहा जाय कि उक्त बात कैसे जानी जाती है, तो उसका उत्तर यह है कि सौधर्म आदि कल्पवासी देवोंके भाव-लेइयाके अनुरूप ही द्रव्य लेइयाका प्ररूपण किये जानेसे उक्त बात जानी जाती है । तथा देवोंके पर्याप्तकालमें तेज, पद्म और शुक्ल इन तीन लेइयाओंको छोड़कर अन्य लेइयाए होती नहीं है, इसलिये देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्यकी अपेक्षा भी तेज, पद्म और शुक्ल लेइयाए होना चाहिये । इस प्रकरणमें निम्न गाथाए उपयुक्त हैं—

किण्हा भमरसमण्णा णीला पुण णीलमुलियसंकासा ।

काओ कओदवण्णा तेऊ तवणिज्जवण्णा य ॥ २२३ ॥

पम्मा पउमसवण्णा सुवका पुण कासकुसुमसंकासा ।

किण्हादि-दव्वलेस्सा-वण्णविसेसो मुणेयव्वा' ॥ २२४ ॥

भावलेस्सा-लिंगं थोरुच्चएण एसा गाहा जाणावेई—

णिम्मूलखधसाहुवसाहं वुच्चित्तु वाउ-पडिदाइ ।

अव्भतरलेस्साणं भिदइ एदाइ वयणाई' ॥ २२५ ॥

कृष्णलेइया भौरेके समान अत्यन्त काले वर्णकी होती है, नीललेइया नीलकी गोलीके समान नीलवर्णकी होती है, कापोतलेइया कपोतवर्णवाली होती है, तेजोलेइया सोनेके समान वर्णवाली होती है, पद्मलेइया पद्मके समान वर्णवाली होती है और शुक्ललेइया कांसके फूलके समान श्वेतवर्णकी होती है । इसप्रकार कृष्णादि द्रव्यलेइयाओंके वर्ण-विशेष जानना चाहिए ॥ २२३, २२४ ॥

भावलेइयाओंके स्वरूपका थोडेमें संग्रहरूपसे यह गाथा ज्ञान करा देती है—

जड़-मूलसे वृक्षको काटो, स्कन्धसे काटो, शाखाओंसे काटो, उपशाखाओंसे काटो फलोंको तोड़कर खाओ और वायुसे पतित फलोंको खाओ, इसप्रकारके ये वचन अभ्यन्तर अर्थान् भावलेइयाओंके भेदको प्रकट करते हैं ॥ २२५ ॥

विशेषार्थ—गोष्मटसार जीवकांडमें उक्त अर्थ इस प्रकारसे स्पष्ट किया गया है कि फलोंसे लदे हुए वृक्षको देखकर कृष्णलेइयावाला विचार करता है कि इस वृक्षको जड़-मूलसे उखाड़कर फलोंको खाना चाहिये । नीललेइयावाला विचार करता है कि इस वृक्षको स्कन्ध अर्थात् मूलसे ऊपरके भाग को काटकर फलोंको खाना चाहिये । कापोतलेइयावाला विचार करता है कि इस वृक्षकी शाखाओंको काटकर फलोंको खाना चाहिये । तेजोलेइयावाला विचार करता है कि इस वृक्षकी उपशाखाओंको काटकर फलोंको खाना चाहिये । पद्मलेइयावाला विचार करता है कि इस वृक्षके फलोंको तोड़कर खाना चाहिये । शुक्ललेइयावाला विचार करता है कि इस वृक्षके वायुसे गिरे हुए फलोंको खाना चाहिये । उक्त प्रकारके भावोंसे छहों लेइयाओंके तारतम्यको जान लेना चाहिये ।

१ 'णीला पुण' इति स्थाने 'आ, क' प्रत्यौ 'णीलायण' इति पाठ । 'ज' गती 'णीलायण' इति पाठ ।

२ पचसं. १, १८२. १८४ (दि. हसलिखित)

३ णिम्मूलखधसाहुवसाहं चित्तु चिणिचु पडिदाइ । गाउ फडाइ इदि ज मणेण वयण दो कमा ॥ गो. जी. ५०८.

तेऊ तेऊ तेऊ पम्मा पम्मा य पम्म-सुक्का य ।

सुक्का य परमसुक्का लेस्ससमासो मुणेयव्वो^१ ॥ २२६ ॥

तिण्ह दोण्हं दोण्हं छण्ह दोण्हं च तेरसण्ह च ।

एत्तो य चोदसण्ह लेस्सामेदो मुणेयव्वो^२ ॥ २२७ ॥

एत्थ परिहारो उच्चदे—ण ताव एदाओ गाहाओ तो पक्खं साहेति, उभय-पक्ख-साधारणादो । ण तो उत्त-जुत्ती वि घडदे, ण ताव अपज्जत्तकालभावलेस्समणुहरइ दव्व-लेस्सा, उत्तमभोगभूमि-मणुस्साणमपज्जत्तकाले असुह-तिलेस्साणं गउरवण्णाभावापत्तीदो । ण पज्जत्तकाले भावलेस्सं पि णियमेण अणुहरइ पज्जत्त-दव्वलेस्सा, छव्विह-भावलेस्सासु परियट्ठंत-तिरिक्ख-मणुसपज्जत्ताणं दव्वलेस्साए अणियमप्पसंगादो । धवलवण्ण-वलायाए

तीनके तेजोलेइयाका जघन्य अंश, दोके तेजोलेइयाका मध्यम अंश, दोके तेजोलेइयाका उत्कृष्ट एवं पञ्चलेइयाका जघन्य अंश, छहके पञ्चलेइयाका मध्यम अंश, दो के पञ्चलेइयाका उत्कृष्ट एवं शुक्ल लेइयाका जघन्य अंश, तेरहके शुक्ललेइयाका मध्यम अंश तथा चौदहके परमशुक्ललेइया होती है। इस प्रकार तीनों शुभ लेइयाओंका भेद जानना चाहिये ॥ २२६, २२७ ॥

विशेषार्थ—भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क इन तीन जातिके देवोंके जघन्य तेजोलेइया होती है। सौधर्म और ऐशान इन दो स्वर्गवाले देवोंके मध्यम तेजोलेइया होती है। सानत्कुमार और माहेन्द्र इन दो स्वर्गवाले देवोंके उत्कृष्ट तेजोलेइया और जघन्य पञ्चलेइया होती है। ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ठ, शुक्र और महाशुक्र इन छह स्वर्गवालोंके मध्यम पञ्चलेइया होती है। शतार और सहस्रार इन दो स्वर्गवालोंके उत्कृष्ट पञ्चलेइया और जघन्य शुक्ललेइया होती है। आनत, प्राणत, आरण, अच्युत और नौ त्रैवेयक इन तेरह विमानवालोंके मध्यम शुक्ललेइया होती है। इसके ऊपर नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर इन चौदह विमान-वालोंके उत्कृष्ट या परमशुक्ललेइया होती है।

समाधान—शंकाकारकी पूर्वोक्त शंकाका अब परिहार कहते हैं—उपर कही गई ये गाथाएं तो तुम्हारे पक्षको नहीं साधन करती हैं, क्योंकि, वे गाथाएं उभय पक्षमें साधारण अर्थात् समान हैं। और न तुम्हारी कही गई युक्ति भी घटित होती है। जिसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—द्रव्यलेइया अपर्याप्तकालमें होनेवाली भावलेइयाका तो अनुकरण करती नहीं है, अन्यथा अपर्याप्तकालमें अशुभ तीनों लेइयावाले उत्तम भोगभूमियां मनुष्योंके गौर वर्णका अभाव प्राप्त हो जायगा। इसीप्रकार पर्याप्तकालमें भी पर्याप्त-जीवसंबन्धी द्रव्यलेइया भाव-लेइयाका नियमसे अनुकरण नहीं करती है, क्योंकि, वैसा मानने पर छह प्रकारकी भाव-लेइयाओंमें निरन्तर परिवर्तन करनेवाले पर्याप्त तिर्यंच और मनुष्योंके द्रव्यलेइयाके अनियम-

१ गो जी. ५३५ पर तत्र चतुर्थचरणस्त्वयम्—‘ भवणतिया पुण्णे अउहा ’। प्रतिपु प्रथमपत्तो ‘ तेउ तेउ तत्र तेउ पम्म पम्मा य ’ इति पाठ

२ गो. जी. ५३४. पर तत्र चतुर्थचरणस्त्वयम्—‘ लेस्सा भवणादिदेवाण ’।

भावदो सुक्कलेस्सप्पसंगादो । आहारसरीराणं धवलवण्णणं विग्गहगदि-ट्टिय-सच्चजीवाणं धवलवण्णणं भावदो सुक्कलेस्सावत्तीदो चेव । किं च, दब्बलेस्सा णाम वण्णणामकम्मो-दयादो भवदि, ण भावलेस्सादो । ण च दोण्हमेगत्तं णाम, वण्णणामे-मोहणीयाणं अघादि-घादीणं पोग्गल-जीवविवागीणं एगत्त-विरोहादो । विस्ससोवचयवण्णो भावलेस्सादो भवदि, ओरालिय वेउव्विय-आहारसरीराणं वण्णा वण्णणामकम्मादो भवंति, अदो ण एस दोसो । इदि ण, 'चंडो ण मुयदि वेरं' इच्चादि-वाहिरकज्जुप्पायणे ट्टिदिबंधे पंदसबंधे च भावलेस्सा-वावार-दंसणादो । अदो दब्बलेस्साए ण कारणं भावलेस्सा त्ति सिद्धं । तदो वण्णणामकम्मोदयदो भवणवासिय-वाणवेंतर-जोइसियाणं दब्बदो छ लेस्साओ भवंति, उवरिमदेवाणं तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ भवंति । पंच-वण्ण-रस-कागस्स कसण-ववएसो व्व एगवण्ण-ववहार विरोहाभावादो । भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया

पनेका प्रसंग प्राप्त हो जायगा । और यदि द्रव्यलेश्याके अनुरूप ही भावलेश्या मानी जाय, तो धवल-वर्णवाले बगुलेके भी भावसे शुक्ललेश्याका प्रसंग प्राप्त होगा । तथा धवलवर्णवाले आहारक शरीरोंके और धवलवर्णवाले विश्रहगतमें विद्यमान सभी जीवोंके भावकी अपेक्षासे शुक्ललेश्याकी आपत्ति प्राप्त होगी । दूसरी बात यह भी है कि द्रव्यलेश्या वर्णनामा नामकर्मके उदयसे होती है, भावलेश्यासे नहीं । इसलिये दोनों लेश्याओंको एक कह नहीं सकते, क्योंकि, अघातिया और पुद्गलविपाकी वर्णनामा नामकर्म, तथा घातिया और जीवविपाकी (चारित्र) मोहनीय कर्म इन दोनोंकी एकतामें विरोध है । यदि कहा जाय कि कर्मोंके विस्ससोपचयका वर्ण तो भावलेश्यासे होता है, और औदारिक, वैकियिक, आहारकशरीरोंके वर्ण वर्णनामा नामकर्मके उदयसे होते हैं, इसलिये हमारे कथनमे यह उक्त दोष नहीं आता है, सो भी कहना ठीक नहीं है, क्योंकि, 'कृष्णलेश्यावाला जीव चडकमा होता है, चैर नहीं छोड़ता है' इत्यादि रूपसे बाहरी कार्योंके उत्पन्न करनेमें, तथा स्थितिबन्ध और प्रदेशबन्धमें ही भावलेश्याका व्यापार देखा जाता है, इसलिये यह बात सिद्ध होती है कि भावलेश्या द्रव्यलेश्याके होनेमें कारण नहीं है । इसप्रकार उक्त विवेचनसे यह फलितार्थ निकला कि वर्णनामा नामकर्मके उदयसे भवनवासी, चानव्यन्तर और ज्योतिषी देवोंके द्रव्यकी अपेक्षा छोहो लेश्याएं होती हैं, तथा भवनत्रिकसे ऊपरके देवोंके तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं होती हैं । जैसे पांचो वर्ण और पांचों रसवाले काकके अथवा पांचों वर्णवाले रसोंसे युक्त काकके कृष्ण व्यपदेश देखा जाता है, उसी प्रकार प्रत्येक शरीरमें द्रव्यसे छोहो लेश्याओंके होने पर भी एक वर्णवाली लेश्याके व्यवहार करनेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-
वजुत्ता वा' ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्टाणाणि, एओ जीवसमासो,
छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो
जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण,
दब्बेण काउ सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मा-
मिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति
अणागारुवजुत्ता वा' ।

द्रव्यलेश्या आलापके आगे भावसे तेज, पद्म और शुक्ललेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-
सिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि
और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां,
सात प्राण, चारों संज्ञाप, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्र और कर्मण ये दो
योग, स्त्री और पुरुष ये दो वेद, चारों कपाय, विभगज्ञानके बिना पांच ज्ञान, असंयम, आदिके
तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक,
अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके बिना पांच सम्यक्त्व, साज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साका-
रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १४१

देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
४	१	६	२०	४	१	१	१	९	२	४	६	१	३	द्र ६	२	६	१	२	२
मि	८			दे				म ४	स्त्री		अज्ञा ३	अस	के द	मा ३	म		स	आहा	साका
सा.								व ४	पु		ज्ञान ३		बिना	शुभ	अ				अना
म.								वै	१										
अ																			

नं. १४२

देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
३	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	५	१	३	द्र २	२	५	१	२	२
मि	स	अ		दे	प	न		वै मि.	स्त्री		कुम.	अस.	के द	का	म	मि.	स	आहा	साका
मा								कर्म	पु		कुपु		बिना	शु.	अ	सासा		अना.	अना
अ.											मति			मा. ६		औ			
											श्रुत					क्षा			
											अव					क्षायो.			

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो.

उन्हीं मिथ्यादृष्टि देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, तपुंसकवेदके विना दो वेद, चारो कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएँ, भावसे तेज, पद्म और गुरु लेश्याएँ, भव्यसिद्धि,

मिथ्यादृष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

[illegible]

अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-
वजुत्ता वा^{११} ।

तेसिं चेव अपज्जत्तार्णं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो,
छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, दो
जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंमण,
दब्बेण काउ सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, मग्गमा-
मिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति
अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

द्रव्यलेश्या आलापके आगे भावसे तेज, पञ्च और शुक्ललेश्याण. भव्यसिद्धिक. अभव्य-
सिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, सांक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं देवोंके अपर्याप्तकालसबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सात्तादनसम्यग्दृष्टि
और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां,
सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्र और कार्मण ये दो
योग, स्त्री और पुरुष ये दो वेद, चारों कपाय, विभगज्ञानके विना पांच ज्ञान, असंयम, आदिके
तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याणं, भावसे छहों लेश्याणं, भव्यसिद्धिक,
अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, सांक्षिक, आहारक, अनाहारक, साका-
रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १४१

देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
४	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	६	१	३	द्र ६	२	६	१	१	२
मि	५			दे				म ४	स्त्री		अज्ञा ३	अस	के द	भा ३	म		स	आहा	साका
सा.	५							व ४	पु		ज्ञान. ३		विना	शुभ.	अ				अना
स.								वै १											
अ																			

नं. १४२

देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ.	उ
३	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	५	१	३	द्र २	२	५	१	२	२
मि	स अ			दे	प	त्र		वै मि.	स्त्री		कुम.	अस.	के द	का	म	मि.	स	आहा	साका
सा								कार्म	पु		कुशु		विना	शु.	अ	सासा		अना.	अना
अ.											मति			मा. ६		औ			
											शुत					क्षा			
											अव					क्षायो.			

अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-
वजुत्ता वा' ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्टाणाणि, एओ जीवसमासे,
छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो
जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण,
दब्बेण काउ सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मा-
मिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होति
अणागारुवजुत्ता वा' ।

द्रव्यलेख्या आलापके आगे भावसे तेज, पद्म और शुक्ललेख्याण, भव्यसिद्धिक, अभव्य-
सिद्धिक; छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं देवोंके अपर्याप्तकालसबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सामादनसम्यग्दृष्टि
और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां,
सात प्राण, चारों संज्ञाप, देवगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्र और कर्मण ये दो
योग, स्त्री और पुरुष ये दो वेद, चारों कपाय, विभंगज्ञानके विना पांच ज्ञान, असंयम, आदिके
तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याणं, भावसे छहों लेख्याणं, भव्यसिद्धिक,
अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साका-
रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं ।

नं. १४१

देवोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
४	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	६	१	३	द्र ६	२	६	१	२	२
मि	५			दे				म ४	स्त्री		अज्ञा ३	अस	के द	मा ३	म		स	आहा	साका
सा.	५							व ४	पु		ज्ञान. ३		विना	शुभ	अ				अना
स.								वै											
अ								१											

नं. १४२

देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
३	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	५	१	३	द्र २	२	५	१	२	२
मि	स अ.			दे	प	त्र		वै मि.	स्त्री		कुम.	अस.	के द	का	म	मि.	स	आहा	साका
मा								कर्म	पु.		कुथ.		विना	शु.	अ	सासा		अना.	अना
अ.											मति			भा. ६		औ			
											श्रुत					क्षा			
											अव					क्षायो.			

देव-मिच्छाइष्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ
छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी,
तसक्काओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजमो, दो
दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेम्मोओः भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,
मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता हेति अणागारुवज्जुत्ता वा' ।

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्चेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो,

मिथ्यादृष्टि देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सञ्जी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, छहो अपर्याप्तियां दशो प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकबेदेके बिना दो वेद, चारो कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक, मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्ही मिथ्यादृष्टि देवोंके पर्याप्तकालसेवन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पञ्चेन्द्रियजाति, असकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारो कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएँ, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएँ, भव्यसिद्धिक,

नं. १४३

मिथ्या/दृष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

[illegible]

आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्त, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

देव सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ

अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक सङ्गी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेब्ध्याएं, भावसे छहों लेब्ध्याएं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान,

न. १४४

मिथ्यादृष्टि देवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय.	द	ले	म.	स	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	२	४	३	१	२	६	२	१	१	१	२
मि	स.प.				दे	पे	तस	म ४ व ४ वे	खी पु		अज्ञा	अस	चक्षु. अच	मा ३ भ शुभ. अ	मि	स	आहा	साका अना	

नं. १४५

मिथ्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	६	२	१	१	२	२
मि.	स अ	अ			द	प	तस	वै मि कर्म	खी पु		कुम कुश्रु	अस	चक्षु अचक्षु	का शु मा ६	म अभ	मि	स	आहा अना	साका. अना

पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगदी, पंचिंदिय-
जादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, अमंजमो, दो
दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, मवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो
अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

“तैसि चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग,
दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण

संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहो अपर्याप्तियां,
दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग,
चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह
योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु
ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संनिक,
आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सासादनसम्यग्दष्टि देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन
गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देव-
गति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये
नौ योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और

नं. १४६

सासादनसम्यग्दष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स.	सक्ति.	आ.	उ.
१	२	६५	१०	४	१	१	१	११	२	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	२	२
सा	स प.	६अ	७	दे		पु	स	म ४	ली		अज्ञा	अस	चक्षु	मा ६	म.	सासा	स.	आहा.	साका.
सा	स अ							वै २	पु				अच					अना.	अना.
								का १											

नं १४७

सासादनसम्यग्दष्टि देवोंके पर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स.	सक्ति	आ	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	२	द्र ६	१	१	१	१	२
सा	स			दे.	पचे	तस.	म ४	ली			अज्ञा	अस	चक्षु	मा ३	म.	सासा	स	आहा.	साका.
सा	प						वै २	पु					अच.	शुभ				अना.	अना.

तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाण, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, साण्णिणो, आहारिणो, अणा-हारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

देव-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णिण णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो

अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहो लेख्याएं, भावसे तेज, पन्न और शुक्कलेख्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासा-दन गुणस्थान, एक सन्नी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पचेन्द्रियजाति, तसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्क लेख्याएं, भावसे छहों लेख्याएं, सिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

सम्याग्मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सम्याग्मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक सन्नी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहो लेख्याएं, भावसे तेज,

नं. १४८

सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र २	१	१	१	२	२
मा.	स.अ	छ		दे	पु	ज्ञे	वै मि	कर्म	ह्री.	कुम.	अस	चक्षु	अच	का	म	सा	स	आहा	साका
									पु	कुश्रु				शु				अना.	अनाका
														मा ६					

दंसण, दव्वेण छ लेस्माओ, भावण तेउ-पम्म-मुक्कलेस्माओ, भवमिद्विया, मम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हेति अणागारुवजुत्ता वा' ।

देव-असंजदसम्माइद्वीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवममामा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगदी. पंचिदिय-जादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-मुक्कलेस्साओ; भवमिद्विया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हेति अणागारुवजुत्ता वा' ।

पद्म और शुक्ल लेख्याए भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यान्व, साक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

असंयतसम्यग्दष्टि देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अधिरतसम्यग्दष्टि गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, व्रमकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग. नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व साक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं १४९

सम्यग्मिथ्यादष्टि देवोंके आलाप

शु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्षि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	२	४	३	१	२	६	१	१	१	१	२
सम्य	स	प	प		दे	पचे	वस	म	४	ही	अज्ञा	अस	चक्षु	भा	३	सम्य	स	आहा	साका
								व	४	पु	३		अव	गुम.					अना
								वे	१		ज्ञान								
											मिश्र								

नं. १५०

असंयतसम्यग्दष्टि देवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म.	स	सक्षि.	आ	उ
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	२	४	३	१	३	६	१	३	१	२	२
स.प	प	६	७		दे	पचे	वस	म. ४	ली		म ति	अस	के द	मा	३	औप	स	आहा	साका
लि	म	अ	अ					व ४	पु		शुत		विना.	शुभ		क्षा		अना	अना.
								का. १			अव.					क्षायो			

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वान्, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्माओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वान्, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो,

उन्ही तसम्यग्दष्टि देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारो मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ललेश्यापं भव्यसिद्धिक, औप-शमिक, क्षायिक और क्षाये भिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंयतसम्यग्दष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञा, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्या, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औप-शमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक;

नं. १५१

असं म्यग्दष्टि देवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का	यो	वे	क	क्षा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	३	द्र ६	१	३	१	१	२
स.प	प.			दे	प.	त्र	म	४	स्त्री		मति.	जस	के	द	मा	औप.	स.	आहा	साका
वि.	क						व	४	पु		श्रुत.		विना	शुभ	म	क्षा.			अना
							वै	१			अव					क्षायो			

तेसिं चैव पञ्चत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण जहणिया तेउलेस्सा, भवमिद्विया अभवमिद्विया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

तेसि चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ
अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो
जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-
लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं,

उन्हीं भवनत्रिक देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्यापं, भावसे जघन्य तेजोलक्ष्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, धायिकसम्यक्त्वके बिना पांच सम्यक्त्व, सक्षिक, आहारिक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं भवनत्रिक देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, और सासादनसम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, एक सच्ची-अपर्याप्त जीवत्समास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पञ्चेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेड्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेड्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व और सासा-

नां. १५४

भवनत्रिक देवोंके पर्याप्त आलाप

[illegible]

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण जहणिया तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

१ 'तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो

उन्हीं भवनत्रिक मिथ्यादृष्टि देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारो संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारो मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिक काययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे जघन्य तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं भवनत्रिक मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मण-

नं. १५७

भवनत्रिक मिथ्यादृष्टि देवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी.	प	प्रा	सं	ग.	इ	का.	यो	वे	क.	ज्ञा	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि	स.	प			दे	पंचे.	त्रस.	म ४ व. ४ वै १	खी		अज्ञा	अस	चक्षु अच	मा १ तेज.	म अ	मि	स	आहा.	साका. अना.

नं. १५८

भवनत्रिक मिथ्यादृष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का.	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ.	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र ६ का ३ अशु	२ म. अ.	१ मि	१ स.	२ आहा अना	२ साका. अना
मि.	स	अ			द	पंचे.	त्रस.	वै मि कर्म.	खी		कुम कुशु	अस	चक्षु अच						

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणा-

उन्हीं सासादनसम्यग्दाष्टि भवनत्रिक देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—
 एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण,
 चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग
 ये दो योग, नपुसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान,
 असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ललेश्याएं, भावसे कृष्ण,
 नील और कापोत लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक,

भवनत्रिक सासादनसम्यग्दाष्टि देवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	२	४	३	१	३	द्र ६	१	१	१	१	२
सा	स	प	प		दे	पु	वस.	म	४	ली	अज्ञा	अस	चक्षु	भा	म	सासा	स	आहा	साका
सा								वै	१	पु			अच	तेज					अना

हरिणो, सागारुवजुत्ता हेति अणागारुवजुत्ता वा' ।

भवनवासिय-वाणवेंतर-जोइमियदेव-सम्मामिच्छाद्वीणं भणमाणे अन्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवममानो, छ पञ्जत्तीओ, दम पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असजमो, दो दसण, दव्वेण छ लेम्मा, भावेण जहणिया तेउ-लेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हेति अणागारु-वजुत्ता वा' ।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि भवनवासी, वानव्यन्तर ओर ज्यातिष्क देवोंके आलाप कहने पर— एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक सजी-पर्याप्त जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैकल्पिककाययोग ये नो योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहो लेध्यापं, भावसे जघन्य तेजोलेध्या, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, साक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १६१

भवनत्रिक सासादनसभ्यदृष्टि देवोंके अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्षि	आ	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र २	१	५	१	२	२
सा	स	अ			द	पंच	त्रस	व मि	स्त्री		कुम.	अस	चक्षु	का	म	मा	म	आहा	साका.
								कर्म	पु		कुशु		अचक्षु	शु				अना	अना
														मा ३					
														अयु					

नं. १६२

भवनत्रिक सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्षि	आ	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	१	२	४	३	१	२	द्र ६	१	१	१	१	२
स्य	स, प	प			दे	प	त्रस.	म ४	स्त्री		ज्ञान	अस	चक्षु	भा १	१	सम्य.	स.	आहा.	साका.
								व ४	पु		अज्ञा.		अच.	तेज					अना
								वै. १			मिश्र								

भवणवासिय-वाणवतर-जोइसियदेव-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणह्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण जहण्णिणा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, खड्डय-सम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता हांति अणागारु-वज्जुत्ता वा^{१११} ।

एसो इत्थि-पुरिसवेदाणमोघालावो समत्तो । एवं चेव पुरिसवेदस्स वत्तव्वं । णवरि जत्थ दो वेदा ठविदा तत्थ पुरिसवेदो एक्को चेव ठवेदव्वो । एवं चेव इत्थिवेदणिरुंभणं काऊण वत्तव्वं । णवरि जत्थ दो वेदा ठविदा तत्थ इत्थिवेदो चेव ठवेदव्वो ।

असंयतसम्यग्दाष्टि भवनवासी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देवोंके आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दाष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तिया, दशो प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारो मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारो कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे जघन्य तेजोलेख्या, भव्य-सिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्वके बिना दो सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसप्रकार भवनत्रिक स्त्रीवेदी और पुरुषवेदियोंके संगुक्त सामान्य आलाप समाप्त हुए । इसीप्रकार भवनत्रिक देवोंमें पुरुषवेदके आलाप कहना चाहिये । विशेषता केवल यह है कि ऊपर जहां भवनत्रिक देवोंके सामान्य आलापमें दो वेद स्थापित किये गये हैं, वहां एक पुरुषवेद ही स्थापित करना चाहिये । इसीप्रकार भवनत्रिक देवोंमें स्त्रीवेदका आश्रय करके आलाप कहना चाहिये । विशेष बात यह है कि पहले जहां सामान्य आलापमें दो वेद स्थापित किये गये हैं, वहां एक स्त्रीवेद ही स्थापित करना चाहिये ।

विशेषार्थ—ऊपर जो भवनत्रिक देवोंके आलाप कह आये हैं, वे सामान्यालाप हैं । पुरुषवेद और स्त्रीवेदका भेद नहीं किया गया है । परंतु उन्हीं आलापोंमें दो वेदके

नं. १६३

भवनत्रिक असंयतसम्यग्दाष्टि देवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	संज्ञी	आ	उ
१	२	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	३	६	१	२	१	८	२
क	स	प.			दे	पु	स	म	सी		मति	अस	के	द	म.	औप	म	आहा	साका
ल	प						व.	४	पु		भुत.		विना	तेज	म	क्षायो.			अना
							वै	१			अव								

सौधर्ममीनाणदेवाणं भणममाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवममामा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण मत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कमाय, छण्णाण, अमंजम, तिण्णि दंमण, दब्बेण काउ-मुअ-मज्झिमतेउलेस्सा, भवेण मज्झिमा तेउलेस्सा: भवमिद्विया असव-सिद्विया, छ सम्मत्तं, मण्णिणां, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता हेति अणामारु-वज्जुत्ता वा' ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भणममाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवममामो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, णव जोग,

स्थानमें केवल पुरुषवेद या केवल स्त्रीवेद इसप्रकार एक वेदके स्थापित कर देन पर वे आलाप पुरुषवेदी और स्त्रीवेदी भवनत्रिकोंके हो जाते हैं । भवनत्रिकके सामान्य आलापोंसे विशेष आलापोंमें इससे अधिक और कोई विशेषता नहीं है ।

सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, संक्षी पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकियिककाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग, नपुंसक-वेदके बिना दो वेद चारों कपाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम तेजोलेख्या, भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुण-स्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिककाययोग ये नौ

१ प्रतिपु ' दब्बेण काउ-मुअलेस्सा मज्झिमा तेउलेस्सा भवेण इति पाठ ।

सं. १६४

सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	ऊ	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स	संज्ञि	आ	उ
४	२	६५	१०	४	१	१	१	११	२	४	६	१	३	३	२	६	१	२	२
मि.	स प	६अ	७		दे			म ४	ली		ज्ञान ३	अस	के द	का.	म			आहा	साका.
सा.	स अ							व. ४	पु		अज्ञा ३		विना	उ ते.	अ.			अना	अना
स								वै २						मा १					
अ								का १						तेज					

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्तं । उवसमसम्मत्तेण सह उवसमसेढिमिह मद-संजदे पडुच्च सोधम्मादि-उवरिम-देवाणमपज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्धदि । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-

उम्ह्री सौधर्म ऐशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक सर्जी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कपाय, कुमाते. कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेझ्यापं, भावसे मध्यम तेजोलेझ्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके बिना पांच सम्यक्त्व होते हैं। यहां पर औपशमिकसम्यक्त्व होनेका कारण यह है कि औपशमिकसम्यक्त्वके साथ उपशम श्रेणीमें मरे हुए संयतोंकी अपेक्षा सौधर्म आदि ऊपरके देवोंके अपर्याप्तकालमें औपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है।

सौधर्म ऐशान देवोंके पर्याप्त आलाप.

[illegible]

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो

उन्ही मिथ्यादृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक सञ्जी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिक-काययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही मिथ्यादृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक सञ्जी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसक वेदके विना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सन्निक, आहारक, अनाहारक, साकारो-

नं १६८

मिथ्यादृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग.	ड	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय.	ठ	ले	म	स.	सन्नि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	२	४	१	२	१	१	२
मि	म	प			दे	पे	न	म	ली		अज्ञा	अम	चक्षु	मा	म	मि	स	आहा.	साका
								४	पु.				अच	तेज	अ				अना

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

सोधर्मीसाण-सासणसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमतेउलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संजी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशो प्राण. सात प्राण, चारों सहापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैकियिककाययोग, वैकियिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम तेजोलेख्या, भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १६९

मिथ्यादष्टि सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	का.	यो.	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स	सक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	स	अ			दे	पुं.	वै	मि	ली		कुम.	अस	चक्षु	का	म.	मि.	स.	आहा	साका.
	अ.						कर्म	पु		कुक्षु			अच	शु.	अ.			अना.	अना.
														मा १	तेज.				

नं. १७०

सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स	सक्षि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	१	२	४	३	१	२	द्र. ३	१	१	१	२	२
सा	स	अ			दे	पुं.	वै	म	ली		अज्ञा	अस	चक्षु	का	म.	सा	स.	आहा	साका
	अ						कर्म	४	४	पु			अच	शु				अना.	अना.
								२	२					तेज.					

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६८} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो

उन्ही मिथ्याद्वाष्टि सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्याद्वाष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैकियिक-काययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही मिथ्याद्वाष्टि सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्याद्वाष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैकियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसक वेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारो-

नं १६८

मिथ्याद्वाष्टि सौधर्म पेशान देवोंके पर्याप्त आलाप

ग	जा	प	प्रा	स	ग	ड	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	०	८	३	१	२	६	१	२	१	१	२
मि	म	प	प		द	पु	त	म	ता		अज्ञा	अम	चक्षु	मा	म	मि	सा	आहा	साका
								४	पु				अव	तज	अ				अना

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

सोधम्मीसाण-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दम पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-मज्झिमतेउलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशो प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मण-काययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कपाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम तेजोलेख्या, भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

न. १६९

मिथ्यादष्टि सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सप	द	ले.	म	स	सहि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	२	२	१	१	२	२
मि.	स	अ			दे	पु.	ज्ञा.	वै.मि	स्त्री	कु	कु	अस	चक्षु	द्र २	म.	मि.	स.	आहा	साका.
	अ.							कर्म	पु.	कु	कु		अच	का	अ.			अना.	अना.
														मा १					
														तेज.					

नं. १७०

सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सप	द	ले.	म	स	सहि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	२	४	३	१	२	२	१	१	१	२	२
सासा	स	अ	अ		दे	पु.	ज्ञा.	म ४	स्त्री	अज्ञा	अस	अस	चक्षु	द्र. ३	म.	सासा	स.	आहा	साका
	अ							व. ४	पु				अच	का				अना.	अना.
								वै २						शु					
								का १						तेज.					

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणामारुवजुत्ता वा' ।

“तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्सा,

उन्ही सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म ऐशान देवोके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारो कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु ओर अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म ऐशान देवोके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकामिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये दो योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, कुमति और कुक्षुत ये दो

नं १७१

सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म ऐशान देवोके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	२	८	१	१	१	१	२
मा	स	प		द	पचे	त्रस	म	४	ली	जज्ञा	अम	चक्षु	तेज	म	सासा	स	आहा	साका	
		प					व	४	पु			अच	मा	३				अना	
							वै	१					तेज						

नं. १७२

सासादनसम्यग्दष्टि सौधर्म ऐशान देवोके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	८	२	१	१	१	२
मा	म	अ			दे	पचे	म	४	मि	कुम	अम	चक्षु	का	म	सा	स	आहा	साका	
		छ					वै	४	मी	कुक्षु		अच	शु				अना	अनाका	
							कर्म	१	पु				मा	१					
													तेज						

भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, साराणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

सोधम्मसीसाण-सम्मामिच्छाङ्गीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एअं जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि मज्झिमा तेउलेस्सा, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

सोधम्मसीसाण-असंजदसम्माङ्गीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम,

अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेङ्काएं, भावसे मध्यम तेजोलेङ्का, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारो वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेङ्का, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

असंयतसम्यग्दृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारो वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये ग्यारह योग, नपुंसकवेदके बिना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान,

नं. १७३

सम्यग्मिथ्यादृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	सं	ग	व	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	ट	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	२	४	३	१	२	३	१	१	१	१	२
सम्य	सप	प		दे	पवे	तस	म	४	४	५	अज्ञा	अस	चक्षु	ते.	म	सम्य	स	आहा	साका
							व	४	५		ज्ञान		अच	मा					अना
							वे	१			मिश्र			तेज.					

तिणिण दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-मज्झिमतेउलेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भव-
सिद्धिया, तिणिण सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति
अणागारुवज्जुत्ता वा^{१७५} ।

तेसिं चैव पञ्चत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
पञ्चत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग,
दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि मज्झिमा
वेउलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति
अणागारुवज्जुत्ता वा^{३०} ।

म, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम तेजोलेइया, भावसे मध्यम तेजोलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं असंयतसम्यग्दृष्टि सौधर्म ऐशान देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापण, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे मध्यम तेजोलेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १७४ असंयतसम्यग्दृष्टि सौधर्म ऐशान देवके सामान्य आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स	मस्ति	आ	उ
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	२	४	३	१	३	द्र	३	३	१	२	२
स.प	प.	७		दे.	पचे	त्रस	म.	४	स्त्री		मति	अस	के	द	का	म	औप	आहा	साका
म	अ	अ					व.	४	पु		श्रुत		विना.	शु	ते.		क्षा	अना	अना
क							वै.	२			अव.			मा	१		क्षायो		
							का	१						तेज					

नं. १७५ असंयतसम्यग्दृष्टि सौधर्म ऐशान देवोंके पर्याप्त आलाप

पु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का	यो	वे	क	मा	सय	द	ले	म	न	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	८	१	१	१	९	२	४	३	१	३	१	१	३	१	१	२
म.प	म.प	प.		दे	प	प	प	म ४ ४ १	मो ४ ४ १		गति. श्रुत अव	अस	ने द विना	तेज भा १ तेज	म	जोप. का क्षायो	स.	आहा	साका अना

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाण, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पच्चिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ सुक्क-लेस्सा, भावेण मज्झिमा तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं । देवासंजदसम्माइट्ठीणं कथमपज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि ? बुच्चदे—वेदगसम्मत्तमुवसामिय उवसममेट्ठि-मारुहिय पुणो ओदरिय पमत्तापमत्तसंजद-असंजद-संजदासंजद-उवसमसम्माइट्ठि-ट्ठाणेहि मज्झिम-तेउलेस्सं परिणमिय कालं काऊण सोधम्ममीमाण-देवसुप्पणाणं अपज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि । अध ते चेव उक्कस्स-तेउलेस्सं वा जहण्ण-पम्मलेस्सं वा परिणमिय जदि कालं करेति तो उवसमसम्मत्तेण सह सणक्कुमार-माहिंदे उप्पज्जंति । अध ते चेव उवसमसम्माइट्ठिणो मज्झिम-पम्मलेस्सं परिणमिय कालं करेति तो ब्रह्म ब्रह्मोत्तर-लान्तव-काविट्ठ-सुक्क-महासुक्केसु उप्पज्जंति । अध उक्कस्स-पम्मलेस्सं वा जहण्ण-सुक्कलेस्सं वा परिणमिय जदि ते कालं करेति तो उवसमसम्मत्तेण सह सदार-सहस्सारदेवसु उप्पज्जंति ।

उन्हीं असंयतसम्यग्दृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगाति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे मध्यम तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षयोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व होते हैं ।

शंका — असंयतसम्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालमें औपशमिकसम्यक्त्व कैसे पाया जाता है ?

समाधान—वेदकसम्यक्त्वको उपशमा करके और उपशमश्रेणी पर चढ़कर फिर वहांसे उतर कर प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, असंयत और संयतासंयत उपशमसम्यग्दृष्टि गुणस्थानोंसे मध्यम तेजोलेख्याको परिणत होकर और मरण करके सौधर्म पेशान कल्प-वासी देवोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके अपर्याप्तकालमें औपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है । तथा, उपर्युक्त गुणस्थानवर्ती ही जीव उत्कृष्ट तेजोलेख्याको अथवा जघन्य पञ्चलेख्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो औपशमिकसम्यक्त्वके साथ सनत्कुमार और महेन्द्र कल्पमें उत्पन्न होते हैं । तथा, वे ही उपशमसम्यग्दृष्टि जीव मध्यम पञ्चलेख्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिट्ठ, शुक्ल और महाशुक्ल कल्पोंमें उत्पन्न होते हैं । तथा, वे ही उपशमसम्यग्दृष्टि जीव उत्कृष्ट पञ्चलेख्याको अथवा जघन्य शुक्ललेख्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो औपशमिकसम्यक्त्वके साथ शतार,

अथ उवसमसेटिं चट्टिय पुणोदिण्णा चेव मज्झिम-सुक्कलेस्साए परिणदा संता जदि कालं करेति तो उवसमसम्मत्तेण सह आणद-पाणद-आरणच्चुद-णवगेवज्जविमाणवासिय-देवेसुप्पज्जंति । पुणो ते चेव उक्कस्स-सुक्कलेस्सं परिणमिय जदि कालं करेति तो उवसम-सम्मत्तेण सह णवाणुदिस-पंचाणुत्तरविमाणदेवेसुप्पज्जंति । तेण सोधम्मादि-उवरिम सब्ब-देवासंजदसम्माइट्ठीणमपज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्धमि ति । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

एवमित्थिपुरिसवेदाणमोघालावो समत्तो ।

एवं चेव पुरिसवेद-देवाणमालावो वत्तव्वो । णवरि जत्थ दो वेदा वुत्ता तत्थ पुरिसवेदो एक्को चेव वत्तव्वो । एवं सोधम्मीसाणदेवीणं पि वत्तव्वं । णवरि जत्थ

सहस्रार कल्पवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं । तथा, उपशमश्रेणी पर चढ़ करके और पुनः उतर करके मध्यम शुक्लेश्यासे परिणत होते हुए यदि मरण करते हैं तो उपशमसम्यक्त्वके साथ आनत, प्राणत, आरण, अच्युत और नौ त्रैवेयकविमानवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं । तथा, पूर्वोक्त उपशमसम्यग्दृष्टि जीव ही उत्कृष्ट शुक्लेश्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो उपशमसम्यक्त्वके साथ नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर-विमानवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं । इसकारण सौधर्म स्वर्गसे लेकर ऊपरके सभी असंयतसम्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालमें औपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है ।

सम्यक्त्व आलापके आगे—सञ्जी, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसप्रकार स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भेद न करके सौधर्म और पेशान स्वर्गके देवोंके सामान्य आलाप समाप्त हुए ।

सौधर्म पेशान कल्पके देवोंके सामान्य आलापोंके समान ही पुरुषवेदी देवोंके आलाप कहना चाहिये । विशेषता यह है कि सामान्य आलाप कहते समय जहाँ पर पहले स्त्रीवेद और पुरुषवेद ये दो वेद कहे गये हैं, वहाँ पर केवल एक पुरुषवेद ही कहना चाहिये । इसीप्रकार सौधर्म पेशान स्वर्गकी देवियोंके आलाप कहना चाहिये । विशेषता यह है कि

नं. १७६ असंयतसम्यग्दृष्टि सौधर्म पेशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	फ.	सा.	सय.	व.	ले.	म.	म.	सति	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	२	१	३	१	२	२
अवि.	मज	हुं			दे.	प	न.	वे	मि	पु.	मति	अग	के.	द.	का	म.	आप.	म	आहा
								कामं			श्रुत		विना	शु	क्ष्वा			अना	सामा.
											अव		भा	तेज	धायो				अना.

पुरिसवेदो वुत्तो तत्थ इत्थिवेदो चेव वत्तव्वो । असंजदसम्माइड्डिस्स इत्थिवेदमिह उपपत्ती
णत्थि चि तस्स पज्जत्तालावो एक्को चेव वत्तव्वो । पज्जत्तालावे उच्चमाणे त्रि खइयसम्मत्तं
णत्थि चि वत्तव्वं, देवेसु दंसणमोहणीयस्स खवणाभावादो । एत्तिओ चेव वित्तेसो ।

सणकुमार-माहिंददेवाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा,
छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी,
पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, छ पाण, असंजम,
तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-उक्करसत्तेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ, भावेण उक्कस्सत्तेउ-
जहण्णपम्मलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो
अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा”” ।

पुरुषवेदी देवोंके आलापोंमें जहां पुरुषवेद कहा गया है वहां केवल स्त्रीवेद ही कहना चाहिए ।
यहां इतना और समझना चाहिये कि असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंकी स्त्रीवेदमें उत्पत्ति नहीं
होती है, इसलिये स्त्रीवेदी असंयतसम्यग्दृष्टिका एक पर्याप्त-आलाप ही कहना चाहिए । और
पर्याप्त-आलाप कहते समय भी क्षायिक सम्यक्त्व नहीं होता है, अर्थात् स्त्रीवेदी पर्याप्तोंके
(देवियोंके) दो ही सम्यक्त्व होते हैं, ऐसा कहना चाहिए, क्योंकि, देवोंमें दर्शनमोहनीय कर्मके
क्षपणका अभाव है । सौधर्म और पेशानके पुरुषवेदी और स्त्रीवेदी आलापोंमें उनके सामान्य
आलापोंसे इतनी ही विशेषता है ।

सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्गोंके देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार
गुणस्थान, संक्षी पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्या-
प्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों
मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग
ये ग्यारह योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, तीनो अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान,
असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और शुक्ल लेइयाएं तथा पर्याप्त-
कालमें उत्कृष्ट पीत और जघन्य पद्मलेइया, भावसे उत्कृष्ट तेजोलेइया और जघन्य पद्मलेइया,
भ्रव्यसिद्धिक, अभ्रव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी
और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

१ प्रतिपु ‘उक्कस्सत्तेउ’ इति पाठो नास्ति

नं. १७७

सनत्कुमार माहेन्द्र देवोंके सामान्य आलाप

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	द.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स.	संक्षि	आ	उ.
४	२	६	२०	४	१	१	१	११	१	४	६	१	३	द ४ का	२	६	१	२	२
मि	स	प	प.	७	टे	वि	वस	म	४	पु	ज्ञा	३	अस	के द.	शु	ते	प	म.	
सा	स	अ	६					व.	४		अज्ञा	३		विना	भा	२	अ	आहा	साका
स		अ.						वे	२						ते	उ		अना	अना
अ								का	१					प	ज				

अथ उवसमसेदिं चटिय पुणोदिण्णा चेव मज्झिम-सुक्कलेस्साए परिणदा संता जदि कालं करोति तो उवसमसम्मत्तेण सह आणद-पाणद-आरणच्चुद-णवगेवज्जविमाणवासिय-देवेसुप्पज्जंति । पुणो ते चेव उक्कस्स-सुक्कलेस्सं परिणमिय जदि कालं करोति तो उवसम-सम्मत्तेण सह णवाणुदिस-पंचाणुत्तरविमाणदेवेसुप्पज्जंति । तेण सोधम्मादि-उवरिम सव्व-देवासंजदसम्माइट्ठीणमपज्जत्तकाले उवसमसम्मत्तं लब्भदि त्ति । सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

एवमित्थिपुरिसवेदाणमोघालावो समतो ।

एवं चेव पुरिसवेद-देवाणमालावो वत्तव्वो । णवरि जत्थ दो वेदा वुत्ता तत्थ पुरिसवेदो एक्को चेव वत्तव्वो । एवं सोधम्मीसाणदेवीणं पि वत्तव्वं । णवरि जत्थ

सहस्रार कल्पवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं । तथा, उपशमश्रेणी पर चढ़ करके और पुनः उतर करके मध्यम शुक्लेद्यासे परिणत होते हुए यदि मरण करते हैं तो उपशमसम्यक्त्वके साथ आनत, प्राणत, आरण, अच्युत और नौ त्रैवेयकविमानवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं । तथा, पूर्वोक्त उपशमसम्यग्दृष्टि जीव ही उत्कृष्ट शुक्लेद्याको परिणत होकर यदि मरण करते हैं, तो उपशमसम्यक्त्वके साथ नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर-विमानवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं । इसकारण सौधर्म स्वर्गसे लेकर ऊपरके सभी असंयतसम्यग्दृष्टि देवोंके अपर्याप्तकालमे औपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है ।

सम्यक्त्व आलापके आगे—सञ्जी, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

इसप्रकार स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भेद न करके सौधर्म और ऐशान स्वर्गके देवोंके सामान्य आलाप समाप्त हुए ।

सौधर्म ऐशान कल्पके देवोंके सामान्य आलापोंके समान ही पुरुषवेदी देवोंके आलाप कहना चाहिये । विशेषता यह है कि सामान्य आलाप कहते समय जहाँ पर पहले स्त्रीवेद और पुरुषवेद ये दो वेद कहे गये हैं, वहाँ पर केवल एक पुरुषवेद ही कहना चाहिये । इसीप्रकार सौधर्म ऐशान स्वर्गकी देवियोंके आलाप कहना चाहिये । विशेषता यह है कि

नं. १७६ असंयतसम्यग्दृष्टि सौधर्म ऐशान देवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प. प्रा	स. ग.	इ. का.	यो.	वे. क.	शा.	सय	द	ले.	म.	स.	सत्ति	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	१	२
अवि. स अ				वे. प	व.	वे मि	पु	मति	अस	के. द	का	म.	औप.	स	आहा
						कार्म		श्रुत		थिना	शु	क्षा	क्षायो	अना	साका.
								अव		मा	तेज				अना.

पुरिसवेदो वुत्तो तत्थ इत्थिवेदो चेव वत्तव्वो । असंजदसम्माइड्डिस्स इत्थिवेदमिह उप्पत्ती
णत्थि त्ति तस्स पज्जत्तालावो एक्को चेव वत्तव्वो । पज्जत्तालावे उच्चमाणे वि खड्दयसम्मत्तं
णत्थि त्ति वत्तव्वं, देवेसु दंसणमोहणीयस्स खवणाभावादो । एत्तिओ चेव विसेसो ।

सणक्कुमार-माहिंददेवाणं भणमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्टाणाणि, दो जीवसमासा,
छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी,
पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, छ पाण, असंजम,
तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-उक्करसत्तेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ, भावेण उक्कस्सत्तेउ-
जहण्णपम्मलेस्साओ, भवसिद्धिया अमवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो
अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हेंति अणागारुवजुत्ता वा ” ।

पुरुषवेदी देवोंके आलापोंमें जहां पुरुषवेद कहा गया है वहां केवल खीवेद ही कहना चाहिए ।
यहां इतना और समझना चाहिये कि असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंकी खीवेदमें उत्पत्ति नहीं
होती है, इसलिये खीवेदी असंयतसम्यग्दृष्टिका एक पर्याप्त-आलाप ही कहना चाहिए । और
पर्याप्त-आलाप कहते समय भी क्षाधिक सम्यक्त्व नहीं होता है, अर्थात् खीवेदी पर्याप्तोंके
(देवियोंके) दो ही सम्यक्त्व होते हैं, ऐसा कहना चाहिए, क्योंकि, देवोंमें दर्शनमोहनीय कर्मके
क्षपणका अभाव है । सौधर्म और पेशानके पुरुषवेदी और खीवेदी आलापोंमें उनके सामान्य
आलापोंसे इतनी ही विशेषता है ।

सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्गोंके देवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार
गुणस्थान, संज्ञी पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्या-
प्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों
मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग
ये ग्यारह योग, पुरुषवेद, चारों कपाय, तीनो अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान,
असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और शुक्ल लेश्याएं तथा पर्याप्त-
कालमें उत्कृष्ट पीत और जघन्य पद्मलेश्या, भावसे उत्कृष्ट तेजोलेश्या और जघन्य पद्मलेश्या,
भ्रव्यसिद्धिक, अभ्रव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी
और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

१ प्रतिपु ' उक्कस्सत्तेउ ' इति पाठो नास्ति

नं. १७७

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके सामान्य आलाप

शु.	जी	प	श्रा	स	ग	इ.	का.	यो.	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
४	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	६	१	३	४	२	६	१	२	२
मि	स	प	प.	७	दे	वि	वस	म	४	पु	ज्ञा. ३	अस	के द.	शु ते प	म	६	स	आहा	साका
स	स	अ	६					व.	४		अज्ञा ६		विना	भा २	अ.			अना	अना.
अ.								वै	२		का. १			ते उ					
														प ज					

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वानाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि उक्कस्स-तेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वानाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिस वेद, चत्तारि कसाय, पंच पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच

उन्ही सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जी । स, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट तेजोलेख्या और जघन्य पद्मलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्य, संज्ञिक, आहारक, रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्या-दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान तथा आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अना-

नं. १७८

त्कुमार माहेन्द्र देवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	६	१	३	३, २, ३	२	६	१	१	२
मि	स	प	प		दे	पु	म	४	पु	ज्ञान ३	अस	के	द	प	भ	स	आहा	साका	
							व	४		अज्ञा ३		विना		मा	अ			अना	
							वै	१						ते					
														उ					
														प					
														ज					

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०५} ।

संपहि मिच्छाड्ढिप्पद्दुडि जाव असंजदसम्माड्ढि ति ताव चदुण्हं गुणट्ठाणाणं सोधम्म-भंगो । णवरि उवरि सव्वत्थ इत्थिवेदो णत्थि, पुरिसवेदो चेव वत्तव्वो । ओघालावे भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ वत्तव्वाओ । भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ वत्तव्वाओ । पज्जत्तकाले दव्व-भावेहि उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ । तेसिं चेव अपज्जत्तकाले दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सतेउ जहण्णपम्मलेस्साओ ति चेव विसेसो ।

वम्ह-वम्हुत्तर-लांतव कापिट्ठ सुक्क-महासुक्क-कप्पदेवाणं सणक्कुमार-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमपम्मलेस्साओ, भावेहि मज्झिमा पम्मलेस्सा । पज्जत्तकाले दव्व-भावेहि मज्झिमा पम्मलेस्सा । अपज्जत्तकाले दव्वेण

हारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक चारों गुणस्थानोंके आलाप सौधर्म देवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए । विशेषता केवल इतनी है कि ऊपर सभी कल्पोंमें स्त्रीवेद नहीं है, अतः एक पुरुषवेद ही कहना चाहिए । उसमें भी ओघालाप कहते समय द्रव्यसे कापोत, शुक्ल, उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं कहना चाहिए । भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं कहना चाहिए । पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं होती हैं । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं और भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं होती हैं, इतनी विशेषता है ।

ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिट्ठ और शुक्क-महाशुक्क कल्पवासी देवोंके आलाप सानत्कुमार देवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम पद्म लेख्या होती है, तथा भावसे केवल मध्यम पद्मलेख्या होती है । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे मध्यम पद्मलेख्या होती है ।

नं १७९

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	मा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	सखि.	आ	उ.
३	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	५कुम	१	३	द्र. २	२	५ औप.	१	२	२
मि	स	ए		दे	पु	पु	वै	मि	पु	कुशु	अम	के. द	विना.	का. श	म	क्षा	आहा.	अना.	साका
मा.	अ	ल					कर्म			भति				ते. उ.	अ	क्षायो			अना.
अ										श्रुत.				प. ज		मि			
										अव						सासा.			

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, छण्णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि उक्करस-तेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा' ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिस वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उक्कस्सेतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच

उन्ही सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, एक संब्धी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान ये छह ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट तेजोलेख्या और जघन्य पद्मलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्या-दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संब्धी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, कुमाति और कुथृत ये दो अज्ञान तथा आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्यापं, भव्य-सिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अना-

नं. १७८

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	८	६	१	३	द्र, २ ते उ	२	६	१	१	२
मि	म	प	प		दे.	पु	म.	८	पु	ज्ञान	३	अम	के	प	ज	भ	स	आहा	राका
ग							व.	४		अना	३		विना	मा	२	अ			
म.							वै.	१						ते	उ.				
प														प					

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

संपहि मिच्छाद्विप्पहुडि जाव असंजदसम्माइट्ठि त्ति ताव चदुहं गुणट्ठाणाणं सोधम्म-भंगो । णवरि उवरि सन्वत्थ इत्थिवेदो णत्थि, पुरिसवेदो चेव वत्तव्वो । ओघालावे भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ वत्तव्वाओ । भावेण उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ वत्तव्वाओ । पज्जत्तकाले दव्व-भावेहि उक्कस्सतेउ-जहण्णपम्मलेस्साओ । तेसिं चेव अपज्जत्तकाले दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सतेउ जहण्णपम्मलेस्साओ त्ति चेव विसेसो ।

ब्रम्ह-ब्रम्हुत्तर-लान्तव कापिट्ठ सुक्क-महासुक्ककल्पदेवाणं सणक्कुमार-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमपम्मलेस्साओ, भावेहि मज्झिमा पम्मलेस्सा । पज्जत्तकाले दव्व-भावेहि मज्झिमा पम्मलेस्सा । अपज्जत्तकाले दव्वेण

हारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर असंयतसम्बन्धदृष्टि गुणस्थान तक चारों गुणस्थानोंके आलाप सौधर्म देवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए । विशेषता केवल इतनी है कि ऊपर सभी कल्पोंमें खिवेद नहीं है, अतः एक पुरुषवेद ही कहना चाहिए । उसमें भी ओघालाप कहते समय द्रव्यसे कापोत, शुक्ल, उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं कहना चाहिए । भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं कहना चाहिए । पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं होती हैं । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं और भावसे उत्कृष्ट तेज और जघन्य पद्म लेख्याएं होती हैं, इतनी विशेषता है ।

ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिट्ठ और शुक्-महाशुक् कल्पवासी देवोंके आलाप सानत्कुमार देवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम पद्म लेख्या होती है, तथा भावसे केवल मध्यम पद्मलेख्या होती है । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे मध्यम पद्मलेख्या होती है ।

नं १७९

सानत्कुमार माहेन्द्र देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	मा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	सक्षि.	आ	उ.
३	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	५	१	३	द. २	१	५	१	२	२
मि	स	५		दे		के	ज्ञा	वे मि	पु		कुशु	अय	के द	का शु	म	क्षा	स	आहा.	साका.
मा	अ							कामे			मति		विना.	मा. २	अ	क्षायो		अना.	अना.
ज											श्रुत.			ते. उ.		सि			
											अव			प. ज		सासा.			

काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा पम्मलेस्सा । एत्थियमेत्तो चेव विसेसो । सदार-सहस्सारकप्पदेवाणं ब्रम्हलोग-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क-उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ । पज्जत्त-काले दव्व-भावेहि उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ । अपज्जत्तकाले दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ । आणद-पाणद-आरणच्चुद-सुदंसण-अमोघ-सुप्पबुद्ध-जसोधर-सुबुद्ध-सुविसाल-सुमण-सउमणस-पीदिंकरमिदि एदेसिं चहु-णव-कप्पाणं सदार-सहस्सार-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमसुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुक्कलेस्सा । पज्जत्तकाले दव्व-भावेहि मज्झिमा सुक्कलेस्सा । अपज्जत्तकाले दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुक्कलेस्सा ।

‘अच्चि-अच्चिमालिणी-वड्ढ-वड्ढोयण-सोम-सोमरूव-अंक-फलिह-आइच्च-विजय-

उन्हीके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्या तथा भावसे मध्यम पद्मलेख्या होती है । इतनीमात्र ही विशेषता है ।

शतार और सहस्सार कल्पवासी देवोंके आलाप ब्रह्मलोकके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि उनके सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्ल, उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेख्याएं होती हैं, तथा भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेख्याएं होती हैं । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेख्याएं होती हैं । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं होती हैं, तथा भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेख्याएं होती हैं ।

आनत-प्राणत, आरण-अच्युत तथा सुदर्शन, अमोघ, सुप्रबुद्ध, यशोधर, सुबुद्ध, सुविसाल, सुमनस्, सौमनस और प्रीतिकर इन चार और नौ इस प्रकार तेरह कल्पोंके आलाप शतार-सह-स्रार देवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम शुक्ल लेख्याएं होती हैं, तथा भावसे मध्यम शुक्ललेख्या होती है । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे मध्यम शुक्ललेख्या होती है । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं तथा भावसे मध्यम शुक्ललेख्या होती है ।

अच्चिं, अच्चिमालिनी, वज्र, वैरोचन, सौम्य, सौम्यरूप, अंक, स्फटिक, आदित्य, इन

१ ‘ममट’ इति पाठ । त रा वा. पृ १६७

२ अर्था य अभिमालिनि वदे उदरायणा अण्णिमगा । मोमां य मोमस्से जके फल्ले य आदये ॥ त्रि मा. ८५६ तत्राणुदिमिमानानि येनेह एवाऽऽदिन्यां नाम विमानप्रसार । तत्र दिशु सिद्धिषु च गतिं च गतिं शोभिमानानि । प्रायां दिशि अविमान, अपाच्यामविमाशे, प्रनीच्यां वैरोचन, उदाच्यां प्रसाम, मय्य आदि-त्पाम्य । निदिशु पुन्यप्रशोभानि चत्वारि । पूर्वदिशि अस्यामविप्रम । दक्षिणापरस्या अविमय्य । अपरात्तरस्या अविमय्य । उत्तरापरस्या अविमय्य । त. ग वा पृ १६७, अंतान्वयमधु अनदिमिमानानामुक्त्वा नास्ति ।

वइजयंत-जयंत-अवराइद-सव्वट्टसिद्धि ति एदेसिं णव-पंच-अणुदिसाणुत्तराण भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्क-उक्कस्ससुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सिया सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हांति अणागारुवजुत्ता वा” ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि उक्क-

नौ अनुदिश विमानोंके तथा विजय. वैजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थसिद्धि इन पांच अनुत्तर विमानोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और शुक्ल लेइयाएं तथा पर्याप्तकालमें उत्कृष्ट शुक्कलेइया, भावसे उत्कृष्ट शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग; पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक-

नं. १८० नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स.	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	भ	स	संक्षि	आ.	उ.
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
स.प	प	७		दे	पचे	वस	म	४	पु	मति	अप्त.	के.द	विना	का. शु	म	औप	स	आहा	माका
अ	म	६					व	४		श्रुत	अव.			उ. उ	ज्ञा	सायो,		अना.	अना.
		अ					वै	२	कर्म.१					मा १					
														गु. उ.					

काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा पम्मलेस्सा । एत्थियमेत्तो चेव विसेसो । सदार-सहस्सारकप्पदेवाणं ब्रम्हलोग-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क-उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ । पज्जत्त-काले दव्व-भावेहि उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ । अपज्जत्तकाले दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ । आणद-पाणद-आरणच्चुद-सुदंसण-अमोघ-सुप्पबुद्ध-जसोधर-सुबुद्ध-सुविसाल-सुमण-सउमणस-पीदिंकरमिदि एदेसिं चदु-णव-कप्पाणं सदार-सहस्सार-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमसुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुक्कलेस्सा । पज्जत्तकाले दव्व-भावेहि मज्झिमा सुक्कलेस्सा । अपज्जत्तकाले दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुक्कलेस्सा ।

‘अच्चि-अच्चिमालिणी-वइर-वइरोयण-सोम-सोमरूव-अंक-फलिह-आइच्च-विजय-

उन्हीके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्या तथा भावसे मध्यम पद्मलेख्या होती है । इतनीमात्र ही विशेषता है ।

शतार और सहस्वार कल्पवासी देवोंके आलाप ब्रह्मलोकके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि उनके सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्ल, उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेख्याएं होती हैं, तथा भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेख्याएं होती हैं । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेख्याएं होती हैं । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं होती हैं, तथा भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेख्याएं होती हैं ।

आनत-प्राणत, आरण-अच्युत तथा सुदर्शन, अमोघ, सुप्रबुद्ध, यशोधर, सुबुद्ध, सुविशाल, सुमनस्, सौमनस और प्रीतिकर इन चार और नौ इस प्रकार तेरह कल्पोंके आलाप शतार-सह-स्वार देवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम शुक्ल लेख्याएं होती हैं, तथा भावसे मध्यम शुक्ललेख्या होती है । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे मध्यम शुक्ललेख्या होती है । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं तथा भावसे मध्यम शुक्ललेख्या होती है ।

अर्चि, अर्चिमालिनी, वज्र, वैरोचन, सौम्य सौम्यरूप, अंक, स्फटिक, आदित्य, इन

१ ‘ममद’ इति पाठ । न रा वा. पृ १६७

२ अत्र य अर्चिमालिनि वदरे वइरोयणा जण्हिसणा । मामा य सोमरूपे जके फलिके य आदये ॥ वि मा. ८५६ नवान्निविमानानि येत्थे एवाज्जिह्वा नाम विमानवस्तार । तत्र दिवु विदिशु च गारि च गारि शोविमानानि । शाय्या दिथि अर्चिनिमान, अपाच्यामर्चिमाली, प्रतीच्या वैरोचन, उटाय्या प्रमास, मय आदि-याय । विदिशु पुत्तप्रतीक्षानि चत्वारि । पुर्वेदाणत्यामर्चिप्रभ । दक्षिणापरस्या अर्चिमय । अपरातरस्या अर्चिरातं । उत्तरपुर्वस्यामर्चिविदिश । त. रा ३१ पृ १६७ अनेनाम्यप्रथेयु अनदिगविमानानावुत्तरो नास्ति ।

काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा पम्मलेस्सा । एत्थियमेत्तो चेव विसेसो । सदार-सहस्सारकप्पदेवाणं वम्हलोग-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क-उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ । पज्जत्त-काले दव्व-भावेहि उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ । अपज्जत्तकाले दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुक्कलेस्साओ । आणद-पाणद-आरणच्चुद-सुदंसण-अमोघ-सुपबुद्ध-जसोधर-सुबुद्ध-सुविसाल-सुमण-सउमणस-पीदिकरमिदि एदेसिं चटु-णव-कप्पाणं सदार-सहस्सार-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणे दव्वेण काउ-सुक्क-मज्झिमसुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुक्कलेस्सा । पज्जत्तकाले दव्व-भावेहि मज्झिमा सुक्कलेस्सा । अपज्जत्तकाले दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुक्कलेस्सा ।

‘अच्चि-अच्चिमालिणी-वइर-वइरोयण-सोम-सोमरूव-अंक-फलिह-आइच्च-विजय-

उन्हीके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेझ्या तथा भावसे मध्यम पद्मलेझ्या होती है । इतनीमात्र ही विशेषता है ।

शतार और सहस्वार कल्पवासी देवोंके आलाप ब्रह्मलोकके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि उनके सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्ल, उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेझ्याएं होती हैं, तथा भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेझ्याएं होती हैं । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेझ्याएं होती हैं । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेझ्याएं होती हैं, तथा भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्ल लेझ्याएं होती हैं ।

आनत-प्राणत, आरण-अच्युत तथा सुदर्शन, अमोघ, सुप्रबुद्ध, यशोधर, सुबुद्ध, सुविशाल, सुमनस्, सौमनस और प्रीतिकर इन चार और नौ इस प्रकार तेरह कल्पोंके आलाप शतार-सह-स्वार देवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और मध्यम शुक्ल लेझ्याएं होती हैं, तथा भावसे मध्यम शुक्ललेझ्या होती है । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे मध्यम शुक्ललेझ्या होती है । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेझ्याएं तथा भावसे मध्यम शुक्ललेझ्या होती है ।

अर्चि, अर्चिमालिनी, वज्र, वैरोचन, सौम्य, सौम्यरूप, अंक, स्फटिक, आदित्य, इन

१ ‘सुमद्र’ इति पाठ । त. रा. वा. पृ. १६७

० अर्था य अर्चिमालिनि वदरे वदरोयणा अणुदिमगा । सोमा य सोमरूपे अंके फलिके य आइये ॥ वि. सा. ४-१६ तत्राणुदिगविमानानि येत्वेक एवाऽऽदिसा नाम विमानप्रस्ताप । तत्र दिशु विदिक्षु च-वारि च नारि अंगिप्रिमानानि । प्राग्गो दिशि अर्चिप्रिमान, अपाच्यामर्चिमाली, प्रतीच्या वैरोचन, उदाच्या प्रसाम, मध्ये आदित्याग्य । विदिक्षु पुन्यप्रार्णकानि चत्वारि । पूर्वदाजिणस्यामर्चिप्रम । दक्षिणापरस्या अर्चिर्मव्य । अपरातरस्या अर्चिरावर्त । उत्तरपूर्वस्यामर्चिप्रिणिष्ट । त. रा. वा. पृ. १६७, ज्वेताम्यरप्रयेणु अणुदिगविमानानाणुदेखो नास्ति ।

वइजयंत-जयंत-अवराइद-सच्चट्टसिद्धि त्ति एदेसिं णव-पंच-अणुदिसाणुत्तराण भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्क-उक्कस्ससुक्कलेस्साओ, भावेण उक्कस्सिया सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हांति अणागारुवजुत्ता वा' ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि उक्क-

नौ अनुदिश विमानोंके तथा विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थसिद्धि इन पांच अनुत्तर विमानोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और शुक्ल लेइयाएं तथा पर्याप्तकालमें उत्कृष्ट शुक्ललेइया, भावसे उत्कृष्ट शुक्ल-लेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्ही नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट शुक्ललेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक-

नं. १८० नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	जा.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	१	४	३	१	३	द्र ३	१	३	१	२	२
स.प	स.प	प ६	७	दे	पचे	त्रस	म ४	व ४	पु.	मति	अस.	के द	का शु	म औप	म औप	स	आहा	साका	
अ	अ	अ					वै २	वै २	कर्म. १	श्रुत	अव.	विना	मा १	शु. उ	क्षा		अना.	अना.	
														शु. उ.	क्षायो.				

काउ-सुककलेस्साओ, भावेण मज्झिमा पम्मलेस्सा । एत्थियमेत्ता चेत्त विमेमो । मदार-
सहस्सारकप्पदेवाणं ब्रम्हलोक-भगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणं दब्बेण काउ-सुकक-
उक्कस्सपम्म-जहण्णसुककलेस्साओ, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुककलेस्साओ । पज्जत्त-
काले दब्ब-भावेहि उक्कस्सपम्म-जहण्णसुककलेस्साओ । अपज्जत्तकाले दब्बेण काउ-
सुककलेस्सा, भावेण उक्कस्सपम्म-जहण्णसुककलेस्साओ । आणद-पाणद-आरणच्चुट
सुदंसण-अमोघ-सुप्पबुद्ध-जसोधर सुवुद्ध-सुविमाल-सुमण-सउमणम-पीटिकरमिटि एदेमि चटु-
णव-कप्पाणं सदार-सहस्सार-भंगो । णवरि सामण्णेण भण्णमाणं दब्बेण काउ-सुकक-
मज्झिमसुककलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुककलेस्सा । पज्जत्तकाले दब्ब-भावेहि मज्झिमा
सुककलेस्सा । अपज्जत्तकाले दब्बेण काउ-सुककलेस्साओ, भावेण मज्झिमा सुककलेस्सा ।

‘अच्चि-अच्चिमालिणी-वदरे-वदरोयण-सोम-सोमरूप-अंक-फलिह-आइच्च-विजय-

उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेख्या तथा भावसे मध्यम पद्मलेख्या होती है । इतनीमात्र ही विशेषता है ।

शतार और सहस्रार कल्पवासी देवोंके आलाप ब्रह्मलोकके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि उनके सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्र, उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्र लेख्या होती है, तथा भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्र लेख्या होती है । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्र लेख्या होती है । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेख्या होती है, तथा भावसे उत्कृष्ट पद्म और जघन्य शुक्र लेख्या होती है ।

आनत-प्राणत, आरण-अच्युत तथा सुदर्शन, अमोघ, सुप्रबुद्ध, यशोधर, सुबुद्ध, सुविमाल, सुमनस्, सौमनस् और प्रीतिकर इन चार और नौ इस प्रकार तरह कल्पोंके आलाप शतार-सह-स्रार देवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेषता यह है कि सामान्यसे आलाप कहने पर—द्रव्यसे कापोत, शुक्र और मध्यम शुक्र लेख्या होती है, तथा भावसे मध्यम शुक्रलेख्या होती है । उन्हीं देवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्य और भावसे मध्यम शुक्रलेख्या होती है । उन्हींके अपर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत और शुक्र लेख्या तथा भावसे मध्यम शुक्रलेख्या होती है ।

अर्चि, अर्चिमालिनी, वज्र, वैरोचन, सौम्य, सौम्यरूप, अंक, स्फटिक, आदित्य, इन

१ ‘सुमद्र’ इति पाठ । त रा वा. पृ १६७

२ अर्चि य अर्चिमालिनि वदरे वदरोयणा अणुदिसगा । सोमो य सोमरूपे अके फलिके य आइचे ॥ वि सा. ४५६ तत्राणुदिशविमानानि येन्नेके एवाऽऽदिलो नाम विमानप्रस्तार । तत्र दिक्षु निदिक्षु चत्वारि चत्वारि श्रेणिविमानानि । प्राच्यां दिशि अर्चिर्विमान, अपाच्यामर्चिमाळी, प्रतीच्या वैरोचन, उदीच्या प्रसास, मध्ये आदि-त्याख्य । विदिक्षु पुष्पप्रकीर्णकानि चत्वारि । पूर्वदक्षिणस्यामर्चिप्रभ । दक्षिणापरस्या अर्चिर्मध्य । अपरोत्तरस्या अर्चिरावर्त । उत्तरपूर्वस्यामर्चिर्विशिष्ट । त. रा. वा पृ १६७. श्रोताम्बरमध्येणु अणुदिशविमानानाणुल्लेखो नास्ति ।

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग,
पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दच्च-भावहि उक्क-

उन्हीं नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक सबी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियाँ, दशों प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और वैक्रियिककाययोग ये नौ योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे उत्कृष्ट शुक्लेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक-

नं. १८० नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी	प	मा	स.	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	भ	स	संक्षि	आ.	उ.
१	२	३	१०	४	१	२	१	१२	१	४	३	१	३	३	१	३	१	२	२
अ	प	प	७	४	२	पंच	वस	म ४ ४	पु.		मति	अस.	के.द	का शु	भ	औप	स	आहा	साका
अ	अ	अ						वे २			श्रुत		विना	शु. उ		क्षा		अना.	अना.
								कार्म. १			अव.			मा १		सायो,			
														शु. उ.					

स्सिया सुक्कलेरसा, भवसिद्धिया, उवममम्मत्तेण विणा देा मम्मत्तं । केण काग्गेण उवसमसम्मत्तं णत्थि ? वुच्चदे— तत्थ द्विदा देवा ण ताव उवममम्मत्तं पडिवज्जंति, तत्थ मिच्छाड्ढीणमभावादो । भवदु णाम मिच्छाड्ढीणमभावो, उवममम्मत्तं पि तत्थ द्विदा देवा पडिवज्जंति; को तत्थ विरोधो ? इदि ण, 'अणंतं पच्छदो य मिच्छत्तं' इदि अणेण पाहुडसुत्तेण सह विरोहादो । ण तत्थ द्विद-वेदगमम्माड्ढिणो उवममम्मत्तं पडिवज्जंति, मणुसगदि-वदिग्गिणगदीसु वेदगमम्माड्ढिजीवाणं दंमणमोद्धवममणहदुपरि-णामाभावादो । ण य वेदगसम्माड्ढित्तं पडि मणुस्मेहितो त्रिभेमाभावादेा मणुस्माणं च

सम्यक्त्वके विना देा सम्यनत्त्व होते हैं ।

शंका— नौ अनुदिश ओर पांच अनुत्तर विमानोंके पर्याप्तकालमें औपशमिक सम्यक्त्व किस कारणसे नहीं होता है ?

समाधान— नौ अनुदिश ओर पांच अनुत्तर विमानोंमें विद्यमान देव तो औपशमिक सम्यक्त्वको प्राप्त होते नहीं हैं, क्योंकि, वहां पर मिथ्यादृष्टि जीवोंका अभाव है ।

शंका— भले ही वहां मिथ्यादृष्टि जीवोंका अभाव रहा आवे, किन्तु यदि वहां रहने-वाले देव औपशमिक सम्यक्त्वको प्राप्त करें, तो इसमें क्या विरोध है ?

समाधान— ऐसा कहना भी युक्ति-युक्त नहीं है, क्योंकि, औपशमिक सम्यक्त्वके अनन्तर ही औपशमिकसम्यक्त्वका पुनः ग्रहण करना स्वीकार करने पर 'अनादि मिथ्यादृष्टि जीवोंके प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्तिके अनन्तर-पश्चात् अवस्थामें ही मिथ्यात्वका उदय नियमसे होता है । किन्तु जिसके द्वितीय, तृतीयादि चार उपशमसम्यक्त्वकी प्राप्ति हुई है, उसके औपशमिक सम्यक्त्वके अनन्तर-पश्चात् अवस्थामें मिथ्यात्वका उदय भाज्य है, अर्थात् कदाचित् मिथ्यादृष्टि होकरके वेदकसम्यक्त्व या उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है, कदाचित् सम्यग्मिथ्यादृष्टि होकरके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होता है इत्यादि' । इस कथायप्राभृतके गाथासूत्रके साथ पूर्वोक्त कथनका विरोध आता है । यदि कहा जाय कि अनुदिश और अनुत्तर विमानोंमें रहनेवाले वेदकसम्यग्दृष्टि देव औपशमिक सम्यक्त्वको प्राप्त होते हैं, तो भी बात नहीं है, क्योंकि, मनुष्यगतिके सिवाय अन्य तीन गतियोंमें रहनेवाले वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके दर्शनमोहनीयके उपशमन करनेके कारणभूत परिणामोंका अभाव है । यदि कहा जाय कि वेदकसम्यग्दृष्टिके प्राप्ति मनुष्योंसे अनुदिशादि विमानवासी देवोंके कोई विशेषता नहीं है, अतएव जो दर्शनमोहनीयके उपशमन योग्य परिणाम मनुष्योंके पाये जाते हैं वे

१ सम्मत्तपदमलमत्साणतर पच्छदो य मिच्छत्त । लमत्सा अपदमत्स दु मजियव्वो पच्छदो होदि ॥ (कसाय-पाहुड) सम्मत्तत्स जौ पदमलमो जणादियमिच्छाड्ढिस्सिओ तत्साणतर पच्छदो अणतरपच्छिमात्रत्वारु मिच्छत्तमेव होइ । तत्थ जाव पदमड्ढिद्विचरिममओ ति ताव मिच्छतोदय मोत्तण पयारतरामभावो । लमस्स अपदमत्स दु जो खलु अपदमो सम्मत्तपडिल्लो तस्स पच्छदो मिच्छतोदयो मजियव्वो होइ । जयध अ पृ ९६१.

दंसणमोहुवसमणजोगपरिणामेहि तत्थ णियमेण होदच्चं, मणुस्स-संजम-उवममसेदिसमा-
रुहणजोगत्तणेहि भेददंसणादो । उवसमसेदिमिह कालं काऊणुवसममम्मत्तेण सह देवे-
सुप्पणजीवा ण उवसमसम्मत्तेण सह छ पज्जत्तीओ समाणेति, तत्थतणुवसमसम्मत्त-
कालादो छ-पज्जत्तीणं समाणकालस्म बहुनुवलंभादो । तम्हा पज्जत्तकाले ण एदेसु
देवेसु उवसमसम्मत्तमत्थि ति सिद्धं । सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हांति

अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंमें नियमसे होना चाहिए । सो भी कहना युक्ति-संगत नहीं है, क्योंकि, संयमको धारण करनेकी तथा उपशमश्रेणीके समागोहण आदिकी योग्यता मनु-
ष्योंके ही होनेके कारण अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंमें और मनुष्योंमें भेद देखा जाता
है । तथा उपशमश्रेणीमें मरण करके औपशमिक सम्यक्त्वके साथ देवोंमें उत्पन्न होनेवाले जीव
औपशमिक सम्यक्त्वके साथ छह पर्याप्तियोंको समाप्त नहीं कर पाते हैं, क्योंकि, अपर्याप्त
अवस्थामें होनेवाले औपशमिक सम्यक्त्वके कालसे छहों पर्याप्तियोंके समाप्त होनेका काल
अधिक पाया जाता है, इसलिए यह बात सिद्ध हुई कि अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी
देवोंके पर्याप्तकालमें औपशमिक सम्यक्त्व नहीं होता है ।

विशेषार्थ—उपशमसम्यग्दृष्टि जीव औपशमिक सम्यक्त्वसे पुनः औपशमिक सम्य-
क्त्वको प्राप्त नहीं होता है किन्तु यदि उसके मिथ्यात्वका उदय हो जावे तो मिथ्यादृष्टि हो
जाता है, यदि सम्यग्मिथ्यात्वका उदय हो जावे तो सम्यग्मिथ्यादृष्टि हो जाता है, यदि
सम्यक्प्रकृतिका उदय हो जावे तो वेदकसम्यग्दृष्टि हो जाता है और यदि अनन्तानुबन्धीमेंसे
किसी एक प्रकृतिका उदय हो जावे तो सासादनसम्यग्दृष्टि हो जाता है । इस नियमके
अनुसार नौ अनुदिश और पांच अनुत्तरोंमें उत्पन्न हुआ उपशमसम्यग्दृष्टि जीव फिरसे उप-
शमसम्यक्त्वको तो ग्रहण कर नहीं सकता है और मिथ्यात्व गुणस्थान उसके होता नहीं है,
क्योंकि, अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानको छोड़कर उसके दूसरे कोई गुणस्थान नहीं पाये
जाते हैं, इसलिए मिथ्यात्वसे भी पुनः वह उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण नहीं कर सकता है । वेदक-
सम्यक्त्वसे कदाचित् उसके उपशमसम्यक्त्व माना जाय सो ऐसा मानना भी ठीक नहीं है,
क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वसे उपशमश्रेणीके सम्मुख मनुष्योंके ही उपशम (द्वितीयोपशम)
सम्यक्त्व होता है अन्य गतियोंमें नहीं । तथा पूर्व पर्यायसे आया हुआ उपशमसम्यक्त्व
अपर्याप्त अवस्थामें ही समाप्त हो जाता है, क्योंकि, उपशमसम्यक्त्वके कालसे छह
पर्याप्तियोंके पूरा करनेका काल अधिक होता है । इसप्रकार इतने कथनसे यह निष्कर्ष
निकला कि नौ अनुदिश और पांच अनुत्तरोंमें उत्पन्न हुआ उपशमसम्यग्दृष्टि जीव नियमसे
वेदकसम्यग्दृष्टि ही हो जाता है और जो वेदकसम्यग्दृष्टि उत्पन्न होता है वह भी अन्त तक

१ प्रतिषु ' छ पज्जत्तीओ ' इति पाठ ।

२ उवसमसम्मत्तद्धा अण्णल्लिमेत्तो दु समयमेत्तो ति । अत्रामिद्वे आमापो अण्णल्लिमेत्तो होदि ॥

अतोपुहुचमद्व सञ्जोवसमेण होदि उवमतो । तेण पर उदओ खलु तिण्णेकरस्त कम्मस्स ॥

ल. क्ष. १००, १०२.

अणागारुजुत्ता वा' ।

तेमिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वान्, एओ जीवममामो, छ अपञ्जत्ताओ, मत्त पाण, चत्तारि मण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तमकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंमण, दच्चेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण उक्कस्सिया सुक्कलेग्मा, भवमिद्धिया, तिण्णि मम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुजुत्ता हेति अणागारुजुत्ता वा' । एवं देवगदी सिद्धगदीए भिद्ध-भंगो ।

प्व गटमग्गणा ममत्ता ।

चेदकसम्यग्दृष्टि ही रहता है ।

सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं अनुदिश और अनुत्तर विमानवासी देवोंके अपर्याप्तकालसवन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमाप्त. छहों अपर्याप्तिया, सात प्राण, चारों संज्ञाप, देवगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, त्रैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कपाय, आदिके तीन ज्ञान, असयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याणं, भावसे उत्कृष्ट शुक्ल लेख्याः मध्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और धायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं । इसप्रकार देवगतिके आलाप समाप्त हुए ।

सिद्ध गतिके आलाप सिद्धोंके ओघालापके समान जानना चाहिये ।

इसप्रकार गतिमार्गणा समाप्त हुई ।

नं. १८१ नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स.	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र. १	१	२	१	१	२
म	प.			दे	प	व.	४	३		मति	अस	के	द	शु. उ	प	क्षा	स	आहा	साका
छ	प							व. ४		श्रुत		विना	मा	शु. उ		क्षायो			अना
								वै १		अ									

नं. १८२ नव अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानवासी देवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ.	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	द्र. १	१	३	१	२	२
म	स	अ			दे	प	व	वै मि	पु	मति	अस	के	द	का	म	औप	स	आहा	साका
छ								कर्म		श्रुत		विना	शु	मा. १		क्षा		अना.	अना
										अ				शु उ		क्षायो			

सामण्णेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ख-
गदी, एइंदियजादी, पंच थावरकाय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो
अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा, पुढवि-वणप्फई अस्सिदूण सरीरस्म
छ लेस्साओ हवति । भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,
मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा” ।

सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादर-पर्याप्त, बादर-अपर्याप्त, सूक्ष्म-पर्याप्त और सूक्ष्म-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, मन-पर्याप्ति और भाषापर्याप्तिके बिना चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, पर्याप्तकालमें—स्पर्शनेन्द्रिय, कायबल, आशु और श्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, अपर्याप्तकालमें श्वासोच्छ्वासके बिना तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावर काय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुक्षुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचभ्रुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं होती हैं, क्योंकि, पृथिवी और वनस्पतिकायिक जीवोंके शरीरकी अपेक्षा शरीरकी छहों लेश्याएं पायी जाती हैं। भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

सामान्य एकेन्द्रियोंके सामान्य आलाप.

[illegible]

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पंच थावरकाय, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, अमंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हेति अणागारुवजुत्ता वा' ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पंच थावरकाय, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं,

उन्ही सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, वादर-पर्याप्त और सूक्ष्म-पर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तिया, चार प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्याएँ, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्ष्याएँ, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, वादर-अपर्याप्त और सूक्ष्म-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार अपर्याप्तिया, तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, पांचो स्थावरकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्ष्याएँ, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्ष्याएँ, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असन्निक,

नं. १८४

सामान्य एकेन्द्रियोंके पर्याप्त आलाप

यु	जी.	प	प्रा	सं	ग	इ	का.	यो.	वे	क	जा.	सय.	द.	ले	म	स.	सन्नि.	आ	उ
१	२	४	४	४	१	१	५	१	१	४	२	१	१	द्र ६	२	१	१	१	२
मि	वा	प	प.		ति	वस	औदा		न	कुम	अस	अच	भा ३	म	मि	अस	आहा.	साका.	
	सू	प				विना				कुश्रु.			अशु	अ				अना.	

असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता हंति अणागारुवज्जुत्ता वा^{१८८} ।

बादरेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पञ्च-
त्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी,
बादरेइंदियजादी, पंच थावरकाय, तिण्णि जोग, णडुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण,
असंजम, अचक्खुंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील काउलेस्सा; भवसिद्धिया
अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता हंति
अणागारुवज्जुत्ता वा^{१८९} ।

आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

बादर एकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान,
बादर-पर्याप्त और बादर-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार
प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, बादर एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदा-
रिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; नपुंसकवेद, चारों
कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं,
भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्यापं, भव्यनिद्रिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, अस्मिं ,
आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. १८५

सामान्य एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	पा.	स	ग	इ	का	यो.	वे.क	ज्ञा	सय	द	ले	भ.	स	सहि.	आ	उ.
१	२	४	३	४	१	१	५	२	१	४	२	१	२	२	१	१	२	२
मि	बा	अ	अ.		ति	ति	त्रस	औ	मि	कुम.	अस	अच.	का	म	मि	अस	आहा.	साका.
	सु.अ.						विना.	कर्म.	पुं	कुश्रु.			शु	अ			अना	अना.

नं. १८६

बादर एकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप

गु	जी	प	पा.	स	ग	इ	का	यो	वे.क	ज्ञा	सय	द	ले	भ.	स	सहि.	आ	उ.
१	२	४	४	४	१	१	५	३	१	४	२	१	२	२	१	१	२	२
मि	बा	प	अ	३	ति	बा	त्रस	औ	२	कुम.	अस	अच	द्र	म	मि	अस	आहा.	साका.
	वा	अ				जाति	विना	का.	१	कुश्रु			मा	अ			अना	अना

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वादेरेहंदियजादी, पंच थावरकाय, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कमाय, दो अण्णाण, असजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेप्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्माओ; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हंति अणागारुवजुत्ता वा' १० ।

“तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वादेरेहंदियजादी, पंच थावरकाय, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजम, अचक्खुदंसण,

उन्ही बादर एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक बादर-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तिया, चार प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, बादर एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, नपुसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याए, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं बादर एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक बादर-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों सज्ञाएं, तिर्यचगति, बादर एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण

नं. १८७

बादर एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ता	सय	द	ले	म	म	सहि	आ	उ
१	१	४	४	४	१	१	१	१	१	४	२	१	१	३	२	१	१	१	२
मि.	बा.प.				ति	वा.पु	त्रम	औदा	नपु.		कुम	अस	अच	द्र	म	मि	स	आहा.	साका
					जाति	जाति	विना				कुश्रु			अशु.	अ				अना

नं. १८८

बादर एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ता	सय	द	ले	म	म	सहि	आ	उ
१	१	४	३	४	१	१	५	२	१	४	२	१	१	३	२	१	१	२	२
मि.	बा.अ	लु.			ति.	बा.पु	तस.	औ मि	नपु.		कुम	अस	अच.	का	म.	मि.	अस	आहा	साका.
					जाति.	जाति.	विना	कर्म			कुश्रु			शु	अ.			अना	अना.

द्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भवेण किण्ह-णील काउलेस्सा; भवसिद्धिया अमवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा ।

एवं वादरेइन्द्रियपञ्जत्ताणं पञ्जत्तणामकम्मोदयाणं तिण्णि आलावा वत्तवा । अपञ्जत्तणामकम्मोदयाणं वादरेइन्द्रियलद्धिअपञ्जत्ताणं भण्णमाणे वादरेइन्द्रियअपञ्जत्ता-लाव-भंगो ।

“सुहुमेइन्द्रियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, वे जीवसमासा, चत्तारि पञ्ज-त्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, सुहुमेइन्द्रियजादी, पंच थावरकाय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, अमंजम, अवक्खुदंसण, द्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भवेण किण्ह-णील-काउलेस्सा;

काययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अवश्रुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अमव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकारसे पर्याप्तनामकर्मके उदयवाले बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले बादर एकेन्द्रिय लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तक जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए ।

सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सूक्ष्म-पर्याप्त और सूक्ष्म-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, सूक्ष्म एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अवश्रुदर्शन, द्रव्यसे कापोत,

१ प्रतिपु ' वादरेइन्द्रियपञ्जत्तालो भंगो ' इति पाठ ।

नं. १८९

सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी	प	मा	स	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	२	४	४	४	२	१	५	३	१	४	२	१	१	२	२	२	१	२	२
मि	सू	प	प.	३	ति	सू	ए	वस	ओ	२	तुम	अस	अव	द्र	का	म.	अस	आहा	सांका
	सू	अ	अ.			जाति.	विमा	का	१	२	कुश्रु			श	अ			अना	अना.
														सा	३				
														अशु					

भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, सुहुमेइंदियजादी, पंच थावरकाय, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुइंमण, दब्बेण काउलेस्सा, भावेण किण्हणील काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, सुहुमेइंदियजादी, पंच थावरकाय, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खु-

और शुक्ल लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक सूक्ष्म-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, सूक्ष्म एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक सूक्ष्म-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, सूक्ष्म एकेन्द्रियजाति, पांचों स्थावरकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान,

१ प्रतिशु 'काउलुवकलेस्सा' इति पाठ । सच्चसिं सुहुमाण कावोदा गो जी ४९७

नं. १९०

सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प	प्रा	सं	ग	ई.	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	स	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	४	४	४	१	१	५	१	१	४	२	१	१	द्व १	२	१	१	१	२
मि	सू.प				ति	सू.प	अस	औदा	क		कुम	अस	अच	का	म	मि.	अस.	आहा	साका
					जाति	जाति	बिना				कुश्रु.			मा ३	अ				अना
														अशु					

दंसण, दन्वेण काउ-सुकलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{११} ।

एवं पज्जत्त-णामकम्मोदय-सहियाणं सुहुमेइंदियणिव्वत्तिपज्जत्ताणं तिण्णि आलावा चत्तव्वा । सुहुमेइंदियलद्धिअपज्जत्ताणं पि अपज्जत्तणामकम्मोदय-सहियाण एओ अपज्जत्तालावो ।

वेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाण, वे जीवसमासा, पंच पज्जत्तीओ पंच अप-ज्जत्तीओ, छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वेइंदियजादी, तसकाओ, ओरालिय-ओरालियमिस्स-कम्मइय-असच्चमोसवचिजोगा इदि चत्तारि जोग, णवुंमयवेद,

असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शृङ्ग लेक्ष्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साका-रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकारसे पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले सूक्ष्म एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंके एक अपर्याप्त आलाप जानना चाहिए ।

ईन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, ईन्द्रिय-पर्याप्त और ईन्द्रिय-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, मनःपर्याप्तिके बिना पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, पर्याप्तकालमें स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, वचनबल, कायबल, आयु और इवासोच्छवास ये छह प्राण, अपर्याप्तकालमें उक्त छह प्राणोंमेंसे वचनबल और इवासो-च्छवासके बिना चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, ईन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, कर्मणकाययोग और असत्यसृष्टावचनयोग ये चार योग, नपुंसक-

सं. १९१

सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	मा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	४	३	४	१	१	५	२	१	४	२	१	१	द्र २	२	१	१	२	२
मि.	रू	अ	हं		ति	पू	पू. नस.	औ. मि.	न		कुम.	अस	अच	का	म			आहा	साका
						जाति.	विना	कर्म.			कुशु.			शु	अ			अना.	अना
														मा. ३	अशु				

चत्वारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंमण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-
णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, अत्ताण्णिणो, आहारिणो अणा-
हारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ' ' ।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमातो, पंच पञ्जत्तीओ, छप्पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरेक्खगदी, वेडंदि यजादी, तसकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंमण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये वे। अज्ञान, असयम, अवधुदर्शन, द्रव्यसे छहों
लेइयाणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाणं. भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक मिथ्यात्व,
असंक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी हेतु है ।

उन्हीं इंद्रिय जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्याद्वाष्टि गुण स्थान, एक द्वीन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास, मन-पर्याप्तिके बिना पांच पर्याप्तियां, पूर्वोक्त छह प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, इंद्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग और औदारिक-काययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याण, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्याण, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक आहारक साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. १९३

द्वीन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप.

[illegible]

नं १९३

छीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप.

[illegible]

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जविसमासां, पंच अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, वेइंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णडुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

एवं वेइंदिय-पज्जत्तणामकम्मोदय-सहियाणं वेइंदियपज्जत्ताणं तिण्णि आलावा वत्तन्वा । वेइंदिय-लद्धिअपज्जत्तणामकम्मोदय सहिदाणं एगो आलावो वत्तन्वो ।

तेइंदियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण पंच पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, तीइंदियजादी,

उन्हीं द्वीन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि, गुणस्थान, एक द्वीन्द्रिय-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, कायबल और आयु ये चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, द्वीन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अवश्रुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेझापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेझापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक आहारक-अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकारसे द्वीन्द्रियजाति और पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले द्वीन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । द्वीन्द्रियजाति और लब्धपर्याप्तक नामकर्मके उदयवाले द्वीन्द्रिय अपर्याप्तक जीवोंके एक अपर्याप्त आलाप ही कहना चाहिए ।

त्रीन्द्रिय जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, त्रीन्द्रिय-पर्याप्त और त्रीन्द्रिय-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, मनःपर्याप्तिके बिना पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, पर्याप्तकालमें स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, वचनबल, कायबल, आयु, और श्वासोच्छ्वास ये सात प्राण, अपर्याप्तकालमें उक्त सात प्राणोंमेंसे वचनबल और श्वासो-

नं. १९४

द्वीन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	स	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	५	४	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	२	२	१	१	२	२
मि.	द्वी	अ	अ		ति	ज्ञा	त्रस	औ मि	नपु	कुम	अस	अचक्षु.	का	शु	म	मि	अय	आहा.	साका.
						ली.		कर्म		कुक्षु			मा	अशु.	अ			अना.	अना

आहारिणो, सागारुवजुत्ता ह्येति अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्ताओ, छप्पाण, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, चउरिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, गुणुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-मुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता ह्येति अणागारुवजुत्ता वा" ।

कारोपयोगी होते हैं।

उन्ही चतुरिन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त जीवसमास, पूर्वोक्त पांच अपर्याप्तियां, आदिकी चार इन्द्रियां, कायबल और आयु ये छह प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, चतुरिन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुधृत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेख्यापं भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक, मिथ्यात्व, असात्त्विक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होने हैं।

नं. १०९

चतुरिन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	क.	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ.	रा.	संज्ञि	आ	उ.
१	१	५	८	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	६	२	१	१	१	२
मि	च				ति	ज्ञा	कर्म	व. १	न		कुम.	अस	चक्षु	भा. १	म	मि	अस	आहा	साका.
	प					ज्ञा		अनु			कुधु		जव	अगु.	अ.				अना.

नं. २००

चतुरिन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	क.	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ.	स	संज्ञि	आ.	उ.
१	१	५	६	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	६	२	१	१	२	२
मि.	च.	अ			ति	च	ज्ञा	औ मि	कर्म	नपुं	कुम	अस.	चक्षु	का	म.	मि	अस	आहा.	साका.
						जा					कुधु		अच.	हु.	अ			अना.	अना.

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, वे जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णा सीण-सण्णा वा, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वा, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, छ णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा तदुभया वा^१ ।

पंचिदिय-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, चत्तारि जीवसमासा, छ

उन्ही पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसयत और सयोगकेवली ये पांच गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, तथा सयोगकेवलि समुद्धानके अपर्याप्तकालमें दो प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है। चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिक-मिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये चार योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है। चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है। विभंगावधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञानके विना छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यात ये चार संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा अनुभयस्थान भी है। आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, पूर्वोक्त चार जीवसमास, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञी पंचे-

नं २०३

पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	से	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स.	संज्ञि	आ	उ
५	२	६अ	७	४	४	१	१	४	३	४	६	४	४	२	२	५	२	२	२
मि	स. अ	५ अ	७			प.	तस.	औ मि.	उपा.	विम	अस.			का	म	मि.	स.	आहा.	साका.
मा	अस. अ.			क्षीण				वै मि	उपा.	मन	सामा			शु	अ	सा	अस	अना.	अना
अ								आ मि		विना	छेदो			भा. ६		औप.	अनु		यु. उ
प्र								कर्म								क्षा			
म																सायो			

[illegible]

सण्णणो असण्णणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णणो असण्णणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवों अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमासा, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, प्राण, सात प्राण. चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. २०५

पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि.	आ	उ
१	२	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र ६	२	१	२	१	२
मि	स	प	५	९		पंच	वस	म ४		अज्ञा	अस	चक्षु	मा ६	म	मि	स	आहा	साका	अना
	अस.	प						व ४				अच.		अ		अस.			
								औ १											
								वै १											

नं. २०६

पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त प.

शु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि.	आ	उ
१	२	६	७	४	४	१	१	३	३	४	२	१	२	द्र २	२	१	२	२	२
मि	स	अ	७			पंच	वस	जो मि			कुम	अम	चक्षु	का	म	मि	सं	आहा	साका
	अम	अ	५					वै मि			कुश्रु.		अच.	शु	अ		अस.	अना.	अना.
			अ.					कर्म						मा. ६					

ग.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	हा	सय	द	ले	म	स.	सक्ति	आ.	उ.
१	२	५	९	४	१	१	१	४	३	४	२	१	२	६	२	१	१	२	२
मि	अस प.	१अ	७		ति.	पके	स	व १ अउ औ २ का १			उम कुश्रु	अस	अच अच.	द्र ६ मा ३ अश्रु.	भ. अ	मि	अस.	जाहा. अना.	साका. अना.

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, दन्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

तेसिं चव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दन्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अनुभयवचनयोग और औदारिककाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएँ, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाएँ, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक असंज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएँ, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाएँ; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २०८

असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त आलाप

गु.	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	५	९	४	१	१	१	२	३	४	२	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि	अस				ति.	पंचे	तस	व. १			कुम.	अस	चक्षु	मा ३	भ	मि.	अस	आहा	साका.
	प					तस	अनु	औ. १			कुश्र		अच	अशु	अ			अना.	अना.

नं. २०९

असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके अपर्याप्त आलाप

गु.	जी.	प	प्रा.	स	ग.	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	५	७	४	१	१	१	२	३	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	अस	अ			ति	पंचे	तस	औ मि			कुम.	अस	चक्षु	का	म	मि	अस	आहा	साका.
						तस	कर्म				कुश्र		अच.	शु	अ			अना	अना

संपहि पंचिंदियलद्धिअपज्जत्ताणं अपज्जत्त-णामकम्मोदयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदि-तिरिक्खगदीओ त्ति दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुककलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हेंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

सण्णिपंचिंदिय-लद्धिअपज्जत्ताणमपज्जत्त-णामकम्मोदयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुककलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया

अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले पंचेन्द्रिय लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, उहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति और तिर्यच-गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोप-योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, उहाँ अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति और तिर्यचगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व,

नं. २१०

पंचेन्द्रिय लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप

शु	जी	प	प्रा.	सं	ग	ह	का	यी	वे.	क	ज्ञा	संय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
मि	स अ	३अ	७	८	म. ति	पचे	त्रस	औ मि	कर्म	कृष्	कृष्	अस	चक्षु अच	का शु मा अशु	म अ.	म मि	स अस	आहा अना	साका. अना.

अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

असण्णिपंचिंदिय-लद्धिअपज्जत्ताणमपज्जत्त-णामकम्मोदयाणं अण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिस्सिखगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, द्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

अण्णिदियाणं सिद्ध-भंगो ।

एवं त्रिदियमगणा समत्ता ।

संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपर्याप्त नामकर्मके उदयवाले असंज्ञी पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक असंज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-

ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनिन्द्रिय जीवोंके आलाप सिद्धोके आलापोंके समान समझना चाहिए ।

इसप्रकार दूसरी इन्द्रिय मार्गणा समाप्त हुई ।

नं. २११

संज्ञी पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप.

शु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	७	४	२	१	१	२	१	४	२	१	२	२	२	१	१	२	२
मि	स	अ	अ.		म	पंच	तस	औ	मि	कुम	अस	चक्षु	अच	का.	म	मि	स	आहा	साका
					ति			कर्म	कि	कुश्रु				शु	अ			अना	अना.
														मा ३					
														अशु					

नं. २१२

असंज्ञी पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का.	यो.	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	संज्ञि	आ	उ
१	१	५	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	२	२	१	१	२	२
मि.	अस.	अ.			ति.	पंच	तस.	औ	मि	कुम.	अस.	चक्षु.	अच	का	म.	मि.	अस	आहा.	साका.
	अ							कर्म	कि	कुश्रु				शु.	अ.			अना	अना.
														मा ३					
														अशु					

कायाणुवादेण ओघालावे मण्णमाणे' अत्थि चोदस गुणट्ठाणाणि, दो वा तिण्णि वा, चत्तारि वा छव्वा, छव्वा णव वा, अट्ठ वा बारह वा, दस वा पण्णारह वा, बारस वा अट्ठारह वा, चोदस वा एकव्वीस वा, सोलस वा' चउवीस वा, अट्ठारह वा सत्तावीस वा, बीस वा तीस वा, बावीस वा तेत्तीस वा, चउवीस' वा छत्तीस वा, छव्वीस वा एगुणचालीस वा, अट्ठावीस वा बायालीस' वा, तीस वा पंचेतालीस वा, वत्तीस वा अट्ठ-तालीस वा, चउतीस वा एकपंचास वा, छत्तीस वा चउपंचास वा, अट्ठत्तीस वा सत्तपंचास वा जीवसमासा । दो जीवसमासेत्ति भणिदे पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि सव्वे जीवा दुविहा भवन्ति, अदो दो जीवसमासा वुचन्ति । तिण्णि जीवसमासेत्ति वुत्ते णिव्वत्तिपज्जत्ता णिव्वत्ति-अपज्जत्ता लद्धिअपज्जत्ता इदि तिण्णि जीवसमासा हवन्ति । चत्तारि वा इदि वुत्ते तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, थावरकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि चत्तारि जीवसमासा । छव्वा इदि वुत्ते दो णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा दो णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा दो लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवं छ जीवसमासा । अधवा थावर-

कायमार्गणाके अनुवादसे ओघालाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान होते हैं । दो अथवा तीन, चार अथवा छह, छह अथवा नौ, आठ अथवा बारह, दश अथवा पन्द्रह, बारह अथवा अट्ठारह, चौदह अथवा इक्कीस, सोलह अथवा चौबीस, अट्ठारह अथवा सत्तावीस, बीस अथवा तीस, बावीस अथवा तेत्तीस, चौबीस अथवा छत्तीस, छव्वीस अथवा उनचालीस, अट्ठावीस अथवा बायालीस, तीस अथवा पैंतालीस, वत्तीस अथवा अट्ठतालीस, चौत्तीस अथवा एकावन, छत्तीस अथवा चौपन, अडतीस अथवा सत्तावन जीवसमास होते हैं । आगे इन्हींका स्पष्टीकरण करते हैं—

दो जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे सभी जीव दो प्रकारके होते हैं; अतएव दो जीवसमास कहे जाते हैं । तीन जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर निर्वृत्तिपर्याप्तक, निर्वृत्यपर्याप्तक और लब्धपर्याप्तक इसप्रकार तीन जीव स होते हैं । चार जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार चार जीवस कहे जाते हैं । छह जीवसमास होते हैं ऐसा कहने पर त्रस और स्थावरके दो निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, दो निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और दो लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार छह जीवसमास कहे जाते हैं । अथवा, स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके

१ प्रतिपु ' ओघालावे मण्णमाणे ' इति पाठो नास्ति । २ प्रतिपु ' अट्ठावीस वा ' इति पाठः ।

३ प्रतिपु ' वीवीस वा तेत्तीस वा ' इति पाठव्युत्क्रमः । अत उपरि प्रतिपु ' चउतीस वा ' इति पाठोऽधिकः ।

४ प्रतिपु ' एतालीस ' इति पाठः ।

काइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा सगल्लिंदिया विगल्लिंदिया, सगल्लि, दिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, विगल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि छ जीव-समासा । तिण्णि णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा तिण्णि णिव्वत्तिअपज्जत्तजीवसमासा तिण्णि लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवं णव जीवसमासा हवन्ति । थावरकाइया दुविहा वादरा सुहुमा, वादरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, सुहुमा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा सगल्लिंदिया विगल्लिंदिया त्ति, सयल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, विगल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता एवं अट्ठ जीवसमासा । चत्तारि णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा चत्तारि णिव्वत्तिअपज्जत्तजीवसमासा चत्तारि लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवं वारस जीवसमासा हवन्ति । थावरकाइया दुविहा वादरा सुहुमा, वादरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, सुहुमाकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा पंचिंदिया अपंचिंदिया, पंचिंदिया दुविहा सण्णिणो असण्णिणो, सण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, असण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, अपंचिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता एवं दस जीवसमासा हवन्ति । पंच णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा पंच णिव्वत्तिअपज्जत्त-

होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार छह जीवसमास कहे जाते हैं । एकन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रियके तीन निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, तीन निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और तीन लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार नौ जीव होते हैं । स्थावरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, बादर और सूक्ष्म । बादर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । सूक्ष्म जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार आठ जीवसमास होते हैं । बादर स्थावरकायिक, सूक्ष्म स्थावरकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंके चार निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, चार निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और चार लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार बारह जीवसमास होते हैं । स्थावरक जीव दो प्रकारके होते हैं, बादर और सूक्ष्म । बादरकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । सूक्ष्मकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पंचेन्द्रिय और अपंचेन्द्रिय (विकलेन्द्रिय) । पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, संक्षिप्त और असंक्षिप्त । संक्षिप्त जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । असंक्षिप्त जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । अपंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार दस जीवसमास होते हैं । बादर स्थावरकायिक, सूक्ष्म स्थावरकायिक, संक्षि

जीवसमासा पंच लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवं पण्णारस जीवसमासा हवंति । पुढवि-
काइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, आउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तेउ
काइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वणप्फइ-
काइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता एवं वारस
जीवसमासा हवंति । छ णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा छ णिव्वत्तिअपज्जत्तजीवसमासा छ
लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवमद्वारस जीवसमासा हवंति । एइंदिया दुविहा वादरा
सुहुमा, वादरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, सुहुमा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वेइंदिया
दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तेइंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, चउरिंदिया दुविहा
पज्जत्ता अपज्जत्ता, पंचिंदिया दुविहा सण्णिणो असण्णिणो, सण्णिणो दुविहा पज्जत्ता
अपज्जत्ता, असण्णिणो दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता ति एवं चोदस जीवसमासा हवंति ।
सत्त णिव्वत्तिपज्जत्ता सत्त णिव्वत्तिअपज्जत्ता सत्त लद्धिअपज्जत्ता एदे सव्वे धेत्तूण

पंचेन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंके पांच निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, पांच
निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और पांच लब्धपर्याप्तक जीव स इसप्रकार पन्द्रह जीवसमास
होते हैं । पृथिवीकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । अण्का
जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । तैजस्कायिक जीव दो प्रकारके होते
हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वायुकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और
अपर्याप्तक । वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रस-
का जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार बारह जीवस
होते हैं । छहों कायिक जीवोंकी अपेक्षा छ निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, छ निर्वृत्यपर्याप्तक
जी और छह लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार अठारह जीवसमास होते हैं ।
एकेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, बादर और सूक्ष्म । बादर दो प्रकारके होते हैं, पर्या-
प्तक और अपर्याप्तक । सूक्ष्म दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । द्वीन्द्रिय
जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रीन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं,
पर्याप्तक और अपर्याप्तक । चतुरिन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्या-
प्तक । पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, संज्ञिक और असंज्ञिक । संज्ञिक जीव दो प्रकारके
होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । असंज्ञिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और
अपर्याप्तक । इसप्रकार चौदह जीवसमास होते हैं । बादर एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय,
द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय इन सात प्रकारके
जीवोंकी अपेक्षा सात निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, सात निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और
सात लब्धपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलकर इकतीस जीवसमास होते हैं । पृथिवी-

एकवीस जीवसमासा हवन्ति । पुढविकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, आउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तेउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वणप्फइकाइया दुविहा पत्तेयसरीरा साधारणसरीरा, पत्तेयसरीरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, साधारणसरीरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा सयल्लिंदिया वियल्लिंदिया चेदि, सयल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वियल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एवं सोलस जीवसमासा हवन्ति । णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा अट्ठ, णिव्वत्तिअपज्जत्तजीवसमासा वि अट्ठ, अट्ठण्हमपज्जत्तजीवसमासाणं मज्जे अट्ठ लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा हवन्ति एवं चउवीस जीवसमासा । पुढविकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, आउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तेउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वाउकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वणप्फदिकाइया दुविहा पत्तेयसरीरा साधारणसरीरा, पत्तेयसरीरा दुविहा वादरणिगोदपडिड्ढिदा वादरणिगोदअपडिड्ढिदा चेदि, वादरणिगोदपडिड्ढिदा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता,

कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । अप्कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । तैजस्कायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वायुकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, प्रत्येकशरीर और साधारणशरीर । प्रत्येकशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । साधारणशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । जलकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार सोलह जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तैजस्कायिक, वायुकायिक, प्रत्येकव तिका, साधारणवनस्पतिकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा आठ निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, आठ निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और आठ अपर्याप्तक जीवसमासोंमें आठ लब्धपर्याप्तक जीवसमास होते हैं । इसप्रकार सब मिलाकर चौबीस जीव समास होते हैं । पृथिवीकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । जलकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । अश्लिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वायुकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, प्रत्येकशरीर और साधारणशरीर । प्रत्येकशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, वादरनिगोदप्रतिष्ठित और वादरनिगोदअप्रतिष्ठित । वादरनिगोदप्रतिष्ठित जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक ।

बादरणिगोदपडिडिद्विदिरित्त-पत्तेयसरीरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, साधारण-सरीरा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, तसकाइया दुविहा त्रियलिंदिया सयलिंदिया चेदि, सयलिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, त्रियलिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, एवमद्वारस जीवसमासा हवंति । णव णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा णव णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा णव लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा' एदे सव्वे त्रि वेत्तूण सत्तावीस जीवसमासा हवंति । पुव्विल्ल-अद्वारस-जीवसमासाभंतरे साधारण वणप्फपज्जत्तापज्जत्तजीवसमासे अवाणिय साधारणवणप्फकाइया दुविहा णिच्चणिगोदा चदुगादिणिगोदा चेदि । णिच्चणिगोदा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, चदुगादिणिगोदा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे चत्तारि जीवसमासे पक्खित्ते वीस जीवसमासा हवंति । दस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा दस णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा दस लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा एदे तीस जीवसमासा हवंति । पुढविकाइया आउकाइया तेउकाइया वाउकाइया वणप्फकाइया एदे सव्वे दुविहा

बादरनिगोदप्रतिष्ठितसे भिन्न अर्थात् बादरनिगोदअप्रतिष्ठितप्रत्येकशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । साधारणशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार ये अठारह जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, सप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, साधारणवनस्पतिकायिक, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय इन नौ प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा नौ निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, नौ निर्वृत्यपर्या जीवसमास और नौ लब्धपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर सत्तावीस जीवसमास होते हैं । पूर्वमें कहे गये अठारह जीवसमासोंमेंसे साधारणवनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकाल कर साधारणवनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, नित्यनिगोद और चतुर्गतिनिगोद । नित्यनिगोद दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । चतुर्गतिनिगोद दो प्रकारके होते हैं, पर्या और अपर्या । ये चार जीवसमास मिलाने पर बीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पतिकायिक, नित्यनिगोद, चतुर्गतिनिगोद, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय इन दश प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा दश निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, दश निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और दश लब्धपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर तीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, कायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक ये पाँचों कायिके जीव दो दो प्रकारके होते हैं, बादर

बादरा सुहुमा त्ति, सव्वे बादरा सव्वे च सुहुमा पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि चउव्विहा हवन्ति, तसकाइया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एवमेदे बावीस जीवसमासा । णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा एक्कारह, णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा एक्कारह, लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा एक्कारह एवं तेत्तीस जीवसमासा हवन्ति । बावीस-जीवसमासा-णमम्भंतरे तसपज्जत्तापज्जत्तजीवसमासे अवणिय तसकाइया दुविहा हवन्ति समणा अमणा चेदि, समणा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, अमणा दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता एदे चत्तारि पक्खित्ते चउवीस जीवसमासा हवन्ति । वारस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा वारस णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा एवमेदे छत्तीस जीवसमासा हवन्ति । पुव्विल्ल-चउवीसण्हं मज्झे अमणाणं पज्जत्त-अपज्जत्त-दो-जीवसमासे अवणिय अमणा दुविहा सयल्लिंदिया वियल्लिंदिया चेदि, सयल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता, वियल्लिंदिया दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे चत्तारि पक्खित्ते छत्तीस जीवसमासा हवन्ति । तेरस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा तेरस णिव्वत्तिअपज्जत्तजीव-

और सूक्ष्म । ये सभी बादर और सभी सूक्ष्म जीव पर्याप्तक और अपर्याप्तक होते हैं । इसप्रकार प्रत्येक एक एक कायके जीव चार चार प्रकारके हो जाते हैं । त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसप्रकार ये सब मिलाकर बाबीस जीव-

हो जाते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिकके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेद होते हैं और त्रसकायिक इन ग्यारह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा ग्यारह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, ग्यारह निर्वृत्यपर्याप्तक जीव-

और ग्यारह लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार सब मिलाकर तेतीस जीवसमास होते हैं । पूर्वोक्त बावीस जीवसमासोंमेंसे त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकालकर त्रसकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, समनस्क (संज्ञी) और अमनस्क (असंज्ञी) । समनस्क जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक, अपर्याप्तक । अमनस्क जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । ये चार जीवसमास मिलाने पर चौबीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीवोंके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेद और समनस्क त्रसकायिक तथा अमनस्क त्रसकायिक इन बारह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा बारह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, बारह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और बारह लब्धपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर छत्तीस जीवसमास होते हैं । पूर्वोक्त चौबीस जीवसमासोंमेंसे अमनस्क जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीव स निकाल कर अमनस्क जीव दो प्रकारके होते हैं, सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय । सकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । विकलेन्द्रिय जीव दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इन चार जीवसमासोंको मिला देने पर छत्तीस जीवसमास होते हैं । पांचो स्थावरकायिक जीवोंके बादर और

समासा तेरस लद्धिअपज्जत्तजीवसमासा एवमेदे सव्वे घेतूण एगूणचालीस जीव-
समासा हवन्ति । छव्वीसण्हं मज्झे वणप्फइकाइयाणं चत्तारि जीवसमासे अवणिय
वणप्फइकाइया दुविहा पत्तेयसरीरा साधारणसरीरा, पत्तेयसरीरा दुविहा पज्जत्ता अप-
ज्जत्ता, साधारणसरीरा दुविहा बादरा सुहुमा, ते दुविहा पज्जत्ता अपज्जत्ता चेदि एदे
छ जीवसमासे पक्खित्ते अट्ठावीस जीवसमासा हवन्ति । चोदस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा
चोदस णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा चोदस लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा एवमेदे चायालीस
जीवसमासा । अट्ठावीसण्हं मज्झे पत्तेयसरीर-पज्जत्तापज्जत्ता दो जीवसमासे अवाणिय
पत्तेयसरीरा दुविहा बादरणिगोयजोणिणो तेसिमजोणिणो चेदि, तेवि सव्वे दुविहा
पज्जत्ता अपज्जत्ता इदि एदे चत्तारि भंगे पक्खित्ते तीस जीवसमासा हवन्ति । णिव्वत्ति-
पज्जत्तजीवसमासा पण्णारस, णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा पण्णारस, लद्धि-अपज्जत्तजीव-

सूक्ष्मके भेदसे दश भेद तथा विकलेन्द्रिय, असमनस्क पंचेन्द्रिय और समनस्क पंचेन्द्रिय
इन तेरह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा तेरह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, तेरह निर्वृत्यपर्याप्तक
जीवसमास और तेरह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब मिलाकर उनतालीस
जीवसमास होते हैं । छव्वीस जीवसमासोंमेंसे वनस्पतिकायिक जीवोंके चार जीवसमास
निकाल कर वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, प्रत्येकशरीर और साधारणशरीर ।
प्रत्येकशरीर वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं पर्याप्तक और अपर्याप्तक । साधारण-
शरीर वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं बादर और सूक्ष्म । ये दोनों प्रकारके जीव भी
दो दो प्रकारके होते हैं पर्याप्तक और अपर्याप्तक । ये छह जीवसमास मिला देने पर अट्ठावीस
जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अशिकायिक, वायुकायिक और साधारण-
वनस्पतिकायिक जीवोंके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेद, प्रत्येकवनस्पतिकायिक, विक-
लेन्द्रिय, समनस्कपंचेन्द्रिय और असमनस्कपंचेन्द्रिय इन चौदहों प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा
चौदह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, चौदह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और चौदह लब्ध्य-
पर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब मिलाकर ध्यालीस जी मास होते हैं । पूर्वोक्त
अट्ठावीस जीवसमासोंमेंसे प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो
जीवसमास निकाल कर प्रत्येकशरीर जीव दो प्रकारके होते हैं, बादरनिगोदयो और
बादरनिगोदअयोनि । वे भी सब दो दो प्रकारके होते हैं, पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इस
प्रकार ये चार भंग मिला देने पर तीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक,
अशिकायिक, वायुकायिक और साधारणशरीर इनके बादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेद तथा
सप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पति और असप्रतिष्ठित-प्रत्येकवनस्पति, विकलेन्द्रिय, असमनस्कपंचेन्द्रिय
और समनस्कपंचेन्द्रिय इसप्रकार इन पन्द्रह प्रकारके जीवोंकी अपेक्षा पन्द्रह निर्वृत्तिपर्याप्तक
जीवसमास, पन्द्रह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और पन्द्रह लब्ध्यपर्याप्तक जी मास

समासा पण्णारस एवमेदे सव्वे वि पंचेदालीस जीवसमासा हवन्ति । पुढवि-आउ-तेउ-वाउ-साधारणसरीरवणप्फइकाइया पत्तेयं पत्तेयं वादर-सुहुमपज्जत्तापज्जत्तभेदेण चउव्विहा हवन्ति, पत्तेयसरीरा वेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिय-असण्णिपंचिंदिय-सण्णिपंचिंदिया पत्तेयं पत्तेयं पज्जत्ता अपज्जत्ता दुविहा हवन्ति एदे सव्वे मिलिदे वत्तीस जीवसमासा हवन्ति । सोलस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा सोलस णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा सोलस लद्धि-अपज्जत्त-जीवसमासा च मेलिदे अट्ठतालीस जीवसमासा हवन्ति । वत्तीस-जीवसमासेसु पत्तेयसरीर-दो-जीवसमासे अवणिय पत्तेयसरीरा दुविहा वादरणिगोदजोणिणो तेसिमजोणिणो चेदि, ते च पत्तेयं पज्जत्तापज्जत्तभेदेण दुविहा एदे चत्तारि पक्खित्ते चोत्तीस जीवसमासा हवन्ति । सत्तारस णिव्वत्तिपज्जत्ता सत्तारस णिव्वत्ति-अपज्जत्ता सत्तारस लद्धि-अपज्जत्ता एदे सव्वे एकावण जीवसमासा हवन्ति । पुढवि-आउ-तेउ-वाउ-णिच्चणिगोद-चउगदिणिगोदा वादरा

इसप्रकार ये सब मिलाकर पैतालीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारणशरीरवनस्पतिकायिक ये पांच प्रकारके जीव पृथक् पृथक् वादर, सूक्ष्म और उनमें भी पर्याप्तक और अपर्याप्तक इसप्रकार चार चार प्रकारके होते हैं । प्रत्येकशरीरवनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रिय ये छहों प्रत्येक प्रत्येक पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं । इसप्रकार ये सब मिलाने पर बत्तीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक कायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारणशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंके वादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेदरूप तथा प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी-पंचेन्द्रिय और संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा सोलह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, सोलह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और सोलह लब्धपर्याप्तक जीवसमास इसप्रकार ये सब मिला देने पर अट्ठतालीस जीवसमास होते हैं । पूर्वोक्त बत्तीस जीवसमासोंमेंसे प्रत्येकशरीरसंबन्धी पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकाल कर प्रत्येकशरीरवनस्पतिकायिक जीव दो प्रकारके होते हैं, वादरनिगोदयोनिक (प्रतिष्ठित) और वादरनिगोद अप्रतिष्ठित । ये दोनों पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं । ये चार जीवसमास मिला देने पर चौत्तीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, और साधारणवनस्पतिकायिकके वादर और सूक्ष्मके भेदसे दश भेदरूप तथा सप्रतिष्ठित प्रत्येक-वनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठितप्रत्येक-वनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञिकपंचेन्द्रिय और संज्ञिकपंचेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा सत्रह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, सत्रह निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास और सत्रह लब्धपर्याप्तक जीवसमास ये सब मिलाकर इकावन जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, नित्यनिगोद-

सुहुमा च पज्जत्तापज्जत्तमेएण दुविहा हवन्ति, पत्तेयवणप्फदि-वेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिय-असण्णि-सण्णिपंचिंदिय-पज्जत्तापज्जत्तमेएण एदे वि पत्तेयं दुविहा हवन्ति एदे सच्चे वि छत्तीस जीवसमासा हवन्ति । अट्टारह णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा, तेत्तिया चेव णिव्वत्तिअपज्जत्त-जीवसमासा वि अट्टारह, लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा वि अट्टारह सच्चेदे एगट्ठे कदे चउपण्ण जीवसमासा । पुणो पत्तेयसरीर-दो-जीवसमासे छत्तीस-जीवसमासेसु अवणिय पत्तेय-सरीरबादरणिगोद-पदिट्ठिदापदिट्ठिद'-पज्जत्तापज्जत्त-सण्णिद-चदुसु जीवसमासेसु पक्खि-त्तेसु अट्ठत्तीस जीवसमासा हवन्ति । एत्थ एगुण्वीस णिव्वत्तिपज्जत्तजीवसमासा, तेत्तिया चेव णिव्वत्ति-अपज्जत्तजीवसमासा हवन्ति, लद्धि-अपज्जत्तजीवसमासा वि तेत्तिया

साधारणवनस्पतिकायिक और चतुर्गतिनिगोदसाधारणवनस्पतिकायिक ये छहों प्रकारके जीव बादर और सूक्ष्मके भेदसे बारह प्रकारके होते हैं । और वे प्रत्येक पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं । प्रत्येकवनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी-पंचेन्द्रिय और संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीव ये सभी पर्याप्तक और अपर्याप्तकके भेदसे दो दो प्रकारके होते हैं । इसप्रकार उक्त चौबीस और निम्न बारह ये सभी जीवसमास मिलाकर छत्तीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, तैजस्कायिक, वायुकायिक, नित्य-निगोद साधारणवनस्पतिकायिक और चतुर्गतिनिगोद साधारणवनस्पतिकायिकके बादर और सूक्ष्म भेद, प्रत्येकवनस्पतिकायिक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी-पंचेन्द्रिय और संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा अठारह निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास, उतने ही अठारह निर्वृत्य-पर्याप्तक जीवसमास और अठारह लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास ये सब इकट्ठे करने पर चौपन जीवसमास होते हैं । पूर्वोक्त छत्तीस जीवसमासोंमेंसे प्रत्येकशरीरसंबन्धी पर्याप्तक और अपर्याप्तक ये दो जीवसमास निकाल कर प्रत्येकशरीरसंबन्धी बादरनिगोद प्रतिष्ठित और अप्रतिष्ठित इन दोनोंके पर्याप्तक और अपर्याप्तक इन चार जीवसमासोंके मिलाने पर अड़त्तीस जीवसमास होते हैं । पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, नित्यनिगोद साधारणशरीरवनस्पतिकायिक और चतुर्गतिनिगोद साधारणशरीरवनस्पतिकायिक जीवोंके बादर और सूक्ष्म भेदरूप तथा सप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक, अप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पतिकायिक द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी-पंचेन्द्रिय और संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीवोंसंबन्धी उ ' निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवसमास होते हैं, उन्नीस ही निर्वृत्यपर्याप्तक जीवसमास होते हैं और उन्नीस ही लब्ध्यपर्याप्तक जीवसमास होते हैं । ये सब मिलाकर सत्तावन जीवसमास होते

चेव सव्वेदे सत्तावण्ण जीवसमासा हवंति । एदे' जीवसमासमेया' सव्व-ओघेसु वत्तव्वा ।

छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण चत्तारि पाण दो पाण एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काया, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगव-

हैं । ये उपर्युक्त जीवसमासोंके भेद समस्त ओघालापोंमें कहना चाहिए ।

जीवसमास आलापके आगे संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्तकालमें और अपर्याप्तकालमें छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और विकलत्रय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्त-कालमें क्रमशः पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्त लमें क्रमशः चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः दशों प्राण, सात प्राण, असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः नौ प्राण, सात प्राण, चतुरिन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः आठ प्राण, छह प्राण, त्रीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः सात प्राण, पांच प्राण, डीन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः छह प्राण, चार प्राण, एकेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त अपर्याप्तकालमें क्रमशः चार प्राण, तीन प्राण, सयोगकेवली जिनोंके चार प्राण, तथा समुद्घातकी अपर्याप्त अवस्थामें दो प्राण और अयोगकेवली जिनोंके एक आयु प्राण होता है । चारों संज्ञाए तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगत वेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं तथा अलेख्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, सांक्षिक असांक्षिक तथा सांक्षिक और असांक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है,

१ प्रतिपु 'चोए' इति पाठ ।

२ सामण्णजीव तससावग्गेसु इगिन्निगलसगल्लुचरिमदुगे । इदियफाये थरिमस्स य दुत्तिचदुपणगमेदजुदे ॥ पण्णुगले तससहिंये तसस्स दुत्तिचदुरपणगमेदजुदे । छण्डुगपत्तेयमिद्द य तसस्स तिथचदुरपणगमेदजुदे ॥ सगजुगल्लि तसस्स य पणमगजुदेसु हांति उणवीसा । एयादुणवीसोत्ति य इगिन्निगल्लिगुणिदे हवे ठाणा ॥ सामण्णेण तिपती पटमा विट्ठिया अपुण्णेगे इदरे । पज्जते लद्धिअपज्जत्तेऽपटमा इवे पत्ती ॥ गो जी ७५-७८.

दुवजुत्ता वा^{२३} ।

तेसि चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणट्ठाणाणि, एक्को वा दो वा तिण्णि वा चत्तारि वा पंच वा छव्वा सत्त वा अट्ठ वा णव वा दस वा एकारह वा बारह वा तेरह वा चउद्दस वा पण्णारह वा सोलस वा सत्तारस वा अट्ठारह वा एगुणवीस वा जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण एक पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छकाया, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं,

आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और साकार अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

उन्हीं षट्-कायिक जीवोंके पर्याप्त कालसंबन्धी आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, पूर्वमें कहे गये पर्याप्तक जीवसंबन्धी एक, अथवा दो, अथवा तीन, अथवा चार, अथवा पांच, अथवा छह, अथवा सात, अथवा आठ, अथवा नौ, अथवा दश, अथवा ग्यारह, अथवा बारह, अथवा तेरह, अथवा चौदह, अथवा पन्द्रह, अथवा सोलह, अथवा सत्रह, अथवा अठारह, अथवा उन्नीस जीवसमास होते हैं, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां और चार पर्याप्तियां, पूर्वमें कहे गये पर्याप्तक जीवसंबन्धी दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण और एक प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणक्षज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रिय-जाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैक्रियिककाययोग और आहारककाययोग ये ग्यारह योग और अयोग-स्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारो कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएँ तथा अलेश्यास्थान भी है, भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, सन्निक, असन्निक तथा सन्निक और

नं. २१२

षट्कायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स.	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स	सन्निक	आ.	उ.
१४	५७	प अ	१०,७ ९,७	४	४	५	६	१५	३	४	८	७	४	६	२	६	२	२	२
		६,६	८,६ ७,५					अयो.						भा	६	भ	स	आहा	साका.
		५,५	६,४ ४,३					अपय.						अले	अ.		अस.	अना.	अना.
		४,४	४,२ १	क्षीणस				अकषा.									अनु.		यु. उ.

अपञ्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वा, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढविकायादी छक्काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वा, चत्तारि कसाय अकसाओ वा, छ पाण, चत्तारि सज्जम, चत्तारि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा तदुभया वा^{११} ।

प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, दो प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्र, चैत्तिकमिश्र, आहारकमिश्र और कर्मण ये चार योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है, विभंगावधि और मनः, पर्ययज्ञानके बिना छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यात ये चार समय, चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेझ्यापं, भावसे छहों लेझ्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके बिना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा अनुभयस्थान भी है, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी और उभय उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

विशेषार्थ — ऊपर जो सत्तावन जीवसमास कहे हैं उनमें अपर्याप्त सामान्यके उन्नीस हैं जिनका यहां पर 'एक अथवा दो, दो अथवा चार, इत्यादि संख्याओंके कथनमें आई हुई पूर्ववर्ती संख्याओंका एक, दो, तीन इत्यादि संख्याओंसे निर्देश किया है। अपर्याप्तके निर्वृत्त्य-पर्याप्त और लब्धपर्याप्त ऐसे दो भेद कर लेने पर उनका निर्देश दो, चार, छह इत्यादि संख्या-ओंके द्वारा किया गया है। यहां पर इतना और समझ लेना चाहिये कि पूर्व पूर्ववर्ती संख्याएं जीवसमासोको सामान्यरूपसे और उत्तर उत्तरवर्ती संख्याएं उनको विशेषरूपसे बतलाती हैं। इसका यह अभिप्राय हुआ कि किसी भी संख्याके द्वारा संपूर्ण अपर्याप्त जीव संग्रहांत कर लिये गये हैं। भिन्न भिन्न संख्याएं केवल उनके भेद-प्रभेदोंको सूचित करनेके लिये ही दी गईं

नं २१५

षट्कायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

[illegible]

११ पुढविकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पुढविकाओ, तिण्णि जोग, णवुसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दक्खेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-

अन्य पट्टाधिक जीवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अकायिक अर्थात् सिद्ध जीवों आ मूल ओघालापके समान ही जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त इन तीनों ही प्रकारके मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहते समय कायानुवादके मूलोघालापमें कहे गये सभी जीवसमास कहना चाहिए। इसके अतिरिक्त अन्यत्र अन्य कोई विशेषता नहीं है।

पृथिवीकायिक जीवोके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादरपृथिवीकायिक-पर्याप्त, बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त, सूक्ष्मपृथिवीकायिक-पर्याप्त और सूक्ष्मपृथिवीकायिक-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, पृथिवीकाय, औदारिकाय-योग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये तीन योग, नपुसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण

पृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी.	प	प्र	स.	ग	ह	का	यो	वे	क	हा	सय	द	ले	म	स	सखि	आ	उ.
१	४	४	४	४	२	१	१	३	१	४	२	१	१	द्र ६ मा ३ अशु.	२	१	१	२	२
भि.	वा प ," अ सू प. ," अ	प ४ अ.	प ३ अ		ति	ए	पृ	औ २ कर्म	न	कुम. कुथु,	अस	अच			म म ज	मि	अस.	आहा अना	साका अना

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिस्सिखगदी, एइंदियजादी, पुढविकाओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छंतं,

जीवसमास हो जाते हैं। दूसरा कारण ऐसा प्रतीत होता है कि वीरसेनस्वामीने स्वयं बादर और सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त आलापोंके अतिरिक्त बादर और सूक्ष्म पृथिवीकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त इसप्रकार तीन प्रकारके आलाप और बतलाये हैं। इनमेंसे प्रथम सामान्यालापमें पर्याप्तक, निर्वृत्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक इन तीनों प्रकारके जीवोंके आलापोंका अन्तर्भाव हो जाता है और निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामान्यालापमें पर्याप्तक और निर्वृत्यपर्याप्तक इन दो प्रकारके जीवोंके आलापोंका ही अन्तर्भाव होता है। दूसरे पर्याप्तालापकी अपेक्षा प्रथम और द्वितीय दोनों पर्याप्तालापोंमें वास्तवमें कोई विशेषता नहीं है, क्योंकि, निर्वृत्तिसे पर्याप्तक जीव ही दोनों जगह पर्याप्तरूपसे ग्रहण किये गये हैं। अपर्याप्तालापकी अपेक्षा प्रथम अपर्याप्तालापमें निर्वृत्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक इन दोनों प्रकारके जीवोंके आलापोंका अन्तर्भाव होता है। परंतु निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके अपर्याप्तालापमें केवल एक निर्वृत्यपर्याप्तक कालसंबन्धी आलापोंका ही ग्रहण होता है। इनमेंसे निर्वृत्तिपर्याप्तककी अपर्याप्तावस्थामें पर्याप्तनामकर्मका उदय तो रहता है परंतु उसकी पर्याप्तियां पूर्ण न होनेके कारण वह अपर्याप्त कहा जाता है। इसप्रकार निर्वृत्यपर्याप्तक पर्याप्तनामकर्मके उदयकी अपेक्षा पर्याप्त भी है। प्रतीत होता है कि इसी विचक्षाको ध्यानमें रखकर वीर सेनस्वामीने यहां पर चार आलाप कहे हैं। यद्यपि प्रथम कल्पना गोममटसारकी जीवप्रबोधिनी टीकाके आधारसे दी गई है परंतु उसकी यहां पर मुख्यता प्रतीत नहीं होती है, क्योंकि, आगे जलकायिक जीवोंके आलाप पृथिवीकायिक जीवोंके आलापोंके समान बतलाये हैं। परंतु जल आदिके उसी टीकामें शुद्ध आदि भेद नहीं किये हैं। अथवा इसी बातको ध्यानमें रखकर उक्त टीकामें केवल पृथिवीके चार भेद किये गये हैं। इसप्रकार पृथिवीकायिक जीवोंके दो या चार जीवसमास जान लेना चाहिये।

उन्हीं पृथिवीकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्याद्वयि गुणस्थान, बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त और सूक्ष्मपृथिवीकायिक-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चारों अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्य्यचगति, एकेन्द्रियजाति, पृथिवीकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुभ्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेट्ट्याणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेट्ट्याणं, अभ्यसिद्धिक, अभ्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असमिक्क,

असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

वादरपुढविकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वादरपुढविकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्हणील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वादरपृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, वादरपृथिवीकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्य्यचगति, एकेन्द्रियजाति, वादर-पृथिवीकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कपाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं, भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं २१८

पृथिवीकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप

गु.	जी	प	प्रा.	स	ग	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द	ले	भ.	स.	संज्ञि	आ	उ
१	२	४	३	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	२	२	१	१	२	२
मि.	वा	अ	अ		ति	एके	पृ	औ.मि.	कुम.	कुश्रु.	कुम.	अस	अच	का	म	मि.	अस	आहा	साका.
	सू	अ						कर्म			कुश्रु			शु	अ			अना.	अना
														मा	अ				
														अश्रु					

नं २१९

वादरपृथिवीकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा	सय	द	ले	भ.	स.	संज्ञि	आ	उ
१	२	४	४	४	१	१	१	३	१	४	२	१	१	२	२	१	१	२	२
मि.	वा.	प	प	३	ति	एके	पृ	औ	२	कुम.	कुश्रु.	अस	अच	भा	म.	मि.	अस	आहा	साका
	अ	अ						कर्म	१					अश्रु	अ.			अना	अना.

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगई, एइंदियजादी, वादरपुढविकाओ, ओरालियकायजोगो, णपुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खु-दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा^{१२०} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वादरपुढवि-

उन्ही बादरपृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक बादरपृथिवीकायिक-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, बादरपृथिवीकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही बादरपृथिवीकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक बादरपृथिवीकायिक-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, बादरपृथिवीकाय, औदारिकमिश्रकाययोग

नं. २२०

बादरपृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	क्षा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	१	४	४	४	१	१	१	१	१	४	२	१	१	३	२	१	१	१	२
मि	धा.प				ति	एके	पृ	औदा	नेपुं.		कुम	अस	अच	मा	इम	मि	अस	आहा	साका
											कुश्रु			अशु.	अ			अना	अना

नं. २२१

बादरपृथिवीकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	क्षा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	१	४	३	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	३	२	१	१	२	२
मि	धा.अ	अ.			ति	एके	पृ	ओ मि	कर्म.		कुम.	अम	अच	का	म	मि	अस	आहा	साका
											कुश्रु			मा	इम			अना	अना
														अशु.	अ				

काओ, दो जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णण, असंजम, अचक्सुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भवेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा ।

एवं वादरपुढविणिव्वत्तिपज्जत्तस्स तिण्णि आलावा वत्तव्वा । वादरपुढविलद्धि-अपज्जत्तस्स वादरेइंदिय-अपज्जत्त-भंगो । सुहुमपुढवीए सुहुमेइंदिय-भंगो । णवरि सुहुम-पुढविकाइओ ति वत्तव्वं ।

आउकाइयाणं पुढवि-भंगो । णवरि सामण्णालावे भण्णमाणे आउकाइओ, दव्वेण काउ-सुक्क-फल्लिहवण्ण-लेस्साओ वत्तव्वाओ । तेसिं चेव पज्जत्तकाले दव्वेण सुहुमआऊणं काउलेस्सा वा वादरआऊणं फल्लिहवण्णलेस्सा । कुदो ? घणोदधि-घणवलयागास-पदिद-पाणीयाणं धवलवण्ण-दंसणादो । धवल-किसण-णील-पीयल-रत्ताअंव-पाणीय-दंस-णादो ण धवलवण्णमेव पाणीयमिदि के वि भणंति, तण्ण घडदे । कुदो ? आयारभावे

और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाणं, भव्यसिद्धिक, अभव्यासाद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोप-योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकार वादर पृथिवीकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिये । वादर पृथिवीकायिक लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप वादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए । सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंके आलाप सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके आलापोंके समान जानना चाहिए । विशेषता यह है कि 'सूक्ष्म एकेन्द्रिय' के स्थानपर 'सूक्ष्म पृथिवीकायिक' ऐसा आलाप कहना चाहिए ।

अण्कायिक जीवोंके आलाप पृथिवीकायिक जीवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए । विशेष बात यह है कि सामान्य आलाप कहते समय 'पृथिवीकायिक' के स्थानपर 'अण्कायिक' और लेइया आलाप कहते समय द्रव्यसे अपर्याप्तकालमें कापोत और शुक्ल लेइयाणं और पर्याप्तकालमें स्फटिकवर्णवाली अर्थात् शुक्ल लेइया कहना चाहिए । उन्ही सूक्ष्म अण्कायिक जीवोंके पर्याप्तकालमें द्रव्यसे कापोत लेइया कहना चाहिए । तथा वादरकायिक जीवोंके स्फटिकवर्णवाली शुक्ल लेइया कहना चाहिए, क्योंकि, घनोदधिवात और घनवल्यवात द्वारा आकाशसे गिरे हुए पानीका धवलवर्ण देखा जाता है । यहाँ पर कितने ही आचार्य ऐसा कहते हैं कि, धवल, कृष्ण, नील, पीत, रक्त और आताम्र वर्णका पानी देखा जानेसे पानी धवलवर्ण ही होता है, ऐसा कहना नहीं बनता है ? परंतु उनका यह

मद्वियाए संजोगेण जलस्स बहुवण्ण-ववहार-दंसणादो । आऊणं सहाववण्णो पुण धवलो चेव ।

एवं चेव वादरआउकायस्स वि तिणिण आलावा वत्तच्चा । णवरि पज्जत्तकाले दब्बेण फलिहलेस्सा एक्का चेव । णत्थि अण्णत्थ विसेसो । वादरआउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्ताणं पि तिणिण आलावा एवं चेव वत्तच्चा । वादरआउलद्धिअपज्जत्ताणं वादरआउणिव्वत्ति-अपज्जत्त-भंगो । सुहुमआउकाइयाणं सुहुमपुढविकाइय-भंगो । सुहुमआउकाइयणिव्वत्ति-पज्जत्तापज्जत्ताणं सुहुमआउकाइयलद्धिअपज्जत्ताणं च सुहुमपुढविपज्जत्तापज्जत्त-भंगो ।

तेउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं वादरतेउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्ता-पज्जत्ताणं च पज्जत्त-णामकम्मोदयतेउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं वादर-तेउलद्धिअपज्जत्ताणं च, आउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं वादरआउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं पज्जत्तणामकम्मोदयआउकाइयाणं तेसिं चेव पज्जत्तापज्जत्ताणं

कहना युक्ति-संगत नहीं है, क्योंकि, आधारके होने पर मट्टीके सयोगसे जल अनेक वर्णवाला हो जाता है ऐसा व्यवहार देखा जाता है । किन्तु जलका स्वाभाविक वर्ण धवल ही है ।

इसप्रकार वादर अप्कायिक जीवोंके भी सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । विशेष बात यह है कि उनके पर्याप्तकालमें द्रव्यसे एक स्फटिक वर्णवाली शुक्ल लेइया ही होती है, इसके सिवाय अन्य पृथिवीकायिकके आलापोंसे अप्कायिकके अन्य आलापोंमें और कोई विशेषता नहीं है । इसप्रकार वादर अप्कायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके उक्त तीन आलाप कहना चाहिए । वादर अप्कायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप अप्कायिक निर्वृत्यपर्याप्तक जीवोंके आलापोंके समान समझना चाहिए । सूक्ष्म अप्कायिक जीवोंके आलाप सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवोंके आलापोंके समान होते हैं । सूक्ष्म अप्कायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक, सूक्ष्म अप्कायिक निर्वृत्यपर्याप्तक और सूक्ष्म अप्कायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्त आलापोंके समान जानना चाहिए ।

तैजस्कायिक जीवोंके और उन्हीं पर्याप्तक अपर्याप्तक जीवोंके, वादरतैजस्कायिक जीवोंके और उन्हीं वादरतैजस्कायिक पर्याप्तक अपर्याप्तक जीवोंके, पर्याप्त नामकर्मके उदय-चाले तैजस्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्त अपर्याप्त भेदोंके तथा वादर तैजस्कायिक लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, वादर अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, पर्याप्त नामकर्मके उदय-चाले अप्कायिक जीवोंके और उन्हींके पर्याप्तक अपर्याप्तक भेदोंके, तथा वादर अप्कायिक

बादरआउकाइयलद्विअपज्जत्ताणं च जहाकमेण भंगो । णवरि तेउकाइयाणं दव्वेण काउ-
सुक्क-तवणिज्जलेस्साओ । तेसिं चेव पज्जत्ताणं दव्वेण काउ-तवणिज्जलेस्साओ । एवं
पज्जत्तणामकम्मोदयाणं दोण्हं पि वत्तव्वं । बादरकाइयाणं तेउ-भंगो । एवं चेव तेसिं-
पज्जत्ताणं । णवरि दव्वेण तवणिज्जलेस्सा । एवं पज्जत्तणामकम्मोदयाणं पि दव्व
लेस्सा वत्तव्वा ।

सुहुमतेउकाइयाणं सुहुमआउकाइयाणं सुहुम-भंगो । वाउकाइयाणं तेउ-भंगो ।
णवरि दव्वेण काउ-सुक्क-गोमुत्त-मुग्गवण्णलेस्साओ । तेसिं पज्जत्ताणं काउ-गोमुत्त-

लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलापोंके समान यथाक्रमसे जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—तैजस्कायिक जीवोंके आलाप अप्कायिक जीवोंके आलापोंके समान होते हैं,
इस बा १ ध्वनित करनेके लिये मूलमें 'इव' या 'सदृश' ऐसा कोई पाठ नहीं दिया है । परंतु
पहले अप्कायिक जीवोंके संपूर्ण भेद-प्रभेदोंके आलाप कह आये हैं और यहां तैजस्कायिक
जीवोंके आलापोंके कथन करनेका प्रकरण है, इसलिये प्रकृतमें तैजस्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके
आलाप अप्कायिक जीवोंके भेद-प्रभेदोंके आलापोंके समान बतलाये हैं यही समझना
चाहिए । मूलमें आये हुए 'जहाकमेण' पदसे भी इसी कथनकी पुष्टि होती है ।

विशेष बात यह है कि तैजस्कायिक जीवोंके द्रव्यसे कापोत, शुक्ल और तपनीय लेइया
होती है । तथा उन्हीं पर्याप्तक सूक्ष्मजीवोंके द्रव्यसे कापोतलेइया और पर्याप्तक बादर-
जीवोंके तपनीय लेइया होती है । इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले सामान्य और
पर्याप्त इन दोनोंही प्रकारके तैजस्कायिक जीवोंके द्रव्यलेइया कहना चाहिए । बादर तैजस्कायिक
जीवोंके आलाप सामान्य तैजस्कायिकके आलापोंके समान जानना चाहिए । इसीप्रकार बादर
तैजस्कायिक पर्याप्त जीवोंके आलाप भी होते हैं । विशेषता यह है कि इनके द्रव्यसे तपनीय
अर्थात् शुक्ललेइया होती है । इसीप्रकारसे पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले तैजस्कायिक जीवोंके भी
द्रव्यलेइया कहना चाहिए ।

सूक्ष्म तैजस्कायिक जीवोंके आलाप सूक्ष्म अप्कायिक जीवोंके आलापोंके समान
जानना चाहिए । व युक्तायिक जीवोंके आलाप तैजस्कायिक जीवोंके आलापोंके समान जानना
चाहिए । विशेष बात यह है कि द्रव्यसे कापोत, शुक्ल, गोमूत्र और मूंगके वर्णबली लेइयाएं
होती हैं । उन्हीं पर्याप्तक सूक्ष्म जीवोंके कापोतलेइया और बादर पर्याप्त जीवोंके गोमूत्र

१ बादरआउत्तु सुक्का तेउ य × × । गो. जी. ४९७.

२ तव घनोदधयो मुदसन्निमा, घनवाता गोमूत्रवर्णा, अन्यत्तवर्णास्तुवाता । व. रा. वा ३. १. ७
× × वायुकायाण । गोमुत्तमुग्गवण्णा कमसो अन्नत्तवण्णो य । गो. जी. ४९७ गोमुत्तमुग्गणावाण्णाण वर्णइवण-
तण्ण इवे । वादाण वलपय वल्लस्स-तय-व लोमस्स ॥-वि. सा. १-२

काउ-सुकलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

पत्तेयसरीरवणप्फईणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्ख-गदी, एइंदियजादी, पत्तेयवणप्फदिकाओ, तिण्णि जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुइंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रत्येकशरीर-घनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, प्रत्येकशरीर-घनस्पतिकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार प्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञाप, तिर्थचगाति, एकेन्द्रिय-जाति, प्रत्येकवनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, नपुसकवेद, चारों कवाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षु-दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २२४

घनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प.	प्रा	स	ग	इ.	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म.	स	संज्ञि	आ	उ
१	६	४	३	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	द्र. २	२	१	१	२	२
मि.	साधा.	अ			ति.	६	६	औ. मि	६	कुम	अस.	अच	का	म.	मि	अस	आहा.	साका	
	४							कर्म		कुश्रु				शु.	अ		अना.	अना	
	प्रत्ये													मा. ३					
	२													अशु					

नं. २२५

प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म.	स	संज्ञि	आ	उ
१	२	४	४	४	१	१	१	३	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	२	२
मि	प्र. प.	प.	३		ति	६	वन	औ. २	६	कुम	अस	अच	मा ३	म	मि	अस	आहा	साका	
	प्र अ	४						का १		कुश्रु			अशु	अ.			अना	अना.	

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एय गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, पत्तेयसरीर-वणप्फइकाओ, ओरालियकायजोगो, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^१ ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगई, एइंदियजादी, पत्तेयसरीरवणप्फइकाओ, दो जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

उन्हीं प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त कालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक-पर्याप्त जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्य्यवगति, एकेन्द्रियजाति, प्रत्येकशरीर-वनस्पति-काय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुक्षुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाए, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाए भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक-अपर्याप्त जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्य्यवगति, एकेन्द्रियजाति, प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुक्षुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाए, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाए, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक,

नं. २२६

प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	४	४	४	१	१	१	१	१	४	२	१	१	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि	प्र प				ति.	कु	कु	औदा.	न		कुम.	अस	अव	मा ३	म	मि.	अस	आहा.	साका
											कुक्षु			अशु.	अ.				अना.

अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

एवं णिवत्तिपज्जत्तस्स वि तिण्णि आलावा वत्तव्वा । लद्धिअपज्जत्ताणं पि एगो आलावो पत्तेयवणप्फइ-अपज्जत्ताण जहा तहा वत्तव्वो । जहा पत्तेयसरीराणं, तहा बादरणिगोदपडिड्ढिदाणं पि वत्तव्वं ।

साधारणवणप्फइकाइयाण भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, अट्ठ जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फइकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो,

आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकार निर्वृत्तिपर्याप्तक प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंके भी सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । लब्धपर्याप्तक प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंका एक अपर्याप्त आलाप प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक अपर्याप्त जीवोंके आलापके समान कहना चाहिए । तथा, जिसप्रकार अभी प्रत्येकशरीर-वनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप कहे हैं, उसीप्रकारसे बादरनिगोद-प्रतिष्ठितवनस्पतिकायिक जीवोंके भी आलाप कहना चाहिए

साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गु न, नित्यनिगोद और चतुर्गतिनिगोद इन दोनोंके बादर और सूक्ष्म ये दो दो भेद तथा इन चारोंके पर्याप्त और अपर्याप्तके भेदसे आठ जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार प्राण, तीन प्राण. चारों संज्ञापं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, साधारण-वनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, और कर्मणकाययोग ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन-द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक।

नं. २२७

प्रत्येकवनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा	स	ग	इ	का.	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स	सहि	वा.	उ
१	१	४	३	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	३	२	१	१	२	२
मि.	प्र	अ			ति	हि	हं.	औ.मि	प्र		कुम	अस	अच	का	म.	मि.	अस.	आहा	साका.
	अ.							कर्म.			कुश्रु			शु.	अ.			अना	अना
														मा ३					
														अशु					

सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाण, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फइकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया; मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणा-गारुवजुत्ता वा' ।

मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, वादरनित्यनिगोद-पर्याप्त, सूक्ष्मनित्यनिगोद-पर्याप्त, वादरचतुर्गति-निगोद-पर्याप्त और सूक्ष्मचतुर्गतिनिगोद-पर्याप्त ये चार जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्य्यचगति, एकेन्द्रियजाति, साधारणवनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं. भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २२८

साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप

यु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	हा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ	उ
१	८	४प	४	४	१	१	१	३	१	४	२	१	१	द्र ६	२	१	१	२	२
मि		४अ	३		ति	एके	वन	औ २	न		कुम.	अस	चक्षु	भा ३	म	मि	अस	आहा	साका.
								का १			कुश्रु			अशु	अ			अना	अना

नं २२९

रण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

यु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	हा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ	उ
१	४	४	४	४	१	१	१	१	१	४	२	१	१	द्र ६	२	१	१	३	३
मि					ति	एके	वन	औदा.	न		कुम.	अस	अच.	भा ३	म	मि	अस	आहा	साका.
											कुश्रु			अशु	अ			अना	अना

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, साधारणवणप्फइकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुकलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया ३ भवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

वादरसाधारणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चत्तारि जीवसमासा, चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वादरसाधारणवणप्फइकाओ, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-

उन्ही साधारण वनस्पतिकी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादरनित्यनिगोद-अपर्याप्त, सूक्ष्मनित्यनिगोद-अपर्याप्त, बादर-चतुर्गतिनिगोद-अपर्याप्त और सूक्ष्मचतुर्गतिनिगोद-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञाप, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, साधारणवनस्पतिकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

बादर साधारणवनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादरनित्यनिगोद-पर्याप्त बादर नित्यनिगोद-अपर्याप्त बादरचतुर्गतिनिगोद-पर्याप्त और बादरचतुर्गतिनिगोद-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञाप, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, बादरसाधारणवनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे

नं. २३०

साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	व.
१	४	४	३	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	१	२	१	१	२	२
मि.		अ		ति	हं	हं	औ मि	कर्म	हं	कुम	कुश्रु	अस	अच.	का	म	मि	अस	आहा	साका.
														शु	अ			अना	अना
														मा ३					
														अशु					

णील-काउलेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहा-
रिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३१} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, चत्तारि
पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिक्खिगदी, एहंदिज्जादी, वादरसाधारण-
वण्णफइकाओ, ओरालियकायजोगो, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम,
अचक्खुदंमण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-
सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२} ।

छहों लेइयाए, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाए; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व,
असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने
पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादर नित्यनिगोद-पर्याप्त और बादर चतुर्गतिनिगोद-
पर्याप्त ये दो जीवसमास, चार पर्याप्तियां, चार प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय-
जाति, बादरसाधारणवनस्पतिकाय, औदारिककाययोग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और
कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाए, भावसे कृष्ण, नील और
कापोत लेइयाए, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असंज्ञिक, आहारक, साकारो-
पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २३१

बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प	प्रा	स	ग	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द	ले	म.	स.	सहि.	आ	उ
१	४	४	४	४	१	१	१	३	१	४	२	१	१	द इ	२	१	१	२	२
मि.		प	३		ति	एके	वन	औ	२		कुम.	अस	अच	भा इ	म.	मि	अस	आहा	साका.
		४						कर्म	१		कुश्रु.			अशु	अ.			अना	अना.

नं. २३२

बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प	प्रा	स	ग	इ.	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय.	द	ले	म.	स.	सहि.	आ.	उ.
१	२	४	४	४	१	१	१	१	१	४	२	१	१	द इ	२	१	१	१	२
मि.					ति	एके	वन	औदा	नपु.		कुम	अस	अच	भा इ	म.	मि.	अस	आहा.	साका.
											कुश्रु			अशु	अ.			अना.	अना.

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, चत्तारि अपज्जत्तीओ, तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिरिक्खगदी, एइंदियजादी, वादराणिगोद-वणप्फइकाओ, वे जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, अचक्खु-दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारु-वज्जुत्ता वा^{१३} ।

एवं साधारणसरीरवादरवणप्फइणं पज्जत्ताणामकम्मोदयाणं तिण्णि आलावा वत्तव्वा । लद्धि-अपज्जत्ताणं पि एगो अपज्जत्तालावो वत्तव्वो । सव्वसाधारणसरीरसुहुमाणं सुहुम-पुढवि-भंगो । णवरि चत्तारि जीवसमासा, सुहुमसाधारणसरीरवणप्फइकाओ त्ति वत्तव्वो । चउगदिणिगोदाणं साधारणसरीरवणप्फइकाइय-भंगो । तेसिं वादराणं वादरसाधारणसरीर-

उन्ही बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, बादर नित्यनिगोद-अपर्याप्त और बादर चतुर्गतिनिगोद-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, चार अपर्याप्तियां, तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति, एकेन्द्रियजाति, बादर निगोद वनस्पतिकाय, औदारिकभिश्चक्राययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाए, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाए, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, असन्निक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाका-रोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकार पर्याप्त नामकर्मके उदयवाले साधारणशरीर बादर वनस्पति यिक जीवोंके सामान्य, पर्याप्त और अपर्याप्त ये तीन आलाप कहना चाहिए । लब्धपर्याप्तक साधारणशरीर वनस्पतिकायिक जीवोंका भी एक अपर्याप्त आलाप कहना चाहिए सभी सूक्ष्म साधारणशरीर वनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीवोंको आलापोंके समान जानना चाहिए । विशेष बात यह है कि जीवसमास आलाप कहते समय 'चार जीवसमास' और काय आलाप कहते समय 'सूक्ष्म साधारणशरीर वनस्पतिकाय' ऐसा कहना चाहिए । चतुर्गति निगोद वनस्पतिकायिक जीवोंके आलाप साधारणशरीर वन-

नं. २३३

बादर साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	२	४	३	४	१	१	१	२	१	४	२	१	१	द्र २	२	१	१	२	२
मि		अ.		ति	१	१	वन	औ मि	१	४	कुम.	अस	अव	का	म	मि	अस	आहा	साका
								कर्म.			कुश्रु			शु	अ			अना	जना
														मा ३					
														अशु					

तसकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि चोदस गुणट्ठाणाणि, दस जीवसमासा, छ पज्ज-
त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण
सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण दो
पाण एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, वेइंदियादी चत्तारि
जादीओ, तसकाओ, पण्णारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि
अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण,

ब्रह्मकायिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—चौदहों गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, अस्तंजी पंचेन्द्रिय और संजी पंचेन्द्रिय जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्तके भेदसे दश जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात प्राण, आठ प्राण, छह प्राण, सात प्राण, पांच प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण, चारों संज्ञापं, तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, ब्रह्मकाय, पन्द्रहों योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों

असकार्यिक जीवोंके सामान्य आलाप.

यु	जी.	प	प्रा	स.	ग.	ह	का	यो.	वे.	का	हा.	सय.	द	ले.	म	स	सहि	आ	उ
१४	१०	६ प. ६ अ ५ प ५ अ	१०,७ ९,७ ८,६ ७,५ ६,४ ४,२,१	४ ४ क्षीणत क्षीणत	४ ४ क्षी. त्री चतु पक्षे	१ १ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	१ १ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	१ १ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	३ ३ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	४ ४ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	८ ८ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	७ ७ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	४ ४ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	६ ६ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	२ २ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	६ ६ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	२ २ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	२ २ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.	२ २ क्षी. क्षी. क्षी. क्षी.

अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदुवज्जुत्ता वा ।

‘तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, पंच जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि सण्णा खीणसण्णा वा, चत्तारि गदीओ, वेइदियादी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, तिण्णि जोग चत्तारि वा, तिण्णि वेद अवेदो वा, चत्तारि कसाय अकसाओ

है, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार अनाकार उप-योगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

विशेषार्थ - त्रसकायिक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलापोंका वर्णन करते समय उन्हें अनाहारक भी कहनेका कारण यह है कि सयोगकेवली गुणस्थानमें केवलिसमुद्धातके प्रतर और लोकपूरणरूप अवस्थाओंमें नोकर्म वर्गणाओंके नहीं आनेके कारण जीव अनाहारक तो होता है परंतु उस समय पर्याप्त नामकर्मका उदय और वर्तमान शरीरके पूर्ण होनेके कारण वह पर्याप्त भी है, इसलिये इस अपेक्षासे पर्याप्त अवस्थामे भी अनाहारकता बन जाती है । इन्द्रिय मार्गणामें पंचेन्द्रिय मार्गणोंके आलापोंका कथन करते हुए पर्याप्त आलापोंका कथन करते समय इसीप्रकार अनाहारक कहा है । वहां पर भी अनाहारक कहनेका ऊपर कहा हुआ कारण जान लेना । इसीप्रकार दूसरे स्थलोंमें भी जानना चाहिए ।

उन्हीं त्रसकायिक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासा-दनसम्पद्दृष्टि, अविरतसम्पद्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगकेवली ये पांच गुणस्थान, द्विन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी और संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंसंबन्धी पांच अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और दो प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, त्रीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी तीन योग अथवा चार योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगवाधि

नं २३६

त्रसकायिक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
५	५	६अ	७	४	४	४	१	४	३	४	६	४	४	४	२	५	२	२	२
मि	द्वी	अ.	७	४	द्वी	जो	जो	जो	उप.	उप.	विभ	अस	४	का	२	५	२	आहा.	साका.
पा	त्री	॥	६	४	जो	जो	जो	जो	उप.	उप.	मन	सामा	४	शु	अ	मि	स.	अना.	साका.
अ	च	॥	५	४	च.	च.	च.	च.	उप.	उप.	विना	छेदो	४	मा.	६	जोप	अस	अनु.	अना
प	अ	॥	४	४	प	प	प	प	उप.	उप.	विना	यथा.	४	मा.	६	जोप	अनु	अनु.	यु. उ.
प	स	॥	२	४	४	४	४	४	उप.	उप.	विना	यथा.	४	मा.	६	जोप	अनु	अनु.	यु. उ.

सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

२७ तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, पच्च जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, वेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्सा,

और सात प्राण, चतुरिन्द्रियके आठ प्राण और छह प्राण, त्रीन्द्रियोंके सात प्राण और पांच प्राण, द्वीन्द्रियोंके छह प्राण और चार प्राण. चारों संज्ञायें, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार 'जातियां', त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके बिना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु और अचक्षु ये दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यायें, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञी और असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवसंबन्धी पांच पर्याप्त जीवसमास, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके छहों पर्याप्तियां, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रियोंके पांच पर्याप्तियां, संज्ञी पंचेन्द्रियसे लेकर द्वीन्द्रिय जीवों तक क्रमसे दश प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, और छह प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षु

नं. २३८

त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

[illegible]

सासणसम्माइडिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति मूलोव-भंगो ।

अकाइयाणं भण्णमाणे अत्थि अदीदगुणट्ठाणाणि, अदीदजीवसमासा, अदीद-पज्जत्तीओ, अदीदपाणा, खीणसण्णा, चट्ठगदिमदीदो, अणिदिओ, अकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो, केवलदंसण, दव्व-भावेहि अलेस्सा, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा हँति^{२०} ।

एवं तसकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तस्स मिच्छाइडिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति मूलोव-भंगो ।

तसकाइय-लद्धि-अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, पंच जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छप्पाण पंच पाण चत्तारि पाण,

त्रसकायिक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंसे लेकर अयो^१ वली जिन तकके आलाप मूल ओघालापके समान जानना चाहिए ।

अकायिक जीवोंके आलाप कहने पर—अतीत गुणस्थान, अतीत जीवसमास, अतीत पर्याप्ति, अतीत प्राण, क्षीणसंज्ञा, अतीत चतुर्गति, अतीन्द्रिय, अकाय, अयोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, संयम, असंयम और संयम^२ म इन तीनों विकल्पोंसे विमुक्त, केवलदर्शन, द्रव्य और भावसे अलेइय, भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, क्षा^३ सम्यक्त्व, संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे अतीत, अनाहारक, साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

इसीप्रकार त्रसकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तक जीवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अजोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप मूल ओघालापोंके समान जानना चाहिए ।

त्रसकायिक लब्धपर्याप्तक जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञी और असंज्ञी पंचेन्द्रिय संबन्धी पांच अपर्याप्त जीव-स, संज्ञी पंचेन्द्रियोंके छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और विकलेन्द्रियोंके अपर्याप्तियां, संज्ञी पंचेन्द्रियसे लेकर द्वीन्द्रियतक क्रमसे सात प्राण, सात प्राण, छह ,

नं २४०

अकायिक जीवोंके आलाप.

यु	जी.	प	प्रा.	स.	ग	इ	का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स.	सहि	वा.	उ.
अतीतिशु.	अतीतजी	अतीतप	अतीतमा	संज्ञिस	अतीतग	अतीन्द्रिय	अकाय	अयोग	अपग	अकषा	अ	अतीतस	के द.	अलेइय.	अतीत म.	ज्ञा	अपसहि	अना	२ साका. अना यु उ.

वचि-कायबलणिमित्त-पुग्गल-खंधस्स अत्थितं पेक्खिअ पज्जत्तीओ होंति चि सरीर-वचि-पज्जत्तीओ अत्थि । चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ट णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा ।

मणजोगि-मिच्छाद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एय गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण,

इसलिये ये दो प्राण उनके बन जाते हैं । उसीप्रकार वचनबल और कायबल प्राणके निमित्तभूत पुद्गलस्कन्धका अस्तित्व देखा जानेसे उनके उक्त दोनों पर्याप्तियां भी पाई जाती हैं इसीलिये उक्त दोनों पर्याप्तियां भी उनके बन जाती हैं । प्राण आलापके आगे चारों सङ्गाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है । चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, सत्यमनो-योग, असत्यमनोयोग, उभयमनोयोग और अनुभयमनोयोग ये चार मनोयोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है । चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है । आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है । आहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

मनोयोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों सङ्गाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो

नं. २४२

मनोयोगी जीवोंके आलाप

यु	जी.	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा.	सय.	द.	ले	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१३	१	६	१०	४	४	१	१	४	३	४	८	७	४	६	२	६	१	१	२
अयो. स प								मनो	अप	अक				मा	म.	अ	स	आहा.	साका.
विना.				क्षीण		पि	प		अप	अक				मा	म.	अ	अनु.	अना.	यु. उ

दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२४१} ।

मणजोगि-सासणसम्मिच्छाद्वीणं भणमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जतीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, (तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२४२} ।

मणजोगि-सम्मामिच्छाद्वीणं भणमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो,

दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मनोयोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मनोयोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान,

नं २४३

मनोयोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	४	४	१	१	४	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	१	१	२
मि.	स	प				पवे	वस	मनो			अज्ञा	अस	चक्षु.	भा ६	म	मि.	स	आहा.	साका
													अच		अ				अना

नं २४४

मनोयोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स.	सहि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	४	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
साहा	प					पवे	वस	मनो.			अज्ञा	अस	चक्षु.	भा ६	म	सासा	स	आहा	साका
स													अच						अना

छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय,) तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता हेति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणजोगि-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता

एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाप, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लक्ष्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मनोयोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाप, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लक्ष्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-

१ कोष्ठकान्तर्गतपाठ प्रतिपु नास्ति ।

नं. २४५

मनोयोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

यु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि.	आ	उ
१	१	६	१०	४	४	१	१	४	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सं	स	प				पु	पु	मनो			ज्ञान	अस	चक्षु	मा. ६	म	सम्य	सं	आहा	साका
											अज्ञा								अना
											मिश्र.								

नं. २४६

मनोयोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप

यु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि.	आ	उ
१	१	६	१०	४	४	१	१	४	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अवि	म	प				पु	पु	मनो			मति.	अस	के द	मा. ६	म	औ	स	आहा	साका.
											भुत		विना			क्षा			अना
											अव					क्षायो			

होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणजोगि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

मणजोगि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाण, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

पयोगी होते हैं ।

मनोयोगी सयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याए, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

मनोयोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन सयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याए, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं; भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक

नं २४७

मनोयोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स	सन्नि	आ	उ
१	१	६	१०	४	२	१	१	४	३	४	३	१	३	६	१	३	१	१	२
रु	रु			ति	पचे	त्रस	मनो				मति	देश	के द	मा	३ म.	जौप	स	आहा	साका.
				म							भुत		विना	शुभ		क्षा			अना.
											अव					क्षायो			

सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा' ।

मणजोगि-अप्पमत्तसंजदप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति ताव मूलोघ-भंगो ।
णवरि चत्तारि मणजोगा वत्तव्वा । सजोगिकेवलिस्स सच्चमणजोगो असच्चमोसमणजोगो
इदि दो मणजोगा वत्तव्वा । सच्चमणजोगीणं मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति
ताव मूलोघ-भंगो । णवरि सच्चमणजोगो एक्को चेव वत्तव्वो । एवमसच्चमोसमणजोगीणं पि,
णवरि असच्चमोसमणजोगो एक्को चेव वत्तव्वो ।

मोसमणजोगीणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ
पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ,
पंचिंदियजादी, तसकाओ, मोसमणजोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि

ये तीन सम्यक्त्व, संहिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अप्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थानतक मनोयोगी जीवोंके
आलाप मूल ओघालापोंके समान ही हैं, विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय
बारहवें गुणस्थानतक चारों ही मनोयोग कहना चाहिए । किन्तु सयोगिकेवलीके सत्यमनो-
योग और असत्यमृषा अर्थात् अनुभय मनोयोग ये दो ही मनोयोग कहना चाहिए ।

सत्यमनोयोगियोंके आलाप मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थानतक
मूल ओघालापोंके समान हैं । विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय एक सत्यमनो-
योग आलाप ही कहना चाहिए । इसीप्रकारसे असत्यमृषा अर्थात् अनुभय मनोयोगियोंके
भी आलाप होते हैं । विशेष बात यह है कि योग आलाप कहते समय एक असत्यमृषा
मनोयोग आलाप ही कहना चाहिए ।

मृषामनोयोगी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त
जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है । चारों
गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, मृषामनोयोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है ।

नं. २४८

मनोयोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप

यु	जी.	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	व.
१	१	६	१०	४	१	१	१	४	३	४	४	३	३	द्र ६	१	३	१	१	२
स. प				म.	म.	म.	मनो				मति.	सामा	के. द	भा ३	म	औप	स	आहा	साका.
											धुत	केदो	विना	शुभ		क्षा			अना
											अव	परि				सायो			
											मन								

वचिजोगि-मिच्छाइष्टीणं भणमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, पंच जीवसमाप्ता, छ पञ्चत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, बेइंदियजादि-आदी चत्तारि जादीओ, तसकाओ, चत्तारि वचिजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-

वचनयोगी मिथ्यादृष्टि जीवोके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, द्वीन्द्रिय जीवोंसे लगाकर संक्षी पंचेन्द्रिय तकके जीवोंकी अपेक्षा पांच पर्याप्त जीव इस; छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण और छह प्राण; चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, द्वीन्द्रियजातिको आदि लेकर चार जातियां, त्रसकाय, चारों वचनयोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य

वचनयोगी जीवोंके आलाप.

[illegible]

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असज्म, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया

उन्हीं काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्तक जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत,

काययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

[illegible]

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०१}।

“तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,

उन्ही काययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग और वैक्रियिक-काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्ही काययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग,

नं. २५९

काययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	४	१	१	२	३	४	३	१	२	६	१	१	१	१	२
सा.	स.प					पचे	त्रस	औ १			कुम	अस	चक्षु	मा	६	सा	सं.	आहा.	साका
								वै १			कुशु		अच						अना.
											विम								

नं. २६०

काययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	३	१	१	३	३	४	२	१	२	२	१	१	१	२	२
मा	स	अ	अ.		ति	म	त्रस	औ मि			कुम.	अस	चक्षु	का	म	सा	स	आहा	साका.
					दे.			वै मि			कुशु		अच	शु				अना.	अना.
								कार्म						मा ६					

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मचं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६} ।

“तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,

उन्ही काययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग और वैक्रियिक-काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं काययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग,

नं. २५९

काययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग.	इ.	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय.	द	ले	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	२	३	४	३	१	२	६	१	१	१	१	२
सा	स.प					पंचे	त्रस	औ.			कुम	अस	चक्षु	द्र	म	सा	स	आहा.	साका
								वै			कुशु		अच	मा	६				अना.
								१			विम								

नं. २६०

काययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	७	४	३	१	१	३	३	४	२	१	२	२	१	१	१	२	२
मा	स अ	अ			ति	प	त्रस	ओ मि			कुम.	अस	चक्षु	द्र	म	सा	स	आहा	साका.
					म	प		वै मि			कुशु		अच	का	६			अना.	अना.
					दे.			कर्म.						शु					
														मा					

तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

कायजोगि-सम्मामिच्छाइद्धीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा हैंति अणागारुवजुत्ता वा ।

कायजोगि-असंजदसम्मइद्धीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ,

वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और गुच्छ लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

काययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

काययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाप, चारों गतिया, पंचेन्द्रियजाति,

नं २६१

काययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप

गु	जी	प	प्रा	म	ग	ड	का	यो	वे	क	सा	मय	द	ले	भ	स	सत्ति	आ	उ
१	१	६	०	४	४	१	१	२	३	४	३	१	२	६	१	१	१	१	०
मग्ग	प					पुन	मस	ओ			सान	अम	चक्षु	मा	द	सम्य	स	आहा	साका
स						वे	वे				जज्ञा	अच							अना
											मिश्र								

छ लेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

कायजोगि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एय गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरा-लियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण,

तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याप, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही काययोगी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकि यिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, छीवेदके बिना दो वेद, चारो कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याप, भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

काययोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक सज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याप, भावसे

नं २६४

काययोगी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	म	ग	इ	का	यो	वे	क	क्षा	सय	ट	ले	म	स	सक्षि	आ	उ
१	१	६	७	४	४	१	१	३	०	६	३	१	३	३	१	३	१	२	२
म.	अ.	अ				पक्ष	म	ओ मि पु.	वे मि न	तर्म	मति	अम	क द	का	म	ओप	स	आना	साफा
छ											थुत		विना	शु	क्षा	क्षायो		अना	अना
											अव			मा	६				

दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

कायजोगि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, ओरालिय-आहार-आहारमिस्सा इदि तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि' णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेज, पद्म और शुक्ल लेइयाए. भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

काययोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां दशों प्राण, सात प्राण, चारों सद्भाएं, मनुष्यजाति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इसप्रकार तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन सयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाए, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेइयाए, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

१ प्रतिषु ' तिण्णि ' इति पाठ ।

नं २६५

काययोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	हा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
ल	प	म			ति	पचे	त्रस	औ			मति	देश	के द.	द्र द	३	औप	१	१	२
					म						श्रुत	विना	विना	सुम	३	क्षा	स	आहा	साका
											अव.					क्षायो			अना.

नं २६६

काययोगी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	हा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
प्र	स	प	प	७	म	प	त्रस	औ	१	३	४	३	३	द्र द	३	औप	१	१	२
स	अ	६						आहा	२		केव	सामा	के द.	विना	३	क्षा	स	आहा	साका
		अ.									विना	छेदो	विना	सुम	३	क्षायो			अना
												परि.							

छ लेस्सा, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, मण्णिणो, आहारिणो, मागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवममासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तमकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कमाय, तिण्णि णाण, अमंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

कायजोगि-संजदासंजदाणं मण्णमाणे अत्थि एय गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरा-लियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दमण,

तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्ष्याए, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं काययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैकिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, स्त्रीवेदके विना दो वेद, चारो कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्ष्याए, भावसे छहों लेक्ष्याए, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

काययोगी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्याए, भावसे

नं. २६४

काययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	क्षा	सय	द	ले	म	स	सक्षि	आ	उ
१	१	६	७	४	४	१	१	३	२	४	३	१	३	२	१	३	१	२	२
अवि.	स अ.	अ					पक्षे	औ मि वे मि कर्म	पु. न		मति श्रुत अव	अस.	के द विना	शु. भा. ६	म औप क्षा क्षायो.	स	स	आहा अना.	साका अना

कायजोगि-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एय गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{३९} ।

अपुव्वयरणप्पहुडि जाव खीणकसाओ त्ति ताव कायजोगीणं मूलोघ-भंगो । णवरि ओरालियकायजोगो चेव सव्वत्थ वत्तव्वो ।

कायजोगि-केवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्टाणं, एओ जीवसमासो दो वा, छ पज्जत्तीओ, चत्तारि पाण दो पाण, खीणसण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, ओरालिय-ओरालियमिस्स-कम्मइयकायजोगो इदि तिण्णि जोग, अवगदवेदो,

काययोगी अ संयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक सङ्गी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थपना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लक्ष्याएं, भव्यसिद्धिक, सक्षिक, आहारक, आरोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थानतक काययोगी जीवोंके आलाप मूल ओघालापके समान हैं। विशेष बात यह है कि काययोग आलाप कहते समय सर्वत्र केवल एक औदारिककाययोग ही कहना चाहिए।

काययोगी केवली जिनके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक पर्याप्त जीवसमास, अथवा समुद्घातकी अपेक्षा पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, चार और केवलिसमुद्घातकी अपर्याप्त अवस्थाकी अपेक्षा दो प्राण, क्षीण स्थान, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाय-

नं २६७

काययोगी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	हा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	३	१	१	१	१	३	४	४	३	३	द्र ६	१	३	१	१	२
स	प			आहा	म	पचे		औ			मति	सामा	के द	मा ३	म.	औप	स	आहा	साका
क				यिना							श्रुत	छेदो	विना	शुभ		क्षा		अना	
											अव	परि				सायो			
											मन								

ओरालियकायजोगि-सासणसम्माइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, त ओ, ओरालियकायजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता वा अणागारुवजुत्ता वा^{१७१} ।

^{१७२} ओरालियकायजोगि-सम्माभिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि

औदारिककाययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिककाययोगी सम्यग्मिथ्यादष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद,

नं. २७१

औदारिककाययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप.

यु.	जी.	प.	प्रा	स	ग.	इ	का.	यो.	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स	संज्ञी	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा.	स.				ति	म	म	औ.			अज्ञा	अस	चक्षु	मा	६	सासा	स.	आहा	साका.
	प.												अच						अना

नं. २७२

औदारिककाययोगी सम्यग्मिथ्यादष्टि जीवोंके आलाप.

यु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य	स	प			ति.	म.	म	औ			ज्ञान	अस	चक्षु	मा. ६	म	सम्य	स	आहा.	साका
											अज्ञा		अच.						अना.
											मिश्र.								

अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

ओरालियकायजोगि-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, त ओ, ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

संजदासंजदप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति ताव कायजोगि-भंगो । णवरि सव्वत्थ ओरालियकायजोगो एक्को चेव वत्तव्वो । सजोगिकेवली च पज्जत्ता आहारि त्ति भणिदव्वा ।

चारों , तीनों अहानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और से छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारि ययोगी असंयत ग्हाटि जीवोके आलाप कहने पर—एक अधिरतसम्यग्-ग्हाटि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे^{१४} लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञि , आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिककाययोगी जीवोंके संयतासंयत गुणस्थानसे लेकर सयोगिके^{१५} गुणस्थान तकके आलाप काययोगी जीवोंके आलापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि सर्वत्र योग आलाप कहते समय एक औदारिककाययोग ही कहना चाहिए । और सयोगिकेवलीके जीवसमास कहते य पर्या जीवसमास, तथा आहार आलाप कहते समय आहारक, कहना चाहिए ।

नं. २७३

औदारिककाययोगी असंयतसम्यग्ग्हाटि जं^{१६} आ .

शु	जी.	प	प्रा.	स	ग.	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	३	६	१	३	१	१	२
स. प				ति	म	म	म	औ.			मति.	अस.	के. द.	मा	म	औप	स	आहा	साका
											श्रुत		विना			क्षा			अना
											अव					सायो			

ओंगलियनिस्सक्रायजोगीणं मण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, सत्त जीव-
ममामा, मण्णि-अमण्णीहिंते मजोगिकेवली वदिग्गिंतां नि अदीदजीवममासेण मजोगिणा
होदव्वं? ण, दव्वमणस्म अत्थिचं भावगद-पृव्वगइं च अस्मिऊण तस्म मण्णित्तम्भुवगमादो।
पुद्वी-आउ-नेउ-वाउ-पत्तेय-माहाणमगीर-नम-पज्जचापज्जत्त-चोदम-जीवममामाणं मत्त-
अपज्जत्तजीवममामेनु मजोगि-मत्तम्भुवगमादो वा। एसां अन्यो मच्चन्थ वत्तव्वो। छ
अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, मत्त पाण मत्त पाण छ पाण पंच
पाण चत्तारि पाण तिग्गि पाण दोग्गि पाण, चत्तारि मण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि,
दो गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुद्वीकायादी छक्काया, ओंगलियमिस्स-
क्रायजोगो, तिग्गि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कमाय अकमाओ वि अत्थि,
विमंग-मणपज्जवणाणेहि विणा छ पाणाणि, जहाक्कादमुद्धिसंजमो अमंजमो चेदि
दो मंजम, चत्तारि दंमण, इव्वेग काउनेस्मा। कि कारणं? मिच्छाइद्धि-मामण-असंजद-

औदारिकमिश्रक्राययोगी जीवोंके आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि,
अविरतसम्यग्दृष्टि और सयोगिकेवली ये चार गुणस्थान तथा सात अपर्याप्त जीवसमास
होते हैं।

शंका—जब कि सयोगिकेवली जिनेंद्र संज्ञी और असंज्ञी इन दोनों ही व्यपदेशोंसे
गहित हैं, इसलिये सयोगी जिनको अर्थात् जीवसमासवाला होना चाहिए?

ममाधान—नहीं; क्योंकि द्रव्यमनके अस्तित्व और भावमनोगत पूर्वगति अर्थात्
मृतपूर्व न्यायके आश्रयसे सयोगिकेवलीके संर्भापना माना गया है। अथवा, पृथिवीकायिक,
जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक प्रत्येकशरीरवत्तत्त्विकायिक, साधारणशरीर-
वत्तत्त्विकायिक और वृक्षकायिक जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्तसंख्या चौदह जीवसमासोंमेंसे
सात अपर्याप्त जीवसमासोंमें कपाद प्रतर और लोकपूरणसमुद्धानगत सयोगिकेवलीका सत्त्व
माना जानेसे उन्हें अर्थात् जीवसमासवाला नहीं कहा जा सकता है। यही अर्थ सर्वत्र
कहना चाहिए।

जीवसमास आलापके आगे उहाँ अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां-
सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण और सयोगिकेवलीके
कपादसमुद्धान्तके कालमें दो प्राण होते हैं। चारों संघर्ष तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी हैं, तिर्यच-
गति और मनुष्यगति ये दो गतियां एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि
उहाँ त्रय, औदारिकमिश्रक्राययोग, तीनो वेद तथा अपगतवेदस्थान भी हैं। चारों कपाय
तथा अक्रपायस्थान भी हैं। विमंगावाधि और मन-पर्यय ज्ञानके बिना ज्ञेय छह ज्ञान, यथास्थान-
विहारशुद्धिसंयम और असंयम ये दो संयम, चारों दर्शन और द्रव्यसे कापोतलेख्या होनी हैं।

शंका—द्रव्यसे एक कापोतलेख्या ही होनेका क्या कारण है?

सम्माइड्ढीणं ओरालियमिस्सकायजोगे वडुंताण सरीरस्स काउलेस्सा चेव हवदि; छव्वण्णोरा-
लियपरमाणूणं धवल-विस्ससोपचय सहिद-छव्वण्णकम्मपरमाणूहि सह मिलिदाणं कावोद-
वण्णप्पत्तीदो । क्वाडगद-सजोगिकेवल्लिस्स वि सरीरस्स काउलेस्सा चेव हवदि । एत्थ वि
कारणं पुव्वं व वत्तव्वं । सजोगिकेवल्लिस्स पुव्विल्ल-सरीरं छव्वण्णं जदि वि हवदि तो वि
तण्ण धेप्पदि; क्वाडगद-केवल्लिस्स अपज्जत्तजोगे वडुमाणस्स पुव्विल्ल-सरीरेण सह
संब्धाभावादो । अहवा पुव्विल्ल-छव्वण्ण-सरीरमस्सिऊण उवयारेण दव्वदो सजोगि-
केवल्लिस्स छ लेस्साओ हवंति । । भावेण छ लेस्साओ । किं कारणं ? मिच्छाइड्ढि-सासण-
सम्माइड्ढीणं ओरालियमिस्सकायजोगे वडुमाणं किण्ह-णील-काउलेस्सा चेव हवंति,
क्वाडगद-सजोगिकेवल्लिस्स सुक्कलेस्सा चेव भवदि, किंतु देव-गेरइयसम्माइड्ढीणं
मणुसगदीए उप्पण्णाणं ओरालियमिस्सकायजोगे वडुमाणं अविणट्ठ-पुव्विल्ल-भाव-
लेस्साणं भावेण छ लेस्साओ लब्धंति त्ति । भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, उवसमसम्मत्त-

समाधान—औदारिकमिश्रकाययोगमें वर्तमान मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके शरीरकी कापोतलेश्या ही होती है, क्योंकि, धवलविस्ससोपचय सहित छहों वर्णोंके कर्म-परमाणुओंके साथ मिले हुए छहों वर्णवाले औदारिकशरीरके परमाणुओंके कापोत वर्णकी उत्पत्ति बन जाती है, इसलिए औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके द्रव्यसे एक कापोतलेश्या ही होती है ।

कपाटसमुद्धातगत सयोगिकेवलीके शरीरकी भी कापोतलेश्या ही होती है । यहां पर भी पूर्वके समान ही कारण कहना चाहिए । यद्यपि सयोगिकेवलीके पहलेका शरीर छहों वर्णवाला होता है, तथापि वह यहां नहीं ग्रहण किया गया है, क्योंकि अपर्याप्तयोगमें वर्तमान कपाट-समुद्धात-गत सयोगिकेवलीका पहलेके शरीरके साथ सम्बन्ध नहीं रहता है । अथवा, पहलेके षड्वर्णवाले शरीरका आश्रय लेकर उपचारसे द्रव्यकी अपेक्षा सयोगिकेवलीके छहों लेश्याएं होती हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंके भावसे छहों लेश्याएं होती हैं ।

शंका—औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके भावसे छहों लेश्याएं होनेका क्या कारण है ?

समाधान—औदारिकमिश्रकाययोगमें वर्तमान मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके भावसे कृष्ण, नील और कापोतलेश्याएं ही होती हैं । और कपाटसमुद्धातगत औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवलीके एक शुक्ललेश्या ही होती है । किन्तु जो देव और नारकी मनुष्यगतिमें उत्पन्न हुए हैं, औदारिकमिश्रकाययोगमें वर्तमान हैं और जिनकी पूर्वमव-सम्बन्धी भावलेश्याएं अभीतक नष्ट नहीं हुई हैं, ऐसे जीवोंके भावसे छहों लेश्याएं पाई जाती हैं, इसलिए औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके छहों लेश्याएं कहीं गई हैं ।

लेश्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, उपशमसम्यक्त्व और सम्य-

“ओरालियमिस्तकायजोगि-मिच्छाद्विष्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, ओरालियमिस्तकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउलेस्सा,

औदारिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां: सात प्राण, प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्य्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेइया, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्य-

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	ह.का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स.	सहि	आ	उ.
४	७	६अ	७	४	२	५	६	१	३	४	६	२	४	६	२	४	२	७.
मि	अप	५,,	७	४	ति		औ मि.		अपग.		विभ	अस	का	म	मि.	२	१	२
मा		४,,	६	५	म.				अक्षा		मन	यथा.	भा.	६अ	सा	स.	आहा.	साका.
अ			५	४							विना				क्षा	अस		अना
स			२	२											क्षायो	अनु		

शु.	जी	प	प्र	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म.	स.	सहि	आ.	उ.
१	७	६अ	७	४	२	५	६	१	३	४	२	१	२	द्र. १	२	१	२	१	२
मि	अप	५अ	७	६	ति			औ मि.			कुम	अस	चक्षु	का	म.	मि	स	आहा.	साका
		४अ	५	४	म.						कुश्रु.		अच.	मा ३	ज	अस.			अना.
			३											अशु					

भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

ओरालियमिस्सकायजोगि-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असजमो, दो दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा ।

ओरालियमिस्सकायजोगि-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सकायजोगो, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, जहा देव-मिच्छाइट्ठि-

सिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतिया, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय औदारिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, भावसे कृष्ण, नील और कापोतलेश्याए, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहो अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिक-मिश्रकाययोग, पुरसवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या और भावसे छहों लेश्याएं होती हैं । यहां पर भावसे छहों लेश्या-

नं. २७६

औदारिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	२	१	१	१	३	४	२	१	२	३	१	१	१	१	२
सा	स	अ	अ		ति.	के	त्रस	औ.मि			कुम	अस	चक्षु.	का	म	सासा	स	आहा	साका
					म.	प					कुक्षु		अच	मा	अशु				अना.

सासणसम्मादिट्ठिणो तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सासु वट्टमाणा णट्ठ-लेस्सा होऊण तिरिक्ख-मणुस्सेसुप्पज्जमाणा उप्पण्ण-पढम-समए चेव किण्ह-णील-काउलेस्साहि सह परिणमंति सम्माइट्ठिणो तथा ण परिणमंति, अतोमुहुत्तं पुव्विल्ल-लेस्साहि सह अच्छिय अण्णलेस्सं गच्छंति । किं कारणं ? सम्माइट्ठिणं बुद्धि-ट्ठिय-परमेट्ठिणं मिच्छाइट्ठिणं मरणकाले संकिलेसाभावादो । णेरइय-सम्माइट्ठिणो पुण चिराण-लेस्साहि सह मणुस्सेसुप्पज्जंति ।

ओंके होनेका कारण यह है कि जिसप्रकार तेज पद्म और शुक्ल लेझ्याओंमें, चर्तमान मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि देव तिर्यच और मनुष्योंमें उत्पन्न होते समय नष्टलेझ्या होकरके अर्थात् अपनी अपनी पूर्व शुभ लेझ्याओंको छोड़कर (तिर्यच और मनुष्योंमें) उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही कृष्ण, नील और कापोत लेझ्यारूपसे परिणत हो जाते हैं, उसप्रकारसे सम्यग्दृष्टि देव अशुभ लेझ्यारूपसे नहीं परिणत होते हैं, किन्तु तिर्यच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेके प्रथमसमयसे लगाकर अन्तर्मुहूर्ततक पूर्व भवकी लेझ्याओंके साथ रह कर पीछे अन्य लेझ्याओंको प्राप्त होते हैं, अतएव यहांपर छहों लेझ्याएं बन जाती हैं ।

शंका—तिर्यच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले सम्यग्दृष्टि देव अन्तर्मुहूर्ततक अपनी पहली लेझ्याओंको नहीं छोड़ते हैं, इसका क्या कारण है ?

समाधान—इसका कारण यह है कि बुद्धिमें स्थित है परमेष्ठी जिनके अर्थात् परमेष्ठीके स्वरूप चिन्तनमें जिनकी बुद्धि लगी हुई है ऐसे सम्यग्दृष्टि देवोंके मरणकालमें मिथ्यादृष्टि देवोंके समान संक्लेश नहीं पाया जाता है, इसलिये अपर्याप्तकालमें उनकी पहलेकी शुभ-लेझ्याएं ज्योंकी त्यों बनी रहती हैं ।

विशेषार्थ—‘सम्माइट्ठिण बुद्धि-ट्ठिय परमेट्ठिणं मिच्छाइट्ठिणं मरणकाले संकिलेसा-भावादो’ इस वाक्यके दो अर्थ संभव हैं । एक तो यह कि मरणके समय मिथ्यादृष्टियोंको जिसप्रकार संक्लेश होता है उसप्रकार जिनकी बुद्धिमें परमेष्ठी स्थित हैं ऐसे सम्यग्दृष्टि देवोंके मरणके समय संक्लेश नहीं होता है । तथा दूसरा अर्थ इसप्रकारसे होता है कि सम्यग्दृष्टि देवोंके और जिनकी बुद्धिमें परमेष्ठी स्थित हैं ऐसे मिथ्यादृष्टि देवोंके मरणके समय संक्लेश नहीं पाया जाता है । प्रथम अर्थ करते समय ‘मिच्छाइट्ठिणं’ पदके आगे ‘इव’ पदकी अपेक्षा है और दूसरा अर्थ करते समय ‘व’ पदकी । परंतु ‘मिच्छाइट्ठिणं’ इस पदके आगे इन दोनों पदोंमेंसे कोई भी पद नहीं पाया जाता है और प्रकरणको देखते हुए पहला अर्थ सगत प्रतीत होता है, इसलिये ऊपर अर्थमें पहले अर्थका ही ग्रहण किया है ।

किन्तु नारकी सम्यग्दृष्टि तो अपनी पुरानी चिरंतन लेझ्याओंके साथ ही मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं ।

कारणं, जादिविसेसेण संकिलेसाहियादो । भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अगागारुवजुत्ता वा^{११} ।

ओरालियमिस्सकायजोगि-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, आयु-कालबलपाणा दो चेव होंति, पंचिंदियपाणा णत्थि; खीणावरणे खओवसमाभावादो खओवसम लक्खण-भाविंदियाभावादो । ण च दन्विदिण्ण इह पओजणमत्थि, अपज्जत्तकाले पंचिंदियपाणाणमत्थित्त-पदुप्पायण-संतसुत्त-दंसणादो । मण-वचि-उस्सासपाणा वि तत्थ णत्थि, मण-वचि-उस्सासपज्जत्ती सण्णिद-पोगलखंध-

शंका—नारकी सम्यग्दृष्टि जीव मरते समय अपनी पुरानी कृष्णादि अशुभ लक्ष्याओंको क्यों नहीं छोड़ते हैं ?

समाधान—इसका कारण यह है कि नारकी जीवोंके विशेषसे ही अर्थात् स्वभावतः संक्लेशकी अधिकता होती है, इसकारण मरणकालमें भी वे उन्हें नहीं छोड़ सकते हैं ।

लक्ष्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक, अ मि कत्वके विना दो सम्यक्त्व, संक्लिक, आहारक, आरोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवली जिनके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक अपर्याप्तक मास, छहों अपर्याप्तियां, आयु और बल ये दो होते हैं । किन्तु इन्द्रिय प्राण नहीं होते हैं, क्योंकि, जिनके ज्ञानावरणादि कर्म नष्ट हो गये हैं ऐसे क्षीणावरण सयोगिके में आवरण कर्मोंका क्षयोपशम नहीं पाया है, और इसलिये उनके क्षयोपशम लक्षण भावेन्द्रियां भी नहीं पाई हैं । तथा इन्द्रिय प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंसे प्रयोजन है नहीं, क्योंकि, अपर्या लमें इन्द्रिय प्राणोंके अस्तित्वका प्रतिपादन करनेवाला सूत्र देखा जाता है । मनोबलप्राण, बलप्राण, और श्वासोच्छ्वासप्राण भी औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवलीके नहीं होते हैं, क्योंकि, मनः पर्याप्ति, पर्याप्ति और आनापान पर्याप्ति संक्लिक पौद्गलिक स्कन्धोंसे निर्मित

१ स. सू. ३७, ६१, ७६.

नं. २७७

औदारिकमिश्रकाययोगी अ

ष्टि जीवोंके

गु	जी	प	ग्रा	स	ग	इ	का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स.	सक्ति	आ	उ
१	१	६	७	४	२	१	१	१	१	४	३	१	३	२	१	२	१	१	२
अवि	स अ.	अ			ति,	म	म	औ मि.	म	मति.	ध्रुव अव.	अस	के द	का	म	क्षा	स	आहा	साका, अना

णिच्चत्तिद-सपाणसण्णा-संजुत्तसत्तीणं कवाडगद-केवलिम्हि अभावादो । अहवा तेसिं कारणभूद-पज्जत्तीओ अत्थि त्ति पुणो उवरिम-उडुसमयप्पहुडिं वचि-उरसासपाणाणं समणा भवदि चत्तारि वि पाणा हवंति । खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ,

स्वप्राण संज्ञाओंसे अर्थात् मन, वचन और श्वासोच्छ्वास प्राणोंसे संयुक्त शक्तियोंका कपाट समुद्रात-गत केवलीमें अभाव पाया जाता है । अथवा, समुद्रातगत-केवलीके वचनबल और श्वासोच्छ्वास प्राणोंकी कारणभूत वचन और आनापान पर्याप्तियां पाई जाती हैं, इसलिये लोकपूरणसमुद्रातके अनन्तर होनेवाले प्रतरसमुद्रातके पश्चात् उपरिम छोटे समयसे लेकर आगे वचनबल और श्वासोच्छ्वास प्राणोंका सद्भाव हो जाता है, इसलिये सयोगिकेवलीके आहारमिश्रकाययोगमें चार प्राण भी होते हैं ।

विशेषार्थ—समुद्रातगत केवलीके अपर्याप्त अवस्थामें आयु और काय ये दो प्राण होते हैं शेष आठ प्राण नहीं होते हैं । उनमेंसे पांचों इन्द्रिय प्राण तो इसलिये नहीं होते हैं कि उनके ज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशम नहीं पाया जाता है । कदाचित् यह कहा जा सकता है कि केवलीके पांचों द्रव्येन्द्रियां पाई जाती हैं इसलिये द्रव्येन्द्रियोंकी अपेक्षा उनके पांच प्राण मान लेना चाहिये । परन्तु ऐसा नहीं है, क्योंकि, इन्द्रिय प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंका उपचारसे ही ग्रहण किया है, मुख्यतासे नहीं । यदि इन्द्रिय प्राणोंमें द्रव्येन्द्रियोंका मुख्यतासे ग्रहण करना स्वीकार किया जावे तो अपर्याप्तकालमें पांच इन्द्रिय प्राणोंका सद्भाव नहीं बन सकता है । परन्तु अपर्याप्तकालमें पांचों इन्द्रियप्राण होते हैं ऐसा आगमवचन है, इसलिये यह सिद्ध हुआ कि इन्द्रिय प्राणोंमें मुख्यतासे पांच भावेन्द्रियोंका ही ग्रहण किया गया है और वे भावेन्द्रियां केवलीके होती नहीं हैं, इसलिये उनके पांचों इन्द्रिय प्राण नहीं होते हैं । उसीप्रकार केवलीके अपर्याप्त अवस्थामें मनोबल, वचनबल और श्वासोच्छ्वास ये तीन प्राण भी नहीं होते हैं, क्योंकि, इन तीनों प्राणोंकी कारणभूत मन, वचन और आनापान ये तीन पर्याप्तियां हैं । परन्तु अपर्याप्त अवस्थामें ये तीनों पर्याप्तियां होती नहीं हैं, इसलिये पर्याप्तियोंके अभावमें उनके उक्त तीनों प्राण भी नहीं पाये जाते हैं । इसप्रकार इन आठ प्राणोंके अतिरिक्त केवलीके अपर्याप्त अवस्थामें शेष दो प्राण पाये जाते हैं । अथवा, केवलीके विद्यमान शरीरकी अपेक्षा पूर्वोक्त प्राणोंकी कारणभूत पर्याप्तियां रहती ही हैं, इसलिये छोटे समयसे वचनबल और श्वासोच्छ्वास ये दो प्राण और माने जा सकते हैं । इसप्रकार पूर्वोक्त दोनों प्राणोंमें इन दोनों प्राणोंके मिला देने पर केवलीके औदारिकमिश्रकाययोगमें चार प्राण भी कहे जा सकते हैं । मनःपर्याप्तिके रहने पर भी केवलीके मनःप्राण नहीं माना है, इसका कारण यह है कि मनःप्राणमें भावमन और मनःपर्याप्ति ये दोनों कारण हैं, इसलिये इनमेंसे जहां केवल एक कारण होता है वहां मनःप्राण नहीं कहा गया है । केवलीके भावमन नहीं पाया जाता है, इसलिये मनःपर्याप्तिके रहने पर भी मनःप्राण नहीं कहा गया है और शेष संज्ञी जीवोंके अपर्याप्त अवस्थामें भावमनका अस्तित्व होते हुए भी मनःपर्याप्ति

ओरालियमिस्सयकायजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादविहारसुद्धि-
संजमो, केवलदंसणं, दव्वेण काउलेस्सा, मूलसरीरस्स छ लेस्साओ संति ताओ किण्ण
उच्चंति त्ति भणिदे ण, चोद्दस-रज्जु-आयामेण सत्त-रज्जु-वित्थारेण एक-रज्जुमादिं कादूण
वड्ढिद-वित्थारेण वारिद-जीव पदेसाणं पुव्वसरीरेण संखेज्जंगुलोगाहणेण संबधाभावादो ।
भावे वा जीवपदेस-परिमाणं सरीरं होज्ज । ण च एवं, वंधहरस्स' सरीरस्स तेत्तियमेत्तद्वाण-
पसरण-सत्ति-अभावादो, ओरालियमिस्सकायजोगणहाणुववत्तीदो वा । ण चिराण-सरीरेण
क्वाडगद-केवलस्स संबधो अत्थि । भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव
नही पाई जाती है, इसलिये मनःप्राण नहीं माना गया है ।

प्राण आलापके आगे क्षीणसंज्ञास्थान, मनुष्यगति, पक्षेन्द्रियजाति, त्रस्काय, औदा-
रि श्रकाययोग, अपगतवेदस्थान, अकषायस्थान, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसयम,
केवलदर्शन, और द्रव्यसे कापोत लेख्या होती है ।

शंका—सयोगिकेवलीके मूलशरीरकी तो छहों लेख्याएं होती हैं, फिर उन्हे यहां
क्यों नहीं कहते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, कपाटसमुद्धातके समय चौदह राजु आयाम (लम्बाई) से
और सात राजु विस्तारसे अथवा चौदह राजु आयामसे और एक राजुको आदि लेकर बड़े हुए
विस्तारसे व्याप्त जीवके प्रदेशोंका संख्यात अंगुलकी अवगाहनावाले पूर्व शरीरके साथ संबन्ध
नहीं हो सकता है । यदि संबन्ध माना जायगा, तो जीवके प्रदेशोंके परिमाणवाला ही औदारिक
शरीरको होना पड़ेगा । किन्तु ऐसा हो नहीं सकता, क्योंकि, विशिष्ट बंधको धारण करनेवाले
रके पूर्वोक्त प्रमाणरूपसे पसरने (फैलने) की शक्तिका अभाव है । अथवा, यदि मूलशरीरके
कपाटसमुद्धात प्रमाण प्रसरणशक्ति मानी जाय तो फिर उनकी औदारिकमिश्रकाययोगता
नहीं बन सकती है । तथा कपाटसमुद्धातगत केवलीका पुराने मूलशरीरके साथ संबन्ध है नहीं,
अतएव यही निष्कर्ष निकलता है कि सयोगिकेवलीके मूलशरीरकी छहों लेख्याएं होनेपर भी
कपाटसमुद्धातके समय उनका ग्रहण नहीं किया जा सकता है । किन्तु औदारिकमिश्रकाययोग
होनेके कारण एक कापोतलेख्या ही कही गई है ।

विशेषार्थ—पूर्वाभिमुख केवलीके समुद्धात करने पर कपाटसमुद्धातमें जीवके प्रदेश
ऊपर और नीचे चौदह राजुप्रमाण होते हैं और उत्तर दक्षिण सात राजु फैल जाते हैं ।
तथा उत्तराभिमुख केवलीके कपाटसमुद्धातके समय ऊपर और नीचे चौदह राजुप्रमाण होते
हैं और पूर्व पश्चिम एक राजुको आदि लेकर बड़े हुए विस्तारके अनुसार फैल जाते हैं,
परंतु मूलशरीर संख्यात अंगुलकी अवगाहना प्रमाण ही होता है, इसलिये मूलशरीरकी
लेख्या औदारिकमिश्रकाययोगमें नहीं ली जा सकती है । किन्तु उस समय जो नोकर्मवर्णनाएं
आती हैं उन्हींकी लेख्या ली जायगी । अतः केवलीके औदारिकमिश्रकाययोगकी अवस्थामें
द्रव्यसे कापोतलेख्या कही है ।

वेउच्चियकायजोगि-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीव-
समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी,
तसकाओ, वेउच्चियकायजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो,
दो दंसण, दव्व-भावहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो,
आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

“वेउच्चियकायजोगि-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ
जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी,

वैक्रियिककाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान,
एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगति और
देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय,
तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएं, मव्यसिद्धिक,
अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वैक्रियिककाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन
गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं,
नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिककाययोग, तीनों

नं. २८०

वैक्रियिककाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	२	द्र ६	२	१	१	१	२
मि	स	प			न	पंचे	त्रस	वै			अज्ञा	अस	चक्षु	मा ६	म	मि	स	आहा	साका
					दे								अव		अ				अना

नं. २८१

वैक्रियिककाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	२	द्र ६	२	१	१	१	२
मा	स	प			न	पंचे	त्रस	वै			अज्ञा	अस	चक्षु	मा ६	म	सा	स	आहा	साका
					दे								अव						अना

तसकाओ, वेउव्वियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

वेउव्वियकायजोगि-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्सा, भवसिद्धिया, सम्मा-मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

वेउव्वियकायजोगि-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियकायजोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो,

वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याए, भव्यासिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वैक्रियिकाययोगी सम्यग्मिथ्याद्वष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्या-द्वष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाए, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याए, भव्यासिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं

वैक्रियिकाययोगी असंयतसम्यग्द्वष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्य-द्वष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाए, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों

नं २८२

वैक्रियिकाययोगी सम्यग्मिथ्याद्वष्टि जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म.	स.	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	२	६	१	१	१	१	२
स	प	स			न	दे	पे	त्रस	वे		अज्ञा	अस	चक्षु	मा.	म	सम्य.	स.	आहा	साका
											ज्ञान		अच.						अना.
											मिश्र.								

तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२८३} ।

वेउव्वियमिस्सकायजोगीणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, एगो जीव-समासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, विभंगणाणेण विणा पंच णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्चेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भव-सिद्धिया अभवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तेण विणा पंच सम्मत्ताणि, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२८४} ।

लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादन-सम्यग्दृष्टि, और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तिया, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, विभंगावधिज्ञानके विना पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेख्या, भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके विना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २८३

वैक्रियिककाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	२	१	१	१	३	४	३	१	३	द्र ६	१	३	१	१	२
अवि.	स. प.				न.	प	व	वै			मति	अस.	के द.	मा. ६	म.	औप	स	आहा	साका
					दे	प	व				श्रुत		विना			क्षा			अना
											अव					क्षायो.			

नं. २८४

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सज्ञि	आ	उ
३	१	६	७	४	२	१	१	१	३	४	५	१	३	द्र १	२	५	१	१	२
मि	स	अ	अ.		न	प	व	वै	मि		कुम	अस	के द	का	म	मि	स	आहा	साका
सा.					दे		व				कुशु		विना	मा ६	अ	सासा			अना
अवि											मति.					औ			
											श्रुत					क्षा			
											अव.					क्षायो.			

वेउव्वियमिस्सकायजोगि-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वेउव्वियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजम, दो दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवमिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८} ।

“वेउव्वियमिस्सकायजोगि-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी,

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत-लेख्या, भावसे छहो लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति,

१ ण सासणो णारयापुण्णे । गो जी १२८.

नं २८५

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	२	१	१	१	३	४	२	१	२	द्र १	२	१	१	१	२
मि.	स अ	अ			न	प.	त्रस	वै मि			कुम	अस	चक्षु	का	म	मि.	स	आहा	साका
					दे						कुशु		अच	मा ६	अ				अना

नं. २८६

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	१	२	४	२	१	२	द्र १	१	१	१	१	२
मा	स अ	अ			दे.	प	त्रस	वै मि	स्त्री		कुम.	अस	चक्षु.	का	म	सा	स	आहा	साका
									पु		कुशु		अच	मा ६					अना.

तसकाओ, वेउव्वियमिस्सकायजोगो, णवुंसयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

वेउव्वियमिस्सकायजोगि-असंजदसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, वे गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, वेउव्वियमिस्सकायजोगो, पुरिस-णवुंसयवेदा त्ति दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण जहणिया काउलेस्सा तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८७} ।

पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, नपुंसकवेदके विना दो वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संब्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संब्रि-अपर्याप्त जी तस, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति और देवगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेश्या, भावसे जघन्य कापोत लेश्या और तेज, पद्म तथा शुक्ल लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संब्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २८७ वैक्रियिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	ग्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६	७	४	२	१	१	१	२	४	३	१	३	६	१	१	३	१	१
स	अ	अ			न	पचे	स	वे	मि	पु	मति	अस	के	द	का	म	औप	साहा	साका
ल					दे		स	न		श्रुत	अव		विना	मा	४	क्षा	स	अना	अना
													का	ते		क्षायो			
													प	शु					

आहारकायजोगाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, आहार-कायजोगो, पुरिसवेदो, इत्थि-णउंसयवेदा णत्थि । किं कारणं ? अप्पसत्थवेदेहि सहा-हारिद्वी ण उप्पज्जदि त्ति । चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, मणपज्जवणाणं णत्थि । कारणं, आहार-मणपज्जवणाणां सहाणवद्वानलक्खणविरोहादो । दो संजम, परिहारसुद्धिसंजमो णत्थि; एदेण वि सह आहारसरीरस्स विरोहादो । तिण्णि दंसण, दब्बेण सुक्कलेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, उवसमसम्मत्तं णत्थि; एदेण वि सह विरोधादो । सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८८} ।

आहारककाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारककाययोग, एक पुरुषवेद होता है तथा स्त्री और नपुंसकवेद नहीं होते हैं ।

शंका—आहारककाययोगी जीवोंके स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके नहीं होनेका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि, अप्रशस्त वेदोंके साथ आहारकक्राद्धि नहीं उत्पन्न होती है ।

वेद आलापके आगे चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान होते हैं । मनःपर्ययज्ञानके नहीं होनेका यह कारण है कि आहारकक्राद्धि और मन पर्ययज्ञानका सहानवस्थानलक्षण विरोध है अर्थात् ये दोनों एक साथ एक जीवमें नहीं रहते हैं । ज्ञान आलापके आगे सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं परंतु परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होता है, क्योंकि, इसके साथ भी आहारकशरीरका विरोध है । संयम आलापके आगे आदिके तीनों दर्शन, द्रव्यसे शुक्ललेख्या, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व होते हैं, परंतु उपशमसम्यक्त्व नहीं होता है, क्योंकि, इसके साथ भी आहारकशरीरका विरोध है । सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

१ मणपज्जवपरिहारो पट्ठुवसम्मत्त दोण्णि आहारा । एदेसु एकपगदे णत्थि त्ति असेसयं जाणे ॥

गो. जी. ७२८

नं २८८

आहारककाययोगी जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	स.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	१	१	४	३	२	३	३	१	२	१	१	२
म	प	स		म	पचे	त्रस,	आहा.	पु			मति.	सामा	के द	शु	म.	क्षा	स	आहा	साका.
											शुत	छेदो.	विना	मा ३		क्षायो			अना.
											अव.			शुम.					

आहारमिस्सकायजोगाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, आहारमिस्सकायजोगो, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, दो संजमा, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउलेस्सा^१, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^२ ।

कम्मइयकायजोगाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वानाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सजोगिकेवल्लिं पडुच्च दो पाण, सेसाणं सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण; चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि

आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारकमिश्रकाययोग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोतलेश्या, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, धायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

कर्मणकाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और सयोगिकेवली ये चार गुणस्थान, संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीवोंसे लेकर एकेन्द्रिय जीवोंकी अपेक्षा अपर्याप्तकालभावी सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, प्रतर और लोकपूरण समुद्धातगत सयोगिकेवलीकी अपेक्षा आयु और कायबल ये दो प्राण होते हैं तथा शेष जीवोंके क्रमशः सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण होते हैं। चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी हैं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पाचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, कर्मणकाययोग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी हैं, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी

१ प्रतिपु ' काउ सुक्कलेस्सा ' इति पाठ ।

नं. २८९

आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके आलाप

गु	जी.	प	प्रा	स.	ग	इ	का	यो	वे.	क	हा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ.	उ
१	१	६	७	४	१	१	१	१	१	४	३	२	३	३	१	२	१	१	२
प्र.	म.अ	अ.			म	म	त्रस	आ	मि	पु	मति भुत अव	सामा छेदो	के द. विना	का. मा ३ शुभ	म.	क्षा क्षायो	स	आहा	साका अना

कसाय अकसाओ वि अत्थि, मणपञ्चव-विभंगणानेहि विणा छ णाणाणि, जहाक्खाद-विहारसुद्धिसंजमो असंजमो चेदि दो संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, अहवा छहि पञ्चत्तीहि पञ्चत्त-पुव्वसरीरं पेक्खिऊणुवयारेण दव्वेण छ लेस्साओ हवंति । भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, णोकम्मग्गहणाभावादो । कम्मग्गहणमत्थित्तं पडुच्च आहारित्तं किण्ण उच्चदि त्ति भणिदे ण उच्चदि; आहारस्स तिण्णि-समय-विरहकालोवल्लदीदो । सागारुवजुत्ता हांति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहि जुगवदु-वजुत्ता वा^{२२०} ।

है, मनःपर्ययज्ञान और विभगावधिज्ञानके बिना छद् ज्ञान, यथाख्यात विहारशुद्धिसंयम और असंयम ये दो संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे शुक्ललेख्या होती है। अथवा, केवलीके छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त पूर्व शरीरको देखकर उपचारसे द्रव्यकी अपेक्षा छहो लेख्याएं होती हैं। भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके बिना शेष पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है। अनाहारक होते हैं। आहारक नहीं होनेका कारण यह है कि कर्मणकाययोगी जीव नोकर्मवर्गणाओंको ग्रहण नहीं करते हैं।

शंका—कर्मणकाययोगकी अवस्थामें भी कर्मवर्गणाओंके ग्रहणका अस्तित्व पाया जाता है, इस अपेक्षा कर्मणकाययोगी जीवोंको आहारक क्यों नहीं कहा जाता ?

समाधान—ऐसा शंकाकारके कहने पर आचार्य उत्तर देते हैं कि उन्हें आहारक नहीं कहा जाता है, क्योंकि, कर्मणकाययोगके समय नोकर्मणाओंके आहारका अधिक से अधिक तीन समयतक विरहकाल पाया जाता है।

आहार आलापके आगे साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

नं. २९०

कर्मणकाययोगी जीवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी	प	प्रा	सं	ग	इ.का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
४	७	६अ	७	४	४	५	६	१	३	४	६	२	४	३	२	५	२	२
मि.	अप	५	७	४	४		कर्म.		मन	विम	अस		शु.	म	मि	स.	अना	साका
सासा		४	५	५	५		उपग		अकषा	विम	यथा		अथ	अ	सा.	अस.	अनु.	जना.
अवि.				४					विना				६		क्षा			यु उ
सयो				३, २									मा	६	क्षायो	औप		

गु.	जी	प	प्र	स	ग	इ	का	यो	वे	फ	क्वा	सय	द	ले	भ	स.	सङ्घि	आ.	उ
१ मि	७ अप	६अ ५अ ४अ	७ ७ ६ ५ ४ ३	४	४	५	६	१ नार्मे	३	४	२ तुम कुश्रु	१ अस	२ चक्षु अच.	द्र १ शु २ मा ६	२ भ अ	१ मि	२ स अस	१ अना	२ साका अना.

सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

कम्मइयकायजोग-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, दो वेद, इत्थिवेदो णत्थि; चत्तारि कसाय, तिण्णिण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

लेश्याप, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सन्निक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कर्मणकाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कर्मणकाययोग, पुरुष और नपुंसक ये दो वेद होते हैं, खीवेद नहीं होता है । चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे शुक्कलेश्या, भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. २९२

कर्मणकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स	संज्ञि.	आ	उ
१	१	६	७	४	३	१	१	१	३	४	२	१	२	३	१	१	१	१	२
सा	स	अ	अ			ति.	त्रस	कर्म.			कुम	अस	चक्षु.	शु	म	सासा	स	अना	साका
						म.					कुश्रु.		अव	भा.	६				अना.

नं. २९३

कर्मणकाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स	संज्ञि.	आ	उ
१	१	६	७	४	४	१	१	१	२	४	३	१	३	३	१	३	१	१	२
अवि	स	अ	अ			पु	त्रस	कर्म	न	पु	मति.	अस	के	द	म	औप	स	अना.	साका.
											धुत		विना	भा	६	क्षायो			अना.

कम्मइयकायजोग-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणह्वाणं, एओ जीव-समासो, छ अपज्जत्तीओ, दो पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहक्खादसुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दव्वेण सुक्कलेस्सा छ लेस्साओ वा, भावेण सुक्कलेस्सा चेव; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा^{११} ।

सुगममजोगीणं ।

एव जोगमगणा समत्ता ।

वेदानुवादेण अनुवादो जहा मूलोघो णीदो तहा णेदव्वो^१ । णवरि णव गुणह्वाणाणि त्ति वत्तव्वं; वेदे णिरुद्वे उवरिमगुणह्वाणाभावादो । अत्थि खीणसण्णा, अवगदजोगो,

कार्मणकाययोगी सयोगिकेवलियोंके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, आयु और कायबल ये दो प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कार्मणकाययोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसयम केवलदर्शन, द्रव्यसे शुक्कलेश्या, अथवा औदारिकशरीरकी अपेक्षा छहों लेश्याएं होती हैं, किन्तु भावसे शुक्कलेश्या ही होती है । भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संश्लिषिक और असंश्लिषिक इन दोनों विकल्पोसे रहित, अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

अयोगी जीवोंके आलाप सुगम ही हैं ।

इसप्रकार योगमार्गणा समाप्त हुई ।

वेदमार्गणाके अनुवादसे कथन करने पर आलापोंका कथन जैसा मूल ओघालापमें लिया गया है वैसा यहां पर भी लेना चाहिये । विशेष बात यह है कि यहां आदिके नौ गुणस्थान होते हैं ऐसा कहना चाहिये, क्योंकि वेदनिरुद्ध अवस्थामें अर्थात् वेदोंसे युक्त रहने पर ऊपरके गुणस्थानोंका अभाव है । तथा यहां पर क्षीणसंज्ञा, अपगतयोग, अपगतवेद, अकषाय, अलेश्य,

१ अ प्रती ' त जहा णेदव्वो ' क प्रती ' ज जहा णेदव्वो ' आ प्रती ' तन्हा णेदव्वो ' इति पाठ ।

मं. २९४

कार्मणकाययोगी सयोगिकेवली जिनके आलाप

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	जा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	२	०	१	१	१	१	०	०	१	१	१	१	१	१	०	१	२
मनो.	अप.	पापु	काय,	क्षीण	म	प	तस	काम	अपग	अकषा.	केव	यथा	के.	शु	म.	क्षा	अनु.	अना.	साका.
														अथ, ६					अना.
														मा १					गु. उ
														शु					

“इत्थिवेदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्ज-
त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण
सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पच्चिदियजादी,
तसकाओ, आहार-आहारमिस्सकायजोगेहि विणा तेरह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय,
मणपज्जव-केवलणणेहि विणा छ णाण, परिहार-सुहुमसांपराइय-जहाक्खादविहारसुद्धि-
संजमेहि विणा चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दच्च-भवेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभव-

स्त्रीवेदी जीवोंके सामान्य आलाप कहते पर—आदिके नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, संज्ञीके छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, असंज्ञीके पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, संज्ञीके दशों प्राण, सात प्राण, असंज्ञीके नौ प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके बिना शेष तेरह योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, मनःपर्यय और केवलज्ञानके बिना शेष छ ज्ञान, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयमके बिना शेष चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व,

स्त्रीवेदी जीवोंके सामान्य आलाप.

[illegible]

कम्मइयकायजोग-सजोगिकेवलीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समाओ, छ अपज्जत्तीओ, दो पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहक्खादमुद्धिसंजमो, केवलदंसण, दब्बेण सुक्कलेस्सा छ लेस्साओ वा, भावेण सुक्कलेस्सा चेव; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा ।

सुगममजोगीणं ।

एव जोगमगणा समत्ता ।

वेदानुवादेण अनुवादो जहा मूलोघो णीदो तथा णेदच्चां । णवरि णव गुणट्ठाणाणि त्ति वत्तच्चां; वेदे णिरुद्धे उवरिमगुणट्ठाणाभावादो । अत्थि खीणमण्णा, अवगदजोगो,

कर्मणकाययोगी सयोगिकेवलियोंके आलाप कहने पर—एक सयोगिकेवली गुणस्थान, एक अपर्याप्त जीवसमाप्त, छहों अपर्याप्तियां, आयु और कायवल ये दो प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, कर्मणकाययोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलबान, यथाख्यातविहारशुद्धिसयम केवलदर्शन, द्रव्यसे शुक्कलेइया, अथवा ओदारिकशरीरकी अपेक्षा छहों लेइयाए होती हैं, किन्तु भावसे शुक्कलेइया ही होती है । भव्यतिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित, अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

अयोगी जीवोंके आलाप सुगम ही हैं ।

इसप्रकार योगमार्गणा समाप्त हुई ।

वेदमार्गणाके अनुवादसे कथन करने पर आलापोंका कथन जैसा मूल ओघालापमें लिया गया है वैसा यहां पर भी लेना चाहिये । विशेष बात यह है कि यहां आदिके नौ गुणस्थान होते हैं ऐसा कहना चाहिए, क्योंकि वेदनिरुद्ध अवस्थामें अर्थात् वेदोंसे युक्त रहने पर ऊपरके गुणस्थानोंका अभाव है । तथा यहां पर क्षीणसंज्ञा, अपगतयोग, अपगतवेद, अकषाय, अलेइय,

१ अ प्रती ' त जहा णेदच्चा ' क प्रती ' ज जहा णेदच्चा ' आ प्रती ' तम्हा णेदच्चा ' इति पाठ ।

नं. २९४

कर्मणकाययोगी सयोगिकेवली जिनके आलाप

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	सत्ति.	आ.	उ.
१	१	६	२	०	१	१	१	१	०	०	१	१	१	६.१	१	१	०	१	२
सयो.	अप.	छ	आयु	काय,	म	प	त्रस.	कर्म	अपरा	अकषा	केव	यथा	के.	शु	म.	क्षा	अल.	अना.	साका.
														अथ.६					अना.
														मा.१					यु. उ.
														शु					

[illegible]

सिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, छ णाण, चत्तारि संजम, तिण्णि दंमण, दन्व-भावेहिं छ लेस्सा, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

इत्थिवेद-अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि वे गुणद्वाणाणि, वे जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असजमो,

संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं स्त्रीवेदी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, मनःपर्यय और केवलज्ञानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि और सासादन-सम्यग्दृष्टि ये दो गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और णकाययोग ये तीन योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके

नं. २९६

स्त्रीवेदी जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु.	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स	सक्ति	आ	उ
१	२	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	६	४	३	द्र ६	२	६	२	१	२
स प.	स प.	५	९	ति	प.	त्र.	म	४	स्त्री		मन	अस	के द	मा ६	भ	स	आहा	साका	
आदि	अस प			म	दे		व. ४	औ	१		केव	देश	विना		अ	अस		अना.	
							वै	१			विना	छेदी							

१५६ इत्थिवेद-मिच्छाइष्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चत्तारि जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ

दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व और सासादनसम्यक्त्व ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और आनाकारोपयोगी होते हैं।

स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, अपर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां और पांच अपर्याप्तियां; दशों प्राण और सात प्राण, नौ प्राण और सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग, स्त्रीवेद, चारो कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे

स्त्रीवेदी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ.का	यो	वे.	क	हा	सय	द	ले	म	स.	सहि	आ	उ.
२	२	६अ	७	४	३	१ १	३	१	४	२	१	२	२	२	२	२	२	२
मि	स अप	५ ,,	७		ति	प	औ मि	खी		कुम	अस	नधु	का	म	मि.	स.	आहा.	साका.
सा.	अस ,				म.		वै.मि			कुशु.		अच.	शु.	अ	सा	अस.	अना	अना
					दे		कामे.						मा.३					
													अशु					

स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

[illegible]

लेस्ताओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जत्ता होंति अणागारुवज्जत्ता वा” ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, वे जीवसमासा, छ अप-
ज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ,
पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण,

छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और असंक्षी-पर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्र-
 , चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, मव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सांक्षिक, असंक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं खीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सञ्जी-अपर्याप्त और असञ्जी-अपर्याप्त ये दो जीवसमाप्त, छहों अपर्याप्तियाँ, पाँच अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, सात प्राण, चारों सञ्ज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन i, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग खीवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके

नं. २९९

स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु	नी	प.	ग्रा	स.	ग.	इ.	का	यो	वे	क.	हा.	सय.	द	ले	म	स.	सहि	आ	उ
१ सि	१ स प. अत्त प.	६ ५	१० ९	४	३ ति. म दे	१ पचे.	१ तस	१० म ४ व ४ औ. १ वै. १	१ स्त्री	४	३ अज्ञा	१ अस	२ चक्षु अच	द्र ६ मा ६	२ म. अ	१ मि	२ स अस.	१ आहा	२ साका. अना.

इत्थिवेद-सासनसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, वे जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासनसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा^{२१} ।

यु	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	हा	सय.	द	ले	म.	स.	सहि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	३	१	२	१३	१	४	३	१	२	६	१	१	१	२	१
सा.	स.प	प	७		ति	पंचे	नस	आहा	ली		अक्षा	अस	चक्षु	द	म	सा	स	आहा.	साका.
	स.अ.	६			म			द्विक					अच	मा	म			अना	अना.

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसक्काओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३०२} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,
तिण्णि जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-
सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हणील-काउंलेस्साओ; भवासिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो,

उन्हीं खीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, खीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादन कृत्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं खीविदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिक-मिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, खीविद, चारों य, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेद्याप, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेद्याप, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक,

१ प्रतिषु ' तेड ' इत्यधिक पाठ समास्ति ।

नं. ३०२

स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प.	ग्रा	स	ग	ह	का.	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स	साक्षि	वा.	उ
१ सा.	१ स प	६	१०	४	३ ति म द	१ पृष्	१ त्रस.	१० म. ४ व. ४ औ. १ वै. १	१ स्त्री	४	३ अज्ञा	१ अस	२ चक्षु अच	द्र. ६ मा ६ भ.	१ म.	१ सासा	१ स.	१ आहा	२ साका. अना

आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा १० ।

इत्थिवेद-सम्मामिच्छाद्विणीं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाणाणि तीहि अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावोहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा १ ।

इत्थिवेद-असंजदसम्माद्विणीं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठणं, एओ जीवसमासो,

अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संबंधी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, स्त्रीवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यासिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

स्त्रीवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुण-

नं. ३०३

स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ.	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	३	१	१	३	१	४	२	१	२	द्र २	१	१	१	२	२
मा.	स	अ	अ		ति.	प	त्रस	औ.मि	ली		कुम.	अस	चक्षु	का शु.	म	सा	स	आहा	साका.
					म	दे.		वै.मि			कुशु		अच.	मा ३	अशु			अमा	अना.
								कर्म											

नं ३०४

स्त्रीवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ.	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य	प				ति	प	त्रस	म ४	ली		अज्ञा	अस	चक्षु	मा. ६	म	सम्य	स.	आहा	साका
स					म	दे		व ४	औ १		ज्ञान		अच						अना.
								वै. १			मिश्र.								

जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

^{३८७} इत्थिवेद-पमत्तसंजदाणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, आहारदुगं णत्थि । इत्थिवेदो, चत्तारि कसाय, मणपज्जवणाणेण विणा तिण्णि णाण, परिहारसंजमेण विणा दो संजम, कारणं आहारदुग-मणपज्जवणाण-परिहारसंजमेहि वेददुगोदयस्स विरोहादो । तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्क-लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

औदारिककाययोग ये नौ योग, खीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेइयाणं, भव्यसिद्धिक, औप-शमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संब्रिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

खीवेदी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाणं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग होते हैं किन्तु आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग नहीं होता है । योग आलापके आगे खीवेद, चारों कषाय, मनःपर्ययज्ञानके विना आदिके तीन ज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयमके विना आदिके दो संयम होते हैं । यहांपर आहारकद्विक मनःपर्ययज्ञान और परिहारविशुद्धिसंयमके नहीं होनेका कारण यह है कि आहारकद्विक, मनःपर्ययज्ञान और परिहारविशुद्धिसंयमके साथ खीवेद और नपुंसकवेदके उदय होनेका विरोध है । संयम आलापके आगे आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेइयाणं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संब्रिक, आहारक, साकारोपयोगी

नं. ३०७

खीवेदी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्ति	आ	उ
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	२	३	४	१	३	१	१	२
प्रम	स प				म	प	म	म ४ व. ४ औ १	सी.		मति. श्रुत अव.	सामा लेदो	के.द विना	भा ३ म शुभ	औ क्षा सायी.	स	आहा	साका अना	

अणागारुवजुत्ता वा ।

इत्थिवेद-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ, भवासिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

इत्थिवेद-अवुच्चयरणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ; मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ

और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

खीवेदी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, खीवेद, चारों य, आदिके तीन ज्ञान, आदिके दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याए, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षाये मेक ये तीन कत्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

खीवेदी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन पं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, खीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, आदिके दो संयम, आदिके तीन दर्शन,

नं. ३०८

खीवेदी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

यु	जी.	प	प्रा	स.	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स	संज्ञि	आ.	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	१	१	४	३	२	३	६	१	३	१	१	२
स	प			आहा	म.	वि	सं.	म	खी	मति	सामा,	के.द.	मा	शुभ	म	औप.	स	आहा	साका
छ				विना				४	१	श्रुत	छेदो	विना			क्ष			अना.	
								औ.		अव					क्षायो				

लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, वेदगेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

इत्थिवेद-अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, दो सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, इत्थिवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दच्चेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे शुक्कलेख्या; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्वके विना औपश-
ि और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व; संहिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-
कारोपयोगी होते हैं ।

खीवेदी अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान,
एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो
संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदा-
रिककाययोग ये नौ योग, खीवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, आदिके दो ,
आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे शुक्कलेख्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक
और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संहिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी
होते हैं ।

नं. ३०९

खीवेदी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि.	आ	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	१	४	३	२	३	द्र ६	१	२	१	१	२
अप	स प.			आहा विना	म	प	प	म ४ व ४ औ १	ली		मति. भुत अव	सामा छेदी	के द विना	मा १ शुक्क.	म	औप क्षा.	स	आहा.	साका. अना.

नं ३१०

खीवेदी अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप.

शु	जी.	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स.	सहि	आ	उ.
१	१	६	१०	२	२	२	१	९	१	४	३	२	३	द्र ६	१	२	१	१	२
नि ले	प प			मे म प	पचे	त्रस.	म. ४ व. ४ औ १	ली			मति. भुत अव	सामा छेदी	के द विना	मा १ शुक्क.	म.	औप क्षा	स	आहा	साका. अना.

सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३१२} ।

^{३१२}तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता

और भावसे छहों लेश्याएँ, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही पुरुषवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासा-दनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियाँ, पांच अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, सात चारों संज्ञाएँ, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियाँ, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये चार योग, पुरुषवेद, चारों कपाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएँ, भावसे छहों लेश्याएँ, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; सम्यग्मिथ्यात्वके बिना शेष पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक,

नं. ३१२

पुरुषवेदी जीवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	२	६	१०	४	३	१	१	११ म ४	१	४	७	५ अस	३	द्र. ६	२	६	२	१	२
आदि	स. प.	५	९		ति	प.	त्र	व. ४	पु		केव	देश	के द	मा ६	भ		स	आहा	साका
	अस प				म			औ १			विना	सामा	विना		अ		अस		अना.
					दे			वै १				छेदी							
								आहा १				परि							

नं. ३१३

पुरुषवेदी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय.	द.	ले.	म	स	संज्ञि	आ	उ.
४	२	६अ	७	४	३	१	१	४	१	४	५	३	३	द्र २	२	५	१	२	२
मि	स. अ	५अ			ति			औ मि	पु.		कुम	अस	के द	का	म	सम्य.	स	आहा	साका.
सा.	अस अ				म.			वै मि			कुश्रु	सामा	विना	शु	अ.	विना.	अस	अना	अना
अवि					दे			आ मि			मति.	छेदी		भा ६					
प्रम.								कर्म.			श्रुत								
											अव.								

होति अणागारुवज्जुत्ता वा ।

पुरिसवेद-मिच्छाइष्टीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चत्तारि जीवसमासा, छ
 ीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव
 पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह
 जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि
 छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो
 अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।” ।

तेसिं चव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ पंच पञ्जत्तीओ, दस पाण णव पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

रूपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त, संज्ञी-अपर्याप्त, असंज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये चार जीवसमास, पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नौ , सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पचेन्द्रिय, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके बिना शेष तेरह योग, पुरुष-वेद, चारों य, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, उपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं पुरुषवेदों मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और असंज्ञी-पर्याप्त ये दो जीवसमाप्त, छहों पर्याप्तियां—
प्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण; चारों सज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो

नं. ३१४

पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

[illegible]

असंजमो, दो दंमण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

तेसिं चव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभव-सिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा” ।

दर्शन, द्रव्य और भावसे छहो लेश्याएं. भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक मिथ्यात्व, सन्निक, असन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्ही पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त और असंज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके चिता दोष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत् और शुक्ल लेश्याएं, भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सन्निक, असन्निक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३१५

पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले.	भ	स.	सक्षि.	आ.	उ
१	२	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	२	६	२	१	१	१	२
मि	स प.	५	९		ति	पचे	वस	म. ४		पु	अज्ञा.	अस	चक्षु	मा ६	म. ४	मि	स	आहा	साका
	अस प				म			व ४					अच.		ज.	अस			जना.
								ओ १											
								वे १											

नं. ३१६

पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग.	इ.	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म.	स.	सक्ति	आ	उ
१	२	६अ	७	४	३	१	१	३	१	४	२	१	२	६	२	१	२	२	२
मि	स अ	५	७	ति	प.	न.	ओ मि.	मि.	पु	कुम	अस	चक्षु	का.	म	मि.	स.	आहा	साका	
	अस अ			म	दे		वे मि.	कर्म.		कुश्रु		अच	मा ६	अ	अस.	जना	जना.		

गु.	जी.	प	प्रा.	सं.	ग	ह	का	यो.	वे	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	साहि.	आ.	उ.
१	१४	६प. ६अ. ५प ५अ ४प. ४अ.	१०,७ ९,७ ८,६ ७,८ ६,४ ४,३	४	३	५	६	१३ आहा द्विक विना	१	४	६ मन केव विना	४ अस. देश सामा. छंदो.	३ के द. विना	द्र. ६ मा. ६	२ म. अ	६	२ स. अस	२ आहा अना.	२ साका. अना.

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काय, दस जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, छ णाण, चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{१८} ।

उन्हीं नपुंसकवेदों जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके नौ गुण-स्थान, पर्याप्तकालभावी सात जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, और चार प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके बिना शेष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, मनःपर्ययज्ञान और केवलज्ञानके बिना छह ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, सन्निक, असन्निक, आहारक, साकारोप-योगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नपुंसकवेदी जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	स.	ग	ह	का	यो	वे.	क	शा	सय	द	ले.	म	स	सखि	आ.	उ.
९	७	६	१०	४	३	५	६	१०	१	४	६	४	३	द. ६	२	६	२	१	२
आदिके.	पर्या.	५	९		न		म ४	न		मन	अस.	के द.	मा ६	म. अ			स	आहा	साका
		७ ६ ४	८		ति		व ४	औ १		केव	देश	विना	विना				अस		अना.
					म			वै. १			विना	सामा.	छेदो						

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पृढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, पंच पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं सासण-खइय-वेदगमिदि चत्तारि सम-त्ताणि, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु वजुत्ता वा^{३१९} ।

णवुंसयवेद-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, चौदस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ; दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छह पाण

उन्हीं नपुंसकवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, अपर्याप्तकालभावी सात जीवों में, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवी आदि छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मण ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ललेश्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सासादन, क्षायिक और वेदक इसप्रकार चार सम्यक्त्व, संज्ञिक, अकारक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदह जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात प्राण, आठ प्राण, छह प्राण,

नं. ३१९

नपुंसकवेदी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स.	सहि	आ	उ
३	७	६अ	७	४	३	५	६	३	१	४	५	कुम.	१	३	२	२	४	२	२
मि	५अ.	७		न				औ मि	न		कुश्रु.	अस	के द	का	म.	मि	स	आहा	साका.
मा	४अ.	६		ति				वै मि.			मति		विना	शु	अ.	सासा	अस	अना	अना.
अ		५		म.				कार्म			श्रुत			मा ३		क्षा.			
		४, ३									अव.			अशु		क्षायो			

	गु.	जी.	प.	'प्रा.	सं.	ग.	इ	का	यो.	वे	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	भ.	स.	सक्षि.	आ.	उ.
२ मि	१४	इप. इअ. ५प ५अ ४प. ४अ.	१०,७ ९,७ ८,६ ७,५ ६,४ ४,३	४	३ न ति म	५	६	१३ आदा द्विक विना	१ कुं	४	३ अज्ञा	१ अस.	२ चछू. भा अच	२ द्र. इ भा इ	२ म. मि अ.	१ स. मि अस	२ साहा. अना.	२ साक्षा. अना.		

मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२१} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वानं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छक्काया, तिण्णि जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३२२} ।

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं नपुंसकवेदी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण और तीन प्राण, चारों सञ्ज्ञाप, देवगतिके बिना शेष तीन गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मण ये तीन योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाणं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेइयाणं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३२१

नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प.	प्रा	स.	ग.	ह.	का.	यो.	वे	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि	आ	उ
१	७	६	१०	४	३	५	६	१०	१	४	३	१	२	द्र ६	२	१	२	१	२
मि.	पर्या.	५	९	न				म ४	न		अज्ञा	अस	चक्षु.	मा ६	म.	मि	स	आहा	साका.
		४	८	ति.				व ४					अच		अ.	अस			अना.
			७	म				औ. १											
			६					वे. १											
			४																

नं. ३२२

नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	ह	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	७	६	७	४	३	५	६	३	१	४	२	१	२	द्र २	२	१	२	२	२
मि.	पु.	५	७	न				औ मि	न		कृम	अस	चक्षु	का	म	मि.	स	आहा	साका
	ल	४	६	ति				वे. मि			कुक्षु		अच	शु	अ	अस		अना	अना
			५	म				कर्म.						मा ३					
			४											अशु					

णवुंसगवेद-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गइओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चारह जोग, सासणगुणेण जीवा णिरयगदीए ण उप्पज्जन्ति तेण वेउव्वियमिस्सकायजोगो णत्थि । णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता हँति अणागारुवज्जुत्ता वा^{३३} ।

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्ति और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगविक्र, और वैक्रियिकमिश्रकाययोगके बिना शेष बारह योग होते हैं। यहां पर वैक्रियिकमिश्रके नहीं होनेका कारण यह है कि सासादन गुणस्थानसे मर कर जीव नरकगतिमें नहीं उत्पन्न होते हैं, इसलिए यहां पर वैक्रियिकमिश्रकाययोग नहीं है। नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लक्ष्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी सासादनसम्प्रदाष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--
सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमाप्त, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों
संज्ञाएं, देवगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों
वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय,
तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लक्ष्याएं, भव्यसाद्धिक.

नं. ३२३

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्वाष्टि जीर्णोके सामान्य आलाप.

पु.	जी.	प.	भा	स	ग	इ	का.	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स	संक्षि	वा.	उ
१ सा.	२ स प स ज	३ प द अ	४ ७	५ न ति म	६ पु के	७ भस.	८ यो व जी. वे. र का १	९ १२ स. ४ व ४ जी. २ वे. १ का १	१० १ न	११ ४	१२ इ अज्ञा	१३ अस	१४ चहु अच	१५ द्र. ह मा ६ म	१६ १ मसा	१७ स.	१८ आहा अना.	१९ २ साका. अना	२० उ

भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता
होति अणागारुवजुत्ता वा^{३२४} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ
अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, देव-णिरयगदी णत्थि । पंचि-
दियजादी, तसकाओ, वे जोग, वेउव्वियमिस्सकायजोगो णत्थि । णउंसयवेद, चत्तारि
कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-
काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-
वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{३२५} ।

सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—
सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहो अपर्याप्तियां, सात प्राण,
चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां होती हैं, किन्तु देवगति और
नरकगति नहीं होती है । पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-
काययोग ये दो योग होते हैं, किन्तु यहां पर वैक्रियिकमिश्रकाययोग नहीं है । नपुंसकवेद,
चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल
लेझ्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेझ्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक,
आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३२४

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय.	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०म ४	१	४	३	१	२	द्र ६	१	१	१	१	२
सा.	स.प				न	पचे	न	व ४	नपु.		अज्ञा	अस	चक्षु	मा ६	म	सा	स	आहा	साका
					ति			औ १					अच						अना
					म			वै १											

नं. ३२५

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी.	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	२	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र २	१	१	१	२	२
मा.	स अ	अ.			ति	प	त्रस	औ मि	न		कुम.	अस	चक्षु	का शु	म	सा	स	आहा	साका
					म			कर्म			कुशु		अच	मा ३				अना	अना
														अनु					

णुंसयवेद-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

णुंसयवेद-असंजदसम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, ओरालियमिस्सकायजोगो णत्थि । णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ,

नपुंसकवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारो वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशो प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये बारह योग होते हैं। किन्तु यहां पर औदारिकमिश्रकाययोग नहीं होता। नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक

नं ३२३

नपुंसकवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	शा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य	प				न			स ४	न		अज्ञा	अस	वक्षु	मा. ६	म	सम्य	स	आहा	साका
स	स				ति.			य ४			३		अच						अना
					म			औ १			ज्ञान.								
								वै. १			मिश्र.								

भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता
होति अणागारुवजुत्ता वा^{३१} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ
अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, देव-णिरयगदी णत्थि । पंचि-
दियजादी, तसकाओ, वे जोग, वेउव्वियमिस्सकायजोगो णत्थि । णउंसयवेद, चत्तारि
कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण किण्ह-णील-
काउलेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-
वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{३२} ।

सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—
एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहो अपर्याप्तियां, सात प्राण,
चारों संज्ञापं, तिर्यंचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां होती हैं किन्तु देवगति और
नरकगति नहीं होती है । पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-
काययोग ये दो योग होते हैं; किन्तु यहां पर वैक्रियिकमिश्रकाययोग नहीं है । नपुंसकवेद,
चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल
लेक्ष्यापं, भावसे कृष्ण, नील और कापोत लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक,
आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३२४

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०म ४	१	४	३	१	२	द्व ६	१	१	१	१	२
सा.	स.प				न	पचे	म	व ४	नपु.		अज्ञा	अस	चक्षु	मा ६	म	सा	स	आहा	साका
					ति			औ १					अच						अना
					म			वै १											

नं. ३२५

नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	२	१	१	२	१	४	२	१	२	द्व २	१	१	१	२	२
सा.	स अ	अ			ति	प	त्रस	औ मि	न		कुम.	अस	चक्षु	का ३	म	सा	स	आहा	साका
					म			कर्म			कुशु		अच	मा ३				अना	अना
														अशु					

णवुंसयवेद-सम्मामिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ^१ ।

णवुंसयवेद-असंजदसम्मामिच्छाइट्टीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, ओरालियमिस्सकायजोगो णत्थि । णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ,

नपुंसकवेदी सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिध्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारो वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिध्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशो प्राण, सात प्राण; चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये बारह योग होते हैं । किन्तु यहां पर औदारिकमिश्रकाययोग नहीं होता । नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक, क्षायिक

गं ३२५

नपुंसकवेदी सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	शा	सय	द.	ले	म.	स.	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	२	द्र.	६	१	१	१	२
संय	प			न	ति.	पु	स	म	४	न	अज्ञा	अस	चक्षु	मा.	६	म	संय	सं	आहा
स				म			म	य	४		३		अच					आहा	साका
							जो	वे.	१		ज्ञान.								अना
											मिश्र.								

तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासां, छ
पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दम
जोग, णवुंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं
छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति
अणागारुवज्जुत्ता वा^{२८} ।

उन्हीं नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्ति जीवसमाप्त, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगतिके बिना शेष तीन गतियां, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, नपुंसक-वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याए, मव्यसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

[illegible]

शु	जी.	प	प्रा	स.	ग	इ	का	यो.	वे	क	क्षा	सय	द.	ले	म	स	सलि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	१	४	३	१	३	६	१	३	१	१	२
जि.	सं.प.				य.	पू	नस.	म ४	न		मति	अस.	के द.	मा ६	म	औप	स	आहा	साका
					ति.			औ. १			श्रुत		विना			क्षा			अना.
					म.			वै. १			अद					क्षायो.			

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, वे जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण जहणिया काउलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, कदकरणिज्जं पडुच्च वेदगसम्मत्तं लद्धं। सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

णउंसयवेद-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, णउंसयवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ

नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये दो योग नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याप, भावसे जघन्य कापोतलेख्या, भव्यसिद्धिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, होते हैं। यहां पर क्षायोपशमिक सम्यक्त्वके होनेका कारण यह है कि कृतकृत्यवेदकी अपेक्षासे यहां पर क्षायोपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है। संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नपुंसकवेदी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, नपुंसकवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं, भव्यसिद्धिक,

नं ३२९

नपुंसकवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	भा.	स	ग	इ.	का	गो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स.	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६अ	७	४	१	१	१	२	७	४	३	१	३	३	२	१	२	१	२
त.	स	अ			न.	प	त्र	वै	मि.	न	मति	अस.	के	द.	का.	म	सा.	आहा.	ठाका.
क								कर्म.			श्रुत.	अव	विना.	शु.	मा.१	का.	सायो	अना	अना

लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा ।

णउंसयवेद-पमत्तसंजदप्पहुडि जाव पढम-अणियट्ठि त्ति ताव इत्थिवेद-भंगो ।
णवरि सन्वत्थ णउंसयवेदो वत्तव्वो ।

अवगदवेदाणं मण्णमाणे अत्थि छ गुणट्टाणाणि अदीदगुणट्टाणं पि अत्थि, दो जीवसमासा अदीदजीवसमासो वि अत्थि, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ अदीदपज्जत्ती वि अत्थि, दस पाण चत्तारि पाण दो पाण एग पाण अदीदपाणो वि अत्थि, परिग्गह-सण्णा खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिदियजादी अणिदियत्तं पि अत्थि, तसकाओ अकायत्तं पि अत्थि, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, अवगदवेदो,

औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नपुंसकवेदी जीवोंके प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागतकके आलाप खीवेदी जीवोंके आलापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि वेद आलाप कहते समय सर्वत्र एक नपुंसकवेद ही कहना चाहिए ।

अपगतवेदी जीवोंके आलाप कहने पर—अनिवृत्तिकरणके अवेद भागसे लेकर अन्तके छह गुणस्थान और अतीतगुणस्थान भी होता है, संज्ञा-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमास स्थान भी होता है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीत-पर्याप्तिस्थान भी होता है, दशों प्राण, चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी होता है, परिग्रहसंज्ञा तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी होता है, मनुष्यगति तथा सिद्धगति भी होती है, पंचेन्द्रियजाति तथा अतिन्द्रियस्थान भी होता है, त्रसकाय तथा अकायस्थान भी होता है, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग तथा कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग और अयोगस्थान भी होता है, अपगतवेद, चारों कषाय

१ प्रतिषु ' पचिदिय अणिदियत्त अत्थि ' इति पाठ ।

नं. ३३०

नपुंसकवेदी संयतासंयत जीवोंके आलाप

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	ह.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	जा.	व.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र	६	१	३	१	२
स.प					ति	पे	त्त	म ४	न	मति.	देस.	के.द.	के.द.	सा ३	म	औप	स	आहा	साका.
क				म				म ४		श्रुत	अव		विना	शुभ		क्षायो		अना	

शु	बी	प	प्रा	स	ग	न	का	यो	व	न	झा	तय	द	ले	म	स	सज्जि.	वा	व.
६	२	६प.	१०,४	१	१	१	१	११	०	४	५	४	४	६	२	२	१	२	२
अनि.	सं.प	६अ	२,१	प.	म	प	त्र	म. ४	अपग.	अक्या	मति.	सा	४	६	१	२	१	२	२
से	स.अ							व. ४			श्रुत	ले	मा	१	म	औ	आहा	साका.	
अयो.				क्षीपम.	सिद्धग.	अनि.	अका.	औ २			अव.	स	श्र	अले.	अनु	क्षा	अना.	अना.	
अतो								रामे १			मन	य						मु द.	
शु.	अती.	अती.	अती.	अती.				अयो			केव.	अनु							

कोधकसायाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, चोदस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, कोधकसाय, सत्त पाण, पंच सज्जम सुहुम-जहाक्खादसंजमा णत्थि, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, णणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होति अणागारुवज्जुत्ता वा^{३३} ।

क्रोधकषायी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके नौ गुणस्थान, चौदह जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात प्राण, आठ प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गेहूं, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, क्रोधकषाय, केवलज्ञानके बिना शेष सात ज्ञान, पांच होते हैं, किन्तु यहां पर सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयम नहीं होते हैं, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लक्ष्याप, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संहिक, असंहिक, आहारक, अनाहारक. साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

क्रोधकषायी जीवोंके सामान्य आलाप.

[illegible]

पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३३४} ।

क्रोधकसाय-मिच्छाद्विणीं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चोदस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ रि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब भावेहि छ लेस्साओ,

मिश्रकाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये चार योग, तीनों वेद, क्रो , कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्था ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाए, भावसे छहों लेइयाए; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके बिना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असं ; आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

क्रोधकषायी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण- , चोदहों जीव , छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां; पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नौ , सात , प्राण, छह प्राण, सात प्राण, पांच प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण, तीन , चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों , आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके बिना शेष तेरह योग, तीनों वेद, क्रोध , तीनों अज्ञान, , आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाए,

नं. ३३४

क्रोधकषायी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स	साक्षि	आ	उ.
४	७	६अ	७	४	४	५	६	४	३	१	५	३	३	द्र २	२	५	२	२	२
मि	अप	५अ	७					औ.मि		को	कुम	अस	के द	का	म	सम्य.	स	आहा	साका.
सा.		४अ	६					वै मि			कुश्रु	सामा.	विना	शु	अ.	विना.	अस.	अना	अना
अवि			५					आ मि			मति.	लेदो		मा ६					
प्रम.			४					कार्म.			श्रुत								
			३								अव.								

शु.	जी	प	आ.	स	ग	ङ.	का	यो	वे	क	क्षा	सय	द	ले	म.	स	सक्षि	आ	उ
१	७	६अ	७	४	४	५	६	३	३	१	२	१	२	३	२	१	२	२	२
मि.	अप.	५,, ४,,	७ ६ ५ ४३					औ मि. वै मि. कार्म.		क्रो	कुम कुश्रु	अस	चक्षु अच	क्र २ का. शु. मा ६	म अ	मि	स. अस.	आहा अना	साका अना

अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गर्हो, पंचिंदियजादी, त ओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाओ, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३००}।

कोधकसाय-सम्मामिच्छाद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ,, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, त ओ, दस जोग, तिण्णि वेद, कोधकसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहि मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३०१}।

संज्ञापं, नरकगतिको छोड़ कर शेष तीन ीयां; पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कार्मण योग ये तीन योग, तीनों वेद, क्रोध , आदिके दो अज्ञान, अ , आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्ष्यापं, से छहों लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्य , संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

क्रोधक ी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त र्ज मास, छहों पर्याप्तियां, दशों , चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्र य, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, क्रोधकपाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन , असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे ों लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ३४० क्रोधक ी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त प.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	सहि.	आ	उ.
१	१	६अ	७	४	३	१	१	३	३	१	२	१	२	द्र २	१	१	१	२	२
सा	कं			ति	पचे	त्र	औ.मि	वै मि.	को	कुम.	अस	चक्षु.	का	म.	सासा	स	आहा	साका.	
	कं			म.	दे		वै मि.	कार्म		कुक्षु.		अच	शु	मा ६			अना	अना.	

नं. ३४१ क्रोधकपायी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके

गु.	जी	प	प्रा.	स	ग	इ.	का	यो	वे.	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स	सहि.	आ	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	१	३	१	२	द्र ६	१	१	१	१	२
सम्य	प						पुं	म. ४	को	ज्ञान	अस.	चक्षु	मा ६	म	सम्य.	स	आहा.	साका.	
							व. ४	औ. १		अज्ञा		अच					अना.	अना.	

क्रोधकसाय-असंजदसम्मद्विणीं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ, तिण्णि पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१५२} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ, तिण्णि पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

क्रोधकबायी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, क्रोधकबाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भवसिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञि, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं क्रोधकबायी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, क्रोधकबाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, - सिद्धिक, औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक,

नं ३४२

क्रोधकबायी असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी.	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स.	संज्ञि	आ	उ.
१	२	इप.	१०	४	४	१	१	१३	३	१	३	१	३	३	१	३	१	२	२
स	प	इअ	७					आहा.२	क्रो	मति.	अस	के द.	मा	द	म.	औप	१	आहा	साका.
स	अ					पु	क्रा.	विना.	भुत	अव.		विना				क्षायो.	अना	अना.	

अणागारुवजुत्ता वा^{३४३} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सच्च पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद इत्थिवेदो णत्थि; कोधकसाओ, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३४४} ।

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं को षायी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त समास, छहों अपर्याप्तियां, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, पुरुष और नपुंसक ये दो वेद होते हैं, किन्तु यहां पर स्त्रीवेद नहीं होता है, क्रोधकषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहो लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औ आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

न. ३४३

क्रोधकषायी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी,	प	प्रा	स.	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स	संज्ञि	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	१	३	१	३	द्र ६	१	३	१	१	२
स.प.								म ४		क्रो	मति	अस.	के.द.	भा. ६	म	औप.	स.	आहा	साका
कवि								व. ४			श्रुत		विना			क्षा.			अना.
								औ. १			अव					क्षायो.			
								वै. १											

न. ३४४

क्रोधकषायी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी.	प	प्रा.	स.	ग.	इ	का	यो.	वे.	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स.	संज्ञि	आ	उ
१	२	६अ	७	४	४	२	२	३	२	१	३	१	३	द्र. २	१	३	१	२	२
स.अ.								औ मि	पु.	क्रो	मति	अस	के द.	का	म	औप.	स.	आहा.	साका.
								वै.मि.	न		श्रुत		विना.	शु		क्षा.		अना	अना
								कर्म.			अव			मा. ६		क्षायो			

क्रोधकसाय-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

क्रोधकसाय-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, (मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ^१,) चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भव-

क्रोधकषायी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, सञ्जी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाप, तिर्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमा^१ म, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं. भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संश्लि, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

क्रोधकषायी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, सञ्जी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग; तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं;

१ प्रतिष्ठु क्रोधकान्तर्गतपाठो नास्ति ।

नं. ३४५

क्रोधकषायी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा.	स	ग.	इ.	का.	यो.	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स	संश्लि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	१	३	१	३	३	३	३	१	१	२
स. प					ति	म	म	४	को	मति.	देश.	के. द.	सा ३	शुभ	म	औप	स	आहा	साक्षा.
					म	म	व ४	औ. १		श्रुत		विना				क्षा			अना
										अव						सायो			

क्रोधकसाय-संजदासंजदानं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दच्चेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३०} ।

क्रोधकसाय-पमत्तसंजदानं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, (मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ,) चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दच्चेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भव-

क्रोधकषायी संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, सञ्जी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाप, तिर्य्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमा म, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशामिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

क्रोधकषायी प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, सञ्जी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाप, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके चार ज्ञान, त्रिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं,

१ प्रतिष्ठु कोष्ठकान्तर्गतपाठो नास्ति ।

नं. ३४५

क्रोधकषायी संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	१	३	१	३	३	१	३	१	१	२
संज्ञ.	स. प				ति	म	म	म	को	मति.	देश.	के. द.	विना.	शुभ	म	औप	स	आहा	साका.
					म	म	व. ४	व. ४	ओ. १	शुत	अव.					क्षायो			अना.

सिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३५६} ।

क्रोधकषाय-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, क्रोधकसाओ, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३५७} ।

भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

क्रोधकषायी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक सङ्गी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके बिना शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, क्रोधकषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन क्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३४६

क्रोधकषायी प्रमत्तसंयत जीवोंके आ

यु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सङ्घि	आ	उ
१	२	६प	१०	४	१	१	१	११	३	१	४	३	३	द्र ६	१	३	१	१	२
प्रम.	स.प.	६अ.	७	म				म. ४		क्रो.	मति	सामा	के.द.	मा. ३	म	औप	स	आहा	साका
	स.अ.							व. ४			श्रुत	छेदो	विना	शुभ		क्षा			अना
								औ. १			अव.	परि.				क्षायो.			
								आ. २			मनः.								

नं. ३४७

क्रोधकषायी अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप

यु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सङ्घि	आ	उ
१	२	६	१०	३	१	१	१	९	३	१	४	३	३	द्र ६	१	३	१	१	२
अप्र.	प			आहा	म	प	त्रस	म ४		क्रो.	मति	मामा	के.द	मा ३	म	औप	स	आहा	साका
	स			विना.				व. ४			श्रुत	छेदो	विना	शुभ		क्षा			अना
								औ. १			अव.	परि				क्षायो.			
											मन.								

११० कोधकसाय-पद्मअणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, एगो जीवसमासो,
छ पज्जत्तीओ, दस पाण, दो सण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग,

क्रोधकषायी प्रथम भागवती अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, तीनों

क्रोधकषायी अपूर्वकरण जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का	यो	वे	क	सा	सय	द	ले	म.	स.	सहि	आ	व.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	१	४	२	३	६	१	२	१	१	२
अपु	प			आहा	म		नस	म ४	को.		मति.	सामा	के द	द्र. इ	म	औप.	सं.	आहा	साका
स				विना		पु		व ४			श्रुत.	छेदो.	विना	उछ.		सा		१	अना.
								औ १		मन									

क्रोधकषायी प्रथम भागवर्ती अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप.

पु.	बी.	प	मा	स	ग.	ब	का.	यो.	वे.	क.	हा	सय	द	छे.	म	स	संक्षि	आ.	उ
१	१	६	१०	२	१	१	१	९	६	१	४	२	३	६.	१	२	१	१	२
आने. प्र.	स प		प	मे	म	पवे	त्रस.	म. ४ न ४ औ १	को	माति. श्रुत अव मन	सामा छेदो	के द विना	द. व मा १ शुक्क	१ म.	ऑप. क्षा	१ स.	जाहा	सका. जना	

तिणिण वेद, क्रोधकसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिणिण दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

क्रोधकसाय-विदियअणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, परिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, क्रोधकसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिणिण दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

एवं माण-मायाकसायाणं पि मिच्छाइड्डिप्पहुडिं जाव अणियट्ठि त्ति वत्तव्वं । णवरि जत्थ क्रोधकसाओ तत्थ माण-मायाकसाया वत्तव्वा । लोभकसायस्स क्रोधकसाय-मंगो । णवरि ओघालावे भण्णमाणे दस गुणद्वानाणि, छ संजम, लोभकसाओ च वत्तव्वो ।

वेद, क्रोधकषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

क्रोधकषायी द्वितीय भागवर्ती अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पूर्वोक्त नौ योग, अपगतवेद, क्रोधकषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना ये दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाणं, भावसे शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इसीप्रकारसे मानकषायी और मायाकषायी जीवोंके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानतकके आलाप कहना चाहिए । विशेष बात यह है कि कषाय आलाप कहते समय जहां ऊपर क्रोधकषाय कहा है, वहांपर मानकषाय और मायाकषाय कहना चाहिए । लोभकषायके आलाप क्रोधकषायके आलापोंके समान हैं । विशेष बात यह है कि लोभ कषायके ओघालाप कहने पर-आदिके दश गुणस्थान, संयम आलाप कहते समय यथाख्यातसंयमके

नं. ३५०

क्रोधकषायी द्वितीय भागवर्ती अनिवृत्तिकरण जीवोंके आलाप

गु	जी	प	प्रा.	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय.	द	ले	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	४ मति.	२	३	६	१	२	१	१	२
१	स.प		प	म	प		म	४	०	१	श्रुत	सामा.	के द.	मा	१ म	औप	सं	आहा.	साका
१							व ४	व ४	०	१	अव	छेदो	विना	शुद्ध	क्षा.				अना.
१							औ. १	औ. १			मन								

१५५ अकसायाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि अदीदगुणट्ठाणं पि अत्थि, दो जीवसमासा अदीदजीवसमासा वि अत्थि, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ अदीदपज्जत्ती वि अत्थि, दस चत्तारि दो एगं पाण अदीदपाणो वि अत्थि, खीणसण्णा, मणुसगदी सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिदियजादी अणिंदियत्तं पि अत्थि, तसकाओ अकायत्तं पि अत्थि, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, अवगदवेदो, अकसाओ, पंच पाण, जहाक्खादविहार-सुद्धिं मो णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि अत्थि, चत्तारि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो

विना छह संयम और कषाय आलाप कहते समय लोभकषाय कहना चाहिए ।

अकषायी जीवोंके आलाप कहने पर—उपशान्तकषाय, क्षीणकषाय, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये चार गुणस्थान तथा अतीतगुणस्थान भी है, सब्बी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी है, दशों प्राण, सयोगिकेवलीके संभवित चार प्राण और दो प्राण, अयोगिकेवलीके संभवित एक प्राण और सिद्ध जीवोंकी अपेक्षासे अतीतप्राणस्थान भी है, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति तथा सिद्धगति भी है, पंचेन्द्रियजाति तथा अनिन्द्रियत्वस्थान भी है, त्रसकाय तथा अकायत्वस्थान भी है, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग औदारिककाय-योग, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग ये ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है, अपगतवेद, अकषाय, पांचों सम्यग्ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम तथा संयम, संयमासंयम और असंयम इन तीनोंसे रहित स्थान भी है, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याणं, भावसे शुक्कलेख्या तथा अलेख्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोसे रहित भी स्थान है, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संक्षिक तथा

१ आ प्रतौ “ एग १०-४-२-१ ” इति पाठ ।

नं. ३५१

अकषायी जीवोंके आलाप.

गु	जी.	प	प्रा	सं.	ग.	इ	का	यो.	वे	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	सन्नि.	आ.	उ.
४	२	६प.	१०,४	०	१	१	१	११	०	०	०	१	४	६.६	१	२	१	२	२
अत	स.प	६अ.	२,१	अती	म	प	त्र.	म ४	अपु	मति	यथा	अनु	मा १	म. १	औ	स.	आहा	साका.	
अती	स.अ	अती	अती	प्राण	क्षीणस.	अति	अति	व ४	अपु	श्रुत	अव	अनु	शुद्ध	अले	म. १	औ	स.	आना.	
गु.	अती	जीव	जीव	जीव	जीव	जीव	जीव	कर्म १	अयो.	अव	केव							यु. उ	

गु	जी	प	ग्रा.	स	ह	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्ति	आ	उ
२	७	६अ	७	४	४	५	६	३	४	२	१	२	६ २	२	२	२	२	२
मि.	अप	५,,	७				औ मि			कुम.	अस	चष्टु	का	म	मि	स	आहा	साका
मा		४,,	६				वे मि			कुश्रु		अच	शु	अ	सा	अस	अना	अना
			४ ३				कर्म						मा. ६					

तेसिं चैव अपञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपञ्जत्तीओ पंच अपञ्जत्तीओ चत्तारि अपञ्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा^{३०} ।

उन्हीं मति-श्रुत-अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन , चारों संज्ञायें, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग; तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्ष्यायें, भावसे छहों लेक्ष्यायें, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संश्लिक, असंश्लिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मति-श्रुत अज्ञानी मिथ्यावादि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

पु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	७	६अ	७	४	४	५	६	३	३	४	२	१	२	२	२	१	२	२	२
मि	अप	५,, ४,,	७ ६ ५ ४३					ओ मि नै सि. कार्म.			कुम कुश्रु	अस	चक्षु अच	का शु मा द	म अ	मि	स. अस.	आहा अना	साका जना

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचि दियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३०} ।

विभंगणाणाणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वानाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,

औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति और कुश्रुत ये दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याप, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं मति-श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां,

प्राण, चारों सन्नापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

विभंगज्ञानी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके दो गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों सन्नापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति,

नं. ३६० मति श्रुत-अज्ञानी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६अ	७	४	३	२	१	३	३	४	१	१	२	२	१	१	१	२	२
मा	लं				ति	पचे	प्र	औ मि			कुम.	अस	चछु	का	म.	सासा	स	आहा	माका.
	म				म.			वे मि			कुश्रु		अच	शु				अना	अना.
					दे			कर्म						मा ६					

गु	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे.	क	क्षा	संय	द.	ले.	भ	स	साहि	आ	उ
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	१	१	२	द्र द	१	१	१	१	२
मासा.	म प				प	त्र		म ४ व ४ औ १ वे १			विम.	अस	चष्टु अच.	मा द	म	सा.	स	आहा	स का. अना

अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६५} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, दो णाण, सत्त संजम, तिण्णि दंसण, दन्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{१६५} ।

पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—
अविरत गृष्टि गुणस्थानसे क्षीणकषाय तकके नौ गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, सातों , आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३६४

मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	ह	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	२	६ प	१०	४	४	१	१	१५	३	४	२	७	३	६	१	३	१	२	२
अवि.	स प	६ अ	७	क्षीणस.		प	त्र		अपरा	अकषा	मति.		के द	विना	म	औप	स	आहा	साका.
से	स.अ										श्रुत					क्षा	अना.		अना.
क्षीण.																क्षायो			

नं. ३६५

मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	ह	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	११ म ४	३	४	२	७	३	६	१	३	१	१	२
अवि	स.प			क्षीणस		पंच	नस	व ४	अपरा	अकषा	मति.		के.द.	विना	म	औप	स	आहा	साका.
से								औ. १			श्रुत					क्षा			अना.
क्षी								आ. १								क्षायो			

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणद्वानाण, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, तिण्णि , तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा ११५।

आभिनिबोहिय-सुदणाण-असंजदसम्माइत्तीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुण णं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी जीवोंके अपर्याप्त संबन्धी आलाप कहने पर— अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीव स, छहों अपर्याप्तियां, , चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र, आहारकमिश्र और कर्मणकाययोग ये चार योग, त्रिंवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, अ , सामायिक और छेदोपस्थ ये तीन , आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, से छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो स, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशो , सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारक विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं,

नं. ३६६

मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म.	स	संज्ञि	आ	उ
२	१	६	७	४	४	१	१	४	२	४	२	३	३	द्र २	१	३	१	२	२
अवि.	४	अ			प.	त्रस	औ मि	पु	मति	अस	के.द	का.	शु	मा ६	म	औप	स	आहा	साका.
म	४						वै. मि	न	श्रुत	सामा	विना					क्षा	अना	अना	
							आ. मि.	कर्म								क्षायो.			

आभिणिबोहिय-मुदणाण-असंजदसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्ताओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

आभिनिवोधिक और श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सा आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों , सात प्राण, चारों संज्ञापे, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, प्रसकाय, आहारकादिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं,

मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके अपर्याप्त आलाप

यु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म.	स	सहि	आ	उ
२	१	६	७	४	४	१	१	४	२	४	२	३	३	२	१	३	१	२	२
अवि	हं	अ			प	अस	औ मि	दे. मि	पु न	मति	अस	के.द	द्र २	का.	म	औप	स	आहा	साका
म	सं						आ. मि	कार्म		श्रुत	सामा	विना	शु	मा ६		क्षा	अना	अना	अना

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१५} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो , असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावोहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६} ।

भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक; साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप कहते पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीव, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीनों सम्यक्, संज्ञिक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं ३६७

मति-श्रुत जीवोंके असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सा आलाप.

शु	जी.	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म	स	संज्ञि	आ.	उ.
१	२	३प.	१०	४	४	१	१	१३	३	४	२	१	३	३	१	३	१	२	२
के	स	६अ	७					आ. वि.			मति.	अस	के.द.	मा	६	औप	आहा	साका.	
ले	स	अ						विना.			श्रुत		विना		म	क्षा.	अना.	अना.	
																क्षायो.			

नं ३६८

मति-श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु	जी.	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म	स	संज्ञि	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	२	१	३	३	१	३	१	१	२
के	सं.प.							म ४			मति	अस.	के.द.	मा. ६	म	औप	स.	आहा	साका.
								व. ४			श्रुत.		विना			क्षा.		अना.	
								वै. १								क्षायो.			

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, दो णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३९९} ।

संजदासंजदप्पहुडिं जाव खीणकसाओ त्ति ताव मूलोघ-भंगो । णवरि आभिणि-बोहिय-सुदणाणाणि वत्तव्वाणि । एवमोहिणाणं पि वत्तव्वं । णवरि ओहिणाण एकं चेव भाणिदव्व । णाण-दंसणमग्गणाआ जेण खओवसममस्सिरुण द्विआओ तेण मदि-सुदणाणोसु गिरुद्वेसु दोहि तीहि चउहि वा ओहि-मणपज्जवणाणोसु गिरुद्वेसु तीहि

उन्हीं आभिनिबोधिक और श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग. पुरुषवेद और नपुसकवेद ये दो वेद, चारों कपाय, मति और श्रुत ये दो ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेझ्यापं, भावसे छहों लेझ्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

संयतासंयत गुणस्थानसे लेकर क्षीणकपाय गुणस्थान तकके मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके आलाप मूल ओघालापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि ज्ञान आलाप कहते समय आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान ही कहना चाहिए । इसीप्रकार अवधिज्ञानके आलाप जानना चाहिए । विशेष बात यह है कि यहां पर पूर्वोक्त दो ज्ञानोंके स्थानमें एक अवधिज्ञान ही कहना चाहिए ।

शंका—जब कि मतिज्ञानादि क्षायोपशमिक ज्ञानमार्गणा और चक्षुदर्शनादि क्षायोप-शमिक दर्शनमार्गणापं अपने अपने आवरणीय कर्मोंके क्षयोपशमके आश्रयसे स्थित हैं, तब मति-ज्ञान और श्रुतज्ञान-निरुद्ध आलापोंके कहने पर दो, तीन अथवा चार ज्ञान, तथा अवधिज्ञान

नं ३६९

मति श्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे.	क	ज्ञा	मय	द	ले	म	स.	सक्ति	आ	उ.
१	१	६अ	७	४	४	१	१	३	७	४	२	१	३	३	१	३	१	२	२
मि	म अ					प	त्र	औ मि	पु.		मति	अम	के द	द्र ७	म	औप	स	आहा.	साका.
कि								व मि.	न		श्रुत.		निना	शु		क्षा.	अना	अना	अना
								कर्म.					सा.६	सा.६		क्षायो			

चउहि वा णाणेहि होदव्वमिदि सच्चमेदं, किंतु इयरेसु संतेसु वि ण विवक्खा कया, तेण विवक्खिय-णाण वदिरित्त-णाणाणमवणयणं कयं ।

मणपज्जवणाणीणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिंदिय-जादी, तसकाओ, आहारदुगेण विणा णव जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, मणपज्जवणाणं, परिहारसंजमेण विणा चत्तारि संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, वेदगसम्मत्त-पच्चायद-उवसमतम्मत्तसम्माइट्ठिस्सं पढमसमए वि मणपज्जवणाणुवलंभादो । मिच्छत्त-

और मनःपर्ययज्ञान-निरुद्ध आलापोंके कहने पर तीन अथवा चार ज्ञान होना चाहिए ?

विशेषार्थ— शंकाकारके कहने का यह भाव है कि जब मतिज्ञान आदि चार ज्ञान क्षायोपशमिक होनेके कारण मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञानके साथ अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान हो सकते हैं, तब विवक्षित किसी भी ज्ञानमार्गणके आलाप कहते समय अपने सिवाय शेष ज्ञानोंको भी कहना चाहिए । अर्थात् छद्मस्थ जीवोंके कमसे कम मतिज्ञान और श्रुतज्ञान ये दो ज्ञान तो होते ही हैं, तथा इनके साथ अवधिज्ञान, अथवा मनःपर्ययज्ञान अथवा दोनों ही ज्ञान हो सकते हैं, इसलिये मति-श्रुतज्ञानी जीवोंके आलाप कहते समय मति और श्रुत ये दो अथवा मति, श्रुत और अवधि ये तीन अथवा, मति, श्रुत और मनःपर्यय ये तीन अथवा, मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ये चार ज्ञान कहना चाहिए । इसीप्रकार अवधि-ज्ञानी और मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके आलाप कहते समय—क्रमशः मति, श्रुत और अवधि ये तीन तथा मति, श्रुत और मनःपर्यय ये तीन ज्ञान अथवा मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ये चार ज्ञान कहना चाहिए ।

समाधान— आपका यह कहना सत्य है, किन्तु विवक्षित ज्ञानके साथ इतर ज्ञानोंके होने पर भी उनकी विवक्षा नहीं कि गई है, इसलिये विवक्षित ज्ञानसे अतिरिक्त अन्य ज्ञानोंको नहीं गिनाया गया है ।

मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके आलाप कहने पर—प्रमत्तसंयतसे लेकर क्षीणकषाय तकके सात गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तिर्या, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी हैं, मनुष्यगति, पवेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिथ्रककाययोगके बिना नौ योग, पुरुषवेद, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी हैं, मनःपर्ययज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयमके बिना चार संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेक्ष्याएं, भव्यसिद्धिक, तीन सम्यक्त्व होते हैं। मनःपर्ययज्ञानीके औपशमिकसम्यक्त्व कैसे होता है, इसका समाधान करते हुए आचार्य लिखते हैं कि जो

१ उवसमचरियाहिपुहो वेदगसम्मो अण विजोयिता । अतोपुहुत्तकाल अथापमत्तो पमत्तो य ॥ तपो तिरयणविहिणा दसणमोह सम खु उवसमदि । ऊ. क्ष. २०३, २०४.

पच्छायद-उवसमसम्माइडिम्मि मणपज्जवणाणं ण उवलब्भदे; मिच्छत्तपच्छायदुक्कस्सुव-
समसम्मतकालादो वि गहियसंजमपढमसमयादो सव्वजहणमणपज्जवणाणुप्पायण-
संजमकालस्स बहुत्तुवलंभादो । सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-

वेदकसम्यक्त्वसे पीछे द्वितीयोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है उस उपशमसम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें भी मनःपर्ययज्ञान पाया जाता है । किन्तु मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उ सम्यग्दृष्टि जीवमें मनःपर्ययज्ञान नहीं पाया जाता है, क्योंकि, मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दृष्टिके उत्कृष्ट उपशमसम्यक्त्वके कालसे भी ग्रहण किये गये संयमके प्रथम समयसे कर सर्व जघन्य मनःपर्ययज्ञानको उत्पन्न करनेवाला संयमकाल बहुत बड़ा है ।

विशेषार्थ—ऊपर मनःपर्ययज्ञानीके तीनों सम्यक्त्व बतलाये गये हैं । क्षायिक और क्षायोपशमिकसम्यक्त्वके साथ तो मनःपर्ययज्ञान इसलिये होता है कि मनःपर्ययज्ञानकी उत्पत्तिमें जो विशेष संयम हेतु पड़ता है वह विशेष संयम इन दोनों सम्यक्त्वोंमें हो सकता है । अब रही औपशमिकसम्यग्दर्शनकी बात, सो उसके प्रथमोपशमसम्यक्त्व और द्वितीयोपशमसम्यक्त्व ऐसे दो भेद हैं । उनमें प्रथमोपशमसम्यक्त्वको अनादि अथवा सादि मिथ्या-दृष्टि ही उत्पन्न करता है और उसके रहनेका जघन्य अथवा उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त ही है । यह अन्तर्मुहूर्तकाल, संयमको ग्रहण करनेके पश्चात् मनःपर्ययज्ञानको उत्पन्न करनेके योग्य संयममें विशेषता लानेके लिये जितना काल लगता है उससे छोटा है । इसलिये प्रथमोपशमसम्यक्त्वके कालमें मनःपर्ययज्ञानकी उत्पत्ति न हो सकनेके कारण मनःपर्ययज्ञानके साथ उसके होनेका निषेध किया गया है । द्वितीयोपशमसम्यक्त्व उपशमश्रेणीके अभिमुख विशेष संयमीके ही होता है, इसलिये यहाँपर अलगसे मनःपर्ययज्ञानके योग्य विशेष संयमको उत्पन्न करनेकी कोई आवश्यकता नहीं रह जाती है और यही कारण है कि द्वितीयोपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें भी मनःपर्ययज्ञानकी प्राप्ति हो सकती है । अथवा जिस संयमीने पहले वेदकसम्यक्त्वके कालमें ही मनःपर्ययज्ञानको ग्रहण कर लिया है उसके भी उपशमश्रेणीके अभिमुख होनेपर द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकी प्राप्ति हो जाती है, इसलिये भी द्वितीयोपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें मनःपर्ययज्ञान पाया जा सकता है । ऊपर टीकामें 'पढमसमय वि' में जो अपि शब्द आया है उससे यह ध्वनित होता है कि द्वितीयोपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करनेके द्वितीयादिक समयमें वर्द्धमान चारित्र रहता है, इसलिये वहाँ तो मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न हो ही सकता है, किन्तु प्रथम समयमें भी इतनी विशेषता पाई जाती है कि वह मनःपर्ययज्ञानकी उत्पत्तिमें कारण हो सकता है । इस कथनका तात्पर्य यह हुआ कि प्रथमोपशमसम्यक्त्वके अनन्तर या उसके साथ संयमकी उत्पत्ति होती है, इसलिये उसमें तो मनःपर्ययज्ञान नहीं उत्पन्न हो सकता है । परंतु द्वितीयोपशमसम्यक्त्व संयमीके ही होता है, इसलिये उसमें मनःपर्ययज्ञानके उत्पन्न होनेमें कोई विरोध नहीं है । इसप्रकार मनःपर्ययज्ञानके साथ तीनों सम्यक्त्व तो होते हैं, किन्तु औपश-

वज्रुत्ता वा^{३००} ।

मणपञ्जवर्णण-पमत्तसंजदपहुडि जाव खीणकसाओ ति ताव मूलोव-भंगो ।
णवरि मणपञ्जवर्णणं एक्कं चेव वत्तव्वं । परिहारसुद्धिसंजमो वि णत्थि ति भाणिदव्वं ।

केवलणाणां भण्णमाणे अत्थि वे गुणट्ठाणाणि अदीदगुणट्ठाणं पि अत्थि, दो जीवसमासा एगो वा अदीदजीवसमासो वि अत्थि, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ अदीदपञ्जत्तीओ वि अत्थि, चत्तारि पाण दो पाण एव पाण अदीदपाणा वि अत्थि, खीणसण्णाओ, मणुसगदी सिद्धगदी वि अत्थि, पंचिदियजादी अणिदियं पि अत्थि, तसकाओ अकाओ वि अत्थि, सत्त जोग अजोगो वि अत्थि, अवगदवेद, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खादसुद्धिसंजमो णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो वि

मिक्ससम्यक्त्वमें द्वितीयोपशमका ही ग्रहण करना चाहिए, प्रथमोपशमका नहीं। सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तक प्रत्येक गुणस्थानके आलाप मूल ओचलापके समान हैं। विशेष बात यह है कि ज्ञान आलाप कहते समय एक मनःपर्ययज्ञान ही कहना चाहिए। तथा संयम आलाप कहते समय परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होता है, ऐसा कहना चाहिए।

केवलज्ञानी जीवोंके आलाप कहने पर—सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये दो गुणस्थान तथा अतीतगुणस् भी है, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो अथवा एक पर्याप्त जीवसमास है तथा अतीतजीवसमासस्थान भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी होता है, वचनबल, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास ये चार प्राण, अथवा समुद्रातगत अपर्याप्तकालमें आयु और कायबल ये दो प्राण और अयोगिकेवलीके एक आयु प्राण तथा अतीतप्राणस्थान भी है, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति तथा सिद्धगति भी है, पंचेन्द्रियजाति तथा अतीन्द्रियस्थान भी है, त्रसकाय तथा अकषायस्थान भी है, सत्य और अनुभय ये दो मनोयोग, ये ही दोनों वचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मण-काययोग ये सात योग तथा अयोगस्थान भी है, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यात-

नं. ३७०

मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके आलाप.

गु.	जी	प.	भा	स	ग	इ	का.	यो.	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स	संज्ञे	जा.	उ.
७	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	१	४	३	३	६	१	३	१	२
प्रम	स							म.	४	५		सामा	के	मा	३	औप.	स.	जाहा	साका.
से	प.			क्षीण	म	पु	मत्त.	व	४	अ	मन	छेदो	द	शुभ	म.	क्षा			जना
संज्ञे								औ	१			सूक्ष्म	विना.		क्षायो				
												यथा.							

अत्थि, केवलदंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि, भव-
सिद्धिया नेव भवसिद्धिया नेव अभवसिद्धिया वि अत्थि, खइयसम्मत्तं, नेव सण्णिणो
नेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{३१} ।

सजोगि-अजोगि-सिद्धाणमालावा मूलोघो व्व वत्तव्वा ।

एव णाणमग्गणा समत्ता ।

संजमाणुवादेण संजदाणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस सत्त चत्तारि दो एक्क पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग अजोगो वि

विहारशुद्धिसंयम तथा संयम, असंयम और संग्रमासंयम इन तीनोंसे रहित भी स्थान है, केवल-दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे शुक्लेश्या तथा अलेश्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों विकल्पोसे रहित भी स्थान है, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक और असंज्ञिकसे रहित स्थान, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोग और अनाकारो-पयोगसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

केवलज्ञानकी अपेक्षा भी स्योगिकेवली अयोगिकेवली और सिद्ध जीवोके आलाप मूल ओघालापके समान कहना चाहिए।

इसप्रकार ज्ञानमार्गणा समाप्त हुई ।

संयममार्गणके अनुवादसे संयतोंके आलाप कहने पर—प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चार प्राण, दो प्राण, एक प्राण, चारों सङ्गापं तथा, क्षीणसङ्गास्थान भी है, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिक-काययोग और वैक्रियिकमिश्रकाययोग इन दो योगोंके बिना शेष तेरह योग तथा अयोग-

नं. ३७१

केवलक्षानी जीवोंके आलाप

[illegible]

अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, पंच संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारिहं जुगवदुवजुत्ता वा होंति^{३२} ।

प्रमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि , तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि

स्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा पायस् भी है, मति यदि पांचों सुज्ञान, सामायिकादि पांचों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छेदार्थ, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल छेदार्थ तथा अलेक्ष्यस्थान भी है, भव्यसिद्धिक, औपशमिकादि तीन क्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे रं भी स्थान है, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

संयममार्गणाकी अपेक्षा प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप करने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसंयत, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों , सात प्राण, चारों संज्ञाप, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय , त्रय, त्रैमनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमि त्रययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों छेदार्थ, तेज, और छेदार्थ, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन क्त्व, संज्ञिक, अरक,

नं. ३७२

संयमी जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सप.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
प्रम.	स.प.	इ.अ.	१०	४	१	१	१	१३	३	४	५	५	४	६	१	३	१	२	२
से	स.अ.	६	७	४	म.	१	१	वै दि.	अप.	अप.	मति	सामा.	मा.	३	म.	औप	स	आहा.	साका.
अयो.			४	२				विना.	अप.	अप.	शुत	छेदो	शुम	अले.	स	क्षा	अनु.	अना.	साका.
			२	१				अयो			अव.	परि.	अले.		क्षायो.			अना.	यु. उ.
											मनः	सूक्ष्म.							
											केव	यथा.							

अत्थि, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, पंच णाण, पंच संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा होंति^{३३} ।

पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जचीओ छ अपज्जचीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि , तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुकलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि

स्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषाय भी है, मति यदि पांचों सुज्ञान, सामायिकादि पांचों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे लेइयायं, भावसे तेज, पद्म और लेइयायं तथा अलेइयास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, औपशमिकादि तीन वत्त्व, संज्ञिक तथा संज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों विकल्पोंसे २ भी स्थान है, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

संयममार्गणाकी अपेक्षा प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप करने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवस , छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाप, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रय, त्रै मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमि त्रययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, लेइयेपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयायं, से तेज, और लेइयायं, भव्यसिद्धिक, औ एक आदि तीन , संज्ञिक, रक,

नं. ३७२

संयमी जीवोंके सामान्य आलाप.

ग्र.	जी.	प.	मा.	स.	ग.	इ.	का.	यो	वे	क.	ज्ञा	सय	द.	ले	म.	स.	संज्ञि	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	१	१	१	१३	३	४	५	५	४	३	१	३	१	२	२
प्रम.	स.प.	६अ.	७	४	म.	६	१३	वे द्वि.	अपुन.	अकषा.	मति	सामा.	४	मा. ३	म.	औप	स	आहा.	साको.
से	स अ.		४	क्षोप.		६	१३	विना.	अपुन.	अकषा.	मति	लेदो		क्षम		क्षा	अना.	अना.	यु. व.
अयो.			२	१				अयो		मनः.	मति	परि		अले.		क्षायो.	अनु.	अना.	यु. व.

सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३७३} ।

अप्पमत्तं दाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पञ्चत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ आहारसण्णा णत्थि, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, गो, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{३७५} ।

अपुव्वयरणप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि च्ति ताव मूलोघ-भंगो ।

स ेपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

यत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, भय, मैथुन और परिग्रह ये तीन संज्ञाएं होती हैं किन्तु यहां पर आहारसंज्ञा नहीं है । मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, १ कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिकादि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाए, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेइयाए, भव्यसिद्धिक, औपशमिकादि तीन क्त्व, सक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थानतक संयमी जी आलाप मूल ओघालापोंके स होते हैं ।

नं. ३७३

की अपेक्षा प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप

यु	जी	प	प्रा.	स	ग.	इ	का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स	सन्नि	आ	उ
१	२	६प.	१०	४	१	१	१	११	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
प्र	स	प.	६ज.	७	म	प	प	म. ४			मति	सामा	के. द	मा. ३	म	औप	स	आहा	साका.
	स.	अ.						व. ४			भुत.	छेदो.	विना	शुभ.		क्षा			अना.
								औ. १			अव	परि				सायो			
								आहा १			मन								

नं. ३७४

संयमकी अपेक्षा अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप

यु.	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स	सन्नि	आ	उ
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
हं.	प	प	आहा	म	हं.	हं.	म	४			मति.	सामा	के. द	मा. ३	म	औप.	स	आहा	साका
			विना				व. ४				भुत.	छेदो.	विना	शुभ.		क्षा			अना
							औ. १				अव	परि				सायो.			
											मन								

सामाज्यसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, सामाज्यसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, मावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{३०} ।

प्रमत्तसंजदप्पहुडि जाव अणियट्ठि ति ताव मूलोघ-भंगो । एवं छेदोवट्ठावण-संजमस्स वि वत्तव्वं ।

परिहारसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ

सामायिकशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्व-करण और अनिवृत्तिकरण ये चार गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापे, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग आदि काययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी हैं, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिकशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापे, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापे, भव्यसिद्धिक, औपश्रि आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानतक प्रत्येक गुणस्थान सामायिकशुद्धिसंयतोंके आलाप मूल ओघालापके समान हैं । विशेष बात यह है कि संयम आलाप कहते समय एक सामायिकशुद्धिसंयम ही कहना चाहिए । इसीप्रकार छेदोपस्थापना-संयमके भी आलाप जानना चाहिए, किन्तु संयम आलाप कहते समय एक छेदोपस्थापना-संयम ही कहना चाहिए ।

परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत ये

गं. ३७५

सामायिकशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स.	ग.	ह.	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४ प्र.	२	६	१०	४	१	१	१	१२म.४	३	४	४ मति.	१	३	६	१	३	१	१	२
अप्र.	स.प	प	७		म	प		व. ४			श्रुत	सामा.	के द	मा	३म	औप	सं.	आहा.	
अपू	स अ	६						औ १			अव	विना		शुभ		क्षा.			
अनि.	अ							आ २			मन.					क्षायो		अना.	

पञ्जसीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग आहाराहारमिस्सा णत्थि, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण मणपञ्जवणाण णत्थि, कारणं आहारदुगं मणपञ्जवणाणं परिहारसुद्धिसंजमो एदे' जुगवदेव ण उप्पजंति । परिहारसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{३७६} ।

पमत्त-अप्पमत्त-परिहारसुद्धिसंजदाणं पुध पुध मण्णमाणे ओघ-भंगो । णवरि आहारदुग-मणपञ्जवणाण-उवसमसम्मत्त-सामाइय-छेदोवद्वावणसुद्धिसंजमा च णत्थि । परिहारसुद्धिसंजमो एको चेव संजमद्वाणे । वेदद्वाणे पुरिसवेदो चेव वत्तव्वो ।

दो गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमाप्त, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाय-योग ये नौ योग होते हैं, किन्तु यहांपर आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग नहीं होते हैं । पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान होते हैं, किन्तु यहांपर मनःपर्ययज्ञान नहीं है, क्योंकि, आहारकद्विक, मनःपर्ययज्ञान और परिहारविशुद्धिसंयम ये तीनों युगपत् नहीं उत्पन्न होते हैं । ज्ञान आलापके आगे परिहारविशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं; भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्य-क्त्वके बिना क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, सक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रमत्तसंयत-परिहारविशुद्धिसंयत और अप्रमत्तसंयत-परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप पृथक् पृथक् कहने पर उनके आलाप ओघालापके समान हैं । विशेष बात यह है कि यहां पर आहारककाययोगद्विक, मनःपर्ययज्ञान, औपशमिकसम्यक्त्व, सामायिकशुद्धिसंयम और छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयम इतने आलाप नहीं होते हैं । संयमस्थान पर एक परिहार-विशुद्धिसंयम ही होता है । तथा वेदस्थानपर एक पुरुषवेद ही कहना चाहिए ।

१ प्रतिपु 'एदाओ' इति पाठ ।

नं. ३७६

परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप

गु	जी.	प	ग्रा	स.	ग	इ	का	यो	वे.	क	शा	सय	द	ले.	म	स	सक्षि	जा	उ.
२	१	६	१०	४	१	१	१	९	१	४	३	१	३	द्र ६	१	२	१	१	२
प्र	स.प.			म	प	नस	म	४	पु.	मति	परि	के	द	मा	३म	क्षा	स	आहा	साका
ज.							व	४		युत	अव	विना.	शुभ		लायो			अना	

सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे मूलोघ-भंगो ।

जहाक्खादसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस चत्तारि दो एक पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, अवगदवेदो, अकसाओ, पंच पाण, जहाक्खाद-सुद्धिसंजमो, चत्तारि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{१७७} ।

उवसंतकसायप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि चि मूलोघ-भंगो । संजदासंजदाण-

सूक्ष्मसांपराधिकशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर उनके आलाप मूल ओ पके समान ही जानना चाहिए ।

यथाख्यातविहारशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—उपशान्तकषाय, क्षीणक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये चार गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्ति और अपर्याप्ति ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां दशों प्राण, चार प्राण, दो और एक प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग, औदारिकक्राययोग, औदारिकमिश्रक्राययोग और कर्मणक्राययोग ये ग्यारह योग, अपगतवेद, अकषाय, मतिज्ञानादि पांचों सुज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे शुक्ललेख्या तथा अलेख्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, वेदकस-म्यक्त्वके विना शेष दो सम्यक्त्व, सन्निक तथा संन्निक और असंन्निक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं ।

उपशान्तकषाय गुणस्थानसे अयोगिकेवली गुणस्थानतकके यथाख्यातविहार-

नं. ३७७

यथाख्यात शुद्धि जीवोंके आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग.	ई	का	यो	वे	क	क्षा	सय	द.	ले	म	स.	संज्ञि	आ.	उ.
४	२	दप	१०	०	१	१	१	११	०	०	५ मति	१	४	द्र. ६	१	२	१	२	२
उ	स प.	इअ	४	४	स.	प.	त्र.	म ४	०	०	श्रत	यथा.		मा १	१	औप	स.	आहा	साका
क्षी.	अप			क्षीणसं				व ४	अपा	अकषा	६ व.			शुक्ल	भ	क्षा.	अव.	अना.	साका
स.				१				औ २	अपा	अकषा	मन			अले				अना.	यु उ.
ज								का १			केव.								

सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे मूलोघ-भंगो ।

जहाक्खादसुद्धिसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस चत्तारि दो एक पाण, खीणसण्णा, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, अवगदवेदो, अकसाओ, पंच पाण, जहाक्खाद-सुद्धिसंजमो, चत्तारि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भवेण सुक्कलेस्सा अलेस्सा वि अत्थि; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{३७७} ।

उवसंतकसायप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति मूलोघ-भंगो । संजदासंजदाण-

सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसंयत जीवोंके आलाप कहने पर उनके आलाप मूल ओघाला-पके समान ही जानना चाहिए ।

यथाख्यातविहारशुद्धिसंयत जी^{३७७} आलाप कहने पर—उपशान्तकषाय, क्षीणकषाय, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां दशों प्राण, चार प्राण, दो प्राण और एक प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-योग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये ग्यारह योग, अपगतवेद, अकषाय, मतिज्ञानादि पांचों सुज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भ^{३७७} शुक्कलेइया तथा अलेइयास्थान भी है; भव्यसिद्धिक, वेदकस-म्यक्त्वके विना शेष दो सम्यक्त्व, संक्षिक तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों विकल्पोंसे रहित स्थान, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी, अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे गुणपत् उपयुक्त होते हैं ।

उपशान्तकषाय गुणस्थानसे अयोगिकेवली गुणस्थानतकके यथाख्यातविहार-

नं. ३७७

यथाख्यात शुद्धि जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग.	ई	का	यो	मै	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म	स.	सक्ति.	जा.	उ.
४	२	६५	१०	०	१	१	१	११	०	०	५ मति	१	४	द्र. ६	१	२	१	२	२
उ	स प.	६अ	४	०	म.	प.	व.	म ४	अप	अप	अत.	यथा.	५	मा १	म	औप	१	आहा.	साका
क्षी	अप		२	२	संज्ञा			व ४	अप	अप	६ व			शुक्क		क्षा	अनु.	अना.	साका
स.			१	१	संज्ञा			औ २	अप	अप	मन			अले				यु. ड.	अना.
अ								का १			केव.								

शु	जी	प	प्रा	स.	ग.	द.	का.	यो.	वे.	क.	भा.	सय.	द	ले.	म.	स.	संज्ञि	वा	उ.
४ मि. सा. स अ	७ पर्या.	६ ५ ४	२० १ ८ ७ ६ ४	४	४	५	६	२० म ४ व ४ औ. १ बै. १	३	४	६ ज्ञान. ३ अक्षा ३	१ अस	३ के.द विना.	६ मा ६ म. अ.	२	६	२ स. अस.	१ आहा.	२ साका. अना.

[illegible]

वज्रुत्ता वा^{१८} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, तिण्णि जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण मत्त पाण छ पाण, चत्तारि मण्णाओ, चत्तारि गदीओ, चउरिंदियजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, चक्खुदंमण, दब्बेण काउ-मुक्कलस्साओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच मम्मत्तं, सण्णिणो अमण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा^{१९} ।

असंक्षिप्त, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं चक्षुदर्शनी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासा-दनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसयत ये चार गुणस्थान, चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त, असंक्षीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त और सक्षीपंचेन्द्रिय-अपर्याप्त ये तीन जीवसमासः छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चारों संप्राप्य, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातियां, त्रसकाय, अपर्याप्तकालभावी चार योग, तीनों वेद, तीं कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन सयम, चक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेद्याप, भावसे छहों लेद्याप, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके बिना पांच सम्यक्त्व, संक्षिप्त, असंक्षिप्त, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३८२

चक्षुदर्शनी जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु.	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क.	हा.	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१२	३	६	१०	४	४	२	१	१२ म ४	३	४	७	७	१	६	२	६	२	१	२
मि.	च. प.	५	९	८	च.	च.	व	व ४	अ	क.	केव.		चक्षु.	मा	म		स	आहा	साका
से	अस. प.				प.	प.	वै	औ. १	अ	क.	बिना				अ		अस	अना	अना.
क्षी	स. प							आ १											

नं. ३८३

चक्षुदर्शनी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क.	हा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
४	३	६	७	४	४	२	१	४	३	४	५	कुम.	३	१	२	२	५	२	२
मि	च. अ.	५	७		च	च	औ. मि	वै मि.			कुश्रु.	अस	चक्षु	का.	म.	सम्य.	स	आहा	साका.
सा	अस. अ.		६		प	प	वै मि.	आ. मि			मति.	सामा		शु	अ	बिना.	अस.	अना	अना.
अ	स. अ							कर्म			श्रुत	छेदो		मा	६				
प्र											अव								

तेसिं चव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, तिण्णि जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गर्हओ, चउरिंदियजादि-आदी वे जादीओ, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि

उन्हीं चक्षुर्दर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चतुरिन्द्रिय-पर्याप्त, असंज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त और संज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त ये तीन जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, चारों सहाय, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियजाति आदि दै जातियां, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैकृतिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद,

चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जी ~ सामान्य आलाप.

शु	जी	प	प्र	स	ग	इ	का	यो	वे	क	क्षा.	सय	द	ले	म.	स.	सहि.	आ.	ख
१ मि	इ च प. व अ अस. प अस अ. स. प. स अ.	इ प इ अ. प प ज.	१०, ७ ९, ७ ८, ६	४	४	२	१ च त्र प	१३ आ द्वि विना.	३	४	३ अज्ञा.	१ अस	१ बल्लू.	द्र. इ भा. इ	२ म अ	१ मि.	२ स अस.	२ आहा. अना	२ साका. अना.

कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, चक्खुदंसण, दच्च-भावेहि छ लेस्साओ, भवमिद्विया
अभवसिद्विया, मिच्छत्तं, मण्णिणो अमण्णिणो. आहाग्गिओ, मागारुवजुत्ता हंति
अणागारुवजुत्ता वा ।

“तेसिं चेव अपज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयाणं, तिण्णि जीवग्गमामा, छ
अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण, चत्तारि मण्णाओ,
चत्तारि गइओ, चउरिंदियजादि-आदी ने जादीओ, तसक्काओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद.
चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, चक्खुदंसण, दच्चेण काउ-सुक्खलेस्साओ, भावेण
छ लेस्साओ; भवसिद्विया अभवसिद्विया, मिच्छत्तं, मण्णिणो अमण्णिणो, आहाग्गिओ

चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, चक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छोड़े लेख्याणं,
भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक. मिथ्यात्व, सत्तिक, अमत्तिक आहारक, सात्कारोपयोगी और
अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसवन्धी आलाप कहने पर—एक
मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त, असंजीपचेन्द्रिय-अपर्याप्त और सजीपचेन्द्रिय-
अपर्याप्त ये तीन जीवसमास, छहों अपर्याप्तिया, पात्र अपर्याप्तिया सात प्राण, सात प्राण, छह
प्राण, चारों संज्ञाप, चारों गतियां, चतुरिन्द्रियजाति आदि दो जातिया, त्रसकाय, औदारिक-
मिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणनाशयोग ये तीन योग तीनों वेद, चारों
कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, चक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याण, भावसे छहों

नं. ३८५

चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	३	६	१०	४	४	२	१	१०	३	४	३	१	१	६	२	१	२	१	२
मि	च. प	५	९			चतु	त्र	म	४		अज्ञा	अस	चक्षु	मा	६	म	मि	स	आहा
	अस.प		८			पचे		व	४							अ	अस		साका
	सं. प							औ	१										अना
								वै	१										

नं. ३८६

चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	३	६	७	४	४	२	१	३	३	४	२	१	१	६	२	१	२	२	२
मि	च. अ.	५	७			च	त्र.	औ	मि.		कुम	अस	चक्षु	का	म	मि	स	आहा	साका.
	अस अ		६			प		वै	मि.		कुशु			शु	अ		अस.	अना	अना.
	स. अ							कर्म.						भा	६				

छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, मागारुवजुत्ता हंति
अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि वारह गुणट्टाणाणि, मत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, एंडियजादि-आदी पंच जादीओ, पुटवीकायादी छ काय, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, सत्त णाण, सत्त संजम, अचक्खुदंसण, दव्व-भावेहिं ऋ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ मम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा” ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा,
छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण

आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं अचक्षुदर्शनी जीवोंके पर्याप्तकालसंवन्धी आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, सात पर्याप्तक जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चारों संज्ञायें तथा क्षीण-
धान भी है, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों , पर्याप्तकालभावी ग्यारह योग, तीनों वेद, तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय अकषायस् भी है, केवलज्ञानके बिना सात ज्ञान, सातों संयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यायें, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं अचक्षुदर्शनी जीवोंके अपर्याप्तकालसबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्याहृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरत दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, सात अपर्याप्त जी , छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, प्राण,

नं. ३८८

अचक्षुदर्शनी जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु	जी	प	मा.	स	ग	ह	का	यो.	वे	क	हा	सय	द	ले	मं	स.	सहि	आ.	उ.
१२ भि. से. क्षी.	७ पर्यो	६ ५ ४	३० ९ ८ ७ ६ ४	४ क्षणतः	४	५	६	११ म ४ व ४ औ. १ वै १ आ. १	३ अपंग.	४ लक्ष्मी.	७ केव. विना	७ अच	१ मा ६ म अ.	२ द्र क २ म ६ म अ.	६ स सं.	२ स असं.	१ आही	२ साका. जना	

पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-
आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय,
पंच णाण, तिण्णि संजम, अचक्खुदंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण छ लेस्साओ,
भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो,
सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

अचक्खुदंसण-मिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चोदस जीवसमासा,
छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ
चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त
पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ,
चत्तारि गदीओ, एइंदियजादि-आदी पंच जादीओ, पुढवीकायादी छ काय, तेरह जोग,
तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, अचक्खुदंसण, दब्ब-भावेहि छ

छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञाय, चारों ेयां, एकेन्द्रियजाति आदि
पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि छहों काय, अपर्याप्तकालभावी चार योग, तीनों वेद, ें
कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, साम े और छेदोप-
स्थापना ये तीन संयम, अचक्षुदर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे छहों लेख्यापं;
भ्रव्यसिद्धिक, अभ्रव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके बिना पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक;
आहारक, अनाह , साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अचक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-
स्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां,
अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दशों प्राण, , नौ ,
प्राण, आठ प्राण, छह प्राण. सात प्राण, पांच प्राण, छह , चार प्राण; चार , तीन
, चारों संज्ञायं, चारों गतियां, एकेन्द्रियजाति आदि पांचों जातियां, पृथिवीकाय आदि
छहों काय, आहारककाययोगद्विकके बिना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों ,

१ प्रतिपु ' चत्तारि गदीओ ' इति पाठो नास्ति ।

न. ३८९

अचक्षुदर्शनी जीवोंके अपर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स	संज्ञि	आ	व
४	७	६अ	७	४	४	५	५	४	३	४	५	कुम	३	१	द्र २	२	५	२	२
मि	अ	५अ	७					औ.मि			कुश्रु	अस	अच	का.	म	सं	सं	आहा	साका.
सा.		४अ	६					वे मि			मति	सामा		शु	अ.	सम्य	अस	अना	अना.
अवि			५					आ.मि			श्रुत	छेदो		मा ६					
प्रम			४ ३					कामे			अव								

ओहिदंसणीणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वानाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, सत्त संजम, ओहिदंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि णव गुणद्वानाणि, एगो जीवसमासो, छ पत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, सत्त संजम, ओहिदंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति

अवधिदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थान तकके नौ गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आदिके चार ज्ञान, सातों संयम, अवधिदर्शन, द्रव्य और से छहों लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी, और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं अवधिदर्शनी जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीण कषाय तकके नौ गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों तथा अकषायस्थान भी है, आदिके चार ज्ञान, सातों, अवधिदर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन क्त्व, ,

नं. ३९३

अवधिदर्शनी जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	२	६प.	१०	४	४	१	१	१५	३	४	४	७	१	द्र.६	१	३	१	२	२
अवि.	स प.	६अ	७			प.	त्र.				मति		अत्र	मा ६	भ	औप	स	आहा	साका
से.	स अ			क्षीण					अपग	अकषा	श्रुत					सायो		अना	अना.
क्षीण									अपग	अकषा	मन								

[illegible]

सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणद्वाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं मिच्छत्तं सासणसम्मत्तं वेदगसम्मत्तं च भवदि; छट्ठीदो पुढवीदो किण्हलेस्सा-सम्माइट्ठिणो मणुसेसु जे आगच्छंति तेसिं वेदगसम्मत्तेण सह किण्हलेस्सा लब्भदि त्ति । सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कृष्णलेख्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्याद्वाष्टि, सासादनसम्यग्वाष्टि और अविरतसम्यग्वाष्टि ये तीन गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय,

ति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे फापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे कृष्णलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, सासादनसम्य और वेदकसम्यक्त्व ये तीन सम्यक्त्व होते हैं । कृष्णलेख्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालमें वेदकसम्यक्त्व होनेका कारण यह है कि छठी पृथिवीसे जो कृष्णलेख्यावाले अधिर ग्वाष्टि जीव मनुष्योंमें आते हैं, उनके अपर्याप्तकालमें वेदकसम्यक्त्वके साथ कृष्णलेख्या पाई जाती है । सम्यक्त्व आलापके आगे संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ३९८

कृष्णलेख्यावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का	यो	ने	क	ज्ञा.	सय.	द	ले	म.	स	संज्ञि	आ.	स
३	७	इअ.	७	४	४	५	६	३	३	४	५	१	१	द्र २	२	३	२	१	२
मि.	७	५अ.	७					औ.मि			कुम.	अस.	के.द	का.	म.	मि	स	आहा.	साका
सासा		४अ.	६					वै मि.			कुश्रु		विना.	शु	अ.	सा.	अस	अना	अना.
अवि			५					कर्म			मति.			मा. १	क्षायो.				
			४								श्रुत.			कृष्ण.					
			३								अव.								

छ काय, दम जोग, तिणि वेद, चत्तारि कसाय, तिणि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छन्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुज्जुत्ता होंति अणागारुज्जुत्ता वा'°° ।

‘तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, सच्च जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सच्च पाण सच्च पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिणि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गइओ, पंच जादीओ, छ काय, तिणि जोग, तिणि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण

औदारिककाययोग और वैकृतिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अ, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहो लेख्याएं, भावसे कृष्णलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कृष्णलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त समास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तिया, चार अपर्याप्तियां, प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतिया, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैकृतिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम,

नं. ४००

कृष्णलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स	सक्ति	आ	उ
१	७	६	१०	४	१	५	६	१०	३	४	३	१	२	द्र ६	२	१	२	१	२
मि	पर्या.	५	९		न.			म ४			अज्ञा	अस	चक्षु.	भा १	म.	मि	स	आहा	साका
		४	८		ति			व. ४					अव	कृष्ण	अ		अस	अना	अना
			७		म			औ १											
			६ ४					वै १											

नं. ४०१

कृष्णलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स	सक्ति	आ	उ
१	७	६	७	४	४	५	६	३	३	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि	छ	५	७					औ मि			कुम.	अस	चक्षु	का.	म	मि	स	आहा	साका
		४	६					वै मि.			कुक्षु		अव	शु	अ		अस	अना	अना
			५					कर्म						सा. १					
			४ ३											कृष्ण					

-सुकलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छन्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

किण्हलेस्सा-सासणसम्मसङ्कीर्णं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, त ओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सासण-सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०९} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, [ओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो

आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे कृष्णलेश्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक; आहारक, अनाहारक, आरोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कृष्णलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अन्य आलाप कहने पर—
दनसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीव ।स, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों पंच, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगादिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे कृष्णलेश्या, भव्यसिद्धिक, सासादन कृत्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारे योगी और अनारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कृष्णलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक दन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों पंच, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगादिकके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक योग और वैकृतिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों

१ प्रतिष्ठ ' चत्तारि गदीओ ' इति पाठो नास्ति ।

नं. ४०२ कृष्णलेश्यावाले दनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६ प	१०	४	४	१	१	१३	३	४	३	१	२	६	१	१	१	२	३
सा	स प	६ अ	७			पं	त्र	आ दि			अज्ञा.	अस	चक्षु.	मा.१	म	सा.	सं	आज्ञा.	साका.
	स अ.							विना					अच.	कृष्ण.				अना.	अना.

दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एथो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिन्द्रिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^१ ।

तीनों अद्वान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याए, भावसे कृष्णलेख्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं कृष्णलेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात , चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अद्वान, अ^१, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे कृष्ण-लेख्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४०३ कृष्णलेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आ .

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	६	१	१	१	१	२
सा	सं. प				न	पचे	त्र	म. ४			अज्ञा	अस	चक्षु	मा १	म.	सा	स	आहा	साका
					म	ति		व ४					अच	कृष्ण				अना	अना.
								औ १											
								वै १											

नं. ४०४ कृष्णलेख्यावाले सासादन गृह्य जीवोंके अपर्याप्त आलाप

गु	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	७	४	३	१	१	३	३	४	२	१	२	२	१	१	१	२	२
सा.	स अ				ति.	प	त्र.	औ. मि.			कुम	अस	चक्षु	का	म	सासा.	स.	आहा	साका
					म.			वै मि.			कुश्रु		अच	शु				अना	अना.
					दे.			कर्म.						मा १					
														कृष्ण.					

किण्हलेस्सा-सम्मामिच्छाइट्ठीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-
समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ,
पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं
अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा;
भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-
वजुत्ता वा^० ।

किण्हलेस्सा-असंजदसम्मामिच्छाइट्ठीणं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा,
छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा
तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वेडव्वियमिस्सेण विणा वारह जोग, तिण्णि
वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण

कृष्णलेख्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि
गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशो प्राण, चारों सं ,
देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग,
औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों
अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे
कृष्णलेख्या, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-
कारोपयोगी होते हैं ।

कृष्णलेख्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहनेपर—एक अविरत-
सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां,
छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां,
पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगादिकके विना शेष
बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन,

नं. ४०५

कृष्णलेख्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

शु	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	६	१	१	१	१	२
संज्ञा	स प.				न	प	त्र.	म ४			अज्ञा.	अय	वक्षु	भा १	म	सम्य	सं	आहा	साका.
					ति			व ४			३		अच	कृष्ण					अना
					म			औ १			ज्ञान.								
								वे १			मिश्र								

किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारु-
वज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी,
ओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि
दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो,
आहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा^{५५} ।

द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे कृष्णलेख्या. भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन
, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कृष्णलेख्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने
पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तिया,
दशों , चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय,
चारों मनोयोग, चारों गोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग,
तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों
लेख्यापं, भावसे कृष्णलेख्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक,
आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४०६

कृष्णलेख्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप

शु.	जी.	प	प्रा.	स.	ग.	इ	का	यो	वे	क	क्षा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	२	६प.	१०	४	३	१	१	१२ म ४	३	४	३	१	३	द्र ६	१	३	१	२	२
ज	स प.	६अ	७		न.	प	त्रस	व ४			मति	अस	के द	मा १	म	औप	सं	आहा	साका.
	स. अ				ति			औ. २			श्रुत.		विना	कृष्ण		क्षा		अना	अना
					म			वै. १			अव.					क्षायो			
								का १											

नं. ४०७

कृष्णलेख्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु.	जी	प	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	क्षा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ.	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१० म ४	३	४	३	१	३	द्र ६	१	३	१	१	२
अवि.	स.प.				न	प	त्रस	व ४			मति.	अस	के द	मा १	म	औप	स	आहा.	साका.
					ति.			औ १			श्रुत		विना	कृष्ण		क्षा.			अना.
					म			वै. १			अव					क्षायो			

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, वे जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण किण्हलेस्सा; भवसिद्धिया वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता हीति अणागारुवजुत्ता वा ।

णीललेस्साए भण्णमाणे ओघादेसालावा किण्हलेस्सा-भंगा । णवरि सव्वत्थ णीललेस्सा वत्तवा ।

काउलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, चौदस जीवसमासा, छ तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि

उन्हीं कृष्णलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और कार्मेणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे कृष्णलेश्या; भव्यसािद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नीललेश्याके आलाप कहने पर—ओघ और आदेश आ कृष्णलेश्याके आलापोंके न होते हैं । विशेष बात यह है कि लेश्या आलाप कहते समय सर्वत्र नीललेश्या कहना चाहिए ।

कापोतलेश्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके चार गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात , आठ प्राण, छह प्राण, सात प्राण, पांच प्राण; छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण, तीन , चारों सं ,

नं. ४०८

कृष्णलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ. का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	संज्ञि	आ.	उ
१	१	६७	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	२	१	१	१	२	२
अ	स	अ			म	प.	त्र	औ. मि	कर्म	६	मति.	अस	के द.	का.	म.	क्षायो.	आहा	साका.
											श्रुत	विना	शु	मा. १		स	अना.	अना.
											अव.		कृष्ण					

सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं मण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कमाय, पंच पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण काउ-लेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, चत्तारि सम्मच्चं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा" ।

असंखिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कापोतलेइयावाले जीवोंके अपर्याप्तका बन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान, अपर्याप्त जीव, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात, प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धि ; मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व, क्षायिक और क्षायोपशमिक ये चार सम्यक्त्व; संखि, असंखिक; आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४१०

कापोतलेइयावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स.	सखि	आ	उ.	
४	७	६	१०	४	३	५	६	१०	३	४	६	१	३	द्र	६	२	६	२	१	२
मि	पर्या	५	९		न.			म ४			ज्ञान	असं	के	द.	सा १	म		स	आहा.	साका.
सासा		४	८		ति.			व ४			३		विना	कापो.	अ.		असं.			अना.
सम्य.			७		म.			औ. १			अज्ञा									
अवि			६ ४					वे १			३									

नं ४११

कापोतलेइयावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म.	स	सखि	आ	उ
३	७	६अ	७	४	४	५	६	३	३	४	५	कुम	१	३	६ २	२	४	२	१
मि		५अ	७					औ मि			कुशु	अस	के द	का.	म	मि	स	आहा	साका.
सा		४अ	६					वै. मि			मति		विना	शु	मा. १	अ.	सा.	अस	अना
अवि			५					कर्म			श्रुत				कापो		क्षायो.		अना.
			४ ३								अव								

काउलेस्सा-मिच्छाद्द्वीणं भण्णमाणे अत्थि एय गुणट्ठाणं, चोदस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ
पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण

कापोतलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात प्राण, आठ प्राण, छह प्राण, सात प्राण, पांच प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, चारों सं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों , आहार ययोगद्विकके बिना तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएँ, भावसे कापोतलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असं : आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अ रोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कापोतलेइयावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तक न्धी आलाप कहने पर—
 एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जी मास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां,
 चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ , आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार ; चारों

नं ४१२

कापोतलेइ ले मिथ्यादृष्टि जीवोंके स

गु	जी.	प	प्रा	स.	ग.	इ	का	यो.	वे	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	साक्षि.	आ.	उ.
१ मि	१४	६प. ६अ. ५प. ५अ ४प ४अ.	१०,७ ९,७ ८,६ ७,५ ६,४ ४,३	४	४	५	६	१३ आ द्वि विना	३	४	३ अज्ञा	१ अस	२ चक्षु अच	६. मा १ कापो.	२ म. अ	१ मि	२ स. अस	२ ब्राह्म. अना.	२ साका. अना.

छ पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

“तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण,

सङ्गाए, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारो मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाए, भावसे कापोत-लेइया, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कापोतलेइयावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण; चारों संज्ञाए, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके

नं ४१३

कापोतलेइयावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी.	प	प्रा.	स.	ग	इ.	का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स.	संज्ञि	आ.	उ.
१	७	६	१०	४	३	५	६	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	२	१	२	१	२
मि	पर्या	५	९		न.			म ४			अज्ञा	अस	चक्षु.	मा १	म.	मि	स	आहा	साका
		४	८		ति.			ब ४					अच	कापो	अ		अस.	अना	अना.
			७		म			औ १											
			६ ४					वै १											

नं. ४१४

कापोतलेइयावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी.	प	प्रा.	स.	ग	इ.	का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	संज्ञि	आ	उ.
१	७	६	७	४	४	५	६	३	३	४	२	१	२	द्र. २	२	१	२	२	२
मि	म	५	७					औ मि			कुम	अस.	चक्षु	का.	म	मि	स	आहा	साका
	ल	४	६					वै मि.			कुशु		अच	शु	अ.		अस.	अना	अना
			५					कार्म						मा. १					
			४ ३											कापो					

दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुजुत्ता होंति अणागारुजुत्ता वा ।

काउलेस्सा-सासणसम्माइद्धीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुजुत्ता होंति अणागारुजुत्ता वा^{१०} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी,

दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएँ, भावसे कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, अभव्य-सिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

कापोतलेइयावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आ कहने पर—एक ।दन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इन दो योगोंके बिना तेरह योग, तीनों वेद, १ कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएँ, भावसे कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारो-पयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कापोतलेइयावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों , देवगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग,

नं. ४१५ कापोतलेइयावाले ।दनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप

गु.	जी.	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स.	सखि	आ	उ
१	२	६प.	१०	४	४	१	१	१३	३	४	३	१	२	६	१	१	१	२	२
सा	स.प.	६अ	७			प	त्र.	आ. द्वि.			अज्ञा.	अस	चक्षु.	मा	१ म.	सासा.	स	आहा	साका.
	स अ							विना					अच	कापो.				अना	अना.

तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१६} ।

^{१७}तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, णिरयगई णत्थि । पंचि-दियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणम्मत्तं,

चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएँ, भावसे कापोत-लेइया, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कापोतलेइयावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच, मनुष्य और देव ये तीन गतियाँ होती हैं, किन्तु नरकगति नहीं है । पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएँ, भावसे कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक,

नं. ४१६ कापोतलेइयावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र ६	१	१	१	१	२
सा	स	प			न	प	त्र	म ४			अज्ञा	अस	चक्षु	मा १	म	सासा	स	आहा	साका
					ति			व ४					अच	कापो.					अना.
					म			औ. १											
								वै १											

नं. ४१७ कापोतलेइयावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६अ.	७	४	३	१	१	३	३	४	२	१	२	द्र २	१	१	१	२	२
सा.	स	अ			ति	प.	त्र	औ. मि			कुम	अस	चक्षु	का	म	सासा	स	आहा	साका.
					म.			वै मि			कुशु.		अच.	शु.				अना.	अना
					दे			कर्म						मा १					
														का					

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

काउलेस्सा-सम्मामिच्छाइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एगं गुणट्ठाणं, एगो जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारु-वजुत्ता वा^{११८} ।

काउलेस्सा-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि

आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कापोतलेइयावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहो लेइयाएं, भावसे कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

कापोतलेइयावाले असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके

नं. ४१८

कापोतलेइयावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप

गु	जी	प.	प्रा	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	भ	स.	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	८	६	१	१	१	२
सम्य	स. प				न	पचे.	त्रस	म			अज्ञा	अस	चक्षु	भा	१	म.	स	आहा	साका.
					ति			व			३		अव	का		सम्य			अना.
					म.			औ			ज्ञान								
								वै.			मिश्र								

णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्चेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्चेण छ लेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्यापं, भावसे कापोतलेक्ष्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिकादि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक. साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं कापोतलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, तसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैश्रिकिकाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्यापं, भावसे कापोतलेक्ष्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४१९ कापोतलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	२	६	१०	४	३	१	१	१३	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	२	२
अवि	स प.	६ अ	७		न	प.	त्र	आ, द्वि			मति	अस.	के. द	मा १	भ	औप	स	आहा	साका
	स अ				ति			विना.			श्रुत		विना	का		क्षा		अना	अना.
					म						अव					क्षायो			

नं. ४२० कापोतलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अवि	स प				न	ति	म.	म.			मति	अस	के द.	मा १	भ.	औप.	स.	आहा	साका.
					म.		व	व			श्रुत		विना	का.		क्षायो		अना	
							औ	वै.			अव.								

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण काउलेस्सा; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तेण विणा दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२१} ।

तेउलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणद्वानाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

उन्हीं कापोतलेइयावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिक-मिश्र, वैक्रियिकामिश्र, और कर्मणकाययोग ये तीन योग, स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे कापोतलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्वके विना क्षायिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

तेजोलेइया जीवोंके अन्य आलाप कहने पर—आदिके सात गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सूक्ष्म-साम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे तेजोलेइया, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, सन्निक,

नं ४२१ कापोतलेइयावाले अ सम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स.	सन्निक	आ	उ
१	१	६अ	७	४	३	१	१	३	२	४	३	१	३	३	२	२	१	२	२
अवि.	स अ				न.	प	त्र	औ मि	पु.		मति	अस	के द	का	म	ज्ञा	स.	आहा.	साका.
					ति			वै मि	न		श्रुत		विना	शु.		क्षायो		अना	अना
					स			कर्म.			अव			सा. १	का				

छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ

आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

विशेषार्थ—गोमट्टसार जीवकाण्डके अन्तमें आलाप अधिकारके ऊपर पं. टोडरमल्लजी ने जो सट्टट्टियां दी हैं उनमें इन्द्रियमार्गणाकी अपेक्षा असंज्ञी पंचेन्द्रियके पर्याप्त अवस्थामें चार लेइयाए, तेजोलेइयाके आलाप बताते हुए तेजोलेइयामें संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्तके अतिरिक्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमास और संज्ञीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए असंज्ञियोंके चार लेइयाएं बतलाई हैं। परंतु जिस आलाप अधिकारके अनुसार पंडितजीने ये सट्टट्टियां संग्रहीत की हैं उसमें केवल संज्ञीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए ही असंज्ञियोंके चार लेइयाएं बतलाई हैं। किन्तु इन्द्रियमार्गणाके आलाप बतलाते हुए असंज्ञियोंके तीन अशुभ लेइयाएं और तेजोलेइयाके आलाप बतलाते हुए संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो ही जीवसमास बतलाये हैं। किन्तु धवलामें सर्वत्र असंज्ञियोंके तेजोलेइयाका अभाव या तेजोलेइयामें असंज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमासका अभाव ही बतलाया है। इससे इतना तो निश्चित हो जाता है कि गोमट्टसार जीवकाण्डमें संज्ञीमार्गणाके आलाप बतलाते हुए असंज्ञियोंके जो चार लेइयाएं बतलाई हैं वह कथन धवलाकी मान्यताके विरुद्ध हैं। परंतु गोमट्टसार जीवकाण्डके मूल आलाप अधिकारमें ही जो दो मान्यताएं पाई जाती हैं उसका कारण क्या होगा, इसका ठीक निर्णय समझमें नहीं आता है। एक बात अवश्य है कि पंडित टोडरमल्लजीने सर्वत्र एक ही मान्यता अर्थात् असंज्ञियोंके तेजोलेइया या तेजोलेइयामें असंज्ञीपंचेन्द्रिय-पर्याप्त जीवसमासको स्वीकार कर लिया है, इसलिये उनके सामने सर्वत्र उक्त मान्यताका पोषक ही पाठ रहा हो तो कोई आश्चर्य नहीं। यदि पंडितजीने मूलमें दिये गये संज्ञीमार्गणाके निर्देशके अनुसार ही सर्वत्र सुधार किया होता तो कहीं न कहीं उन्होंने उसका संकेत अवश्य किया होता। जो कुछ भी हो, फिर भी यह प्रश्न विचारणीय है।

उन्हीं तेजोलेइयावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर--आदिके सात

नं. ४२२

तेजोलेइयावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	हा	सय	द	ले	म	स	सक्ति	आ	उ.
७	२	६५	२०	४	३	२	२	१५	३	४	७	५	३	३	६	२	६	२	२
मि.	म	६अ	७		ति.	प	न				केव.	सूदम.	के. द	द्र	मा	१	स.	आज्ञा	२
से	स	अ			म.						बिना	यथा	बिना	ते	अ			अना	साका
अप्र					दे							बिना						अना	अना

पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त पाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५२३} ।

“तेसिं चेव अपज्जत्ताण भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, णवुंसयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, पंच

गुणस्थान, एक संज्ञी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारो संज्ञापे, नरक-गतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसम्बन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवल ज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात-सयमके विना शेष पाच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहो लेख्याएं, भावसे तेजोलेख्या, भव्यासिद्धिक, अभव्यासिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं तेजोलेख्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसयत ये चार गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास. छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापे, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चारो योग, नपुंसकवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान इसप्रकार पांच ज्ञान,

नं. ४२३

तेजोलेख्यावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ल.	म.	स	सन्नि	आ	उ
७	१	६	१०	४	३	१	१	११ म ४	३	४	७	५ अस	३	द्र ६	२	६	१	१	२
मि	स	प			ति	प.	त्र	व ४			केव.	देश	के द	मा १	म		स	आहा	साका
से					म			औ १			विना	मामा	विना	ते.	अ				अना.
अग्र					दे.			वै १				छेदो							
								आ १				परि.							

नं. ४२४

तेजोलेख्यावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	मय	द	ले	म.	स	सन्नि	आ	उ
४	१	६अ	७	४	२	१	१	४	२	४	५	३	३	द्र २	२	५	१	१	२
मि	रु				दे	प.	त्र	औ मि	पु.		कुम	अस	के द	का.	म. सम्य	स		आहा	साका
पासा					म			वै मि	ओ		कुश्रु	मामा	विना	शु	अ. विना.			अना	अना
अवि								आ मि			मति	छेदो		मा १					
प्रम.								कर्म			श्रुत			ते					
											अव								

गु	जी.	प	प्रा	स.	ग	इ	क	यो.	वे	क.	ज्ञा.	मय.	द.	ले.	म.	स.	सहि.	वा.	च.
१ मि	२ स प स अ.	इप. इअ	१० ७	४	३ ति म दे	१ प	१ त्र	१२ म ४ व ४ ओ १ वै २ का. १	३	४	३ अज्ञा	१ अस	२ चक्षु अच	इ. इ मा १ ते.	२ म. ज	१ मि	१ स.	२ आहा अना.	२ साका. अना.

चीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, णिरयगदी णत्थि; पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

“तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो

मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञायं, तिर्यंच, मनुष्य और देव ये तीन गतियां हैं, किन्तु नरकगति नहीं है। पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यायं, भावसे तेजोलेश्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही तेजोलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञायं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और ण गोग ये

नं. ४२६ तेजोलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु.	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	६	२	१	१	१	२
मि.	स	प.			ति.	प	त्र	म ४		ज्ञान	असं	चक्षु	सा	१	भ	मि	स	आहा	साका
					म. दे.			व ४				अच	अच	ते	अ.				अना
								औ. १											वै १

नं. ४२७ तेजोलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

शु.	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	भ	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	६	२	१	१	२	२
मि.	क	म.			देव.	प	त्र.	वे. मि	पु	कुम	अस	चक्षु	का.	शु	म	मि	स	आहा	साका.
								कर्म	ली	कुशु		अच	अच	मा	अ			अना	अना.
													ते	ते					

तेसिं चेव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्ज-

तेजोलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासा-
दन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां,
छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां,
पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगद्विकके विना शेष
बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे
छहों लेश्याएं, भावसे तेजोलेश्या, भग्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आह ,
अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं तेजोलेइयावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहते

तेजोलेइयावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	सहि.	आ	उ.
१	२	ह प	१०	४	३	१	१	२ म ५	३	४	अज्ञा	अस	२	द्र ह	१	१	१	२	२
सा	स प.	ह अ	७		ति प	त्र	व ४	औ १			अज्ञा	अस	चक्षु.	मा. १	म	सा.	सं	आहा.	साका.
	स अ.				म दे		वै २	का १					अच	ते.				अना	जना.

त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंमण, दव्वेण छ लेस्साओ, भवेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-
वा होंति अणागारुजुत्ता वा^{५०} ।

^{५०}तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एय गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो

पर—एक दन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों योग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याए, भावसे तेजोलेख्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-
कारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं तेजोलेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसम्बन्धी आलाप कहने
पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात , चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग

नं. ४२९ तेजोलेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स.	संज्ञि.	आ.	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	२	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सा	स. प				ति	पचे	त्र	म. ४			अज्ञा	अस	चक्षु	भा १	म	सा	स	आहा	साका
					म	दे		व ४					अच	ते					अना.
					दे			औ १											
								वै १											

नं. ४३० तेजोलेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६अ	७	४	१	१	१	२	२	४	२	१	२	१ २	१	१	१	२	२
सा	स. अ				दे	प	त्र	वै मि.	पु.		कुम	अस	चक्षु	का	म	सासा	स.	आहा	साका
								कर्म.	ली.		कुशु		अच	शु				अना	अना
														मा १					
														ते					

जोग, णुंमयवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुकलेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेउलेस्सा-सम्मामिच्छाद्विणीं मण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, णिरयगईए विणा तिण्णि गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं मिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा ।

ये दो योग, नपुंसकवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्ष्यायं, भावसे तेजोलेक्ष्या; भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

तेजोलेक्ष्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाप, नरक-गतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्यायं, भावसे तेजोलेक्ष्या, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

न. ४३१

तेजोलेक्ष्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु	जी	प.	प्रा	स ग.	इ का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स	संज्ञि	आ.	व.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	३	१	१	१	१	३
सम्य.	म. प.			ति	प	त्र.	म	४	अज्ञा.	अस	चक्षु.	भा	१	म	सम्य.	स	आज्ञा
				म			व	४	३		अव	ते.					साका.
				दे			ओ	१	ज्ञान								अना
							वै.	१	मिश्र.								

तेउलेस्सा-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगईए विणा तिण्णि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{१२} ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्ज-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-

तेजोलेइयावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और सज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशो प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे तेजोलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हों तेजोलेइयावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों , चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारो वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग. तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे तेजोलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक,

नं. ४३२

तेजोलेइयावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप

यु	जी	प	प्र.	स	ग	इ	का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	२	६प.	१०	४	३	१	१	१३	३	४	३	१	३	६	१	३	१	२	२
अ	स	प.	६अ.	७	ति	म	आ	द्वि			मति	अस	के	द	मा	औप	स	आहा	साका.
	स.	अ.			म	दे.	विना				श्रुत.		विना	ते		ज्ञा	अना	अना	
											अव					ज्ञायो			

वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, तिणिण जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिणिण णाण, असंजमो, तिणिण दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया तिणिण सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

तेउलेस्सा-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ

आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं तेजोलेइयावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आ कहने पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएं, भावसे तेजोलेइया, भव्यसादिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, अनाहारक साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

तेजोलेइयावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान,

नं. ४३३ तेजोलेइयावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म.	स.	सखि	आ	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०म ४	३	४	३	१	३	द्र ६	१	३	१	१	२
अवि.	स.प				ति.	प	प	व ४			मति.	अस	के द.	भा १	म.	जोप	स.	आहा.	साका
					म		प	औ १			श्रुत		विना	ते		क्षा.		अना	
					दे		प	वै १			अव					क्षायो			

नं. ४३४ तेजोलेइयावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म.	स.	सखि	आ	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	३	१	४	३	१	३	द्र २	२	३	१	२	२
अ	स	अ			दे	प	त्र	ओ मि			मति.	अस	के द.	का.	म.	जोप	१	आहा	साका.
					म		त्र	वै मि			श्रुत		विना.	शु		क्षा.	स	अना	अना.
								कर्म			अव			मा १		क्षायो			
														ते					

पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-
वजुत्ता हँति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तेउलेस्सा-प्रमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अरिथि एयं गुणद्वारणं, दो जीवसमासा, छ पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-
दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि

संज्ञी-पर्याप्त , छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्य-
गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-
काययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन
दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेजोलेख्या; भवसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व,
संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

तेजोलेख्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तविरत गुणस्थान,
संज्ञी-पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण,
सात प्राण, चारो संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-
योग, औदारिकाययोग, आहारकाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों
वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये

नं. ४३५.

तेजोलेख्यावाले सयतासंयत जीवोंके आलाप

गु.	जी.	प.	पा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
देश.	स. प				ति	प.	त्र	म. ४			मति	देश	क द	मा	म	ओप	स	आहा	साका
					म			व ४			श्रुत	विना		ते.		क्षा.			अना
								औ १			अव.					क्षायो			

नं. ४३६

तेजोलेख्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	पा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	२	१	१	११	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
म प.	इ अ.	७			म.			म. ४			मति	मामा	के द.	मा	म.	ओप	स.	आहा	साका
म अ					पु			व ४			श्रु.	छेदो	विना	ते.		क्षा			अना
								औ १			अव	परि.				क्षायो			
								आ २			मन								

संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेउलेस्सा-अप्पमत्तसज्जदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि पाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

पम्मलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणद्वाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, गिरयगदीए विणा तिण्णि गदीओ,

तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेजे लेख्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व; संक्षिक, आहारक, रोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

तेजोलेख्यावाले अ संयत जीवोंके आ कहने पर—एक अ त गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहार के शेष तीन संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों रोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार , आदिके तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेजोलेख्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पद्मलेख्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—आदिके सात गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और सज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों , सात प्राण; चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों

नं- ४३७

तेजोलेख्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके ।प.

गु.	जी.	प.	प्रा	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय.	द	ले	म.	स	संज्ञि.	आ	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
म.	प			मय	म.	प	न	म. ४			मति	सामा	के. द.	मा. १	म.	औ	स	आहा	साका
स				मै.				व ४			श्रुत	छेदा	विना	ते.		सा			अना.
				परि.				ओ १			अव	परि				सायो			
											मन								

पंचिंदियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८} ।

“तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि सत्त गुणद्वाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, सत्त णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो,

योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएँ, भावसे पञ्चलेइया; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पञ्चलेइयावाले जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके सात गुणस्थान, एक संज्ञी पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, केवलज्ञानके विना शेष सात ज्ञान, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातसंयमके विना शेष पांच संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएँ, भावसे पञ्चलेइया, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और

नं. ४३८

पञ्चलेइयावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
७	२	६	२०	४	३	१	१	१५	३	४	७	५	३	६	२	६	१	२	२
मि.	स. प	६अ	७		ति.	प	त्र				केव.	अस	के. द	मा	१	म	स	आहा	साका.
से.	स अ				म.						विना	देश	विना	प	अ			अना	अना.
अप्र.					दे							सामा.	छेदो.						
												परि.							

नं. ४३९

पञ्चलेइयावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ल	म	स	सहि	आ	उ
७	१	६	१०	४	३	१	१	११	४	३	४	७	३	६	२	६	१	१	२
मि	स.प				ति	प	त्र	व	४			केव	देश.	के.द	मा	१	म	आहा	साका
से					म			ओ	१			विना	सामा	विना	प.	अ	स	अना	अना.
अप्र					दे.			वै	१			छेदो.							
								आ	१			परि.							

आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचि-दियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, पंच पाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुककलेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

पम्मलेस्सा-मिच्छाद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, ओरालियमिस्सेण विणा बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि

अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पञ्चलेख्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चार योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे पञ्चलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके बिना शेष पांच सम्यक्त्व, संज्ञिक, आह, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पञ्चलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुण-स्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्रकाययोग और आहारककाययोगद्विकके बिना शेष बारह योग,

नं. ४४०

पञ्चलेख्यावाले जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

यु	जी.	प	प्रा.	स	ग	इ.	का	यो	ने	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स	सक्ति	आ.	व
४	१	इअ	७	४	२	१	१	४	१	४	५	३	३	द २	२	५	१	२	२
मि.	लं				दे	प.	त्र	औ मि	पु	कुम	अस	क.द.	का.	म. सम्य.	म. सम्य.	स	आहा.	साका.	
पासा					म			वै मि.		कुश्रु	सामा	विना.	शु	मा. १	अ.	विना	अना	अना.	
अवि								आ मि		मति	छेदो			प.					
प्रम.								कार्म		श्रुत.	अव.								

सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणा-हारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११३} ।

पम्मलेस्सा-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं,

पयोगी होते हैं ।

उन्ही पञ्चलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे पञ्चलेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक. मिथ्यात्व, सं, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पञ्चलेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना शेष तीनियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और आहारककाययोग के बिना शेष बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं,

नं. ४४३

पञ्चलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	पा	म	ग	इ	ऊ	यो	वे	क	ज्ञा	मय	द	ले	म.	स.	संज्ञि	आ	उ.
मि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९
मि	अ				दे	प	य	त्रै	मि	गु	कुम	अम.	चक्षु	का	म	मि	स.	आहा	माका
								कर्म			कुशु		अव	शु	अ			अना.	अना
														मा. १					
														प					

“तेसिं चैव पञ्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो,

उन्हीं पद्मलेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों योग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों क , तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे पद्मलेख्या; भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-

यु	जी.	प	प्रा	स	ग	इ.का	यो	वे.	क	ह्या	सय	द	ले	म	स.	सहि	आ	उ
१ मि.	२ स. प. स अ	६प ६अ	१० ७	४ ति म दे.	३ प	१ त्र	१२ म ४ व ४ औ १ वै २ का १	३	४	३ अज्ञा	१ अस	२ चक्षु अच.	६ मा. १ प	२ म अ	१ मि	१ स.	२ आहा. अना	२ साका अना

गु.	जी.	प	प्रा	स.	ग	ङ	का	यो	वे	ऊ	ह्रा	सय	द.	ले	भ	स	सहि	आ.	ड
१	१	६	१०	४	३	१	१	२०	३	४	३	१	२	द्र द्	२	१	१	१	२
मि.	स प.				ति	प	त्र	म ङ			अहा	अस	चक्षु	भा १ म.	अ	मि	स	आहा	माका अना
					म दे.			व ङ औ १ वे १					अच	प					

सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणा-हारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११३} ।

पम्मलेस्सा-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं,

पयोगी होते हैं ।

उन्ही पञ्चलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये दो योग; पुरुषवद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्याएं, भावसे पञ्चलेश्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक; मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पञ्चलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक द्वन गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और आहारकाययोग के विना शेष बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं,

नं. ४४३

पञ्चलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	पा	म	ग	द.	का.	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र. २	२	१	१	२	२
मि	म	अ			दे	प	ज	वै	मि	पु	कुम	अम.	चक्षु	का.	प	मि	स	आहा	माका.
								कार्म			कुभु		अच	शु	अ			अना	अना
														मा. १					
														प					

गु	जी	प	प्रा	स	ग	ह.	का.	यो.	वे.	क	हा.	सय.	द	ले.	म.	म.	सक्ति	आ	उ
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	६	१	१	१	१	२
मभ्य	स.प				ति म	पचे.	त्रस	म ४ ४			अज्ञा	अस	चक्षु.	मा १	म.	सम्य	स.	आहा	साका.
					अ			ओ १			ज्ञान		अच	प					अना.
								वे. १			मिश्र								

असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, सम्मा-
मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

पम्मलेस्सा-असंजदसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, वे जीवसमामा,
छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ,
पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण,
असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि
सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१००} ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमातो, छ
पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ

काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अन्नानोंके
मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएँ. भावसे
पञ्चलेइया, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाका
रोपयोगी होते हैं ।

पञ्चलेइयावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-
सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों
अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाप, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रिय-
जाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके बिना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके
तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयाएँ, भावसे पञ्चलेइया,
भव्यसिद्धिक, औपशमिकादि तीन सम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी
और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हों पञ्चलेइयावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने
पर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों
प्राण, चारों संज्ञाप, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग,

नं. ४४८

पञ्चलेइयावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	क्षा	सय	द	ले	म	स	सक्षि	आ	र.
१	२	६५.	१०	४	३	१	१	१३	३	४	३	१	३	द्र	६	१	३	१	२
अवि	स प.	६५	७	ति	प.	त्र.	आ	दि			मति	अस	के	मा	१	औप	स	आहा	साका
	स अ			म			विना.				श्रुत		विना	प		क्षा	अना		अना.
				दि							अंध					क्षायो			

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पंचिदिय-जादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेक्ष्यापं, भावसे - लेक्ष्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्य, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयागी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं पद्वलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेक्ष्यापं, भावसे पद्वलेक्ष्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक,

नं ४४९ पद्वलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा	सय.	द	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	४	३	४	३	१	३	३	३	१	१	१
अवि.	स.प				ति.	प	म	व	४	औ	१	मति.	अस	के द.	मा	१	स.	आहा.	अना.
					म		म	औ		वै	१	श्रुत	विना	प.	म	औप			
					दे		म	वै				अव			क्षायो				

नं. ४५० पद्वलेक्ष्यावाले असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा	सय.	द	ले	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	७	४	२	१	१	३	१	४	३	१	३	३	२	३	१	२	२
अ	स	अ			दे	प	त्र	औ.मि	वै	मि	मति.	अस	के द	का.	म.	औप	स	आहा.	साका.
					म.			वै		मि	श्रुत		विना	शु	म.	क्षायो		अना.	अना.
								कर्म			अव			मा.१	प				

पम्मलेस्सा-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; उच्चं च पिंडियाए'—

लेस्सा य दब्ब-भावं कम्मं णोकम्ममिस्सय दब्ब ।

जीवस्स भावलेस्सा परिणामो अप्पणो जो सो ॥ २२८ ॥

भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-
वजुत्ता वा^१ ।

पम्मलेस्सा-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, दो जीवसमासा, छ

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पद्मलेख्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जी, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, तिर्य्यचगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रस काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों य, आदिके तीन ज्ञान, संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे पद्मलेख्या होती है । पिंडिका नामके ग्रन्थमें कहा भी है:—

लेख्या दो प्रकारकी है, द्रव्यलेख्या और भावलेख्या । नोकर्मवर्गणाओंसे मिश्रित कर्मवर्गणाओंको द्रव्यलेख्या कहते हैं । तथा जीवका कषाय और योगके निमित्तसे होनेवाला जो आत्मिक परिणाम है, वह भावलेख्या कहलाती है ॥ २२८ ॥

लेख्या आलापके आगे भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

पद्मलेख्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण,

१ आ प्रतौ ' पिट्टियाए ' इति पाठ ।

नं. ४५१

पद्मलेख्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	ह	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सांज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	४	३	१	३	द्र ६	१	३	१	१	२
देश.	स. प				ति	प	त्र	म. ४			मति	देश	के द	मा १	म	औप	स	आहा	साका
					म			व ४			श्रुत		विना.	प.		सायो		अना	
								औ १			अव.								

पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-
दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि पाण, तिण्णि
संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण पम्मलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि
सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२}।

^{१२}पम्मलेस्सा-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो,
छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव

सात प्राण; चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-
योग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह योग, तीनों
वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धिसंयम ये
तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याए, भावसे पञ्चलेश्या, भव्यसिद्धिक,
औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी
होते हैं।

पञ्चलेश्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान,
एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन
संज्ञाएं, मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदा-

नं. ४५२

पञ्चलेश्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप

यु.	जी	प.	प्रा.	स	ग	इ	का.	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले.	म	स	संज्ञि	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	१	१	१	११	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अप्र	स प	६ अ.	७	म.		पू	प्रस.	म. ४			केव	सामा	के द.	मा	१ म.	औप.	स.	आहा	साका.
	स अ							व. ४			विना	छेदो	विना	प		क्षा			अना
								औ. १				परि.				क्षायो			
								आ. २											

नं. ४५३

पञ्चलेश्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप

यु.	जी	प.	प्रा.	स	ग	इ	का.	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अप्र	स प.			मय	म	पू	प्रस.	म. ४			केव	सामा	के द	मा	१ म	औप	सं	आहा	साका.
				मै.				व. ४			विना	छेदो	विना	प		क्षा			अना.
				परि				औ. १				परि				क्षायो			

सुककलेस्साणं भण्णमाणे अत्थि अजोगि विणा तेरह गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा,
छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीआ, दस पाण सत्त पाण चत्तारि पाण दो पाण, चत्तारि
सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसक्काओ, पण्णारह
जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि आत्थ, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ
णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुककलेस्सा; भवसिद्धिया,
अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो
अणाहारिणो, सागारुवज्जुत्ता होंति अणागारुवज्जुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदु-
वज्जुत्ता वा^{११} ।

शुक्ललेद्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अयोगिकेवली गुणस्थानके विना आदिके तेरह गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण तथा सयोगिकेवलीकी अपेक्षा चार प्राण और दो प्राण, चारों पं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी होता है, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी होता है, चारों कपाय तथा अकपायस्थान भी है। आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे छहों लेद्यापं, भावसे शुक्ललेद्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, सन्निक तथा संन्निक और असंन्निक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान होता है, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं।

शुक्लेश्यावाले जीवोंके सामान्य आलाप.

[illegible]

तेसिं चव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, देव-मणुसगदि चि दो गद्दीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, पुरिसवेद अवगद्वेदो वि अत्थि,

उन्हीं शुक्लेश्यावाले जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तविरत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण और दो प्राण, चारों संज्ञायं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है। देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, काय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चारों योग, पुरुषवेद तथा अपगतवेदस्थान भी हैं, चारों कषाय तथा

शुक्लेश्यावाले जीवोंके पर्याप्त आलाप.

य.	जी	प. प्रा	स ग	व	का	यो	वे	क	ला.	सय	द	ले.	म.	स.	सहि.	आ.	उ
१३ अयो. विना	१ सं. प	६ ४	१० ४	४ ति म दू.	२ पसी	१ त्र	११ म. ४ व ४ औ १ बो १ आ १	३ अपग	४ अक्षा	८	७	४	३ द मा. १ हृ	२ म. अ	६ स अनु	१ आहा	२ साका अना. तथा. मु व

शु	जी	प	प्रा.	स	ग.	ह	का	यो.	वे	क	ता	सय	द	ले	भ	स	सप्ति	जा	ड.
१ मि	१ स प.	६	१०	४	३ ति. म. दे.	१ प	१ त्र	१० म ४ न ४ औ. १ वै १	३	४	३ अज्ञा	१ असं	२ चक्षु अच	२ द्र द भा १ शु	२ म अ.	१ मि	१ स	१ आहा.	२ साका. जना.

भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णियो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०९} ।

सुक्कलेस्सा-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, ओरालियमिस्सकायजोगो णत्थि । कारणं, देव-मिच्छाइट्ठि-सासणसम्माइट्ठीणं तिरिक्ख-मणुस्सेसुप्पज्जमाणाणं अमुणिय-परमत्थाणं तिच्च-लोहाणं संकिलेसेण तेउ-पम्म सुक्कलेस्साओ फिट्ठिरुण किण्ह-णील-काउलेस्साणं एगदमा भवदि । सम्माइट्ठीणं पुण मणुस्सेसु चेव उप्पज्जमाणाणं मंदलोहाणं समुणिदपरमत्थाणं अरहंतभयवंतमिह छिण्ण-जाइ-जरा-मरणमिह दिण्णबुद्धीणं^१ तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ चिरंत-

शुक्ल लेख्याएं, भावसे शुक्ललेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्ललेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और आहारककाययोगद्विकके बिना शेष बारह योग होते हैं, किन्तु यहां पर औदारिकमिश्रकाययोग नहीं होता है । इसका कारण यह है कि, तिर्यंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले, परमार्थके अज्ञानकार और तीव्र लोभकषायवाले ऐसे मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके मरते समय संक्लेश उत्पन्न हो जानेसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं नष्ट होकर कृष्ण, नील और कापोत लेख्यामेंसे यथासंभव कोई एक लेख्या हो जाती है । किन्तु जो मनुष्योंमें ही उत्पन्न होनेवाले हैं, मंद लोभकषायवाले हैं, परमार्थके ज्ञानकार हैं, और जिन्होंने जन्म, जरा और मरणके नष्ट करनेवाले अरहंत भगवन्तमें अपनी बुद्धिको लगाया है ऐसे सम्यग्दृष्टि देवोंके चिरंतन (पुरानी) तेज, पद्म और शुक्ल लेख्याएं मरण करनेके

१ प्रतिपु ' छिण्णबुद्धीण ' इति पाठ

न. ४५९

शुक्ललेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म.	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	अ	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	२	१	१	२	२
मि	रु				देव.प	व.		वे. मि	पु		कुम	अस	चक्षु	का.	म	मि	स	आहा	साका.
हं								कर्म			कुक्षु		अव.	शु	अ.			अना	अना.
														मा	१				
														शु.					

च्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४१} ।

सुकलेस्सा-असंजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, त्तादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४२} ।

भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व. संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अना-
होते हैं ।

लेइयावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-
स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां,
नयां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां,
, त्रसकाय, आहारककाययोगिकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों
के तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भा
भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक,
और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणां, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा' ।

सुक्कलेस्सा-सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वारह जोग, ओरालियमिस्सकायजोगो णत्थि । कारणं, देव-मिच्छाइट्ठि-सासणसम्माइट्ठीणं तिरिक्ख-मणुस्सेसुप्पज्जमाणानं अमुणिय-परमत्थाणं तिब्ब-लोहाणं संकिलेसेण तेउ-पम्म सुक्कलेस्साओ फिट्ठिऊण किण्ह-णील-काउलेस्ताणं एगदमा भवदि । सम्माइट्ठीणं पुण मणुस्सेसु चेव उप्पज्जमाणानं मंदलोहाणं समुण्णिदपरमत्थाणं अरहंतभयवंतमिह छिण्ण-जाइ-जरा-मरणमिह दिण्णबुद्धीणं तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ चिरंत-

शुक्ल लेख्यापं, भावसे शुक्ललेख्या, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, साक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्ललेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, संक्षी पर्याप्त और संक्षी अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों सक्षापं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और आहारककाययोगद्विकके बिना शेष वारह योग होते हैं, किन्तु यहाँ पर औदारिकमिश्रकाययोग नहीं होता है । इसका कारण यह है कि, तिर्यच और मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले, परमार्थके अज्ञानकार और तीव्र लोभकषायवाले ऐसे मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि देवोंके मरते समय संक्लेश उत्पन्न हो जानेसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं नष्ट होकर कृष्ण, नील और कापोत लेख्यामेंसे यथासंभव कोई एक लेख्या हो जाती है । किन्तु जो मनुष्योंमें ही उत्पन्न होनेवाले हैं, मंद लोभकषायवाले हैं, परमार्थके ज्ञानकार हैं, और जिन्होंने जन्म, जरा और मरणके नष्ट करनेवाले अरहंत भगवन्तमें अपनी बुद्धिको लगाया है ऐसे सम्यग्दृष्टि देवोंके चिरंतन (पुरानी) तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं मरण करनेके

१ प्रतिपु ' छिण्णबुद्धीण ' इति पाठ

न. ४५९

शुक्ललेख्यावाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म.	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	इअ	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	द्र २	२	१	१	२	२
मि	कृ			देव.	प	व.	वै. मि	कर्म	पु	कुम	अस	चक्षु	अव.	का. श	म	मि	स	आहा	साका.
	पं									कुक्षु.			मा १	अ.			अना	अना.	

“तेसिं चव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण छ

उन्हीं शुक्लेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं. नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्लेश्या;

गु. जी.	प.	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ह्या.	सय.	द.	ले.	म	स.	सक्ति.	आ	व.
१ २	१५	१०	४	३	१	१	१२	३	४	३	१	२	३	१	१	१	२	३
सा स.प. स अ	ह अ	७		ति म दे.	प	त्र.	म. ४ व ४ औ. १ वे २ का. १			अज्ञा.	अस	चक्षु. अच	मा १ शु.	१ म.	सासा	स	आहा अना	साका. अना.

[illegible]

लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

सुक्कलेस्सा-सम्मामिच्छाद्विष्टाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गइओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहिं अण्णाणेहिं भिस्साणि, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया,

भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संशिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं शुक्कलेस्सावाले सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक दन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्र और कार्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और लेस्सापं, भावसे शुक्कलेस्सा, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संशिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्कलेस्सावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके । शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों योग, औदारिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे छहों लेस्सापं, भावसे

नं. ४६२ शुक्कलेस्सावाले दनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी.	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	१	६अ.	७	४	१	१	१	२	१	४	२	१	२	२	१	१	१	२	२
सा.	स	अ		दे	प.	त्र	वै	मि	पु		कुम	अस	चक्षु	का	म	सासा.	स	आहा	साका
							कर्म				कुशु		अच.	शु				अना	अना
														सा १					
														शु.					

सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

सुकलेस्सा-असजदसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

शुक्कलेश्या, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व. संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्कलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्कलेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४६३

शुक्कलेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	३	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र. ६	१	१	१	१	२
सम्य.	स प.				ति	प	त्र.	म ४			अज्ञा.	अस	चक्षु.	मा १	म	सम्य	स	आहा.	साका.
					म			व ४			३		अच	शुक्क.					अना
					दे			औ १			ज्ञान.								
								वे. १			मिश्र.								

नं. ४६४

शुक्कलेश्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ.	उ.
१	२	६प.	१०	४	३	१	१	१३	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	२	३
अवि	स प.	६अ	७		ति.	प.	त्र.	आ द्वि			मति	अस	के द	मा १	म	औप	स.	आहा	साका
	स ज				म			विना.			श्रुत		विना	शुक्क		क्षा		अना.	अना.
					दे						अव					क्षायो			

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एय गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देव-मणुसगदि त्ति दो गदीओ, पच्चिदियजादी,
तसक्काओ, तिण्णि जोग, पुरिसवेदो, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि
दंसण, दग्घेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं,

उन्हीं शुक्ललेइयावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अवरितसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक सङ्गी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियाँ, प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति और मनुष्यगति ये दो गतियाँ, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैश्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे शुक्ललेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक,

नं. ४६५ शुक्ललेइयावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

[illegible]

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१११} ।

सुकलेस्सा-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुकलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११२} ।

सुकलेस्सा-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्ललेख्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यचगति और मनुष्य-गति ये दो गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे शुक्ललेख्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, सक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्ललेख्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुण

नं. ४६६ शुक्ललेख्यावाले असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्षि	आ	उ
१	१	६	७	४	२	१	१	३	१	४	३	१	३	द्र. २	१	३	१	२	२
अवि	स अ	अ		दे म.	प	व	औ मि वै मि	कर्म	पु		मति श्रुत अय.	अस.	के द, विना	का. शु मा. १ शुक्ल	म	ओप. क्षा. क्षायो	स	आहा अना	साका अना.

नं. ४६७ शुक्ललेख्यावाले संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्षि	आ	उ
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	४	३	१	३	द्र ६	१	३	१	१	२
देस	स. प			ति म.	प.	व	म ४ व ४ औ. १				मति श्रुत अव	देश	के. द विना	मा १ शुक्ल	म.	ओप. क्षा. क्षायो.	स.	आहा	साका. अना.

पञ्जत्तीओ छ अपञ्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-
दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि
संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि
सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८} ।

“सुक्कलेस्सा-अप्रमत्तसज्जदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो,
छ पञ्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव

स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहो पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां,
दशों प्राण, सात प्राण, चारो संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग,
चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग ये ग्यारह
योग, तीनों वेद, चारो कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहृ-
विशुद्धि ये तीन सयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याए, भावसे शुक्कलेख्या, भव्य-
सिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और
अनाकारोपयोगी होते हैं ।

शुक्कलेख्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुण-
स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके बिना
शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग

नं. ४६८

शुक्कलेख्यावाले प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु	जी.	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	२	६प.	१०	४	१	१	१	११	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
प्रम.	स प	६अ	७		म	प	त्र	म ४			मति	सामा	के द	भा. १	म	औप	स.	आहा.	साका.
	स अ							व ४			श्रुत	छेदो	विना	शुक्क		क्षा			अना
								औ. १			अव	परि				सायो			
								आ २			मन .								

नं. ४६९

शुक्कलेख्यावाले अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु	जी.	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
अप्र	प			मय	म.	प	त्र	म. ४			मति	सामा	के द	भा. १	म	औप	स	आहा	साका
म	स			मे.				व ४			श्रुत	छेदो	विना	शुक्क		क्षा			अना
				परि.				औ १			अव	परि				सायो			
											मन								

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

अणुवयरणप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि त्ति ओघ-भंगो; तेसु सुक्कलेस्सा-वदि-रित्तण्णलेस्साभावादो । अलेस्साणं अजोगि-सिद्धाणं ओघ-भंगो चेव ।

एव लेस्सामग्गणा समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धियाणं भण्णमाणे मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति ओघ-भंगो । णवरि भवसिद्धिया त्ति वत्तव्वं ।

अभवसिद्धियाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, चोदस जीवसमासा, छ पज्ज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामा-यिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्यापं, भावसे शुक्ललेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थान तकके शुक्ललेश्यावाले जीवोंके आलाप ओघ आलापके समान ही होते हैं, क्योंकि, इन गुणस्थानोंमें शुक्ललेश्याको छोड़कर अन्य लेश्याओंका अभाव है ।

लेश्यारहित अयोगिकेवली और सिद्ध जीवोंके आलाप ओघ आलापोंके ही समान होते हैं ।

इस प्रकार लेश्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धिक जीवोंके आलाप कहने पर मिथ्यादृष्टि गुण-स्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके आलाप ओघ आलापोंके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि भव्य आलाप कहते समय एक भव्यसिद्धिक आलाप ही कहना चाहिए ।

अभव्यसिद्धिक जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात प्राण, आठ प्राण, छ प्राण, सात प्राण, पांच प्राण, छ प्राण, चार प्राण, चार प्राण और तीन प्राण, चारों संज्ञाप, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे

एवं भवियमगणा समत्ता ।

यु	जी.	प	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे	क	ज्ञा.	सय	द.	ले	म.	स	सज्ञि	आ.	उ.
२	७	६अ.	७	४	४	५	६	३	३	४	२	१	२	द्र २	१	१	२	२	३
मि.	अप.	अअ	७ ७ ६ ५ ४ ३					औ.मि वै मि. कर्म			कुम. कुशु	अस.	वक्षु अच.	का. शु मा. ६	अ.	मि	स. अस.	आहा. अना.	साका. अना.

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो,
छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि

विशेषार्थ—छठवें गुणस्थानकी आहारकसमुद्रात अवस्थामें और तेरहवें गुणस्थानकी केवलिसमुद्रात अवस्थामें पर्याप्तताके स्वीकार कर लेनेपर आहारकमिश्र, औदारिकमिश्र और कर्मणकाय ये तीन योग पर्याप्त अवस्थामें भी बन जाते हैं। इसीप्रकार सयोगकेवलीके दो प्राणोंके संबन्धमें भी समझ लेना चाहिए।

उन्हीं सम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अबिरतसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये तीन गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमाप्त, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण दो प्राण, चारों संज्ञापं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-

सम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

[illegible]

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो,
छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण दो पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि

विशेषार्थ — छठवें गुणस्थानकी आहारकसमुद्धात अवस्थामें और तेरहवें गुणस्थानकी केवलिसमुद्धात अवस्थामें पर्याप्ततके स्वीकार कर लेनेपर आहारकमिश्र, औदारिकमिश्र और कामैणकाय ये तीन योग पर्याप्त अवस्थामें भी बन जाते हैं। इसीप्रकार सयोगकेवलीके दो प्राणोंके सबन्धमें भी समझ लेना चाहिए।

उन्हीं सम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत और सयोगिकेबली ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमाप्त, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण दो प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रिय-

सम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप

[illegible]

[illegible]

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एगारह गुणट्टाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस चत्तारि एग पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग अजोगो वि अत्थि, तिण्णि वेद अवगद-वेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकमाओ वि अत्थि, पंच पाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ अलेस्सा वि अत्थि, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा^{१०३} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तिण्णि गुणट्टाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद अवगदवेदो वि अत्थि,

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरत-सम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक ग्यारह गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चार प्राण और एक प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालसंबन्धी ग्यारह योग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, पांचों सम्यग्ज्ञान, सातों सयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं तथा अलेश्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक तथा सज्ञिक और असंज्ञिक इन दोनों चिकत्सोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोप-योगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरत-सम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये तीन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चारों योग, खीवेदके विना शेष दो वेद तथा

नं. ४७७

क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	श्री.	स	ग	ह	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ.
११	१	६	१०	४	४	१	१	११म ४	३	४	५ मात.	७	४	६	१	१	१	२	२
अग्नि	स	प.			प	त्र	व	४	अपम	अकषा	श्रुत			मा	६	म	क्षा.	आहा	साका.
से							वै	१			अव			अले			अनु.	अना.	अना
अयो							आ.	१			मन							तथा	तथा
											कव							यु.	उ

चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दव्वेण काउ-सुक्कलेस्साओ, भवेण जहण्णकाउ-तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो अणुभया वा, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा तदुभएण वा^{१३८} ।

^{१३९}खइयसम्माइड्डीणं असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असं-

अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, मति, श्रुत, अवधि और केवल-ज्ञान ये चार ज्ञान, असंयम, सामायिक छेदोपस्थापना और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम ये चार संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएं, भावसे जघन्य कापोत, तेज, पद्म और शुक्ल लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, क्षयिकसम्यक्त्व, संबिक तथा अनुभयस्थान, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अप-र्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, असकाय,

नं. ४७८

क्षायिकसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

यु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ
३	१	६अ	७	४	४	१	१	४	२	४	४	४	४	४	१	१	१	२	२
अवि	ल			संज्ञि		प	त्र.	औ	मि	पु	मति	अम	शु	द्र २ का	१	१	१	आहा	साका.
प्रम	क							वे	मि	न	श्रुत	सामा	का.	तेज	म	क्षा	स	अना	अना.
सयो								आ	मि		अव	छेदो	पद्म	शुक्ल		अनु		तथा	यु.व
								कर्म			केव	परि							

नं. ४७९

क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप.

यु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	२	६प	१०	४	४	१	१	१३	३	४	३	१	३	द्र ६	१	१	१	२	२
अवि.	स	६अ	७			प	त्र	आ	द्वि		मति	अस	के द	मा ६	म	क्षा	स	आहा	साका
स	अ							विना			श्रुत		विना					अना	अना
											अव.								

जमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पञ्चत्तानं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ पञ्च-त्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, त ओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, रुरुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८०} ।

आहारककाययोगद्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अ-रोपयोगी होते हैं ।

उन्ही क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्त^१ न्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, अ^२, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४८०

क्षायि यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्त

गु.	जी	प	प्रा.	स	ग	ह	का	यो.	वे	क	हा	सय.	द	ले	म.	स.	संक्षि.	आ.	उ
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०म ४	३	४	३	१	३	६	१	१	१	१	२
अवि.	स.प				प		॥	व ४			मति	अस	के द	मा ६	म	क्षा.	स	आहा.	साका
								औ १			श्रुत		विना					अना	
								वे. १			अव								

नं. ४८१

क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्त प.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	ह	का	यो.	वे	क	हा	सय	द	ले	म.	स.	संक्षि	आ	उ
१	१	६	७	४	४	१	१	३	२	४	३	१	३	२	१	१	१	२	२
अ	॥	अ			प	त्र		औ.मि	पु.		ति.	अस	के द.	३	म.	क्षा.	स	आहा	साका.
								वै मि	न		श्रुत		विना	का तेज				अना	अना.
								कर्म.			अव			पञ्च श्रुत					

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण जहण्णकाउ-तेउ पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारु-वजुत्ता वा^{११} ।

खइयसम्माइट्ठीणं सजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं,

उन्हीं क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्तक बन्धी आलाप कहने पर— एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिका और कार्मणकाययोग ये तीन योग, स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्यापं, भावसे जघन्य कापोत, तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

क्षायिकसम्यग्दष्टि सयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर— एक देशविरत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिकमिश्रयोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, सयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक,

नं. ४८१

क्षायिकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म.	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	७	४	४	१	१	३	२	४	३	१	३	३	१	१	१	२	२
जीव.	स	अ.	अ			प	व.	औ मि वै मि कर्म	पु न		मति श्रुत अव.	अस	के द. विना	द्र २ का. शु. मा ४ का तेज. पद्म. शुक्ल.	म	ज्ञा	सं	आहा अना	साका. अना

सण्णो, आहारिणो, सागारुवज्जुता हँति अणागारुवज्जुता वा^{८१} ।

खइयसम्मइट्ठीणं पमत्तसंजदप्पहुडि सिद्धावसाणाणं मूलोघ-भंगो । णवरि सव्वत्थ खइयसम्मत्तं चैव वत्तव्वं ।

“वेदगसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिन्द्रियजादी, तसकाओ, पण्णारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं,

साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

प्रमत्तसंयत गुणस्थानसे लेकर सिद्ध जीवों तकके प्रत्येक स्थानवर्ती क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप मूल ओघ आलापके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि सम्यक्त्व आलाप कहते समय सर्वत्र एक क्षायिकसम्यक्त्व ही कहना चाहिए ।

वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थानतक चार गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों , प्राण, चारों सं , चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पन्द्रहों योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार , असंयम, देशसंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये , आदिके

नं. ४८२

क्षायिकसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	१	१	१	२
म.	प	त्र			म.	प	त्र	म. ४			मति	देश	के. द. भा. ३	विना. शुभ.	म.	क्षा	स	आहा	साका
								व. ४			श्रुत								अना.
								औ १			अव								

नं. ४८३

वेदकसम्यग्दृष्टि

न्य आलाप.

शु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	२	६	१०	४	४	२	२	१५	३	४	४	५	३	द्र. ६	२	१	१	२	२
अवि.	सं. प.	इअ	७			प	त्र				मति	असं	के द	मा. ६	म	क्षायो	स.	आहा.	साका.
से. स अ											श्रुत	देश.	विना					अना.	अना.
अप्र.											अव	सामा	छेदो						
											मन	परि							

सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, पंच संजम, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२८} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि दो गुणट्ठाणाणि, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ; देवगदि-मणुसगदी । कद-करणिज्जं वेदगसम्माइहिं पडुच्च णिरय-तिरिक्खगईओ लब्भंति । पंचिदियजादी, तसकाओ,

तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संज्ञि, आहारक, अनाहारक; साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अग्रमत्तसंयत गुणस्थान तकके चार गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, पर्याप्तकालभावी ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, असंयम, देशसंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये पांच संयम; आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्याएं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—अविरतसम्यग्दृष्टि और अग्रमत्तसंयत ये दो गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां होती हैं, क्योंकि, वेदकसम्यग्दृष्टिके अपर्याप्तकालमें देवगति और मनुष्यगति तो पाई ही जाती हैं, किन्तु कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टिकी अपेक्षासे नरकगति और तिर्यचगति भी पाई जाती हैं । पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालभावी चार

नं. ४८४

वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	द.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	सं.	संज्ञि.	आ.	उ.
४	१	६	१०	४	४	१	१	११	३	४	४	५	३	६	१	१	१	१	२
अवि					प	त.	म	४			मति	असं.	के. द	मा	द	क्षायो	स	आह.	साका.
से							व	४			श्रुत	देश	विना						अना.
अग्र							ओ. १				अव	सामा							
							वे १				सन	छेदो.							
							आ. १					परि.							

चत्तारि जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्माओ, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदग-सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४८५} ।

वेदगसम्माइट्ठि-असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{४८६} ।

योग, स्त्रीवेदके विना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेख्याएं, भावसे छहों लेख्याएं; भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

वेदकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों , सात प्राण, चारों संज्ञाप, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारक-काययोगद्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४८५

वेदकसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स	संज्ञि	आ	उ
२	१	६अ.	७	४	४	१	१	४	२	४	३	३	३	द्र २	१	१	१	२	२
अवि.	स अ					प.	त्र	औ मि	पु		मति	अस	के. द	का	म	क्षायो.	स	आहा	साका.
प्रम								वै मि	न		त.	सामा	विना	शु.				अना	अना
								आ.मि.			अवे	छेदो		मा. ६					
								कर्म											

नं. ४८६

वेदकसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप.

शु.	जी	प	प्रा.	स	ग.	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	२	६प.	१०	४	४	१	१	१३	३	४	३	१	३	द्र ६	१	१	१	२	२
अवि	स प.	६अ	७			प.	त्र.	आ.द्वि			मति	अस	के द	मा ६	म	क्षायो	स	आहा	साका
	स अ							विना.			भुत		विना					अना	अना.
											अव								

“तेसिं चव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गइओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि देसण, दन्वेण

उन्हीं वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहनेपर—एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संक्षी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, पुरुष और नपुंसक ये दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान,

वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी.	प	प्रा	स.	ग	इ	का	यी	वे	क	झा	सय	द.	ले.	म	स.	सक्षि	आ.	व.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	३	६	१	१	१	१	२
अवि.	स.प					प	त्र	म ४ व. ४ औ १ वै १			मति श्रुत अव	अस	कै. द विना.	मा ६ म.	क्षायो.	स	आहा	साका अना.	

वेदकसम्यग्दृष्टि असंयत जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	हा	सय	द.	ले	म.	स.	सक्ति	आ	उ.
१	१	६	७	४	४	१	१	३	२	४	३	१	३	द्र. २	१	१	१	२	२
अवि	सअ	अ				प.	त्र	औ मि वै मि. कर्म	पु. न		मति. भुत अव.	अस.	के द. विना	मा. ६	म	क्षायो	स.	आहा अना	पाका अना.

णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया, वेद म्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०}।

वेदगसम्माइड्ढि-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-समासो, छ चीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया, वेदगसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११}।

तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामा^१ आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तीन शुभ लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

वेदकसम्यग्दृष्टि अ संयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुण-स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामा^१ आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तीन शुभ लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, वेदकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, उपोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

नं. ४२०

वेदकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६प	१०	४	२	१	१	११	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	१	१	१	२
स	प.	६अ.	७		म.	पि	ज्ञा.	म. ४			मति	सामा	के.द.	मा ३	म.	क्षायो	स.	आहा	साका.
स	अ							व. ४			श्रुत	छेदो	विना	शुभ					अना
								औ. १			अव.	परि.							
								आ. २			मन.								

नं. ४२१

वेदकसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	१	१	१	२
अप्र	स	प.		मय	म	पि	ज्ञा.	म. ४			मति.	सामा	के.द.	मा ३	म	क्षायो	स	आहा	साका.
				मै.				व. ४			श्रुत	छेदो	विना	शुभ.					अना.
				परि				औ. १			अव.	परि.							
											मन.								

कसाय उवसंतकसाओ वि अत्थि, चत्तारि णाण, छ संजम, तिण्णि दंसण, दच्च-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, देवगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो जोग, पुरिसवेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दच्चेण काउ-सुक्क-लेस्सा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

उपशान्तकषायस्थान भी है, आदिके चार ज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयमके विना शेष छह संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये दो योग, पुरुषवेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेश्यापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल ये तीन शुभ लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ४९३

उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का	यो	वे.	क	हा.	सय	द	ले.	म.	स	संज्ञि	आ.	उ.
८	२	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	४	६	३	६	१	१	१	१	३
अवि.	पं.			कं.	प	व	व	स ४	उप.	क	मति.	परि.	के.द	मा. ६	म.	औप.	स	आहा.	साका.
से	स			हप				व. ४	उप.		श्रुत	विना	विना						अना.
उप								औ. १			अव								
								वै १			मन								

नं. ४९४

उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु.	जी	प	प्रा.	सं.	ग.	इ.	का	यो	वे.	क	हा.	सय	द	ले.	म.	स	संज्ञि	आ.	उ.
१	१	६	७	४	१	१	१	२	१	४	३	१	३	२	१	१	१	२	३
अवि	स ख			दे	प	व.	व	वै मि.	पु.		मति	अस.	के.द	का.	म	औप.	स.	आहा.	साका.
								कर्म.			श्रुत		विना	मा ३				अना.	अना.
											अव			शुभ.					

उवसमसम्माइडि-असंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, वे जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गइओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, वारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१११} ।

^{१११}तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस

उपशमसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक आविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग, वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग और कर्मणकाययोग ये बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही उपशमसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अि सम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-

नं. ४२५

उपशमसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके सामान्य आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सन्नि	आ	उ
१	२	६प	१०	४	४	१	१	१२	३	४	३	१	३	द्र ६	१	१	१	२	२
अवि.	स. प	६अ	७		प	त्र	म	४			मति.	अस	के द	मा ६	म	जोप	स	आहा	साका
	स अ						व ४	औ १			श्रुत		विना.					अना	अना
							वै २	का १			अव.								

नं ४२६

उपशमसम्यग्दष्टि असंयत जीवोंके पर्याप्त आलाप

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय.	द	ले	म.	स.	सन्नि	आ.	उ
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०म ४	३	४	३	१	३	द्र ६	१	१	१	२	२
अवि.	स.प				प		म	व ४			मति	अस	के द	मा ६	म	जोप	स	आहा	साका
							वै १	औ १			श्रुत		विना					अना	अना
								वै १			अव								

काओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८} ।

उवसमसम्माइट्ठि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-
सो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ,
णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, मणपज्जवणाणेण सह उवसम-
सेढीदो ओयरिय पमत्तगुणं पडिवण्णस्स उवसमसम्मत्तेण सह मणपज्जवणाणं लब्भदि,
ण मिच्छत्तपच्छागद-उवसमसम्माइट्ठि-पमत्तसंजदस्स; तत्थुप्पत्ति-संभवाभावादो । दो
संजम, परिहारसंजमो णत्थि । कारणं, ण ताव मिच्छत्तपच्छागद-उवसमसम्माइट्ठि-संजदा

औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम,
आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं, भव्यसिद्धिक,
औप कसम्यक्त्व, साक्षिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान,
एक संक्षी-पर्याप्त जीव स, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-
जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों
वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान होते हैं । उपशमसम्यग्दृष्टिके मनःपर्ययज्ञान होता है
इसका कारण यह है कि मनःपर्ययज्ञानके साथ उपशमश्रेणीसे उतरकर प्रमत्तसंयत गुणस्था-
नको प्राप्त हुए जीवके औपशमिकसम्यक्त्वके साथ मनःपर्ययज्ञान पाया जाता है । किन्तु,
मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत जीवके मनःपर्ययज्ञान नहीं पाया
जाता है, क्योंकि, प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयतके मनःपर्ययज्ञानकी उत्पत्ति संभव नहीं है ।
ज्ञान आलापके आगे सामायिक, और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं, किन्तु परिहारवि-
शुद्धिसंयम नहीं होता है । इसका कारण यह है कि, मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए प्र-
सम्यग्दृष्टि संयत जीव तो परिहारविशुद्धिसंयमको प्राप्त होते नहीं है, क्योंकि,

नं. ४९८

उपशमसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग.	ई.	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	ट	के	म	स	संज्ञि
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	४	३	१			१	१	१
देश.	स	प.			ति	प	त्र	म	४		मति.	देश			ओप.		स.
					म			व	४		श्रुत						
								औ.	१		अव						

परिहारसंजमं पडिवज्जंति; अइट्ठ-उवसमसम्मत्तकालब्भंतरे तदुप्पत्तिणिमित्तगुणाणं संभवा-
भावादो । णो उवसमसेहिं चट्ठमाणा; तत्थ पुव्वमेवमंतोमुहुत्तमत्थि त्ति उवसंहरिद-
विहारादो । ण तत्तो ओदिण्णाणं पि तस्स संभवो; णट्ठे उवसमसम्मत्तेण विहारस्सा-
संभवादो । तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया,
उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

उवसमसम्माइट्ठि-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-
समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तस-
काओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, परिहारसंजमो

प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालके भीतर परिहारविशुद्धिसंयमकी उत्पत्तिके निमित्तभूत विशिष्टसंयम,
तीर्थकर-चरणमूल-वसाति, प्रत्याख्यानपूर्व-महार्णवपठन आदि गुणोंके होनेकी संभावनाका अभाव
है। और न उपशमश्रेणीपर चढ़नेवाले द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके भी परिहारविशुद्धि-
संयमकी संभावना है, क्योंकि, उपशमश्रेणीपर चढ़नेके पूर्व ही जब अन्तर्मुहूर्तकाल शेष
रहता है तभी परिहारविशुद्धिसंयमी अपने गमनागमनादि विहारको उपसंहरित अर्थात्
संकुचित या बन्द कर लेता है। और उपशमश्रेणीसे उतरे हुए भी द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टि
संयत जीवोंके परिहारविशुद्धिसंयमकी संभावना नहीं है, क्योंकि, श्रेणि चढ़नेके पूर्वमें ही
परिहारविशुद्धिसंयमके नष्ट हो जानेपर उपशमसम्यक्त्वके साथ परिहारविशुद्धिसंयमीका
विहार संभव नहीं है। संयम आलापके आगे आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्यापं,
भावसे तीन शुभ लक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी
और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उपशमसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुण-
स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके बिना
शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग
और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक
और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं, किन्तु, परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होता है।

नं. ४९९

उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	ग.ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	साहि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	४	२	३	६	१	१	१	२
प्रम.	स.प				म	प	न	म	४		मति	सामा.	के द	सा	३ म.	औप	आहा.	साका.
								व ४			श्रुत	छेदो	विना	शुभ.		स.	अना.	
							औ. १				अव.							
											मन .							

काओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१८} ।

उवसमसम्माइट्ठि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणहाणं, एओ जीव-
ासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ,
णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, मणपज्जवणाणेण सह उवसम-
सेढीदो ओयरिय पमत्तगुणं पडिवण्णस्स उवसमसम्मत्तेण सह मणपज्जवणाणं लब्भदि,
ण मिच्छत्तपच्छागद-उवसमसम्माइट्ठि-पमत्तसंजदस्स; तत्थुप्पत्ति-संभवाभावादो । दो
संजम, परिहारसंजमो णत्थि । कारणं, ण ताव मिच्छत्तपच्छागद-उवसमसम्माइट्ठि-संजदा

औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम,
आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याएं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेश्याएं; भव्यसिद्धिक,
औपशमिकसम्यक्त्व, सांज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उप सम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान,
एक संज्ञी-पर्याप्त जीव स, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय
जाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों
वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान होते हैं । उपशमसम्यग्दृष्टिके मनःपर्ययज्ञान होता है
इसका कारण यह है कि मनःपर्ययज्ञानके साथ उपशमश्रेणीसे उतरकर प्रमत्तसंयत गुणस्था-
नको प्राप्त हुए जीवके औपशमिकसम्यक्त्वके साथ मनःपर्ययज्ञान पाया जाता है । किन्तु,
मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत जीवके मनःपर्ययज्ञान नहीं पाया
जाता है, क्योंकि, प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयतके मनःपर्ययज्ञानकी उत्पत्ति संभव नहीं है।
ज्ञान आलापके आगे सामायिक, और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं, किन्तु परिहारवि-
शुद्धिसंयम नहीं होता है । इसका कारण यह है कि, मिथ्यात्वसे पीछे आये हुए प्रथमोपशम-
सम्यग्दृष्टि संयत जीव तो परिहारविशुद्धिसंयमको प्राप्त होते नहीं है, क्योंकि, सर्वोत्कृष्ट भी

नं. ४९८

उपशमसम्यग्दृष्टि संयतासंयत जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग.	इ.	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	४	३	१	३	द्र द	१	१	१	१	२
देश.	स प.				ति	प	त्र	म ४			मति.	देश	के. द	मा ३	म	औप.	स	आहा	साका.
					म.			व ४			श्रुत		विना	कुम					अना
								औ. १			अव								

परिहारसंजमं पडिवज्जंति; अइट्ठ-उवसमसम्मत्तकालब्भंतरे तदुप्पत्तिणिमित्तगुणाणं संभवा-
भावादो । णो उवसमसेहिं चढमाणा; तत्थ पुव्वमेवमंतोमुहुत्तमत्थि ति उवसंहरिद-
विहारदो । ण तत्तो ओदिण्णाणं पि तस्स संभवो; णट्ठे उवसमसम्मत्तेण विहारस्सा-
संभवादो । तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भवेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया,
उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

उवसमसम्माइट्ठि-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीव-
समासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तस-
काओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, परिहारसंजमो

प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालके भीतर परिहारविशुद्धिसंयमकी उत्पत्तिके निमित्तभूत विशिष्टसंयम,
तीर्थकर-चरणमूल-वसति, प्रत्याख्यानपूर्व-महार्णवपठन आदि गुणोंके होनेकी संभावनाका अभाव
है । और न उपशमश्रेणीपर चढ़नेवाले द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके भी परिहारविशुद्धि-
संयमकी संभावना है, क्योंकि, उपशमश्रेणिपर चढ़नेके पूर्व ही जब अन्तर्मुहूर्तकाल शेष
रहता है तभी परिहारविशुद्धिसंयमी अपने गमनागमनादि विहारको उपसंहारित अर्थात्
सकुचित या बन्द कर लेता है । और उपशमश्रेणीसे उतरे हुए भी द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टि
संयत जीवोंके परिहारविशुद्धिसंयमकी संभावना नहीं है, क्योंकि, श्रेणि चढ़नेके पूर्वमें ही
परिहारविशुद्धिसंयमके नष्ट हो जानेपर उपशमसम्यक्त्वके साथ परिहारविशुद्धिसंयमकी
विहार संभव नहीं है । संयम आलापके आगे आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लक्ष्यापं,
भावसे तीन शुभ लक्ष्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी
और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उपशमसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुण-
स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके बिना
शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग
और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक
और छेदोपस्थापना ये दो संयम होते हैं, किन्तु, परिहारविशुद्धिसंयम नहीं होता है ।

नं. ४९९

उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु	जी.	प	प्रा	ग.	ग.	इ	का	यो.	वे	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	स.	स.	साक्षि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	१	१	१	९	३	४	४	२	३	६	१	१	१	१	२
प्रम.	स.प			म	प	त्र	म	४			मति	सामा.	के द	भा	३म.	औप	स.	आहा	साका.
							व	४			धुत.	छेदी	विना	शुभ				अना.	
							औ.	१			अव.								
											मन .								

णत्थि । उच्चं च—

मणपज्जवपरिहारा उवसमसम्मत्त दोण्णि आहारा ।

एदेसु एकपयदे णत्थि त्ति य सेसय जाणे' ॥ २२९ ॥

तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तिण्णि सुहलेस्साओ; भवसिद्धिया, उवसमसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{००} ।

कहा भी है—

मनःपर्ययज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयम, प्रथमोपशमसम्यक्त्व, आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग इनमेंसे किसी एकके प्रकृत होनेपर शेषके आलाप नहीं होते हैं, ऐसा जानना चाहिए ॥ २२९ ॥

विशेषार्थ— गोमट्टसार जीवकाण्डमें भी यही गाथा पाई जाती है, परंतु उसमें 'मसम्मत्त' के स्थानमें 'पढमुवसम्मत्त' पाठ पाया जाता है जो संगत प्रतीत होता है; क्योंकि, प्रथमोपशमसम्यक्त्वके साथ मनःपर्ययज्ञान, परिहारविशुद्धिसंयम और आहारद्विक इन सबके होनेका विरोध है औपशमिकसम्यक्त्वके साथ नहीं। यद्यपि औपशमिकसम्यक्त्वके साथ परिहारविशुद्धिसंयम और आहारद्विक नहीं होते हैं फिर भी द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकी अपेक्षा औपशमिकसम्यक्त्वके साथ मनःपर्ययज्ञानका होना संभव है, इसलिये गाथामें 'उवसमसम्मत्त' ऐसा सामान्य पद रखनेसे औपशमिकसम्यक्त्वके साथ भी मनःपर्ययज्ञानके होनेका निषेध हो जाता है जो आगम विरुद्ध है। तो भी 'उवसमसम्मत्त' पदका अर्थ प्रथमोपशमसम्यक्त्व कर लेने पर कोई दोष नहीं आता है यही समझकर पाठमें परिवर्तन नहीं किया है।

संयम आलापके आगे आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे तीन शुभ लेइयापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

१ मणपज्जव परिहारो पढमुवसम्मत्त दोण्णि आहारा । एदेसु एकपयदे णत्थि त्ति असेसय जाणे ॥

गो जी. ७२९.

नं. ५००

उपशमसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसंयत जीवोंके आ .

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क.	ज्ञा.	संय.	द	ल.	म	स	सन्नि	आ	उ
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	२	३	द्र.६	१	१	१	१	२
स	प			आहा.	म	प.	त्र.	म ४			मति.	सामा.	के द.	मा.३	म	औप.	स	आहा	साका
ऊ				विना.				व ४			मुत्त	छेदो	विना.	शुभ.					अना.
								औ. १			अव								
											मन								

अपुव्वयरणप्पहुडि जाव उवसंतकसाओ त्ति ताव ओघ-भंगो । णवरि सव्वत्थ उवसमसम्मत्तं भाणियव्वं ।

मिच्छत्त-सासणसम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ओघ-मिच्छाइड्ढि-सासणसम्माइड्ढि-सम्मा-मिच्छाइड्ढि-भंगो ।

एव सम्मत्तमग्गणा समत्ता ।

पाधण्णपदे अवलंबिज्जमाणे सव्वाणुवादाणं मूलोघ-भंगो होदि; तत्थ सव्व-वियप्प-संभवादो । गुणणामे अवलंबिज्जमाणे ण होदि । पाधण्णपदे अणवलंबिज्जमाणे असंजमादीणं कथं गहणं ? ण; वदिरेगमुहेण संजमादि-परूवणट्ठं तप्परूवणादो । तेण दोणि वि वक्खाणाणि अवरुद्धाणि । एसत्थो सव्वत्थ वत्तव्वो ।

सणियाणुवादेण सण्णीणं भण्णमाणे अत्थि बारह गुणट्ठाणाणि, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि

उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंके अपूर्वकरण गुणस्थानसे लेकर उपशान्तकषाय गुणस्थानतक प्रत्येक गुणस्थानवर्ती जीवोंके आलाप ओघ आलापके समान होते हैं । विशेष बात यह है कि सम्यक्त्व आलाप कहते समय सर्वत्र उपशमसम्यक्त्व ही कहना चाहिए ।

मिथ्यात्व, सासादनसम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके आलाप क : मिथ्यादष्टि, सासादनसम्यग्दष्टि और सम्यग्मिथ्यादष्टि गुणस्थानके आलापोंके समान जानना चाहिए ।

इसप्रकार सम्यक्त्वमार्गणा त हुई ।

प्राधान्य पदके अवलंबन करनेपर सभी अनुवादोंके आलाप मूल ओघआलापके समान होते हैं, क्योंकि, मूल ओघआलापमें विधि प्रतिषेधरूप सभी विकल्प संभव हैं । किन्तु गौणनाम-पदके अवलंबन करनेपर सभी विकल्प संभव नहीं हैं, क्योंकि, इस नामपदकी दृष्टिसे गुण-नामोंके भंगोंके ही आलाप कहे जायेंगे, दूसरोंके नहीं ।

शंका— तो फिर प्राधान्यपदके अवलंबन नहीं करनेपर संयमादिके प्रतिपक्षी असंय-मादिका ग्रहण कैसे जा सकता है ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, व्यतिरेकद्वारसे संयमादि विकल्पोंकी प्ररूपणाके लिए ही असंयमादि विपक्षी विकल्पोंकी प्ररूपणा की जाती है, तभी विवक्षित मार्गणाद्वारा समस्त जीवोंका मार्गण हो सकता है, अन्यथा नहीं । इसलिए संयमादि अन्वयरूप और असंयमादि व्यतिरेकरूप दोनों ही व्याख्यान अविरुद्ध हैं । यही अर्थ सभी मार्गणाओंके विषयमें कहना चाहिए ।

संक्षी मार्गणाके अनुवादसे संक्षी जीवोंके आलाप कहने पर—आदिके बारह गुणस्थान, संक्षी-पर्याप्त और संक्षी-अपर्याप्त ये दो जीव , छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्ति ; दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति,

लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सणिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, पंच णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सणिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{०३} ।

सणि-मिच्छाद्विणीं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्ज-त्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संबिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं संज्ञी जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासादन-सम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि और प्रमत्तसंयत ये चार गुणस्थान, संज्ञी-अपर्याप्त जीव-समास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अपर्याप्तकालसंबन्धी चार योग, तीनों वेद, चारों कषाय, कुमति, कुश्रुत, और आदिके तीन ज्ञान ये पांच ज्ञान, असंयम, सामायिक और छेदोपस्थापना ये तीन संयम; आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेझापं, भावसे छहों लेझापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके बिना शेष पांच सम्यक्त्व, सं, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

संज्ञी मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, संज्ञी पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग-

नं. ५०३

संज्ञी जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	म	स	संज्ञि	आ	व.
४	१	६	अ	७	४	४	१	१	४	३	४	५	कुम	३	३	३	२	२	२
मि							प	व.	ओ	मि	कुश्रु	अस	के	द	म	सम्य	१	२	२
मासा									वे	मि	मति	सामा	विना	का.	अ	विना.	स	आहा	साका.
अत्रि									आ	मि	श्रुत	छेदो		शु				अना	अना.
प्रम									कर्म		अव			मा. ६					

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दच्चेण काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सणिण्णो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५०६} ।

^{५०७}(सणि'-) सासणसम्माइट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ, तेरह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण,

उन्हीं संज्ञी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्तका बन्धी आलाप कहने पर—एक मिथ्या-दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयापं, भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

संज्ञी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक स दन गुण-स्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीव । स, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां; दशों प्राण, प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, आहारककाययोग-

१ प्रतिपन्नान्यत्र कोष्ठकान्तर्गतपाठो नास्तीति ज्ञेयम् ।

नं. ५०६

संज्ञी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा.	न	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स	सक्ति	आ	उ.
१	१	इअ.	७	४	४	१	१	३	३	४	२	१	२	३	२	१	१	२	२
मि.	सं अ					प.	त्र	औ मि			कुम	अस	चक्षु.	का	म.	मि	स	आहा.	साका.
								वे मि			कुशु.		अच	शु.	अ.			अना	अना.

नं. ५०७

संज्ञी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे.	क	ज्ञा.	सय	द	ले	म	स.	सक्ति	आ.	उ.
१	२	इप.	१०	४	४	१	१	१३	३	४	३	१	२	३	१	१	१	२	२
सा.	स.प.	इअ	७			प	त्र.	आ द्वि.			अज्ञा	अस	चक्षु	मा	म.	सासा.	स	आहा	साका.
	स अ							विना					अच	मा	म.			अना.	अना.

असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्ब-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५८} ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण

द्विकके विना शेष तेरह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएँ, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं संज्ञी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियाँ, दशों प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियाँ, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैश्रियिककाययोग ये दश योग; तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएँ, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं संज्ञी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, चारों संज्ञापं, नरकगतिके विना शेष तीन गतियाँ, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैश्रियिकमिश्र और कर्मणकाययोग ये तीन योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान,

न. ५०८

संज्ञी सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी.	प	प्रा	स.	ग	इ.	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	म	स	सन्नि	आ	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	२	६	१	१	१	१	२
सा.	स.प				प	त्र.	म	४		अज्ञा	अम.	चक्षु	मा	६	म	मासा	स	आहा	साका
							४	१				अच							अना.

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दन्व-
भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता
होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ
अपज्जत्ताओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिंदियजादी, तसकाओ,
तिण्णि जोग, दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, असजमो, तिण्णि दंसण, दन्वेण
काउ-सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो
अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१३} ।

संजदासंजदप्पहुडि जाव खीणकसाओ चि ताव मूलोघ-भंगो ।

काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान,
असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेइयाएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि
तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्ही संज्ञी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक
अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण,
चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और
कार्मणकाययोग ये तीन योग, पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन
ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत और शुक्ल लेइयाएं, भावसे छहों लेइयाएं,
भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, अनाहारक,
साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

संयतासंयत गुणस्थानसे लेकर क्षीणकषाय गुणस्थानतकके संज्ञी जीवोंके आलाप
मूल ओघ आलापोंके समान होते हैं ।

नं. ५१३

संज्ञी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	मा	स	ग	द.	का	यो	वे.क	ज्ञा	सय	द.	ले	म.	स.	संज्ञि	आ	उ.
१	१	६	७	४	४	१	१	३	२	३	१	३	द्र. २	१	३	१	२	२
अवि	स अ	अ				प.	त्र	औ मि वै मि. कर्म	पु न	मति. श्रुत अव.	अस.	के द. विना	का. शु मा. ६	म	औप क्षा क्षायो	स	आहा अना	साका अना

तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि तेरह गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ, दस पाण णव पाण अट्ठ पाण सत्त पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, एगारह जोग, ओरालिय-वेउव्विय-आहारमिस्स-कम्मइयकायजोगा णत्थि । तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, अट्ठ णाण, सत्त संजम, चत्तारि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, छ सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो वि अत्थि, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा” ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण दोण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ खीणसण्णा वि अत्थि, चत्तारि

उन्हीं आहारक जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—आदिके तेरह गुण-स्थान, सात पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, दशों प्राण, नौ प्राण, आठ प्राण, सात प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञा-स्थान भी है, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, पर्याप्तकालभावी ग्यारह योग होते हैं, क्योंकि, यहाँपर औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र, आहारकमिश्र और कर्मणकाययोग नहीं होते हैं । तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, आठों ज्ञान, सातों संयम, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, छहों सम्यक्त्व, संज्ञिक, असंज्ञिक तथा सन्निक और असन्निक इन दोनों विकल्पोंसे रहित भी स्थान है, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

उन्हीं आहारक जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—मिथ्यादृष्टि, सासा-धनसम्यग्दृष्टि, अविरतसम्यग्दृष्टि, प्रमत्तसंयत और सयोगिकेवली ये पांच गुणस्थान, सात अप-र्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण, सात प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, दो प्राण, चारों संज्ञाएं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी

नं. ५१८

आहारक जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क.	ज्ञा	सय	द	ले.	स.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१३	७	६	१०	४	४	५	६	११म.४	३	४	८	७	४	६	६	२	२	१	२
मि	पर्या	५	९					व ४	अपग	अकषा				द ६	२	६	स	आहा	साका
से		४	८	क्षिणस				औ १						मा ६	म.		स		अना.
पयो			७	६				वै १						अ	अस		अस		तथा.
			४	४				आ १							अट्ठ.				यु. व.

गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, तिण्णि जोग, तिण्णि वेद अवगदवेदो वि अत्थि, चत्तारि कसाय अकसाओ वि अत्थि, छ गाण, चत्तारि संजम, चत्तारि दंसण, दब्बेण काउलेस्सा, भवेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, पंच सम्मत्तं, सण्णिणो असण्णिणो अणुभया वि, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा (सागार-अणागारेहि जुगवदुवजुत्ता वा^{१९}) ।

आहारि-मिच्छाद्वीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, चोद्दस जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ पंच पज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि पज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण (णव पाण सत्त पाण अट्ठ पाण छ पाण सत्त पाण^१) पंच पाण छ पाण चत्तारि पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंच जादीओ, छ काय, वारह जोग, कम्मइयकायजोगो णत्थि । तिण्णि

है, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और आहारकमिश्र-काययोग ये तीन योग, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी हैं चारों कषाय तथा अकषाय-स्थान भी है, विभंगावधि और मन-पर्ययज्ञानके विना शेष छह ज्ञान, असंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना और यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम ये चार संयम, चारों दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेख्या, भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्वके विना शेष पांच सम्यक्त्व, सन्निक, असन्निक तथा अनुभयस्थान भी है, आहारक, साकारोपयोगी और अना-कारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे गुणपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

आहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, चौदहों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, पांच पर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार पर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, नौ प्राण, सात प्राण, आठ प्राण, छह प्राण, सात प्राण, पांच प्राण, छह प्राण, चार प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञाएं चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग औदारिककाययोगद्विक और वैक्रियिककाययोगद्विक ये वारह योग होते हैं, किन्तु कर्मणकाययोग नहीं होता है । तीनों

१ कोष्ठकान्तर्गतपाठो नास्ति ।

नं. ५१९

आहारक जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	ग.	इ	का	यो.	वे	क	मा.	सय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि	गा.	उ.
१	७	६अ	७	४	४	५	६	३	३	४	६	४	४	५	५	३	१	२
मि	७	५अ.	७					आ मि		कम	अम.		का म	मि	स.	आहा	माका.	
सा	छप्.	४अ.	६					व मि	अप	कुश्र	मामा		मा ६ अ	साता	अम		अना	
अरि.			५					आ मि.	लाप	मति	उदो			आप	अनु.		तथा	
मम.			४							धृत	यया			क्षा			पु. उ	
मयो.			३							अन.				क्षायो				
			२							वे								

पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चैव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५२४} ।

तेसिं चैव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गदीओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, दो

मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोगद्विक और वैक्रियिककाययोगद्विक ये बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, संश्लि, आहारक, आरोपयोगी और अनाकारो-पयोगी होते हैं ।

उन्हीं आहारक सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तका बन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण; चारों पं. चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिक-काययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञान, अ , आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेश्यापं, भव्यसिद्धिक, सासादनसम्यक्त्व, सं , आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

उन्हीं आहारक सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर— एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात , चारों संज्ञापं, नरकगतिके बिना शेष तीन गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिश्र और

नं. ५२४

आहारक सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु	जी	प	प्रा	स	ग. इ	का	यो.	वे	क	ज्ञा	सप.	द.	ले	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ
१	१	६	१०	४	४	१	१०	४	३	४	३	१	२	६	१	१	१	२
सा	स.प				प	प्रस	व ४	व ४	अश	अस	चक्षु	मा	६	६	सासा.	सं.	आहा.	साका.
							औ १	वे. १			अच.						अना.	अना.

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दव्वेण काउ-
लेस्सा, भावेण छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-
वजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{५२} ।

आहारि-सम्मामिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वयं, एओ जीवसमासो,
छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,
दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाणाणि तीहि अण्णाणहि मिस्साणि,
असंजमो, दो दंसण, दव्व-भावेहि छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, सम्मामिच्छत्तं, सण्णिणो,
आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा^{५३} ।

वैक्रियिक काययोग ये दो योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम,
आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेख्या, भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, सासादन
सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुण-
स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञायं, चारों गतियां,
पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और वैक्रियिक-
काययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, तीनों अज्ञानोंसे मिश्रित आदिके तीन ज्ञान,
असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व,
सं, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं. ५२५

आहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स	ग	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा	सय	द	ले	म.	स.	सन्नि	आ	उ.
१	१	६	७	४	३	१	१	२	३	४	२	१	२	द्र. १	२	१	१	१	२
सा.	क	अ			ति.	प	त्र	औ	मि		कुम.	अस	चक्षु	का	म.	सासा.	स	आहा	साका.
	म				म			वै	मि		कुशु		अच	मा	३				अना.

नं. ५२६

आहारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

गु.	जी	प	प्रा	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द	ले.	म.	स.	सन्नि	आ	उ
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	२	द्र ६	१	१	१	१	२
मय्य	स. प					प.	त्र	म ४			ज्ञान	अस	चक्षु	मा ६	म.	सम्य	स	आहा	साका.
								व ४			३		अच.						अना.
								औ १			अज्ञा								
								वै. १			मिश्र								

आहारि-असंजदसम्माइड्ढीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, बारह जोग, तिण्णि वेद. चत्तारि कसाय, तिण्णि गाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-भावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११७} ।

^{११८}तेसिं चेव पज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,

आहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोगद्विक और वैक्रियिककाययोगद्विक ये बारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्यापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं।

उन्हीं आहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—एक अविरतसम्यग्दष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों ,

नं ५२७

आहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके सामान्य आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो	वे	क	ज्ञा	सय.	द.	ले	म.	स	सहि.	आ.	उ.
१	२	६प	१०	४	४	१	१	१२	३	४	३	१	३	६	१	३	१	१	२
अवि.	स प.	६अ.	७			प	त्र	म ४			मति	अस	के.द.	मा.६	म.	औप.	स	आहा.	साका.
	स अ.							व. ४			श्रुत		विना.			क्षा.			अना.
								ओ. २			अव					क्षायो.			
								वे २											

नं. ५२८

आहारक असंयतसम्यग्दष्टि जीवोंके पर्याप्त आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो	वे	क	ज्ञा	सय.	द.	ले	म	स	सहि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	४	१	१	१०	३	४	३	१	३	६	१	३	१	१	२
अवि	पं.	६				प	त्र	म. ४			मति.	अस	के द	मा.६	म.	औप.	स	आहा.	साका
								व. ४			श्रुत		विना.			क्षा.			अना.
								वे. १			अव.					क्षायो			

दस जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजमो, तिण्णि दंसण, दव्व-
मावेहिं छ लेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता
होति अणागारुवजुत्ता वा ।

तेसिं चेव अपज्जत्ताणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ
अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ,
दो जोग, इत्थिवेदेण विणा दो वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि पाण, असंजमो, तिण्णि
दंसण, दव्वेण काउलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो,
आहारिणो, सागारुवजुत्ता होति अणागारुवजुत्ता वा ।

आहारि-संजदासंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वानं, एओ जीवसमासो, छ
पज्जत्तीओ, दस पाण, चत्तारि सण्णाओ, दो गईओ, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव

चारों संज्ञायं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदा-
रिककाययोग और वैक्रियिककाययोग ये दश योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान,
असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक-
क्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारो-
पयोगी होते हैं ।

उन्हीं आहारक असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप कहने पर—
एक अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात
, चारों संज्ञायं, चारों गतियां, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, औदारिकमिथ और वैक्रियिक-
मिश्रकाययोग ये दो योग, स्त्रीविदके बिना शेष दो वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान,
असंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे कापोत लेख्या, भावसे छहों लेख्याएं, भव्यसिद्धिक,
औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और
अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक संयतासंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक देशसंयत गुणस्थान, एक
संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, चारों संज्ञायं, तिर्यचगति और मनुष्य-

नं. ५२९

आहारक असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके अपर्याप्त आलाप

शु.	जी.	प	मा	स	ग	इ.	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	भ	स.	सङ्गि	आ	उ.
१	१	६	७	४	४	१	१	२	२	४	३	१	३	द्र. १	१	३	१	१	२
अवि.	स	अ	अ			प.	त्र	औ	मि	पु.	मति	अस	के द.	का.	म	औप	स	आहा	साका
								वै	मि.	न	श्रुत		विना	मा. ६	क्षा	क्षायी			अना
											अव.								

जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, तिण्णि णाण, संजमासजमो, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ, भवसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

^{११}आहारि-पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, दो जीवसमासा, छ पज्जत्तीओ छ अपज्जत्तीओ, दस पाण सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचि-दियजादी, तसकाओ, एगारह जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिण्णि संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्साओ, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया,

गति ये दो गतियां, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिक-काययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके तीन ज्ञान, संयमासंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहो लेइयापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेइयापं, भव्यसिद्धिक, औपशमिक-सम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, दशों प्राण, सात प्राण, चारों संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, औदारिककाययोग और आहारककाययोगद्विक ये ग्यारह योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि ये तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे तेज, पद्म और शुक्ल लेइयापं; भव्यसिद्धिक,

नं. ५३०

आहारक संयतासंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	४	२	१	१	९	३	४	३	१	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
देश.	स	प			ति	प	त्र	म ४			मति.	देश	के. द	मा ३	म	औप.	स	आहा	साका.
					म			व ४			श्रुत		विना	शुभ		क्षा			अना.
								औ. १			अव					क्षायो			

नं. ५३१

आहारक प्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

गु.	जी.	प.	प्रा.	स.	ग.	इ.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	सय.	द.	ले.	म.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१	२	६	१०	४	२	१	१	११	३	४	४	३	३	द्र. ६	१	३	१	१	२
प्रम.	म	प	६	७	म	प.	त्र	म ४			मति.	सामा	के. द	मा ३	म	औप	स.	आहा	साका.
	म	अ						व. ४			श्रुत	छेदो	विना	शुभ		क्षा			अना.
								औ. १			अव	परि				क्षायो			
								आ. २			मन								

तिणिण सम्मत्तं, सणिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

एत्थ पज्जत्तापज्जत्ता आलावा वत्तन्वा । एवं सव्वत्थ ।

आहारि-अप्पमत्तसंजदाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, तिणिण सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसक्काओ, णव जोग, तिणिण वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, तिणिण संजम, तिणिण दंसण, दव्वेण छ लेस्सा, भावेण तेउ-पम्म-सुक्कलेस्साओ; भवसिद्धिया, तिणिण सम्मत्तं, सणिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५३२} ।

आहारि-अपुव्वयरणाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ

औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

इस आहारक प्रमत्तसंयत गुणस्थानमें पर्याप्त और अपर्याप्तकालसंबन्धी आलाप भी कहना चाहिये । इसीप्रकार जहां पर संज्ञी-पर्याप्त और संज्ञी-अपर्याप्त ये दो जीवसमास हों वहां भी सामान्य आलापके अतिरिक्त दोनों प्रकारके आलाप और कहना चाहिए ।

आहारक अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप कहने पर—एक अप्रमत्तसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके बिना शेष तीन संज्ञाएं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक आदि तीन संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्याएं, भावसे तेज, पञ्च और शुक्ल लेख्याएं, भव्यसिद्धिक, औपशमिकसम्यक्त्व आदि तीन सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवोंके आलाप कहने पर—एक अपूर्वकरण गुण-

नं. ५३२

आहारक अप्रमत्तसंयत जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा.	सय	द	ल	म	स	संज्ञि	आ	उ
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	३	३	द्र.६	१	३	१	१	२
स	प			आहा	म	प.	व	म ४			माति.	सामा.	के द	मा ३	म	औप	स	आहा	साका
				विना.				व ४			श्रुत	छेदो	विना	शुभ		क्षा			अना.
								औ. १			अव	परि.				क्षायो			
											मन								

पज्जत्तीओ, दस पाण, तिण्णि सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारु-
वजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{५३} ।

^{५४}आहारि-पढम अणियट्ठीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, दो सण्णाओ, मणुसगदी, पंचिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, चत्तारि णाण, दो संजम, तिण्णि दंसण, दब्बेण छ लेस्सा,

स्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, आहारसंज्ञाके विना शेष तीन संज्ञापं, मनुष्यगति, पचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदा-
रिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामायिक आदि दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे शुक्कलेख्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संज्ञिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके प्रथम भागवर्ती जीवोंके आलाप कहने पर—एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, मैथुन और परिग्रह ये दो संज्ञापं, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचन-
योग और औदारिककाययोग ये नौ योग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके चार ज्ञान, सामा-
यिक आदि दो संयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेख्यापं, भावसे शुक्कलेख्या, भव्य-

नं. ५३३

आहारक अपूर्वकरणगुणस्थानवर्ती जीवोंके आलाप.

यु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	३	१	१	१	९	३	४	४	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अपू	स प.			आहा विमा	म	प	त्र	म ४ व ४ औ १			मति श्रुत अव मन .	सामा छेदो	के.द. विना	शुक्क	म	औप क्षा	स.	आहा.	साका. अना

नं. ५३४

आहारक अनिवृत्तिकरणके प्रथम भागवर्ती जीवोंके आलाप.

यु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सहि	आ	उ
१	१	६	१०	२	१	१	१	४	३	४	४	२	३	द्र. ६	१	२	१	१	२
अनि प्रम	छं छं			मै. पति	म	पं.	त्र.	म. ४ व ४ औ. १			मति श्रुत. अव. मन .	सामा छेदो	के.द. विना	शुक्क	म	औप क्षा.	स	आहा.	साका. अना.

भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा ।

सेस-चट्ठमणियद्धीणं ओव-भंगो ।

आहारि-सुहुमसांपराइयाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, सुहुमपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगद्वेदो, सुहुमलोहकसाओ, चत्तारि णाण, सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{२५} ।

आहारि-उवसंतकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, उवसंतपरिग्गहसण्णा, मणुसगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव

सिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थानके शेष चार भागोंके आलाप ओघाटापके समान होते हैं ।

आहारक सूक्ष्मसाम्परायी जीवोंके आलाप कहने पर—एक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, सूक्ष्म परिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, सूक्ष्म लोभकषाय, आदि के चार ज्ञान, सूक्ष्म साम्परायिकशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेश्याप, भावसे शुक्ललेश्या, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक येदो सम्यक्त्व, सन्निक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक उपशान्तकषायी जीवोंके आलाप कहने पर—एक उपशान्तकषाय गुणस्थान, एक संक्षी-पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, उपशान्तपरिग्रहसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग,

नं. ५३५

आहारक सूक्ष्मसाम्परायी जीवोंके आलाप.

गु	जी	प	प्रा	सं	ग.	इ	का	यो	वे	क	झा	सय	द.	ले	म	स	संक्षि	आ	उ.
१	१	६	१०	१	१	१	१	९	०	१	४	१	३	६	१	२	१	१	२
सूक्ष्म	प	हं	पिक	म.	प	त.	म	व	अपरा	लिं	मति	सूक्ष्म	के	मा	औप	स	आहा	साका	अना
							व ४	औ. १		स	श्रुत		विना.	शुक्ल		क्षा			
											मन .								

जोग, अवगदवेदो, उवसंतलोहकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजमो, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, दो सम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{११} ।

आहारि-खीणकसायाणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणट्ठाणं, एओ जीवसमासो, छ पज्जत्तीओ, दस पाण, खीणसण्णाओ, मणुसगदी, पच्चिदियजादी, तसकाओ, णव जोग, अवगदवेदो, अकसाओ, चत्तारि णाण, जहाक्खादविहारसुद्धिसंजम, तिण्णि दंसण, दव्वेण छ लेस्साओ, भावेण सुक्कलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, सण्णिणो, आहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१२} ।

अपगतवेद, उपशान्तलोभकषाय, आदिके चार ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, औपशमिक और क्षायिक ये दो सम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

आहारक क्षीणकषायी जीवोंके आलाप कहने पर—एक क्षीणकषाय गुणस्थान, एक संज्ञी-पर्याप्ति जीवसमास, छहों पर्याप्तियां, दशों प्राण, क्षीणसंज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, चारों मनोयोग, चारों वचनयोग और औदारिककाययोग ये नौ योग, अपगतवेद, अकषाय, आदिके चार ज्ञान, यथाख्यातविहारशुद्धिसंयम, आदिके तीन दर्शन, द्रव्यसे छहों लेइयापं, भावसे शुक्कलेइया, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संश्लिक, आहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

नं ५३६

आहारक उपशान्तकषायी जीवोंके आलाप.

शु	जी.	प	प्रा	स.	ग	इ	का	यो.	वे.	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	भ	स	संज्ञि.	आ.	उ.
१	१	६	१०	०	१	१	१	९	०	०	४	१	३	द्र ६	१	२	१	१	२
उप.	स प			स	म	प	त्र.	म ४	व ४	अप	मति	यथा.	के द.	मा १	म	औप.	स	आहा	साका.
				उप				औ. १	अप	सप.	श्रुत		विना.	शुक्क.		क्षा			अना.
											अव								
											मन								

नं. ५३७

आहारक क्षीणकषायी जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स.	ग	इ	का	यो	वे.	क	ज्ञा	सय	द.	ले.	भ	स	संज्ञि.	आ	उ
१	१	६	१०	०	१	१	१	९	०	०	४	१	३	द्र ६	१	१	१	१	२
क्षीण	स प.			क्षीण	म	प	त्र.	म ४	व ४	अप	मति	यथा.	के द.	मा १	म	औप.	स	आहा	साका.
								औ १	अप	अप	श्रुत		विना.	शुक्क.		क्षा			अना.
											अव								
											मन								

समास तथा अतीतजीवसमास न भी है, छहों पर्याप्तियां, छहों अपर्याप्तियां, अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां तथा अतीतपर्याप्तिस्थान भी है, प्राण, सात प्राण, छह , चार प्राण, तीन , दो , तथा अतीतप्राण भी है, चारों सं तथा क्षीणसंज्ञास्थान भी है, चारों । तथा सिद्धगति भी है, पांचों जातियां तथा अतीत स्थान भी है, छहों काय तथा अकायस्थान भी है, कर्मणकाययोग तथा अयोगस्थान भी है, तीनों वेद तथा अपगतवेदस्थान भी है, चारों कषाय तथा अकषायस्थान भी है, विभंगावाधि तथा मनःपर्ययज्ञानके बिना शेष छह , असंयम और यथाख्यातसंयम ये दो संयम तथा , अ और संयम इन तीनों से रहित भी स्थान है, चारों दर्शन, द्रव्य और भावसे छहों लेख्याएं तथा अलेख्यास्थान भी है, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक तथा भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक इन दोनों से रहित भी स्थान है, सम्यग्भिध्यात्वके बिना सम्यक्त्व, संक्षिक, असं तथा संक्षिक और असंक्षिक इन दोनों से रहित भी स्थान है, अनाह , साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी तथा साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त भी होते हैं ।

अनाहारक जीवोंके सामान्य आलाप.

५	जी	प	प्रा	स.	ग	ह	का.	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	छे	म.	स.	संदि.	आ.	ड.
५ मि	८ अप	६ प	७	४	४	५	क	१	२	४	६	२	४	३.६	२	५	२	१	२
सा	७	६अ	७	४	४	५	क	१	२	४	६	२	४	३.६	२	५	२	१	२
अवि.	अयो	५,	६	६	६	६	सिद्धग.	सिद्धग.	अती	अकाय.	कार्म.	अपग.	अकषा.	विभ	अस.	मा.६	म	सम्य	सं
तयो	प १	४,	५	५	५	५	अती	अती	अती	अयोग	अयोग	अपग.	अकषा.	मन	यथा	अले	अ.	विना	अस.
अयो.	अती	अती	४ ३	४ ३	४ ३	४ ३	अती	अती	अती	अयोग	अयोग	अपग.	अकषा.	मन	यथा	अले	अ.	विना	अस.
अ शु.	जीव	प	५	५	५	५	अती	अती	अती	अयोग	अयोग	अपग.	अकषा.	मन	यथा	अले	अ.	विना	अस.
						</													

अणाहारि-मिच्छाइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, सत्त जीवसमासा, छ अपज्जत्तीओ पंच अपज्जत्तीओ चत्तारि अपज्जत्तीओ, सत्त पाण सत्त पाण छ पाण पंच पाण चत्तारि पाण तिण्णि पाण, चत्तारि सण्णाओ, चत्तारि गदीओ, पंच जादीओ, छ काय, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण, असंजमो, दो दंसण, दब्बेण सुक्कलेस्सा, भावेण छ लेस्साओ; भवसिद्धिया अभवसिद्धिया, मिच्छत्तं, सण्णिणो असण्णिणो, अणाहारिणो, सागारुवजुत्ता होंति अणागारुवजुत्ता वा^{१०} ।

“अणाहारि-सासणसम्माइड्डीणं भण्णमाणे अत्थि एयं गुणद्वाणं, एगो जीवसमासो, छ अपज्जत्तीओ, सत्त पाण, चत्तारि सण्णाओ, तिण्णि गद्दीओ, णिरयगदी गत्थि; पंचिंदियजादी, तसकाओ, कम्मइयकायजोगो, तिण्णि वेद, चत्तारि कसाय, दो अण्णाण,

अनाहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, पांच अपर्याप्तियां, चार अपर्याप्तियां, सात प्राण,

प्राण, छह प्राण, पांच प्राण, चार प्राण, तीन प्राण, चारों संज्ञापं, चारों गतियां, पांचों जातियां, छहों काय, कर्मणकाययोग, तीनों वेद, चारों कषाय, आदिके दो अज्ञान, असंयम, आदिके दो दर्शन, द्रव्यसे शुक्ललेइया, भावसे छहों लेइयापं, भव्यसिद्धिक, अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व, संज्ञिक, असंज्ञिक, अनाहारक, साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी होते हैं ।

अनाहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप कहने पर—एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी-अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियां, सात प्राण, चारों संज्ञापं, तिर्यंच, मनुष्य और देव ये तीन गतियां होती हैं, किन्तु यहांपर नरकगति नहीं है । पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय,

नं. ५४०

अनाहारक मिथ्यादृष्टि जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्ति	आ	उ
१	७	इअ.	७	४	४	५	६	१	३	४	२	१	२	द्र १	२	१	२	१	२
मि.	अप	५,, ४,,	७ ६ ५ ४ ३					कर्म			कुम कुशु	अस	चक्षु अच	शु मा ६	म अ.	मि	स अस.	अना	साका. अना

नं. ५४१

अनाहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके आलाप.

शु	जी	प	प्रा	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द	ले	म	स	सक्ति	आ	उ
१	१	६	७	४	३	१	१	१	३	४	२	१	२	द्र १	२	१	१	१	२
सा.	कं	अ			ति.	प	त्र	कर्म			कुम. कुशु	अस	चक्षु अच.	शु मा ६	म. मासा	नासा	स	अना	साका. अना.

छ ले ओ, भवेण अलेस्सा; भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो,
अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा ।

अणाहारि-सिद्धाणं भण्णमाणे अत्थि अदीदगुणट्ठाणाणि, अदीदजीवसमासा, अदीदपज्जत्तीओ, अदीदपाणा, खीणसण्णा, सिद्धगदी, अदीदजादी, अकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, णेव संजमो णेव असंजमो णेव संजमासंजमो, केवल-दंसण, दच्च-भावेहिं अलंस्सा, णेव भवसिद्धिया णेव अभवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णेव सण्णिणो णेव असण्णिणो, अणाहारिणो, सागार-अणागारेहिं जुगवदुवजुत्ता वा होति^{५५} ।

एवं आहारमगणा समत्ता ।

तद्देव च

संत-परूवणा समत्ता ।

द्रव्यसे छहों लेश्याप, भावसे अलेश्या, भव्यसिद्धिक, क्षायिकसम्यक्त्व, संज्ञिक और अस्ति इन दोनों विकल्पोसे रहित, अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त होते हैं।

अनाहारी सिद्धांतोंके आलाप कहने पर--अतीतगुणर , अतीतजीवसमास, अतीतपर्याप्ति, अतीतप्राण, क्षीणसंज्ञा, सिद्धगति, अतीतजाति, अकाय, अयोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, , असंयम और संयमासंयम विकल्पोसे विमुक्त, केवलदर्शन, द्रव्य और से अलेश्य, भव्यसिद्धिक और अभव्यसिद्धिक विकल्पोसे रहित, क्षायिकसम्यक्त्व, संश्लिष्ट और असंश्लिष्ट विकल्पोसे अतीत, अनाहारक, साकार और अनाकार इन दोनों उपयोगोंसे युगपत् उपयुक्त हैं।

इसप्रकार आहारमार्गेणा समाप्त हुई । और इसीप्रकार उसके साथ सत्प्ररूपणा भी समाप्त हुई ।

नं. ५४५

अनाहारी सिद्ध जीवोंके आलाप.

अती. य. ०	अती. जी. ०	प. ०	प्र. ०	स. ०	य. ०	न. ०	अ. ०	यो. ०	अ. ०	क. ०	सा. ०	सय. ०	द. ०	अ. ०	म. ०	स. ०	संवि. ०	जा. ०	व. ०
		अती. प. ०	अती. प्र. ०	अती. स. ०	अती. य. ०	अती. न. ०	अती. अ. ०	अती. यो. ०	अती. अ. ०	अती. क. ०	अती. सा. ०	अती. सय. ०	अती. द. ०	अती. अ. ०	अती. म. ०	अती. स. ०	अती. संवि. ०	अती. जा. ०	अती. व. ०



पारिभाषिक

(यहाँ उन्हीं शब्दोंका संग्रह किया गया है जिनकी निर्दिष्ट पृष्ठपर परिभाषा पाई जाती है ।)

१ पारिभाषिक-शब्द-सूची

शब्द	पृष्ठ	शब्द	पृष्ठ
अकषाय	३५१	अयोगकेवली	१९२
अक	२६६, २७७	अयोगी	२८०
अग्रायणीय	११५	अरतिवाक्	११७
अचक्षुर्वर्शन	३८२	अरिहंत	४२, ४३
अचित्तमंगल	२८	अर्हत्	४४
अज्ञान	३६३, ३६४	अलेश्य	३९०
अतीतपर्याप्ति	४१७	अल्पबहुत्व (अनुयोग)	१५८
अतीतप्राण	४१९	अवग्रह	३५४, ३७९
अन्तकृद्दशा	१०२	अवधि	३५९
अन्तरात्मा	१२०	अवधिज्ञान	९३, ३५८
अर्थनय	८६	अवधिदर्शन	३८२
अर्थावग्रह	३५४	अवयवपद	७७
अधिराज	५७	अवाय	३५४
अधुवावग्रह	३५७	असत्यमन	२८१
अर्धमण्डलीक	५७	असत्यमोषमनोयोग	२८१
अनाहार	१-३	असद्भावस्थापना	२०
अनादिसिद्धान्तपद	७६	असंयत	३७३
अनिन्द्रिय	२६४	असंयतसम्यग्दृष्टि	१७१
अनिवृत्ति	१८४	अस्तिनास्तिप्रवाद	११५
अनिवृत्तिवादरसाम्पराय	१८४	आ	
अनुत्तरौपपादिकदशा	१०३	आकाशगता	११३
अपगतवेद	३४२	आक्षेपणी	१०५
अपर्याप्त	२६७, ४४४	आगमद्रव्यमंगल	२१
अपर्याप्ति	२५६, २५७	आचारांग	९९
अपूर्वकरण	१८०, १८१, १८४	आचार्य	४८, ४९
अपक्रायिक	२७३	आत्मप्रवाद	११८
अप्रणतिवाक्	११७	आत्मा	१४८
अप्रमत्तसंयत	१७८	आदानपद	७५
अप्रवीचार	३३९	आनापानपर्याप्ति	२५५
अप्रद्धप्रलाप	११७	आभिनिबोधिकज्ञान	९३, ३५९
अभव्य	३९४	आभ्यन्तर निवृत्ति	२३२
अभ्याख्यान	११६	आहार	१५०
अयोग	१९२	आहारक	
		आहारककाययोग	

आहारपर्याप्ति	२५४
आहारमिश्रकाययोग	२९३, २९४
आहारसंज्ञा	४१४

इ

इन्द्रिय	१३६, १३७, २३२, २६०
इन्द्रियपर्याप्ति	२५५
इष्टगति	२९९
ईगिनीमरण	२४

इ

ईहा	३५४
-----	-----

उ

उक्तावग्रह	३५७
उत्तराध्ययन	९७
उत्पादपूर्व	११४
उत्पादानुच्छेद	[परिशिष्ट भा. १] २८
उदीरणोदय	[परिशिष्ट भा. २] १६
उपकरण	२३६
उपक्रम	७२
उपधिवाक्	११७
उपयोग	२३६, ४१३
उपशम	२११
उपशमसम्यग्दर्शन	३९५
उपशमसम्यग्दृष्टि	१७१
उपशान्तकषाय	१८८, १८९
उपाध्याय	५०
उपासकाध्ययन	१०२

ए

एकोन्द्रिय	२४८, २६४
एवंभूत	९०

औ

औदयिक	१६१
औदारिककाययोग	२८९, ३१६
औदारिकमिश्रकाययोग	२९०, ३१६
औपशमिक	१६१, १७२

क

कर्ता	११९
कर्मप्रवाद	१२१

कर्ममंगल	२६
कल्प्यव्यवहार	९८
कल्प्याकल्प्य	९८
कल्याणन	१२१
कषाय	१४१
कापोतलेइया	२८९
काय	१३८, ३०८
काययोग	२७९, ३०८
कार्मण	२९५
कार्मणकाय	२९९
कार्मणकाय	२९५
कालमंगल	२९
कालानुयोग	१५८
क्रिया	१८
क्रियाविशाल	१२२
कृतिकर्म	९७
कृष्णलेइया	३८८
केवलज्ञान	९५, १९१, ३५८, ३६०, ३८५
केवलदर्शन	३८२
क्रोध	३५०
क्रोधरूपाय	३४९
क्षपण	२१६
क्षायिक	१६१, १७२
क्षायिकसम्यक्त्व	३९५
क्षायिकसम्यग्दृष्टि	१७१
क्ष.योपशमिक	१६१, १७२
क्षीणकषाय	१८९
क्षीणकषायधीतरागछद्मस्थ	१९०
क्षीणसंज्ञा	४१९
क्षेत्रमंगल	२८
क्षेत्रज्ञ	१२०
क्षेत्रानुयोग	१५८

ग

गुण	१७४
गुणनाम	१८
गोमूत्रिकागति	३००
गौण्यपद	७४

घ

घ्राणनिर्जृम्भित	२३५
------------------	-----

चक्षुर्दर्शन	३७९, ३८२
चक्षुरिन्द्रिय	२६४
चतुरिन्द्रिय	२४४, २४८
चतुर्विंशतिस्तव	९६
चन्द्रप्रज्ञप्ति	१०९
चयनलब्धि	१२४
क्यावित	२२
च्युत	२२
चैतन्य	१४५

छ

छद्मार्थ	१८८, १९०
छेदोपस्थापक	३७२
छेदोपस्थापनशुद्धि	३७०

ज

जनपदसत्य	११८
जन्तु	१२०
जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति	११०
गता	११३
जाति	१७
जीव	११९
जीवसमास	१३१
जीवस्थान	७९
	३५३, ३६३, ३८४
प्रवाद	१४२, १४३, १४६, १४७, ३६४

त

तदुभयवक्तव्यता	८२
तिर्यग्गति	२०२
तीर्थकर	५८
तेजोलेख्या	३८९
तैजस्काय	२७३
त्यक्त	२६
त्रसकाय	२७४
त्रिखण्डधरणीश	५८
त्रीन्द्रिय	२४२, २४८, २६४

द

दशवैकालिक	९७
-----------	----

दर्शन

१४५, १४६, १४७, १४८
१४९, ३८३, ३८४, ३८५

दृष्टिवाद

१०९

देव

२०३

देवगति

२०३

देशसत्य

११८

द्रव्य

८३, ३८६

द्रव्यमन

२५९

द्रव्यमल

३२

द्रव्यमंगल

२०, ३२

द्रव्या

८३

द्रव्यानुयोग

१५८

द्रव्येन्द्रिय

२३२

द्वीन्द्रिय

२४१, २४८, २६४

द्वीपसागरप्रज्ञप्ति

११०

घ

धारणा

३५४

ध्रुवावग्रह

३५७

न

नपुं

३४१, ३४२

नय

८३

नरकगति

२०१, ३०२

नारक

२०१

नाथधर्मकथा

१०१

न द

७७

मंगल

१७, १९

सत्य

११७

निकृतिवाक्

१२७

निक्षेप

१०

निरतगति

२०१

निर्वेदनी

१०५

निषि

९८

नीललेख्या

३८९

नैगमनय

८४

नोगौण्यपद

७४

प

पञ्चलेख्या

३९०

परसमयवक्तव्यता

८२

परिणाम

१८०

परिग्रहसंज्ञा	४१५	निर्वृत्ति	२३४
परिहारशुद्धिसंयत	३७०, ३७१, ३७२	भ	
पर्याप्त	२५४, २६७	भक्तप्रत्याख्यान	२४
पर्याप्ति	२५७	भव्य	१५०
पर्याय	८४	भव्यनोभ द्रव्य	२६
पर्यायार्थिक	८४	भव्यसिद्ध	३९२, ३९४
पश्चादानुपूर्वी	७३	भाव	२९
पाणिमुक्तागति	३००	भावमन	२५९
पारिणामिक	१६१		३२
पुद्गल	११९	भावमंगल	२९, ३३
पुरुष	३४१	भावलेख्या	४३१
पूर्वगत	११२	भावसत्य	११८
पूर्वानुपूर्वी	७३	भावानुयोग	१५८
पैशुन्य	११७	ेन्द्रिय	२३६
पंचेन्द्रिय	२४६, २४८, २६४	भाषापर्याप्ति	२५५
पंचेन्द्रियजाति	२६४	भोक्ता	११९
पुंवेद	३४१	म	
पुण्डरीक	९८	मतिज्ञान	३५४
प्रतिक्रमण	९७	मत्यज्ञान	३५८
प्रतिपक्षपद	७६	मनस्	३०८
प्रवीचार	३३८, ३३९	मनःपर्यय	९४, ३५८, ३६०
प्रतीत्यसत्य	११८	मनःपर्याप्ति	२५५
प्रत्यक्ष	१३५	मनःप्रवीचार	३३९
प्रत्याख्यान	१२१	मनुष्य	२०३
प्रत्येकअनन्तकाय	२७३	मनुष्यगति	२०२
प्रत्येकशरीर	२६८	मनोयोग	२७९, ३०८
प्रथमानुयोग	११२	महाकल्प्य	९८
प्रमत्तसंयत	१७६	महापुण्डरीक	९८
प्रमाणपद	७७	महामंडलीक	५८
प्ररूपणा	४११	महाराज	५७
प्रश्नव्याकरण	१०४	मान	३५०
प्राण	२५६, ४१२	मानकपाय	३४९
प्राणावाय	१२२	मानी	१२०
प्राणी	११९	माया	३५०
प्राधान्यपद	७६	मायाकपाय	३४९
प्रायोपगमन	२३	मायागता	११३
		मायी	१२०
		मार्गण	१३१
धादर	२४०, २६७		
बादरकर्म	२५३		

मिथ्यादर्शनवाक्	११७
मिथ्यादृष्टि	१६२, २६२, २७४
मिश्रमंगल	२८
मैथुनसंज्ञा	४१५
मोषमनोयोग	२८०, २८१
मंग	३३
मंगल	३२, ३३, ३४
मंडलीक	५७

य

यथाख्यातवि	शुद्धिसंयत	३७१
यथाख्यातसंयत		३७३
यथातथानुपूर्वी		७३
योग		१४०, २९९
योगी		१२०

र

रतिवाक्	११७
रसननिर्वृत्ति	२३५
राजा	५७
रूपगता	११३
रूपप्रवचन	३३९
रूपसत्य	११७

ल

लब्धि	२३६
लांगलिका	२००
लेश्या	१४९, १५०, ३८६ ४३१
लोकविन्दुसार	१२२
लोभ	३५०

व

वक्ता	११९
वचस्	३०८
वन्दना	९७
वस्तु	१७४
वाग्गुप्ति	११६
वाग्योग	२७९, ३०८
वायुकायिक	२७३
विक्षेपणी	१०५
विक्रिया	२९१
विग्रहगति	२९९

विद्यानुवाद	१२१
विपाकसूत्र	१०७
विभंगज्ञान	३५८
विष्णु	११९
वीर्यानुप्रवाद	११५
वृत्ते	१३७, १४८
वेद	११९, १४०, १४१
वेदक	३९८
वेदकसम्यग्दृष्टि	१७१
वेदकसम्यक्त्व	३९५
वेदनाकृतप्रभृत	१२५
वैक्रियिक	२९१
वैक्रियिककाययोग	२९१
वैक्रियिकमिश्रकाययोग	२९१, २९२
व्यवहार	८४
व्याख्याप्रज्ञप्ति	१०१, ११०
व्यजननय	८६
व्यजनावप्रद	३५५

श

शब्दनय	८७
शब्दप्रवीचन	२३९
शरीरपर्याप्ति	२५५
शरीरी	१२०
शुक्लेश्या	३९०
श्रुतज्ञान	९३, ३५७, ३५९
श्रुताज्ञान	३५८
श्रोत्र	२४७

स

सचित्तमंगल	२८
सत्ता	१२०
सत्यप्रवाद	११६
सत्यमन	२८१
सत्यमनोयोग	२८०, २८१
सत्यमोषमनोयोग	२८०, २८१
सदनुयोग	१५८
सद्भावस्थापना	२०
समभिरूढ	८९
समयसत्य	११८

समवाय	१०१	सूत्रकृत्	९९
समवायद्रव्य	१८	सूर्यप्रज्ञाति	११०
सम्यक्त्व	१५१, ३९५	संकुट	१२०
सम्यग्दर्शन	१५१	संग्रह	८४
सम्यग्दर्शनवाक्	११७	संज्ञ	१५२
सम्यग्मिथ्यादृष्टि	१६६	संज्ञी	१५२, २५९
सयोग	१९१, १९२	संयतासंयत	१७३
सयोगकेवली	१९१	संयम	१४४, १७६, ३७४
साधारणशरीर	२६९	सयोगद्रव्य	१८
साधु	५१	संयोजनासत्य	११८
सामायिक	९६	संवृति	११८
सामायिकशुद्धिसंयम	३६९, ३७०	संवेदनी	१०५
सामायिकशुद्धि	३७३	स्त्री	३४०
सासादन	१६३	स्त्रीवेद	३४०, ३४१
सासादनसम्यग्दृष्टि	१६६	र	११३
सिद्ध	४६	स्थानांग	१००
सिद्धिगति	२०३	स्था	१९
सुचक्रधर	५८	स्थापनासत्य	११८
सूक्ष्म	२५०, २६७	स्पर्शन	२३७
सूक्ष्मकर्म	२५३	स्पर्शानुगम	१५८
सूक्ष्मसांपराय	३७३	स्पर्शप्रवाचार	३३८
सूक्ष्मसांपरायशुद्धिसंयत	१८६, ३७१	भू	१२०
सूत्र	११०	स्व यवक्तव्यता	८२

२ अवतर - गाथा-सूची

क्रम सं.	गाथा	पृ.	अन्यत्र कहा	क्रम सं.	गाथा	पृ.	अन्यत्र कहा
२१८	आहार-सरीरिदिय-	४१७	गो जी ११९	२२७	तिण्हं दोण्हं दोण्हं	५३४	गो. जी ५३४
२२२	काऊ काऊ काऊ	४५६	गो जी ५२९	२२६	तेऊ तेऊ तेऊ	५३४	गो. जी. ५३५
२२३	किण्हा भमरसवण्णा	५३३	पञ्चसं १, १८३	२२१	दस सण्णीणं पाणा	४१८	गो. जी १३३
२१७	गुण जीवा पज्जत्ती	४१२	गो जी, २	२२४	पडमस	५३३	पञ्चसं १, १८४
२१९	जह पुण्णापुण्णाई	४१७	गो जी. ११८	२२०	पंच वि ईदियपाणा	४१७	गो. जी. १३०
२२५	णिम्मूलखंधसाहुव-	५३३	गो जी ५०८	२२९	मणपज्जव परिहार	८२४	गो. जी. ७२९

(अर्धसमता)

३ प्रतियोंके पाठ-भेद

पृष्ठ	पंक्ति	अ	आ	क	स	मुद्रित
४११	४	सण्णि-असण्णीसु	सण्णीसु असण्णीसु	सण्णि-असण्णीसु	सण्णि-असण्णीसु	सण्णि-असण्णीसु
४११	६	पण्णत्ती	पज्जत्ती	पण्णत्ती	पज्जत्ती	"
४१२	५	-मापेक्षया	-मापेक्ष्य	"		-मापेक्षया
४१२	११	-यस्यैकत्वाभावाच्च	यस्य चैकत्वाभावात्	"		-यस्य चैकत्वाभावात्
४१३	३	-संज्ञायां	"	"		-संज्ञाया
४१३	४	लोभोदयस्य	लोभोदय	"		लोभोदय-
४१३	७	संज्ञान-	संज्ञाज्ञान-			संज्ञान-
४१४	१	-संज्ञानां	"	-संज्ञायां		-संज्ञानां
४१४	८	मायाप्रेमयो-	"	"	मायालोभयो-	"
४१४	१०	-प्रभावा	"	"	-प्रभवा	"
४१५	६	इदिया	"	"	एइदिया	"
४१६	४	ए	एदे	ए	एवे	"
४१७	३	-गत-	-मल-	-गल-	"	"
४१७	४	-घद-	-गद-	"		-घड-
४१८	३	-आणापाणेहि	"	"	-आणापाणापाणेहि	-आणापाणपाणेहि
४१८	८	पज्ज-	अपज्ज-	"	"	"
४१८	११	-पज्जत्तस्स	"	"		पज्जत्तयस्स
४१९	३	एदासिं	एदेसिं	एदासिं		एदासिं
४२०	३	-विसिद्धे	"	-विसेसे		-विसिद्धे
४२०	११	-भावेण	"	"	-भावेहि	"
४२१	२	छण्णं भेदं	छल्लेस्साभेदं	छ-भेदं	छभेदं	"
४२१	८	सत्त पाण	"	"	पाण २	सत्त पाण सत्त पाण
४२२	९	भणदि	भणिदे	"		भण्णदे
४२५	४	-त्ताणे	-त्ताणं		-तोवे	"
४२६	६	-जुत्ता	"	जुत्ता वि ह्वीति		-जुत्ता वि अत्थि
		वि अत्थि	"			"
४२६	७	-णमोघालावे	-णं भण्णमाणे	-णमोघालावे		"
		भण्णमाणे	मोघालावे			"
४३६	८	अपज्ज-	"	"	पज्ज	"
४२८	४	अणाहारिणो	"	अणाद्वा०		आहारिणो
४३०	२	पज्जत्तीओ	"	"		अपज्जत्तीओ
४३०	७	-जीवाणं	जीवा ण	-जीवाणं		जीवा ण
४३३	१	x	-मोघालावे	"	-मोघे	-मोघालावे

४३३	२	दसण	"	"	सण्णाओ	"
४३६	३	अत्थि	"	"	णत्थि	"
४३६	१०	-दयाण सदि	"	"	-दयो णस्सदि	"
४३८	४	-माण-	"	"	-माया-	"
४४३	२	णिव्वत्त-	"	णिच्चत्त	"	"
४४४	४	भवति	हवन्ति	भवन्ति		भणन्ति
४४४	७	भवति	हवन्ति	भवन्ति		"
४४६	२	अत्थि	णत्थि	,		"
४४७	३	लेव-	णेव-	सेव-		लेव-
४४८	८	करणेत्ति	"	"	सण्णेत्ति	कण्हेत्ति
४५३	३	णाण	"	"	"	अण्णाण
४५८	३	पज्ज०	"	अपज्जत्तीओ		"
४५९	४	काउसुक्क-	"	"		काउ-
४६०	१	काउसुक्क-	"	"		काउ-
४६०	४	पज्ज०	"	"		अपज्जत्तीओ
४७०	२	तदिय-	"	"	एवं तदिय-	"
४७०	३	इंदियाण	"	"		इंदयाणं
४७१	१	एदो ओदो	"	एदाओ दो		"
४७१	४	पच्चिदिय-अपज्जत्ता			पच्चिदियतिरिक्ख-अपज्जत्ता	
४७१	८	अणाहारिणो	"	"		आहारिणो
४७६	८	सत्त पाण	"	"	दस पाण सत्त पाण	"
४७८	२	पज्जत्तीओ	"	"		अपज्जत्तीओ
४७८	६	सम्मामित्थाइट्ठीण सम्माइट्ठीणं	"	"	सम्मामिच्छाइट्ठीणं	"
४८१	३	-जमाणं	-जमाणाणं	जमाणं		-जमाणं
४८२	७	पच्चिदियतिरिक्खाणं पच्चिदियति-	पच्चिदियतिरिक्ख०	पच्चिदियतिरिक्खाणं		पच्चिदिय-तिरिक्खाणं
४८३	७	x	खइयसम्मत्तं खइयसम्माइट्ठी	खइयसम्मत्तं	"	
४८८	७	आहारिणो	"	"	आहारिणो अणाहारिणो,	
४९२	७	णव पाण	"	"	णव पाण सत्त पाण	
४९७	८	दव्वभावेहि	दव्वभावेण	दव्वभावेहि		"
४९८	२	असण्णिणीओ	"	"	सण्णिणीओ	"
४९८	७	-काउसुक्कलेस्सावि	-काउसुक्कलेस्साओ	-काउसुक्कले		काउलेस्साओ
५००	८	सत्त पाण	"	"	सत्त पाण २	सत्त पाण सत्त पाण
५०२	"	अजोगी	अजोगो	"		"
५०२	७	असण्णिणो	असण्णिणो	असण्णिणो		णेव सण्णिणो णेव
		चि अत्थि	अणुभया वा चि अत्थि			असण्णिणो चि अत्थि

५०४	४	पंच णाण	पंच णाण	पज्जवकेवल-	पंच णाण केवलणा-
		केवलणाणेण	केवलणाणेण	णाणेण विणा	णेण छ णाण
		छ णाण	विणा छ णाण	छ णाण	
५१०	९	पज्ज-	"	"	अपज्ज-
५११	६	-लेस्साओ	"	"	-लेस्साहि
५१२	४	।रु० होंति	"	सागार अणागारेहि	सागारुवजुत्ता होंति
		अणा० वा		जुगवदुवजुत्ता वा होंति।	अणागारुवजुत्ता वा
५१३	५	सम्मत्तसंजदप्पहुडि	"	"	पमत्तसंजदप्पहुडि
५१३	७	वेदोपि	"	"	-वेदे पि
५१५	४	तासिं	तस्सेव	तासिं	"
५१५	५	पज्जत्तीओ	"	"	अपज्जत्तीओ
५१५	६	×	×	×	चत्तारि कसाय
५१८	८	सागारुवजुत्ता	सागारअणा-	सागार अणा-	सागारुवजुत्ता होंति
		होंति अणागा-	गारेहिं जुग-	गारेहिं अणु-	अणागारुवजुत्ता वा
		रुवजुत्ता वा	वदुवजुत्ता वा	भओ वा ।	
५२८	२	मणुसिणी-उवसंत-	मणुसिणीसु-उव	"	"
५३०	६	णेव सण्णिणीओ	"	"	णेव साण्णिणीओ
					णेव असण्णिणीओ,
५३१	५	देवगदीए	देवगदीणं	देवगदीए	देवगदीए
५३२	६	पदं ण घडदे	पदं घडदे	पदं ण घडदे	"
५३३	१	णीलाघण-	णीलायण-	णील -	णीला पुण
		णीलगुलिय-	णीलगुणिय-	णीलगुलिय-	णीलगुलिय-
५३३	३	पउवसवण्णा	"	"	पउमसवण्णा
५३३	६	बुच्चित्तु	बुच्चिबु	"	बुच्चित्तु
५३३	७	-लेस्साणं	-लेस्साइं	-लेस्साणं	-लेस्साणं
५३५	१	भावदो	"	"	भावदो
५३९	१	दो गदि	"	"	"
५४२	७	पज्ज-	"	"	देवगदी
५५२	२	आहारिणो	अणाहारिणो	"	अपज्ज-
५५२	५	पज्जत्तीओ	"	"	आहारिणो
५५४	७	पज्जत्तीओ	"	"	अपज्जत्तीओ
५५५	४	णाण	"	"	अपज्जत्तीओ
५५५	५	दव्वेण काउ सुक	दव्वेण काउसुक	दव्वेण काउसुक०	"
		मज्झिमा तेउलेस्सा	मज्झिमा तेउ	मज्झिमा तेउले०	दव्वेण काउ-सुक-
		भावेण	लेस्सा भावेण	भावेण ।	मज्झिम-तेउलेस्सा
			मज्झिमा तेउ-		भावेण मज्झिमा
			लेस्साओ		तेउलेस्सा।

५५८	१	दन्वेण काउसुक-	दन्वेण काउसुक-	दन्वेण काउसुक-	दन्वेण काउ-सुक-
		लेस्सा	मज्झिमा तेउलेस्सा	मज्झिम- तेउलेस्सा	
५५९	६	-यारुहिय	"	"	-मारुहिय "
५६०	१	पुणोहिणा	पुणोहिणा	पुणोहिणा	पुणोदिण्णा "
५६१	७	-सुक-उक्कस्स-	"	"	सुक-जहण्ण दन्वेण काउ-सुक
		जहण्ण-			उक्कस्स-तेउ-जहण्ण-
५६४	६	-पादिंकर-	"	पीदिंकर-	"
५६८	६-७	एवं देवगदीए	"	,	एवं देवगदी । सिद्ध-
		सिद्धभंगो			गदीए सिद्धभंगो ।
५६९	३	णेय असंजदा	"	"	णेव असंजदा णेव
		संजदा वि			संजदासंजदा वि ।
५६९	४	कायव्वा	"	"	वत्तव्वा "
५६९	९	पुढइ वणप्फइ	पुढविचणप्फइ	पुढइ वणप्फइ	पुढइ-वणप्फइ
५७०	५	सण्णिणो	"	"	असि १
५७१	६	आहारिणो	"	"	आहारिणो अणाहारिणो
५७४	१	सण्णिणो	"	"	असण्णिणो
५७५	९	असंजमोस-	"	"	असच्चमोस-
५८१	२	एवं चउरिंदिय	तेसिचेव	"	"
		अपज्जत्ताणं	अ त्ताणं		
५८३	७	दन्वेण छलेस्सा	"	"	दन्व-भावेहि छ लेस्सा
५८६	३	पज्जत्तीओ	"	"	अपज्जत्तीओ
५९१	१	कायाणुवादेण	"	"	कायाणुवादेण ओघालावे
					भण्णमाणे
५९१	३	अट्ठावीस वा	"	"	सोलस वा
५९१	४	चोवीस वा तेतीस वा	"	"	तेतीस वा, चउवीस वा
		चउतीस वा			
५९१	५	पतालीस	"	"	वायालीस
५९२	३	णिव्वत्तिपज्जत्त-	"	णिव्वत्तिअपज्जत्त-	"
५९२	१०	तसकाइया पंचिदिया	तसकाइया	तसकाइया दुविहा	तसकाइया दुविहा
		दुविहा पज्जत्ता	दुविहा पंचि-	पज्जत्ता अपज्जत्ता	पंचिदिया अपंचि-
		अपज्जत्ता । पंचि-	दिया दुविहा	पंचिदिया दुविहा	दिया । पंचिदिया
		दिया दुविहा सण्णी	पज्जत्ता अप-	सण्णिणो अस-	दुविहा सण्णिणो
		असण्णी सण्णी	ज्जत्ता सण्णि-	ण्णिणो । सण्णि०	असण्णिणो । सण्णि-
		दुविहा पज्जत्ता अप	णो असण्णिणो	दुविहो० पज्ज०	णो दुविहा पज्जत्ता
		ज्जत्ता । असण्णी	दुविहो २	अपज्ज असण्णि	अपज्जत्ता । असण्णि-
		दुविहा पज्जत्ता	पज्जत्ता अप-	दुविहो पज्ज०	णो दुविहा पज्जत्ता
		अपज्जत्ता ।	ज्जत्ता ।	अपज्ज० ।	अपज्जत्ता ।
५९८	८	पत्तेयं	पत्तेयं	पत्तेयं	"

६००	१	वीण	"	"	ए	पदे
६०२	३	तिणिण	"	"		दोपिण
६०३	४	अकसाधा	"	अकसाओ		"
६०४	२	मूलोघम्भुज्जीव-	"	"	मूलोघम्भुज्जीव-	"
६०६	२	पज्जत्तीओ	"	"		अपज्जत्तीओ
६०६	"	तिणिणगदी	"	तिरि० गदि		तिरिक्खगदी
६०९	३	आहारिणो	"	"		आहारिणो
						अणाहारिणो,
६०९	१२	-मुवसाणिय-	"	"	-मेव पाणीय-	"
६१०	३	एदं	"	"	एवं	"
६१०	६	-काइयणिव्वत्ति-	काइयाणं	"	"	-काइयणिव्वत्ति-
		पज्जत्ता-	पज्जत्ता-	X		पज्जत्तापज्जत्ताणं
६१०	९	पज्जत्तापज्जत्ताणा-	"	"		पज्जत्ताणा मकम्मोदय-
		मकम्मोदयाण				तेउकाइयाणं
६११	२	वणिज्ज-	"	"	तवणिज्ज-	"
६११	"	पज्जत्ताणं	"	पज्जत्तापज्जत्ताणं		पज्जत्ताणं
६१२	२	अण्णेयवण्णालावे	"	"	अण्णेयवण्णा	"
		गुलिवसा ।			तोवि रुढिवसा	"
६१४	७	भवसिद्धिया	"	"		भवसिद्धिया अभव-
						सिद्धिया,
६१५	८	पज्जत्तीओ	"	"	अपज्जत्तीओ	"
६२०	१०	तेसिं २	तेसिं	तेसिं २		तेसिं
६२१	१	वणप्फइकाओ	वणप्फइ-भंगो	"		"
		त्ति भंगो				
६२२	३	सत्त पाण	"	सत्त पाण २		सत्त पाण सत्त पाण
६२७	१	-इट्ठिप्पहुडि	-इट्ठिणप्पहुडि	इट्ठिप्पहुडि		"
६२७	३	चउगदिगदाओ	चउगदिगदीओ		चउगदिमदीओ	"
६२७	५	दव्व-भावेहि	"	"	दव्व-भावेहि अलेस्सा	"
		छ लेस्साओ				
६३३	४	इट्ठिदो	"	"	इदि दो	"
६३४	४	-जोगीणं भंगो	-जोगीभंगो	"		जोगि-भंगो
६३४	८	ताजोवि	"	"	ताओ वि	"
६५३	३	सण्णित्तिब्भु	"	सण्णित्तिब्भु		"
६५४	१	जोगोव उत्ताणं	जोगेव	जोगेव उत्ताणं	-जोगे वट्ठत्ताणं	-जोगे वट्ठत्ताणं
		उज्जत्ताणं				
६५४	१	छव्वण्णकालिय-	"	"	छव्वण्णोरालिय	"
		परमाणाणं			परमाणूणं	
६५४	२	परमाणादि	"	"	परमाणूदि सह	"
		सहामिलिदाणं			मिलिदाणं	

	कालोद-			कावोद-	
६५४	७ -केवलि	"	"	"	केवलिस्स
६५८	४ अयोग-	"	"	"	आयु
६५९	२ समणा	सभणा	समणा	समत्तो	समणा
६६०	५ एवंघ-	"	"	बंध-	"
६६९	६ विरहाकालाव-	"	"	विरहकालोव-	"
६७२	८ तंजहा णेदव्वा तम्हा णेदव्वा जं जहा णेदव्वा	जहा मूलोघो णीदो	तं जहा णेदव्वा	जहा मूलोघो णीदो	तहा णेदव्वा
६८४	८ सण्णिणो	"	"	"	सण्णिणो असण्णिणो
७००	१ अणियत्तं अणियट्ठियत्तं	अणियट्ठित्तं			अणियत्तं
		पि अत्थि			
७००	२ छ लेस्साओ	"	"	अलेस्साओ	"
७०५	५ आहारिणो	"	"		आहारिणो
	अणाहारिणो				
७१२	१० मुणं मुए	"	"	माण-माया-	"
७१३	३ × १० ४ २-१	×			×
७२६	७ -णाणाणं	"	"	-णाणाणि वत्तव्वाणि	"
	वत्तव्वाणं				
७२६	८ तिण्णि	"	"	- तेण	"
७२७	१ इयक्केसु सत्तीसु	"	"	इयरेसु संतेसु	"
७२७	२ -विवक्खियाणाण-	"	"	"	विवक्खियाणाण-
७२७	७ -तं पिच्छायद-	"	"	-तं पच्छायद-	-त्तपच्छायद-
७३०	४ मूलोघोव्व मूलोघौव्व	मूलोघौ			मूलोघो व्व
७३३	७ विवट्ठिदो	"	"	एवं छेदोवट्ठावण-	"
	वट्ठावण-				
७५०	१ स्त्रीणसण्णाविओ	"	स्त्रीणकसाओ		"
७५१	२ किण्ह-णील	किण्णलेस्साओ	किण्ण-णील०		किण्हलेस्सा
	काउलेस्साओ				
७५४	२ भावेण	भावेण छ लेस्साओ	"		भावेण किण्हलेस्सा
	वि एवं				
७६३	७ पंचिदियजादि	"	"	पंच जादीओ	"
७७८	४ × पिडियाए	×		पिडियाए	"
७९४	६ तिक्ख लाहाण	"	"	तिक्खलोहाणं	"
८०१	४ अजोगि-केवलि	जोगि-केवलि	अजोगिकेवलि	×	सजोगिकेवलि
८०१	५ अण्णलेस्साणं	"	"		अलेस्साणं
८१६	८ वेदगसम्माइट्ठि-			वेदगसम्माइट्ठि-	
	प्पट्ठि	"	"	पमत्त-	"

८२२	७	ओरालिय	॥	ओयरिय	॥	॥
८२२	८	तत्थुप्पत्तिहि-	तत्थुप्पत्तीहि-	तत्थुप्पत्ति-	संभवा-	॥
		भवा-	भवा-	॥	॥	॥
८२२	९	पाच्छगद-	॥	पछागद	पच्छागद-	॥
८२३	१	पडिवज्जति	॥	॥	पडिवज्जति	॥
८२३	२	उवसंघडिद-	उवसंहरिद-	॥	॥	॥
८२३	३	तल्लो उदिण्णाणं	॥	॥	तत्तो ओदिण्णाणं	॥
८२४	३	-सेसपज्जाणे	॥	॥	सेसयं जाणे	॥
८२५	९	एसत्था	॥	॥	एसत्थो	॥
		वत्तवा	॥	॥	वत्तव्वो	॥
८२९	६	सा सम्मा-	॥	॥	सण्णिसासणसम्मा-	॥
८३४	४	चत्तारि जोग	चत्तारि जोग	चत्तारि जोग-	चत्तारि जोग-	॥
		सव्वजोगो	असंजमो	सव्व जोगो	असच्चमोसव्वचि-	॥
			सव्वजोगो		जोगो	॥

४ प्रतियोंमें छूटे हुए पाठ.

पृष्ठ	पंक्ति	प्रति	कहासे	कहाँतक
४५५	३	अ		ओरालियकायजोगो
४६४	३	अ. आ क.		छ अपज्जत्तीओ,
५०८	७	अ	मणुस्स-सम्माभिच्छाइट्टीणं	... अणागारुवज्जुत्ता वा ।
५२४	७	आ.	मणुसिणी-विदिय-	... अणागारुवज्जुत्ता वा ।
५२९	१	आ.	द्व्वेण छ लेस्साओ	... केवलदंसण,
५४३	६	आ.	×	खइयसम् ेण विणा
५४४	१	आ.	तेसिं चैव पज्जत्ताणं	... अणागारुवज्जुत्ता वा ।
५६०	७	क	एवमित्थिपुरिस-	... मालावो वत्तव्वो
५६३	१०	अ. आ. क.	पज्जत्तकाले	... पम्मलेस्सा,
५६६	३	अ.	भिच्छाइट्टीण-	... को तत्थ
५७०	९	अ. आ. क.	भावेण	... काउलेस्सा,
५७८	५	अ. क.		तसकाओ,
५८६	३	अ. आ. क.		सत्त ,
५९२	५	अ. आ.	तसकाइया	... वियल्लिदिया त्ति

६००	५ क.	एहंदियजादि-आदी	अवगदवेदो वि अत्थि,
६३०	५ अ. आ. क.	तिणिण अण्णाण	चत्तारि कसाय,
६३६	७ अ. आ. क.	असच्चमोस-	णवरि
६५४	९ अ.	कवाडगद-	चेव भवदि,
६५६	३ आ.	ओरालियमिस्सकायजोगि	तसकाओ,
६६२	१ क	वेउद्वियकायजोगि-	अणागारुवजुत्ता वा ।
६७८	१ अ.	तेसि चेव पज्जत्ताणं	अणागारुवजुत्ता वा ।
६८७	३ अ.	तेसि चेव अपज्जत्ताणं	अणागारुवजुत्ता वा ।
६९८	५ अ. आ. क.	दो जीवसमासा	-समासो वि अत्थि
७०४	९ अ. आ. क.				छ अपज्जत्तीओ,
७०९	७ अ. आ. क.	मणुसगदी	कोधकसाओ,
७१२	४ आ.	कोधकसाय-विदिय-	अणागारुवजुत्ता वा ।
७१२	१० अ.	लोभकसायस्स	वत्तव्वो
७१४	१ अ. आ. क.	सागार-	-दुवजुत्ता वा ।
७१६	४ अ. आ. क.				चत्तारि गदीओ,
७१८	६ अ. आ. क.				चत्तारि गदीओ,
७३६	३ अ. आ. क.				छ अपज्जत्तीओ,
७४५	१ अ. आ. क.				चत्तारि गदीओ,
७५५	४ अ. आ. क.				चत्तारि गदीओ,
७६४	४ अ. आ. क.				छ अपज्जत्तीओ
७६९	२ आ.	तेसि चेव पज्जत्ताणं	अणागारुवजुत्ता वा ।
७७९	३ अ. आ.	तेउलेस्सा-अप-	अणागारुवजुत्ता वा ।
७८४	१ अ.	सागारुव-	-रुवजुत्ता वा ।
७८४	२ क.	तेसि चेव पज्जत्ताणं	अणागारुवजुत्ता वा ।
७८५	८ अ. आ. क.	तिणिण ण णि	असंजमो,
८१६	८ अ.	वेदकसम्माइट्ठि-पमत्त	अणागारुवजुत्ता वा ।
८१७	३ अ.	वेदकसम्माइट्ठि-अण्ण-	अणागारुवजुत्ता वा ।
		अणाहारि-असंजद-	अणागारुवजुत्ता वा ।

५ विशेष टिप्पण (पुस्तक १)

“ ण च संतमत्थमागमो ण परूवेइ तस्स अत्थावयत्तप्पसंगादो ” में आये हुए ‘ अत्थावयत्तप्पसंगादो ’ का अर्थ ‘ अर्थापदत्व अर्थात् अनर्थकपदत्वका प्रसंग प्राप्त हो जायगा ’ ऐसा किया गया है। जयधवला अ. प्र. पृ. ५१२ में भी ‘ ण च संतमत्थं ण परूवेदि सुत्तं, तस्स अब्बावयत्तदोसप्पसंगादो ’ इस प्रकारका वाक्य पाया जाता है। जि “ आये हुए ‘ अब्बावयत्तदोसप्पसंगादो ’ का अर्थ ‘ अव्यापकत्वदे । प्रसंग हो जायगा ’ होता है। धवलाके पाठसे जयधवलाका पाठ शुद्ध प्रतीत होता है।

(पुस्तक २)

एदासि विधिं पुथ पुथ उवसंदरिसणा परूवणा ।

जयध. अ. पृ. ६३१.

उदीरणाए चेव उदयो उदीरणोदओ त्ति ।

जयध. अ. पृ. ५२६.

इस पंक्तिके अनुसार ‘ उदीरणामें ही होनेवाले उदयको उदीरणोदय कहते हैं ’ ऐसा अर्थ होता है। परन्तु हमने अर्थ करते य उदीरणोदयकां उदीरणा तथा उदय ऐसा अर्थ किया है। इसका कारण यह है कि आठवें गुणस्थानके अन्तिम स “ भय प्रकृतिकी उदीरणा व्युच्छित्ति तथा उदय व्युच्छित्ति होती है।

१ ‘ गिरया किण्हा ’ गो. जी. ४९६. गेरइया णं भंते ! सव्वे समवन्ना ? गोयमा ! णो इण्ठे समट्ठे । से केणट्ठेणं भंते ! एवं बुच्चइ—नेरइया नो सव्वे समवन्ना । गोयमा ! गेरइया दुविह पन्नत्ता, तं जहा—पुब्बोववन्नगा य पच्छोववन्नगा य । तत्थ णं जे ते पुब्बोववन्नगा ते णं विसुद्धवन्नतरागा, तत्थ णं जे ते पच्छोववन्नगा ते णं अविमुद्धवन्नतरागा । प्रज्ञा. १७. १ ३.